अपभ्रंश भाषा साहित्य की शोध-प्रवृत्तियाँ

नवीन परिवर्द्धित संस्करण

अपभ्रंश भाषा साहित्य की शोध-प्रवृत्तियाँ

नवीन परिवर्द्धित संस्करण

डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक : ३२७

प्रकाशक :
भारतीय ज्ञानपीठ
१८, इंस्टीट्यूशनल एरिया, लोदी रोड
नई दिल्ली-११० ००३

मुद्रक :
दीप लेजर प्रिंट्स / विकास ऑफसेट
नवीन शाहदरा, दिल्ली-११० ०३२

द्वितीय संस्करण : १६६६
मूल्य : १३०.०० रुपये

© डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री

APABHRAMSHA BHASHA SAHITYA KI SHODH PRAVRITIYAN
(Research-study)
Dr. Devendra Kumar Shastri

Published by :
Bharatiya Jnanpith
18, Institutional Area, Lodi Road
New Delhi-110 003

Second Edition : 1996
Price : Rs. 130.00

भारतीय आर्यभाषाओं

के

अध्येताओं, जिज्ञासुओं, पाठकों

तथा

अनुसन्धित्सुओं को

उनकी

रुचि-सम्पन्नता के लिए

FOREWORD

The importance of the study of Apabhramsha and its literature for the comprehension of the development of the Indo-Aryan languages and their literature's is an established fact. At the same time the need for tools to undertake such studies has often been expressed. The appearance of Dr. Devendra Kumar Sastri's work begins to answer that need. The first chapter provides an excellent historical survey of Apabhramsha scholarly activity linguistic and literary; the subsequent chapters contain bibliographies of publications--books as well as articles—and descriptive lists of manuscripts including the names of the collections where they repose. Dr. Sastri in so many words reports the work done, the work in progress, and meticulously describes the data available, pin-pointing their location. What more is required than enthusiastic pursuit ? Indological scholarship established and neophyte are in Dr. Sastri's debt.

—Ernest Bender

Professor, Indo-Aryan
Languages & Literatures,
University of Pennsylvania;
Editor, Journal of the
American Oriental Society.

प्रस्तुत पुस्तक

अपभ्रंश भाषा और साहित्य का अनुशीलन ऐतिहासिक विकास की दृष्टि से ही नहीं, अध्ययन-क्रम में भी प्राकृत भाषा और उसके साहित्य के अध्ययन के साथ आरम्भ हुआ। इसके अध्ययन का इतिहास लगभग डेढ़ सौ वर्षों का है। सन् १८३६ में आधुनिक युग में सर्वप्रथम होएफर ने 'डे प्राकृत डिआलेक्टो लिब्रिदुओ' नामक जर्मन भाषा में प्रकाशित अपने अध्ययन से प्राकृत भाषा की अध्ययन-दिशा को प्रशस्त किया था। तब से आज तक देश-विदेशों में विभिन्न विद्वानों के द्वारा जो अध्ययन-अनुशीलन किया गया, उससे केवल इस भाषा और साहित्य के नये आयाम ही उद्घाटित नहीं हुए, वरन् शोध तथा अनुसन्धान के भी महत्त्वपूर्ण कार्य किये जा रहे हैं। अपभ्रंश के सम्बन्ध में प्राचीनों और नवीनों की जो भ्रान्त धारणाएँ थीं, उनके परिमार्जन के लिए यह अनुसन्धानमूलक साहित्य अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। यद्यपि अभी तक कतिपय विद्वान् उन पुरानी भ्रान्त धारणाओं से सर्वथा मुक्त नहीं हो पाये, किन्तु अब इस विपुल साहित्य को देखकर उनकी धारणा बदलेगी, ऐसी आशा है।

इस पुस्तक में सन् १८३६ से लेकर १९६०-६१ तक अपभ्रंश भाषा और साहित्य विषयक प्रकाशित शोध-निबन्धों, पुस्तकों तथा प्रबन्धों के विवरण के साथ भारत के विभिन्न ग्रन्थ-भण्डारों में उपलब्ध हस्तलिखित ग्रन्थ-सूची एवं उपलब्ध अपभ्रंश-साहित्य के सम्बन्ध में प्रामाणिक जानकारी दी गयी है। सभी विवरण ऐतिहासिक क्रम में प्रस्तुत किया गया है। अब तक किसी भी भाषा में अनुसन्धान की दृष्टि से इस प्रकार का कार्य नहीं किया गया। यद्यपि प्राच्य-विद्याओं की शोध-पत्रिकाओं, परिषदों के विवरण तथा वार्षिकी आदि में इस प्रकार की सूचनाएँ एवं विवरण प्रकाशित किये जाते रहे हैं, किन्तु समग्र रूप में किसी एक साहित्य से सम्बन्धित सभी प्रकार की प्रामाणिक जानकारी प्रस्तुत करने वाली कोई पुस्तक इसके पूर्व आज तक नहीं लिखी गयी।

इसमें एक हजार तीन सौ प्रकाशित शोध-निबन्धों, प्रबन्धों और पुस्तकों के अतिरिक्त भारत के विभिन्न भण्डारों में उपलब्ध अपभ्रंश के डेढ़ सौ कवियों की लगभग तीन सौ रचनाओं की एक हजार दो सौ हस्तलिखित प्रतियों का विवरण संकलित किया गया है। अधिकतर विवरण स्वयं ग्रन्थ-भण्डारों को देखकर तथा हस्तलिखित रचनाओं को पढ़कर तैयार किया गया है। इस कार्य में लेखक को पर्याप्त श्रम और लगभग दस वर्षों का समय भोगना पड़ा है। परिणामतः अपभ्रंश भाषा और साहित्य पर अब तक शोध-कार्यों के विवरण के अतिरिक्त अपभ्रंश के अज्ञात एवं अप्रकाशित ग्रन्थों के अंश भी प्रकाशित किये जा रहे हैं। अपभ्रंश के अज्ञात एवं अप्रकाशित ग्रन्थों में उन रचनाओं के वे अंश भी उद्धृत किये गये हैं, जो किन्हीं पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं, परन्तु जयपुर

और दिल्ली से प्रकाशित अपभ्रंश के प्रशस्ति-संग्रह में प्रकाशित नहीं हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में 'अपभ्रंश' शब्द का व्यापक अर्थ में प्रयोग किया गया है। अपभ्रंश से हमारा अभिप्राय एक ओर प्राकृत का पल्ला (आँचल) पकड़कर विकसित होने वाली किंचित् प्राकृतमिश्रित तथा शुद्ध अपभ्रंश भाषा से है, दूसरी ओर अपभ्रंश के मूल रूप का त्याग किये बिना आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की अवस्था में ढलती हुई पुरानी हिन्दी, जूनी गुजराती, प्राचीन राजस्थानी तथा प्राचीन बांग्ला एवं मराठी भाषा से है। प्रायः सभी आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की यह एक सामान्य अवस्था थी, इसलिए प्रान्त-भेद से नाम-भेद हो सकता है; परन्तु अवस्था-भेद नहीं था। यह केवल आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के सम्बन्ध में ही सत्य नहीं है, प्रत्युत प्राचीनतम आर्य-ईरानी भाषाओं की भी एक ऐसी सामान्य अवस्था रही है, जिससे विकसित होकर बोली जाने वाली प्राकृतों तथा देशी एवं वैदिक भाषा (साहित्यिक भाषा) का विकास हुआ था। इसलिए परम्परा के रूप में हमें आज भी वैदिक शब्द-सम्पत्ति प्राप्त होती है।

इस प्रकार यह विवरण केवल अपभ्रंश और हिन्दी को ही ध्यान में रखकर नहीं, वरन् आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं और उनके साहित्य को ध्यान में रखकर प्रस्तुत किया गया है। इसलिए यह पुस्तक केवल अनुसन्धाताओं के लिए ही नहीं, प्रत्युत समस्त भारतीय आर्यभाषाओं और उनके साहित्य-प्रेमी पाठकों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी।

इस पुस्तक की तैयारी में उन सभी विद्वानों के प्रति आभारी हूँ जिनका मूल्यवान सहयोग (पुस्तक के प्रथम संस्करण से लेकर इस परिवर्द्धित संस्करण तक) प्राप्त हुआ है। विश्वस है पुस्तक का यह नया परिवर्द्धित संस्करण पाठकों को सन्तोष देगा।

—देवेन्द्रकुमार शास्त्री

क्षमावणी पर्व

२७ सितम्बर, १९९६

विषय-सूची

प्रथम अध्याय : अपभ्रंश भाषा और साहित्य का शोध-सर्वेक्षण

परम्परागत भाषा-प्रवाह ११
'प्राकृत' शब्द का अर्थ और उसकी व्याप्ति १६
प्राचीनतम भाषा १८
वैदिक, अवेस्ता और प्राकृत २०
प्राकृत और उसका इतिहास २२
प्रथम अवस्था २७
द्वितीय अवस्था ३१
प्राकृत भाषा ३३
संस्कृत-विकृति बनाम प्राकृत ३५
अपभ्रंश क्या है ? ३८
प्राकृत अपभ्रंश नहीं है ३६
अपभ्रंश और देशी ४१
अपभ्रंश और अवहट्ठ ४८
तृतीय अवस्था ५०
आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ ५४
अपभ्रंश साहित्य का प्रारम्भिक काल ५६
अपभ्रंश : काव्यभाषा ५८
अपभ्रंश साहित्य का काल-विभाजन ६१
प्राकृत का कथा-साहित्य ६५
अपभ्रंश कथाकाव्य ६७
अपभ्रंश चरितकाव्य ६६
अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्य ७०
अपभ्रंश के खण्डकाव्य ७१
अपभ्रंश का रास-साहित्य ७२
अपभ्रंश के रूपककाव्य ७३
अपभ्रंश के सन्धिकाव्य ७४
स्फुट रचनाएँ ७४
प्राच्य विद्याओं का अध्ययन ७६

प्राकृत के पाणिनि ८१
अपभ्रंश साहित्य के प्रथम अन्वेषक ८२
अपभ्रंश साहित्य का सम्पादन-काल ८७
भाषाविषयक अनुशीलन ८८
अपभ्रंश-साहित्य में शोध-कार्य ९१
प्रगति की दिशा में ९३
अपभ्रंश तथा जैन साहित्य के अध्ययन-केन्द्र ९४
अपभ्रंश में शोध की दिशाएँ ९५
वर्तमान और भविष्य ९७

द्वितीय अध्याय : अपभ्रंश के मूल ग्रन्थ, प्रकाशित शोध-प्रबन्ध, निबन्ध एवं पुस्तकें

अपभ्रंश के प्रकाशित मूल ग्रन्थ १००
भारत के बाहर के विश्वविद्यालयों से
अपभ्रंश के स्वीकृत शोध प्रबन्ध १०५
भारतीय विश्वविद्यालयों से अपभ्रंश के स्वीकृत शोध-प्रबन्ध १०६
अपभ्रंश विषयक प्रकाशित शोध-निबन्धों तथा पुस्तकों की सूची ११६

तृतीय अध्याय : अपभ्रंश के हस्तलिखित ग्रन्थ

विभिन्न भण्डारों में प्राप्त अपभ्रंश के हस्तलिखित ग्रन्थों का विवरण १६२

चतुर्थ अध्याय : उपलब्ध अपभ्रंश साहित्य

अपभ्रंश का उपलब्ध साहित्य २७०

पंचम अध्याय :

अपभ्रंश के अज्ञात एवं अप्रकाशित ग्रन्थों के अंश २८२
पुरानी हिन्दी की रचनाओं के कतिपय अंश ३१८

परिशिष्ट

१. संस्कृत साहित्य में उपलब्ध कतिपय अपभ्रंश पद्य ३२१
२. प्राकृत साहित्य में उपलब्ध कतिपय अपभ्रंश पद्य ३२५
३. अपभ्रंश के शिलालेख ३२७
४. अपभ्रंश गद्य ३३८

प्रथम अध्याय

अपभ्रंश भाषा और साहित्य का शोध-सर्वेक्षण

परम्परागत भाषा-प्रवाह

वैदिक भाषा, साहित्य, संस्कृति तथा इतिहास के अध्ययन से अब यह स्पष्ट हो गया है कि वेदों के रचना-काल में तथा उसके भी पूर्ववर्ती युग में जनभाषा में तथा साहित्यिक भाषा में भाषिक ही नहीं, शब्द-रूपों की रचना में भी अन्तर था। यह अन्तर कई स्तरों पर लक्षित होता है; जैसे कि—उच्चारण, रूप-रचना, वैकल्पिक प्रयोग, अन्य भाषाओं से गृहीत शब्दावली, दैवीवाक्—मानुषीवाक् के रूप में। ऋग्वेद के उल्लेख से यह पता चलता है कि पणियों और असुरों की भाषा 'मृध्रवाक्' थी।[1] यद्यपि निरुक्तकार ने 'मृध्रवाक्' का अर्थ 'मृदु वाचः' किया है, किन्तु परवर्ती काल में यह शब्द 'विभाषा' या 'अपशब्द' के लिए रूढ़ हो गया। शतपथब्राह्मण तथा महाभाष्य के उल्लेखों से यह निश्चित हो जाता है कि वे एक को सुरभाषा तथा दूसरी को असुरभाषा कहते हैं।[2] ऋग्वेद में भी यह उल्लेख मिलता है कि राष्ट्र की सामान्य जनता से सम्पर्क करने वाला यह विचार करता है कि मैं संस्कृत या दैवीवाक् में बोलूँ या जनभाषा में ?[3] यही नहीं, भाषा की दृष्टि से ऋग्वेद तथा अथर्ववेद इन दोनों की भाषा में अन्तर है। ऋग्वेद की भाषा साहित्यिक है, किन्तु अथर्ववेद में जनभाषा के रूप उपलब्ध होते हैं। भाषावैज्ञानिकों ने 'छान्दस्' भाषा में प्रयुक्त वट, तट, वाट, कट, विकट, कीकट, निकट, दण्ड, अण्ड, पट, घट, क्षुल्ल आदि शब्दों को कथ्य भाषा (प्राकृत) से अधिगृहीत स्वीकार किया है। डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री के शब्दों में "छान्दस् भाषा की पद-रचना का अध्ययन प्राकृत अध्ययन के बिना अपूर्ण है। 'छान्दस्' में तृतीया के बहुवचन में 'देव' शब्द का देवेभिः (ऋग्वेद १।१।१) और प्रथमा के बहुवचन में देव एवं जन शब्द का क्रमशः देवा, देवासः, जना एवं जनासः (ऋग्वेद १।३।७) रूप पाये जाते हैं जो कि प्राकृत

१. 'दनो विश इन्द्र मृध्रवाचः', ऋग्वेद १।१७४।२

२. द्रष्टव्य है—शतपथब्राह्मण ३।२।१।२३-२४ तथा पतंजलिकृत महाभाष्य, पस्पशाह्निक

३. "अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः।"

—ऋग्वेद १०।१२५।५

के रूप हैं। इसी प्रकार चतुर्थी के लिए षष्ठी विभक्ति का प्रयोग तथा षष्ठी के लिए चतुर्थी विभक्ति का प्रयोग भी प्राकृत तत्त्व-सिद्धि के लिए पर्याप्त प्रमाण है। इसी प्रकार अकारान्त शब्द का प्रथमा के एकवचन में ओकारान्त हो जाना भी प्राकृत-तत्त्व की जानकारी के अभाव में यथार्थ रूप में विश्लेषित नहीं किया जा सकता है। यथा—सः चित्=सो चित् (ऋग्वेद १।१६१।११), संवत्सरः अजायत = संवत्सरो अजायत (ऋग्वेद १०।१६०।२)। वैयाकरण पाणिनि ने 'छान्दस्' की इस प्रवृत्ति का नियमन करने के लिए 'हशि च' (६।१।११४) एवं 'अतोरोरप्लुतादप्लुते' (६।१।११३) सूत्र लिखे हैं। वस्तुतः इन सूत्रों का मूल उद्देश्य ओकारान्त वाले प्रयोगों का साधुत्व प्रदर्शित करना है और प्राकृत के मूल शब्दों पर संस्कृत का आवरण डाल देना है। विसर्ग सन्धि के कतिपय नियम भी 'छान्दस्' की प्राकृत प्रवृत्ति के संस्कृतीकरण के लिए ही लिखे गये हैं।''[1]

यद्यपि भारतीय आर्यभाषाओं के इतिहास में समकालिक विवरण निर्देश करने हेतु यह एक प्रवृत्ति-सी हो गयी है कि प्राचीन, मध्यकालीन तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की तीन अवस्थाओं का उल्लेख किया जाता है, किन्तु प्रो. ए. एम. घाटगे की राय में उनका विभाजन क्षेत्रीय आधारों पर किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए जो उत्तर-पश्चिमी क्षेत्रों में बोली के रूप में विकसित हुई उनको उत्तरपश्चिमी, मध्यदेशीय, पूर्वीय तथा दक्षिणीय विभाग उचित होंगे।[2] इस बात के अनेक प्रमाण उपलब्ध होते हैं कि वेदों में प्राकृततत्त्व कम नहीं हैं। कदाचित् सर्वप्रथम स्कोल्ड ने यास्क के निरुक्त का विवेचन करते हुए सन् १९२६ में हमारा ध्यान इस ओर आकृष्ट किया था कि इन शब्दों की व्युत्पत्तियों का विचार करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इनमें से कुछ ध्वनिग्रामीय विशेषताओं के आधार पर मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं की अवस्था की सूचक हैं। सन् १९२८ में ए.सी. वुलनर ने अपने एक निबन्ध में 'प्राकृतिक एण्ड नान-आर्यन स्ट्रेटा इन द वाकेबुलरी ऑव संस्कृत' जो 'आशुतोष मेमोरियल वाल्यूम' में पटना से प्रकाशित हुआ था, इस विषय का परीक्षण कर ऊहापोह किया था। सन् १९३१ में एच. आर्टेल ने अपने एक निबन्ध 'प्राकृतिज्म इन छान्दोग्योपनिषद्' (गाइगर फेलेशियन वाल्यूम, लिपजिग, १९३१) में ध्वनिग्रामीय दृष्टि से वैदिक ग्रन्थों में जो शब्द-रूप मिलते हैं, उनका गहराई से अध्ययन प्रस्तुत किया। तदनन्तर ब्लूमफील्ड और इजर्टन ने वैदिक पाठों में उपलब्ध विविधता तथा उनके अन्तर्भेदों पर विस्तार से प्रकाश डाला। इसी समय वाकरनागल का एक महत्त्वपूर्ण निबन्ध—'आर्यभाषाओं में प्राकृततत्त्व' प्रकाशित हुआ। सन् १९४४ से १९४६ के बीच टेडेस्को ने चार लेख लिखे, जिनमें यह प्रतिपादित किया गया कि परवर्ती

---

१. शास्त्री, नेमिचन्द्र : भारतीय संस्कृति के विकास में जैन वाङ्मय का अवदान, प्रथम खण्ड, पृ. ५५ से उद्धृत

२. घाटगे, ए. एम. : हिस्टॉरिकल लिंग्विस्टिक्स एण्ड इण्डो-आर्यन लैंग्वेजेज, बम्बई विश्वविद्यालय, पृ. १११, १९६२

संस्कृत-साहित्य की अपेक्षा ऋग्वेद और अथर्ववेद पर मध्यकालिक प्रवृत्तियाँ अधिक स्पष्ट रूप से लक्षित होती हैं, क्योंकि तब तक संस्कृत भाषा का मानकीकरण नहीं किया गया था। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अपने शोधपूर्ण निबन्ध में सन् १९९६ में एमेन्यू ने 'द डायलेक्ट्स ऑव ओल्ड इण्डो-आर्यन' में यह सिद्ध किया है कि पाणिनि भी प्राकृत से प्रभावित थे। उनके व्याकरण में स्पष्ट रूप से प्राकृततत्त्व लक्षित होता है। निष्कर्ष रूप में वे लिखते हैं—"ऐसा जान पड़ता है कि कम-से-कम वैदिक संहिताओं के समय में ब्राह्मण साहित्य में ऐसे ध्वनिग्रामीय रूप उपलब्ध हैं जो समकालीन बोलियों के हैं और जिनका प्रमाणीकरण मध्यकालीन बोलियों से होता है।"[1]

वैदिक संस्कृत में 'यहाँ' के लिए 'इह' शब्द का प्रयोग उपलब्ध है, किन्तु पालि और शौरसेनी प्राकृत में 'इध' मिलता है। अवेस्ता में यह 'इद' है। अशोक के गिरनार के शिलालेखों में भी 'इध' शब्द प्रयुक्त है। इसके अतिरिक्त दक्षिण भारत के सातवाहनों के अभिलेखों में भी 'इध' शब्द का प्रयोग मिलता है। अतः इससे यह स्पष्ट है कि 'इह' की अपेक्षा 'इध' रूप प्राचीन है। वेदों की भाषा में और प्राकृतों में अनेक समानताएँ लक्षित होती हैं। सबसे अधिक समानता यह है कि इन दोनों में स्वरभक्ति प्रचुरता से उपलब्ध होती है। पाश्चात्य विद्वानों में जर्मन भाषा के विद्वान् रिचर्ड पिशल ने प्राकृत भाषाओं का तुलनात्मक तथा भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत कर उल्लेखनीय कार्य किया है। यथार्थ में वैदिक भाषा के साथ प्राकृतों का तुलनात्मक अध्ययन कर उन्होंने भाषाविज्ञान के क्षेत्र में एक नवीन दिशा प्रशस्त की है। वैदिक काल में प्रचलित जनभाषा की सबसे प्रमुख विशेषता है—विभक्तियों का परस्पर विनिमय। आर्यभाषाओं के विकास के इतिहास में यह प्रवृत्ति निरन्तर विकसित होती रही है। अपभ्रंश और अवहट्ट में भी यही प्रवृति मूल में लक्षित होती है। डॉ. हरदेव बाहरी के शब्दों में "वैदिक काल में भी प्राकृतें थीं और जिस प्रकार वे साहित्यिक भाषा से प्रभावित होती थीं, उसी प्रकार साहित्यिक भाषा को भी प्रभावित करती थीं। वेद में रूपों का वैविध्य और ध्वनिद्वैध जन-भाषाओं के अस्तित्व को प्रमाणित करता है। वेद में अनेक प्रादेशिक तथा प्राकृत शब्द और प्रयोग मिलते हैं। उच्चा, नीचा, पश्चा, भोतु (सं. भवतु), शिथिर (सं. शिथिल), जर्भरी, तुर्फरी, फरफरिका (पर्फरीका), तैगाल, तावुवम, वंच, वेस (सं. वेष), दूलभ (सं. दुर्लभ), दूडभ (दुर्दम), सुवर्ग (सं. स्वर्ग), इन्दर (इन्द्र) इत्यादि वेद के शब्द प्राकृत के हैं; संस्कृत के नहीं।"[2] ब्राह्मण ग्रन्थों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक काल में कई बोलियाँ प्रचलित थीं। अफगानिस्तान से लेकर पंजाब तक पश्चिमोत्तरी बोली प्रचलित थी, जिसमें 'र्' की प्रधानता थी। पंजाब से मध्य उत्तर-प्रदेश तक मध्यवर्ती बोली का प्रचलन था, जिसमें 'र्-ल्' दोनों की प्रधानता थी। पूर्वी बोली

---

१. लद्दू, एस. डी. : प्राकृत स्टडीज आउटसाइड इण्डिया (१९२०-६६), पृ. २२५-२२७, प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमिनार इन प्राकृत स्टडीज, पूना विश्वविद्यालय, १९७०

२. डॉ. बाहरी, हरदेव : हिन्दी : उद्भव, विकास और रूप, पृ. ३१, इलाहाबाद, १९६६

का प्रचार-प्रसार देश के पूर्वी भागों में था, जिसमें 'लृ' का प्राधान्य था।[1] टी. पी. भट्टाचार्य के अनुसार 'ब्रह्मोपासना' तथा तीर्थंकरों की अवधारणा में समानता लक्षित होती है। दोनों के दार्शनिक विचारों में साम्य है। प्राग्वैदिक फोनेशियन वैदिक काल में पणि कहे जाते थे जो उत्तरवर्ती काल में व्रात्य तथा वणिक् कहे गये।

ऑर्टेल, वाकरनागल, टेडेस्को और जी.वी. देवस्थली के उन शोध-कार्यों से यह निश्चित हो जाता है कि ब्लूमफील्ड और एजर्टन ने जिन 'वैदिक वेरिएण्ट्स' का संकलन किया था, उनमें जो ध्वन्यात्मक रूप उपलब्ध होते हैं, वे अधिकतर मध्यकालीन भारतीय बोलियों से बहुत कुछ समानता लिये हुए हैं। यहाँ तक कि पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि की रचनाओं में भी प्राकृत का प्रभाव परिलक्षित होता है[2]। यदि इतिहास के परिप्रेक्ष्य में विचार किया जाए, तो वेदों में उल्लिखित पणि, असुर और व्रात्यों की भाषा मृदुवाक्, मधुरवाणी प्राकृत ही थी। 'व्रात्य' शब्द का अर्थ है—व्रत से निष्पन्न। व्रात्यों का यशःकीर्तन 'ऋग्वेद' के अनेक सूक्तों में किया गया है। 'अथर्ववेद' के पन्द्रहवें काण्ड का नाम ही 'व्रात्यसूक्त' है। 'ऋग्वेद' में स्पष्ट शब्दों में निर्वचन किया गया है[3]—"जो भूतल पर मूर्धस्थानीय हैं, अहिंसक हैं, अपने यश और व्रतों की अद्रोह से रक्षा करते हैं, वे व्रात्य हैं।" यही नहीं, 'वेदमीमांसा' (पृ. ६५) में ज्येष्ठ व्रात्य को 'अर्हत्' शब्द से निर्दिष्ट किया गया है। व्रात्यों की भाषा को प्राकृत मानने का आधार 'शाक्यायन श्रौतसूत्र' (१६५।१००।२८) है। 'ताण्ड्य ब्राह्मण' के उल्लेखों से भी यह स्पष्ट है कि यज्ञ-याग के विरोधी और वेदों का पठन किये बिना, अदीक्षित ही ज्ञान की चर्चा करने वाले स्वसम्बुद्ध ज्ञानवादी व्रात्य थे। डॉ. शारदा चतुर्वेदी के शब्दों में "प्राकृत युग के तीर्थंकर और बौद्ध से आरम्भ कर आज के नाथ सम्प्रदाय एवं आधुनिक युग का आउल-बाउल सभी सम्प्रदाय व्रात्यदलों के हैं। चिरकाल से ही ये लोग अपने तात्त्विक सिद्धान्त अप्रमार्जित प्राकृत भाषा में कहते हैं। इस तरह इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि व्रात्यों की यह प्राकृत भाषा आज के नाथ सम्प्रदाय और आउल-बाउल सम्प्रदाय तक प्राकृत भाषा के रूप में चली आ रही है।"[4] वास्तव में यह वणिकों तथा व्रतियों की भाषा रही है।

यथार्थ में वेदों तथा वैदिक युग की रचना से लेकर आज तक जो भी साहित्य उपलब्ध होता है, वह स्पष्ट रूप में प्राकृतों की छाप लिये हुए है। इस देश के किसी

---

१. द्रष्टव्य है—डॉ. तिवारी, भोलानाथ : हिन्दी भाषा का इतिहास, पृ. २८-२६, नई दिल्ली, १६८७
२. लद्दू, डॉ. एस. डी. : प्राकृतिक इन्फ्ल्यूएन्सेज रिवील्ड इन द वर्क्स ऑव पाणिनि, कात्यायन एण्ड पतंजलि, प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमिनार ऑन प्राकृत स्टडीज (१६७३), पृ. ८८-१००, अहमदाबाद।
३. ये मूर्धानः क्षितीनामदब्धासः स्वयशसः। व्रता रक्षन्ते अद्रुहः (सातवलेकर संस्करण) ऋग्वेद मन्त्र १२, मं. ८, सू. ६७
४. चतुर्वेदी, डॉ. शारदा : वैशाली इन्स्टिट्यूट रिसर्च बुलेटिन नं. ३ में प्रकाशित 'प्राकृत भाषा और उसका मूलाधार' शीर्षक लेख, पृ. १२४ से उद्धृत

एक भाग में नहीं, किन्तु उत्तर से पश्चिम, पश्चिम से पूर्व तथा पूर्व से दक्षिण तक की लगभग सभी भाषाएँ एवं बोलियाँ प्राकृत से प्रभावापन्न रही हैं। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित शब्द हैं—चरु (ऋग्वेद, ६, ५२, ३), बृहत् काष्ठपात्र। प्राकृत में यह 'चरु', बुन्देली, बिहारी में 'चरुआ', व्रज में 'चरुवा', हिन्दी में 'चरु', 'चरुआ', गुजराती में चरु, मराठी लंहदा में चर्वी और सिन्धी में 'चरु' है। इसी प्रकार के शब्द हैं—दूलह (अथर्व. ४, ६, ८), प्राकृत में 'दूलह' हिन्दी में 'दूलह' है। पंजाबी में 'दूलो', सिन्धी में 'दूलहु', मैथिली में 'दुल्हा', राजस्थानी-गुजराती 'दूलो', नेपाली में 'दूलोहो' एवं व्रज-बुन्देली, अवधी आदि में 'दूलह' आज भी प्रचलित है। 'ऋग्वेद' में प्रयुक्त उच्चा (१, १२३, २), नीचा (२, १३, १२) तथा वो (१, २०, ५) आदि शब्द आज भी हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में ऊँच-नीच, वो (लोग) रूप में प्रचलित हैं।

यथार्थ में आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं को वेदों से तथा वैदिक युग की बोली से जोड़ने वाली भाषा-परम्परा की कड़ी का नाम प्राकृत है। यह एक ओर जहाँ कुछ बातों में भारोपीय भाषाओं से, विशेषतः अवेस्ता से साम्य लिये हुए है, वहीं ऐसी विशेषताएँ भी सहेजे हुए है जो इसकी अपनी मौलिकता को प्रकाशित करने वाली हैं। ह्रस्व एँ, ओं का प्रयोग प्राकृत, अपभ्रंश की मौलिक विशेषता है। भले ही कालान्तर में लोकभाषा में एँ, ओं, का प्रयोग प्रचलित नहीं रहा हो; किन्तु आज तक भाषा का यह प्रवाह इन स्वर-ध्वनियों को सुरक्षित बनाये हुए है। प्राकृतों में और वेदों में एक स्वर के स्थान पर दूसरे स्वर के विनिमय की प्रवृत्ति लक्षित होती है; जैसे कि—'तन्वम्' के लिए 'तनुवम्' (तै. सं. ७-२२-१), 'सवर्ग' के लिए 'सुवर्ग' (तै. सं. ४-२-३), 'गोष' के लिए 'गोपु गच्छति' (ऋक्. सं. १, ८३, १), 'तम्' के लिए 'तमु' (ऋक्. सं. १०, १०७, ६), 'नु' (ऋक्. सं. १०, १६८, १) इत्यादि। इसी प्रकार वैदिक भाषा में मूर्धन्य ध्वनियों का प्रयोग, 'न' के स्थान पर 'ण' का प्रयोग, द्विवचन के स्थान पर बहुवचन का प्रयोग, शब्दरूपों में वैकल्पिक प्रयोग, विभक्ति तथा क्रिया-रूपों में लाघव, कृदन्त प्रत्ययों का सरलीकरण आदि विशेषताएँ उसमें प्राकृत-तत्त्व के सम्मिश्रण को सूचित करने वाली हैं। प्राकृत में यह अन्तर अवश्य है कि प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के 'ऋ' वर्ण का अभाव है। इसके स्थान पर प्राकृत में अ, इ, उ, ए आदि का प्रयोग मिलता है। अतः प्रो. विल्सन भी मुक्त भाव से यह स्वीकार करते हैं कि प्राकृत उस बोली का प्रतिनिधित्व करती है जो किसी समय में बोली जाती थी। क्योंकि आज जनभाषाओं के जो परिवर्तित रूप उपलब्ध होते हैं, उनके परिवर्तन की जानकारी प्राकृत व्याकरण से ही मिलती है।[1] "विशुद्ध काल-व्यापिता की दृष्टि से देखा जाए तो मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं और बोलियों का विनियोग प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं की अपेक्षा अधिक व्यापक है।"[2] डॉ. पी.

---

१. द्रष्टव्य है—विल्सन, एच. : सिलेक्ट स्पेसीमेन ऑव द हिन्दू, इन्ट्रोडक्शन
२. कत्रे, एस. एम. (अनुवादक : डॉ. रमाशंकर जैतली) : प्राकृत भाषाएँ और भारतीय संस्कृति में उनका अवदान, पृ. ६ से उद्धृत

एल. वैद्य के अनुसार आज हमें अपभ्रंश से एक प्राकृत भाषा का ही बोध होता है, जिसकी विशेषताएँ चण्ड, हेमचन्द्र, त्रिविक्रम, पुरुषोत्तम, मार्कण्डेय तथा अन्य वैयाकरणों द्वारा निश्चित हैं। अपभ्रंश का अध्ययन भारत की आधुनिक भाषाओं के—विशेषतः हिन्दी, गुजराती, मराठी, बँगला तथा उनकी उपभाषाओं के विकास को ठीक-ठीक समझने के लिए अत्यावश्यक है।''[१]

प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं के विकास-क्रम में प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं का महत्त्वपूर्ण योग रहा है। ये भाषाएँ विभिन्न युगों में बोली तथा भाषाओं में होने वाले परिवर्तनों की संसूचक हैं। डॉ. चटर्जी ने ठीक ही कहा है कि 'वैदिक' शब्द या 'संस्कृत', 'प्राकृत' और 'भाषा' का प्रयोग संक्षिप्त और सुविधा के लिए तथा भारतीय आर्यभाषाओं की तीन अवस्थाओं के लिए किया गया है, और 'प्राकृत' तथा 'भाषा' के मध्य में संक्रमणशील अवस्था जो कि प्राकृत या मभाआ की ही एक अंग थी, सुविधा की दृष्टि से 'अपभ्रंश' कही जाती है।[२]

'प्राकृत' शब्द का अर्थ और उसकी व्याप्ति

डॉ. जार्ज ग्रियर्सन, वाकरनागल, रिचर्ड पिशेल और प्रो. एन्त्वान् मेय्ये प्रभृति भाषावैज्ञानिकों ने वैदिक युग की प्रादेशिक बोलियों के विकास से शिलालेखों की प्राकृत तथा साहित्यिक प्राकृतों का उद्भव एवं विकास माना है। वैदिक युग की प्राकृत बोलियों को प्राचीन या प्राथमिक प्राकृत (२,००० ई. पू.—५०० ई. पू.) नाम दिया गया है। डॉ. ग्रियर्सन के शब्दों में अशोक (२५० ई. पू.) के शिलालेखों तथा महर्षि पतंजलि (१५० ई. पू.) के ग्रन्थों से यह ज्ञात होता है कि ई. पू. तीसरी शताब्दी में उत्तर भारत में आर्यों की विविध बोलियों से युक्त एक भाषा प्रचलित थी। जनसाधारण की नित्य व्यवहार की इस भाषा का क्रमागत विकास वस्तुतः वैदिक युग की बोलचाल की भाषा से हुआ था। इसके समानान्तर ही इन्हीं बोलियों में से एक बोली से ब्राह्मणों के प्रभाव द्वारा एक गौण भाषा के रूप में लौकिक संस्कृत का विकास हुआ।[३] श्री पीटर्सन ने अपने लेख में बताया है कि प्राकृत वह संस्कृत है जिसे यहाँ के आदिवासी लोग अशुद्ध उच्चारण के रूप में बोलते थे; किन्तु जार्ज ग्रियर्सन उनसे सहमत नहीं हैं। उनका स्पष्ट कथन है कि प्राकृत का अर्थ है—नैसर्गिक एवं अकृत्रिम भाषा। इसके विपरीत संस्कृत का अर्थ है—संस्कार की हुई तथा कृत्रिम भाषा। संस्कृत से प्राकृत सदा से भिन्न रही

---

१. सिंह, डॉ. नामवर : हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, प्राक्कथन, पृ. १०-११ से उद्धृत

२. चटर्जी, सुनीतिकुमार : द ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट ऑव द बैंगाली लैंग्वेज, कलकत्ता वि. वि., पृ. १७, १९२६

३. ग्रियर्सन, सर जॉर्ज अब्राहम : भारत का भाषा-सर्वेक्षण, १९५९, अनु. डॉ. उदयनारायण तिवारी, पृ. २२४ से उद्धृत

है। प्राकृत बोलचाल की भाषा थी। भाषा का स्वभाव आज भी प्राकृत है, इसलिए उसके स्वभाव को प्रकृति कहते हैं।

'प्राकृत' शब्द प्रकृति से निष्पन्न हुआ है। प्राकृत शब्द का मुख्य अर्थ स्वाभाविक है। प्राकृत लगभग तीन सहस्राब्दियों और उसके पूर्व की बोलचाल की भाषा रही है। भाषाविज्ञान में साहित्यिक भाषा को 'भाषा' कहा जाता है। जिसमें कोई साहित्य-रचना नहीं की जाती, जो केवल मौखिक रूप से प्रचलित रहती है उसे 'बोली' कहते हैं। परम्परागत रूप से भाषा और बोली दोनों ही अपने-अपने रूपों से प्रवर्तमान रहती हैं। भाषा हमें साहित्य से सीखने को मिलती है और बोली माँ-बाप तथा जन-समाज से। हमारे बोलने और लिखने की भाषा में प्रायः अन्तर रहता है। बोलने में हम असावधानी और शिथिलता भी बरत लेते हैं, किन्तु लिखने में संयत विचार और साधु भाषा के प्रयोग का ध्यान रखते हैं। साधु तथा संयत भाषा के पक्षपाती शिष्टजन, स्वाभाविक भाषा या बोली को 'गँवारु' या 'उजड्ड' लोगों की भाषा समझते चले आ रहे हैं। इसे वे अपशब्दों से भरित तथा अपभ्रष्ट भी मानते हैं। भाषाविद् स्टेनली रुण्डले का यह कथन उचित ही है कि बोली के सम्बन्ध में बड़ा भ्रम फैला हुआ है। लोग समझते हैं कि बोलियाँ लोक-साहित्य के रूप में प्रचलित बनी हुई हैं, किन्तु वे असंगत रूप हैं और केवल अध्ययन की वस्तु हैं। अतएव अधिकतर लोगों की दृष्टि में बोली मानक भाषा (Standard language) का अतिक्रमण है। प्रत्येक देश की कोई-न-कोई मानक भाषा होती है। उस मानक भाषा के अपभ्रंश को बोली समझा जाता है। कार्नवाल और स्काटलैण्ड के लोगों के विषय में कहा जाता है कि वे मानक अँग्रेजी को तोड़-मरोड़ कर बोलते हैं।[1] टकसाली, आदर्श या मानक भाषा सदा स्थिर नहीं रहती। युग-युगों में घटित होनेवाले परिवर्तनों के बीच भाषा का स्वरूप भी परिवर्तित होता रहता है। लगभग एक शताब्दी के पूर्व जो खड़ी बोली लोक-नाट्यों तथा स्वांगों के रूप में प्रचलित थी, वह आज भाषा ही नहीं, राष्ट्रभाषा भी है। इसलिए आज के भाषा-रूप की रचना में पहले के भाषिक रूप से बहुत भिन्नता है। इससे यह भी स्पष्ट है कि आधुनिक युग की बोलियाँ सम्प्रति स्वीकृत मानक या आदर्श भाषा-रूप का अतिक्रमण नहीं हैं। बोलियों का भी अपना इतिहास है। वे कई शताब्दियों के अन्तराल में फैल कर अपना विकास करती हैं। बोलियों के विकास की यह एक प्रक्रिया है जो किसी एक देश में नहीं, वरन् संसार की सभी बोलियों के सम्बन्ध में घटित हुई है। यही प्रक्रिया संस्कृत के साथ भी घटित हुई, जो एक कृत्रिमपूर्ण साहित्यिक भाषा थी। प्राकृतिक बोलियों को प्राकृत कहा जाता था। यद्यपि वे संस्कृत-साहित्य से प्रभावापन्न रहीं, किन्तु उन्होंने अपने साहित्य का स्वयं निर्माण किया। वे संस्कृत का भ्रष्ट रूप नहीं थीं।[2] हमारे जीवन की वास्तविकता सहज रूप में बोली के माध्यम से निःसृत होती है। अतएव आंचलिक

१. द्रष्टव्य है, विल्सन, ग्रेहम (सं.) : ए लिंग्विस्टिक रीडर, पृ. ८६, १९६७

२. वही, पृ. ८७

वातावरण के चित्रण में क्षेत्रीय बोली का प्रयोग करना आवश्यक हो जाता है। यही स्थिति संस्कृत-काल में प्राकृत की थी। भारतीय इतिहास के गुप्त-युग में राजदरबारों में प्राकृत नाटिकाओं, सट्टकों के अभिनय के साथ जब संस्कृत नाटकों का भी अभिनय किया जाने लगा, तब संस्कृत नाटकों में प्राकृत का समावेश अनिवार्य हो गया। क्योंकि सामान्य वर्ग के लोग प्राकृत ही बोलते-समझते थे। इसके लिए वैयाकरणों को विशेष प्रयत्न करने पड़े। यथार्थ में उस युग के संस्कृत वैयाकरणों को संस्कृत भाषा को प्राकृत में ढालने के लिए विशेष नियम बनाने पड़े। इस कारण प्राकृत शब्दावली में तोड़-मरोड़ भी हुई और आगे चलकर वे प्राकृत-अपभ्रंश कहलायीं जो वास्तव में बोली थीं।[1] इन प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं के अध्ययन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि जब तक संस्कृत या वैदिक भाषा लोक-जीवन और लोक-बोलियों को आत्मसात् करती रही, तब तक बराबर उसमें विकास होता रहा; किन्तु जब वह शास्त्रीय नियमों में भलीभाँति आबद्ध हो गयी, तभी उसका विकास रुक गया। इससे जहाँ वह वाणी 'अमर' हो गयी, वहीं उसका प्रवाह अवरुद्ध हो गया और वह 'मातृभाषा' के नाम से अभिहित की गयी। यथार्थ में संस्कृत को अमरत्व रूप महर्षि पाणिनि ने प्रदान किया। उनके पूर्व की संस्कृत भाषा के व्याकरणिक रूपों में अत्यन्त विविधता थी। डॉ. पुसालकर का कथन है कि भारतीय पुराणों की भाषाविषयक अनियमितताओं को देखते हुए यह लक्षित किया गया है कि जन-बोलियों से प्रभावापन्न संस्कृत के ये पुराण आधे के लगभग प्राकृतत्व को लिये हुए हैं। इससे यही समझा जाता है कि मौलिक रूप में ये पुराण प्राकृत में लिखे गये थे, जिन्हें हठात् संस्कृत में अनूदित किया गया। प्राकृतिक प्रवृत्ति का प्रभाव वैदिक ग्रन्थों तक में प्राप्त होता है। परवर्ती काल में सहज रूप से प्राकृतों का प्रभाव धार्मिक ग्रन्थों, महाकाव्यों और पुराणों पर भी स्पष्ट रूप से लक्षित होता है।[2]

प्राचीनतम भाषा

लिखित भाषा के रूप में सबसे प्राचीनतम प्रमाण ऋग्वेद है। यद्यपि प्राचीन पाठ-परम्परा के अनुवर्तन से वेदों के मूल रूप का रक्षण होता रहा है, किन्तु भाषा-वैज्ञानिक यह मानते हैं कि ऋग्वेद की रचना किसी एक समय में और एक व्यक्ति के द्वारा न होकर विभिन्न युगों में संकलित हुई है। वैदिक रचनाएँ पुरोहित-साहित्य है। 'ऋग्वेद

---

१. विल्सन, ग्रेहम (सं.) : ए लिंग्विस्टिक्स रीडर, न्यूयार्क, १९६७ में प्रकाशित स्टेनली रुण्डले के निबन्ध 'लैंग्वेज एण्ड डायलेक्ट', पृ. ८७ से उद्धृत. "In fact, the grammarians of the day developed special rules for turning Samskrt into Prakrt, so that the real Prakrt tended to be lost to the written language and the literary Prakrt became a definite mutilation of Samskrt." (p. 87)

२. पुसालकर, ए. डी. : वेयर द पुराणाज ओरिजनली इन प्राकृत, आचार्य ध्रुव स्मारक ग्रन्थ, भाग ३, पृ. १०३, गुजरात विद्यासभा, अहमदाबाद

रिपीटीशन्स' में ब्लूमफील्ड ने स्पष्ट रूप से बताया है कि ऋग्वेद में लगभग एक चौथाई से भी अधिक पाद-पुनरावर्तन हुआ है। ऋग्वेद के प्रथम मण्डल और दशम मण्डल की भाषा में भी अन्तर लक्षित होता है। ऐतिहासिक दृष्टि से ऋग्वेद की रचना एवं संकलना का समय १२०० ई. पू.-१००० ई. पू. के लगभग माना जाता है। इस काल से साहित्यिक परम्परा सतत एवं अविच्छिन्न रही है और भारतीय आर्यभाषा का क्रमिक विकास विभिन्न अवस्थाओं में विविध रूपों में समाहित होकर विस्तृत हुआ है।[१] टी. बरो के अनुसार ऋग्वेद १००० ई. पू. के लगभग और अवेस्ता ६०० ई. पू. के लगभग की रचनाएँ हैं। ईरानी भाषा की प्राचीन स्थिति का प्रतिनिधित्व अवेस्ता तथा प्राचीन फारसी साहित्य के द्वारा किया जाता है और ये ही ग्रन्थ वैदिक संस्कृत की तुलना की दृष्टि से अत्यधिक महत्त्व के हैं। जरथुस्त्रीय धर्म के मतानुसार अवेस्ता उनके द्वारा सुरक्षित पवित्र लेखों का प्राचीन संग्रह है और इसके आधार पर वह भाषा भी अवेस्ता (भाषा) कहलाती है। यह कोरासिया प्रदेश में प्रचलित पूर्वी ईरानी विभाषा जान पड़ती है।[२] भारतीय आर्यभाषा की पश्चिमी बोलियाँ कुछ विषयों में ईरानी से साम्य रखती थीं। प्रो. एन्त्वान् मेय्ये ने ऋग्वेद की साहित्यिक भाषा का मूल सीमान्त प्रदेश की एक पश्चिमी बोली को ही निर्दिष्ट किया है। पश्चिम की इस बोली में 'ल' न होकर केवल 'र' था। किन्तु संस्कृत और पालि में 'र' और 'ल' दोनों थे। तीसरी बोली में 'र' न होकर केवल 'ल' ही था जो सम्भवतः सुदूरपूर्व की बोली थी। इस पूर्वी बोली की पहुँच आर्यों के प्रसार तथा भाषा विषयक विकास के द्वितीय युग के पहले-पहल ही आधुनिक पूर्वी-प्रदेश और बिहार के प्रदेशों तक हो गई थी। यही पूर्वी प्राकृत तथा उत्तरकालीन मागधी प्राकृत बनी।[३] इसमें 'र' न होकर केवल 'ल' था। वस्तुतः एक ही युग की ये तीन तरह की बोलियाँ थीं जो परवर्ती काल में विभिन्न रूपों में परिवर्तित होती रहीं। आगे चलकर विभिन्न जातियों के सम्पर्क के कारण इनमें अनेक प्रकार के मिश्रण भी हुए। असीरी-बाबिलोनी से आगत वैदिक भाषा में कई शब्द मिलते हैं।[४] जहाँ तक फिन्नो-उग्री के साथ प्राचीन भारत-ईरानी के सम्पर्क का सम्बन्ध है, इस सम्बन्ध में अधिक प्रमाण उपलब्ध हैं तथा उनका विश्लेषण करना अधिक सरल है। भारत-ईरानी काल के पूर्व भी भारोपीय तथा फिन्नोउग्री में सम्पर्क होने के प्रमाण मिलते हैं। इन भाषाओं में शब्दों का आदान-प्रदान दोनों दिशाओं में रहा होगा।[५]

---

१. द्रष्टव्य—बरो, टी : द संस्कृत लैंग्वेज, हिन्दी अनुवाद, पृ. ४३
२. वही, पृ. ६
३. चटर्जी, डॉ. सुनीतिकुमार : भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, पृ. ६३, द्वि. सं. १९५७
४. वही, पृ. ४१
५. बरो, टी. : द संस्कृत लैंग्वेज, हिन्दी अनुवाद, पृ. ३०

वैदिक, अवेस्ता और प्राकृत

(१) वैदिक काल से ही स्पष्ट रूप से भाषागत दो धाराएँ परिलक्षित होती हैं। इनमें से प्रथम 'छान्दस्' या साहित्य की भाषा थी और दूसरी जनवाणी या लोकभाषा थी। इसके स्पष्ट प्रमाण हमें अवेस्ता, निय प्राकृत तथा सर्वप्राचीन शिलालेखों की भाषा में उपलब्ध होते हैं। पालि-साहित्य की भाषा के अध्ययन से भी यह निश्चित हो जाता है कि उस समय तक कुछ ही भाषाएँ तथा भाषागत रूप परिमार्जित हो सके थे। उस समय की विविध बोलियाँ अपरिष्कृत दशा में ही थीं। ऋग्वेद में विभिन्न प्राकृत बोलियों के लक्षण मिलते हैं। उदाहरण के लिए, प्राकृत बोलियों में प्रारम्भ से ही 'ऋ' वर्ण नहीं था। अतएव संस्कृत-व्याकरण की रचना को देखकर जब प्राकृत-व्याकरण का विधान किया, तब यह कहा गया कि संस्कृत 'ऋ' के स्थान पर प्राकृत भाषा में 'अ', 'इ' या 'उ' आदेश हो जाता है। यह आदेश शब्द ही बताता है कि प्राकृत बोलियाँ किस प्रकार साहित्य में ढल रही थीं। व्याकरण बनने के पूर्व की भाषा और बोली में परवर्ती भाषा और बोली से अत्यन्त भिन्नता लक्षित होती है। वेदों की कई ऋचाओं में 'कृत' के लिए 'कड', 'वृत' के लिए 'वुड' तथा 'मृत' के लिए 'मड' शब्द प्रयुक्त मिलते हैं। 'पाइअ-सद्दमहण्णवो' की भूमिका में ऐसे तेरह विशिष्ट लक्षणों का विवेचन किया गया है, जिनसे वैदिक और प्राकृत भाषा में साम्य परिलक्षित होता है। वैदिक और प्राकृत भाषा में कुछ ऐसी समान प्रवृत्तियाँ मिलती हैं जो लौकिक संस्कृत में प्राप्त नहीं होतीं। श्री बी. जे. चोकसी ने इन दोनों में कई समान प्रवृत्तियों का निर्देश किया है।[1] वेदों की भाँति अवेस्ता की भाषा और प्राकृतों में कुछ सामान्य प्रवृत्तियाँ समान रूप में पायी जाती हैं। संस्कृत का अन्त्य 'अस्' अवेस्ता में 'ओ' देखा जाता है; यथा : अइयो, अउरुषो, इथ्येजो, गॅरमो, हॅमो, यो, नो, हओमो, दूरओषो, मश्यो, यिमो, पुथ्रो आदि।

(२) अवेस्ता, प्राकृत और अपभ्रंश में स्वर के पश्चात् स्वर का प्रयोग प्रचलित रहा है; किन्तु वैदिक और संस्कृत में एक शब्द में एक साथ दो स्वरों का प्रयोग नहीं मिलता। अवेस्ता के कुछ शब्द हैं : अएइती, अउरुन, अएम्, आअत्, अइ आदि। प्राकृत-अपभ्रंश में इस प्रकार के शब्द हैं : आइअ, ओइ, एउ, उइन्न, दइउ, संजोइउ, पलोइउ, आइउ, अइरा, आइद्ध, आउ, आएस, आइद्ध इत्यादि।

(३) अवेस्ता में एक ही शब्द कई रूपों में मिलता है; यथा : आयु, अयु; हमो, हामो; हुतश्तम्, हुताश्तम्; अह्वानम्, अह्नम्; य, यौ; इत्यादि। अपभ्रंश में भी कुच्छर-कोच्छर, कुइड-कोइड, कुम्पर-कुम्बर, गिरक्क-गिरिक्क, णिरुक्क, तिगिंछ-तिगिंछि-तिगिच्छ, णिडाल-णिडल, ढंक-ढंख, झिंदु-झेंदु, झिंदुलिय-झेंदुलिय, झुंवुक-झुमुक्क-झुंव्वुक, जोब-जोअ-जोय, झंप-झंपा आदि वैकल्पिक शब्द-रूप प्रचुरता से

1. चोकसी, वी. जे. : द वियान्सुयम् एण्ड कम्परेटिव प्राकृत ग्रैमर, अहमदाबाद, पृ. ६-८, १६३३

मिलते हैं। प्राकृत में भी इस तरह के शब्द-रूप विपुल मात्रा में मिलते हैं।

(४) लहमन ने प्राग्भारोपीय ध्वनि-प्रक्रिया का विचार करते हुए निर्दिष्ट किया है कि प्रामाणिक स्रोतों का निश्चय करने में व्यतिरेकी ध्वनिप्रक्रियात्मक एक आक्षरिक अपश्रुति भी है। सामान्य रूप से स्वरध्वनि के परिवर्तन को अपश्रुति (ablaut) कहते हैं। अपश्रुति मात्रिक और गुणीय दोनों प्रकार की कही गयी है। प्राग्भारोपीय ध्वनि-प्रक्रिया में एक पद-ग्राम में विविध स्वर ध्वनि-ग्रामों के परिवर्तन सभी भारोपीय बोलियों में लक्षित होते हैं और यही कारण है कि वे बोलियाँ भारोपीय भाषा की मूल स्रोत हैं।[१]

(५) अशोक के शिलालेखों तथा पालि-ग्रन्थों के मूल अंशों में 'ऋ' और 'लृ' स्वर उपलब्ध नहीं होते। वैदिककालीन बोलियों की विकसित अवस्था में घोषभाव की प्रक्रिया का पता भी यहीं से लगता है। अवेस्ता में कहीं-कहीं 'ऋ' के स्थान पर 'र' दिखलाई पड़ता है; यथा : रतूम्, गरमम्, दरगम् आदि। इसका कारण स्वरभक्ति कहा जाता है। स्वरभक्ति पालि, प्राकृत और अपभ्रंश में भी पायी जाती है।

टी. बरो के अनुसार ईरानी में भारत-यूरोपीय 'र्, ल्' बिना किसी भेद के 'र्' के रूप में मिलते हैं। ऋग्वेद की भाषा में भी मुख्यतः यही स्थिति है। किन्तु वास्तविकता यही है कि ईरानी, वैदिक, संस्कृत और पाली-प्राकृत में 'ल्' और 'र्' दोनों मिलते हैं। ऋग्वेद की भाषा में 'र्' की मुख्यता होने का कारण यही कहा जा सकता है कि ऋग्वैदिक बोली का मूलाधार उत्तर-पश्चिमी प्रदेश में था; जब कि शास्त्रीय भाषा मध्यदेश में बनी थी। इन दोनों का मूल विभाजन इस तरह का रहा होगा कि पश्चिमी विभाषा में 'र्' ठीक उसी तरह 'ल्' हो जाता होगा, जिस तरह ईरानी में (क्योंकि यह ईरानी के पास थी और साथ ही सम्भवतः परवर्ती प्रसार की धारा का प्रतिनिधित्व करती थी); जबकि अधिक पूर्वी विभाषा मूल भेद को सुरक्षित बनाये हुए थी।[२] सभी प्राकृत भाषाएँ सामान्य रूप से व्याकरणिक तथा कोशीय प्रवृत्तियों में वैदिक भाषा की श्रेणी में हैं, जिनमें प्राप्त होनेवाली विशेषताएँ संस्कृत में नहीं मिलतीं। अतएव प्राकृत भाषाओं की जो अन्विति मध्ययुगीन तथा नव्य भारतीय आर्य बोलियों से है, उससे कम किसी प्रकार वैदिक से नहीं है।[३] इस प्रकार अवेस्ता, वैदिक और प्राकृत भाषाओं में कुछ बातों में साम्य परिलक्षित होता है, जिससे इन भाषाओं में एक अन्विति तथा एकरूपता भलीभाँति प्राप्त होती है।

---

१. लेमन, विन्फ्रेड पी. : प्रोटो-इण्डो-यूरोपियन फोनोलाजी, पाँचवाँ संस्करण, १९६६, पृ. १२

२. बरो, टी. : द संस्कृत लैंग्वेज, १९६१, अनु. डॉ. भोलाशंकर व्यास, पृ. ६९-६६, वाराणसी

३. पिशेल, आर. : कम्परेटिव ग्रैमर ऑव द प्राकृत लैंग्वेज, १९६५, अनु. सुभद्र झा, द्वि. सं., पृ. ४-५

तीर्थंकर महावीर के युग में ई. पू. ६०० के लगभग १८ महाभाषाएँ और ७०० लघु भाषाएँ (बोलियाँ) प्रचलित थीं। उनमें से जैन साहित्य में प्रादेशिक भेदों के आधार पर आवश्यक, औपपातिक, विपाक, ज्ञातृधर्मकथांग, राजप्रश्नीय आदि आगमग्रन्थों तथा 'कुवलयमाला कहा' एवं अन्य काव्यग्रन्थों में अठारह प्रकार की प्राकृत बोलियों का उल्लेख मिलता है। 'निशीथचूर्णि' में अठारह देशी भाषाओं से नियत भाषा को अर्द्धमागधी कहा गया है।[1] उद्योतनसूरि ने 'कुवलयमाला कहा' में विस्तार के साथ गोल्ल, मगध, अन्तर्वेदि, कीर, ढक्क, सिन्धु, मरु, गुर्जर, लाट, मालवा, कर्णाटक, ताजिक, कोशल और महाराष्ट्र प्रभृति अठारह देशीभाषाओं का विवरण दिया है जो कई दृष्टियों से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वेदों, स्मृतियों एवं पौराणिक साहित्य में अनेक स्थानों पर कहा गया है कि लोक में कई बोलियाँ बोली जाती हैं।[2] शिष्य के अनुरूप ही गुरु को संस्कृत, प्राकृत तथा देशी भाषा आदि का शिक्षण देना चाहिए।[3] 'स्वभावसिद्ध' के अर्थ में 'प्राकृत' शब्द का उल्लेख 'श्रीमद्‌भागवत' तथा 'लिंगपुराण' आदि पुराणों में लक्षित होता है।[4] भरतकृत 'गीतालंकार' में सबसे अधिक ४२ भाषाओं का उल्लेख मिलता है। उनके नाम हैं : महाराष्ट्री, किराती, म्लेच्छी, सोमकी, कांची, गालवी, काशिसम्भवा, देविका, कुशावर्ता, सूरसेनिका, बाँधी, गूर्जरी, रोमकी, कानमूसी, देवकी, पंचपत्तना, सैन्धवी, कौशिकी, भद्रा, भद्रभोजिका, कुन्तला, कोशला, पारा, यावनी, कुर्कुरी, मध्यदेशी तथा काम्बोजी प्रभृति। ये बयालीस प्रसिद्ध बोलियाँ थीं जिनमें गीत लिखे जाते थे। किसी युग में गीतों का विशेष प्रचलन था। आचार्य भरतमुनि के समय में प्राकृत के गीत प्रशस्त माने जाते थे। उन्होंने ध्रुवा तथा गीतियों एवं लोकनाट्य के प्रसंग में विविध विभाषाओं (बोलियों) का वर्णन किया है, जिसमें मागधी गीतियों को प्रथम स्थान दिया गया है।[5] इन गीतियों के विधान को देखकर और महाकवि कालिदास आदि की रचनाओं में प्रयुक्त गीतियों की बहुलता से यह निश्चय हुए बिना नहीं रहता कि आद्य लोक-साहित्य गीतियों में निबद्ध रहा होगा। मौखिक रूप में गीतियों का प्रचलन सहज तथा सुकर है।

'प्राकृत' का एक निश्चित भाषा के रूप में विस्तृत विवरण हमें आचार्य भरतमुनि

१. जैन, डॉ. जगदीशचन्द्र : जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज, पृ. ३०४, वाराणसी, १९६५

२. "जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।" —अथर्ववेद, का. १२, अ. १, पृ. १-४५

३. संस्कृतैः प्राकृतैः वाक्यैः शिष्यमनुरूपतः।
देशभाषाद्युपायैश्च बोधयेत् स गुरु स्मृतः।।

४. वाल्मीकि रामायण, सुन्दरकाण्ड, ३०, १७, १९
"प्राकृतः कथितस्त्वेष पुरुषाधिष्ठितो मया।"—लिंगपुराण, ३, ३९
"विधिः साधारणो यत्र सर्गाः प्राकृतवैकृताः।" —श्रीमद्भागवत, अ. १०, श्लो. ४६

५. नाट्यशास्त्र, ३२, ४३१

के 'नाट्यशास्त्र' में मिलता है। प्राकृत के सम्बन्ध में उनका विवरण इस प्रकार है :

(१) रूपक में वाचिक अभिनय के लिए संस्कृत और प्राकृत दोनों पाठ्य लोकप्रचलित हैं। इन दोनों में केवल यही अन्तर है कि संस्कृत संस्कार (सँवारी) की गयी भाषा है और प्राकृत संस्कारशून्य अथवा असंस्कृत भाषा है। कुमार, आपिशलि आदि वैयाकरणों के द्वारा जिस भाषा का स्वरूप नियत एवं स्थिर कर दिया गया है, वह 'संस्कृत' है, किन्तु जो अनगढ़, देशी शब्दों में भरित एवं परिवर्तनशील है, वह 'प्राकृत' है।

इससे पता लगता है कि वास्तव में भाषा का प्रवाह एक ही था, किन्तु समय की धारा में होने वाले परिवर्तनों के कारण प्राकृत लोकजीवन का अनुसरण कर रही थी; जबकि संस्कृत व्याकरणिक नियमों से अनुशासित थी। अभिनवगुप्त ने 'नाट्यशास्त्र' की विवृति में इसी तथ्य को स्पष्ट किया है।[१]

(२) आचार्य भरतमुनि ने वैदिक शब्दों से भरित भाषा को अतिभाषा, संस्कृत को आर्यभाषा और प्राकृत को जातिभाषा के नाम से अभिहित किया है।[२] जातिभाषा से उनका अभिप्राय जनभाषा से है। बोलियों के रूप में स्पष्ट ही सात तरह की प्राकृतों का निर्देश किया गया है।[३] इनके नाम हैं : मागधी, अवन्तिका, प्राच्या, शौरसेनी, अर्धमागधी, वाह्लीक और दाक्षिणात्य। वास्तव में बोलियों के ये भेद प्रादेशिक आधार पर किये गये हैं। 'प्राकृतकल्पतरु' में भी प्रथम स्तवक में शौरसेनी, द्वितीय स्तबक में प्राच्या, आवन्ती, वाह्लीकी, मागधी, अर्धमागधी और दाक्षिणात्या का विवेचन किया गया है। इस विवेचन से यह भी स्पष्ट होता है कि मूल में पश्चिमी और पूर्वी दो प्रकार के भाषा-विभाग थे। बोलियाँ इनसे किंचित् भिन्न थीं। रामशर्मा ने विभाषा-विधान नामक तृतीय स्तबक में शाकारिकी, चाण्डालिका, शाबरी, आभीरिका, टक्की आदि के लक्षण एवं स्वरूप का प्रतिपादन किया है। इसी प्रकार तृतीय शाखा में नागर, व्राचड और पैशाची अपभ्रंश का विवेचन किया गया है।

ऑल्सडोर्फ के अनुसार भारतीय आर्यभाषा की सबसे प्राचीनतम अवस्था वैदिक ऋचाओं में परिलक्षित होती है। कई प्रकार की प्रवृत्तियों तथा भाषागत स्तरों के

---

१. एतदेव विपर्यस्तं संस्कारगुणवर्जितम्।
विज्ञेयं प्राकृतं पाठ्यं नानावस्थान्तरात्मकम्।। —नाट्यशास्त्र, अ. १७, श्लो. २
संस्कृतमेव संस्कारगुणेन यत्नेन परिरक्षणरूपेण वर्जितं प्राकृतं प्रकृतेरसंस्कारस्वभावाः आगतम्। नन्वपभ्रंशानां को नियम इत्याह—नानावस्थान्तरात्मकम् देशीविशेषेषु प्रसिद्धया नियमितमित्येव।''—तथा—''देशीपदमपि स्वरसेव प्रयोगावसरे प्रयुज्यत इति तदपि प्राकृतमेव, अव्युत्पादितप्रकृतेस्तज्जनप्रयोज्यत्वात् प्राकृतमिति केचित्।'' —विवृति (अभिनवगुप्त)
२. नाट्यशास्त्र, १७, २७।
३. मागध्यवन्तिका प्राच्या शौरसेन्यर्धमागधी।
वाह्लीका दाक्षिणात्या च सप्तभाषाः प्रकीर्तिताः।। —नाट्यशास्त्र, अ. १७, श्लो. ४६

अनुशीलन से यह स्पष्ट है कि बोली ही विकसित होकर संस्कृत काव्यों की भाषा के रूप में प्रयुक्त हुई। अतएव उसमें ध्वनि-प्रक्रिया तथा बहुत से शब्द बोलियों के समाविष्ट हो गये हैं। शास्त्रीय संस्कृत का विकास-काल चौथी शताब्दी से लेकर आठवीं शताब्दी तक रहा है। केवल संस्कृत-साहित्य में ही नहीं, वैदिक भाषा में भी बहुत से ऐसे शब्द हैं जो निश्चित रूप से ध्वनि-प्रक्रियागत परिवर्तनों से सम्बद्ध प्राकृत के प्रभाव को निःसन्देह प्रमाणित करते हैं।[1] भौगोलिक दृष्टि से शिक्षा-ग्रन्थ में स्वरभक्ति का उच्चारण जिस क्षेत्र में निर्दिष्ट किया गया है, वह अर्धमागधी और अपभ्रंश का क्षेत्र है।[2] प्राकृत के प्राचीन प्राच्य वैयाकरणों में शालक्य, माण्डव्य, कोहल और कपिल का उल्लेख किया गया है। यद्यपि उनकी रचनाएँ अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी हैं, किन्तु मार्कण्डेय ने 'प्राकृतसर्वस्व' में शाकल्य और कोहल के साथ ही भरत, वररुचि, भामह और वसन्तराज का विशेष रूप से उल्लेख किया है। माण्डव्य का रामतर्कवागीश ने और कपिल का रामशर्मा तथा मार्कण्डेय ने नामोल्लेख किया है।[3] यद्यपि प्राकृत के प्राच्य शिलालेख कम मिलते हैं, पर प्रवृत्ति-भेद से डॉ. मेहन्दाले ने दक्षिणी, पश्चिमी, मध्यदेशीय और प्राच्य भेद माने हैं।[4] भौगोलिक दृष्टि से इस प्रकार के चार भेद प्रवृत्तिगत भिन्नता के कारण अत्यन्त प्राचीनकाल से बराबर आज तक बने हुए हैं। प्राचीन वैयाकरणों ने भी इन भेदों का उल्लेख किया है।[5]

भारतीय आर्यभाषाओं के इतिहास की तीन अवस्थाएँ वास्तव में एक ही भाषा-प्रवाह की तीन विभिन्न युगीन स्थितियाँ हैं जो नाम-रूपों के भेद से अलग-अलग नामों से अभिहित की गयीं। ऐतिहासिक काल-क्रम की दृष्टि से बोलियों की विभिन्न अवस्थाओं का विवेचन करना एक भाषाविद् का कार्य है। क्षेत्रीय भेदों के अनुसार उत्तर-पश्चिम में उपलब्ध अशोक के शिलालेख मानसेहरा और शाहबाजगढ़ी, खरोष्ठी धम्मपद की प्राकृत बोली तथा पैशाची और उसकी सम्भावित उपबोलियाँ, पूर्व में गंगा और महानदी की तराई में उपलब्ध अशोक के शिलालेख, सतनुक के रामगढ़-शिलालेख तथा नाटकों में प्रयुक्त मागधी प्राकृत और उसके उपविभाग, पश्चिम में गिरनार, बौद्ध-साहित्य की भाषा पालि, सातवाहन तथा पश्चिमीय क्षत्रप राजाओं के शिलालेखों की प्राकृत और महाराष्ट्री प्राकृत, मध्यदेश में शौरसेनी और पूर्व की ओर जैनागमों की अर्धमागधी एवं तादृश अशोकशिलालेखीय बोली परिलक्षित होती है। किन्तु इस

१. ऑल्सडोर्फ, लुडविग : द ओरिजिन ऑव द न्यू इण्डो-आर्यन स्पीचेज, अनु. एस. एन. घोषाल, जर्नल ऑव द ओरि. इ., बड़ौदा, जिल्द १०, सं. २, पृ. १३२-१३३, दिस. १९६०
२. वर्मा, सिद्धेश्वर : द फोनेटिक आब्जर्वेशन्स ऑव इण्डियन ग्रेमेरियन्स, पृ. ८०, दिल्ली, १९६१
३. बनर्जी, डॉ. सत्यरंजन : फ्रेग्मेण्ट्स ऑव द अर्लिएस्ट प्राकृत ग्रेमेरियन्स, श्री महावीर जैन विद्यालय सुवर्णमहोत्सव ग्रन्थ, भा. १, पृ. २७०-२७४, १९६८
४. मेहन्दाले, डॉ. एन. ए. : हिस्टारिकल ग्रैमर ऑव इन्स्क्रिप्शनल प्राकृत्स, परिचय, पृ. १५
५. द्रष्टव्य है : निरुक्त (यास्क) द्वितीय अध्याय, षष्ठ पाद

विभाजन में कुछ बोलियाँ छूट जाती हैं। अतएव ऐतिहासिक कालक्रमानुसार किया गया वर्गीकरण अधिक अच्छा और सुनिश्चित है। प्राचीनतम अवस्था में अनेक शिलालेख, पालि, अर्धमागधी और पैशाची की गणना की जाती है। परवर्ती अवस्था में शौरसेनी, मागधी, जैन महाराष्ट्री और जैन शौरसेनी निर्दिष्ट की गयी हैं। अनन्तर उत्तरकालिक विकास में महाराष्ट्री प्राकृत और विभिन्न अपभ्रंश बोलियाँ आती हैं।[1] अशोक के लगभग चौंतीस अभिलेख मिलते हैं। अशोक के शिलालेखों में पैशाची, मागधी और शौरसेनी प्राकृत की प्रवृत्तियाँ लक्षित होती हैं। डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री ने 'अशोककालीन भाषाओं का भाषाशास्त्रीय सर्वेक्षण' शीर्षक लेख में बताया है कि अशोक के समय की पश्चिमोत्तरीय (पैशाच-गान्धार), मध्यभारतीय (मागध), पश्चिमीय (महाराष्ट्र) और दाक्षिणात्य (आन्ध्रकर्णाटक) बोलियाँ उस समय की जनभाषाएँ हैं।[2] पश्चिमोत्तरीय वर्ग की बोली में शाहबाजगढ़ी और मानसेहरा के अभिलेख; मध्यभारतीय बोली में वैराट, दिल्ली-टोपरा, सारनाथ और कलिंग-अभिलेख; पश्चिमी में गिरनार और बम्बई में सोपारा के अभिलेख एवं दाक्षिणात्य में दक्षिणी अभिलेख सम्मिलित हैं। पश्चिमोत्तरीय में दीर्घ स्वरों का अभाव, ऊष्म व्यंजनों का प्रयोग, अन्तिम हलन्त व्यंजनों का अभाव, रेफ का प्रयोग एवं प्रथमा विभक्ति एकवचन में एकारान्त शब्दों का अस्तित्व पाया जाता है। मध्यभारती बोली में 'र्' के स्थान पर 'ल्', प्रथमा एकवचन में एकारान्त रूप का सद्भाव, स्वरभक्ति का अस्तित्व, 'अहं' के स्थान पर 'हकं' का प्रयोग, 'तु' के स्थान पर 'तवे', 'तुम्हाण' अथवा 'तुज्झाण' के स्थान पर 'तुफाकं' एवं 'कृ' धातु के 'क्त' के स्थान पर 'ट' का प्रयोग पाया जाता है। पश्चिमीय बोली में 'र' का प्रयोग, अधोवर्ती रेफ का शीर्षवर्ती रेफ में प्रयोग, न्य और ञ्य के स्थान पर 'ञ' तथा 'ट' में परिवर्तन, प्रथमा एकवचन में ओकारान्त रूप, 'र्द्ध' के स्थान पर 'इ्ढ' एवं सप्तमी विभक्ति के एकवचन में 'स्मिं' के स्थान पर 'म्हि' का प्रयोग पाया जाता है। दाक्षिणात्य बोली में मूर्द्धन्य 'ण्' का प्रयोग, तालव्य 'ञ्' का प्रयोग, स्वरभक्ति की प्राप्ति, 'स' के स्थान पर 'ष', ऊष्म वर्णों का दन्त्य वर्ण के रूप में प्रयोग एवं 'तु' के स्थान पर 'तवे' का प्रयोग मिलता है।[3] अशोक के शिलालेखों के अतिरिक्त दो अन्य प्राकृत अभिलेख भी उल्लेखनीय हैं। ये हैं—कलिंगराज खारवेल का हाथीगुम्फा अभिलेख और यवन राजदूत हिलियोदोरस का बेसनगर अभिलेख। इन अभिलेखों में प्राचीन भारतीय आर्यभाषा से परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ स्पष्ट लक्षित होती हैं।

ई. पू. १००० से ६०० वर्षों का काल भारतीय आर्यभाषा का संक्रान्तिकाल कहा

---

१. घाटगे, डॉ. ए. एम. : हिस्टॉरिकल लिंग्विस्टिक्स एण्ड इण्डो-आर्यन लैंग्वेज, पृ. ११२, बम्बई, १६६२

२. शास्त्री, डॉ. नेमिचन्द्र : अशोक-कालीन भाषाओं का भाषाशास्त्रीय सर्वेक्षण, परिषद्-पत्रिका, भाषा-सर्वेक्षणांक, वर्ष ८, अंक, ३-४, पृ. ७९

३. वही, पृ. ७८ से उद्धृत

जा सकता है। विभिन्न आर्य तथा आर्येतर प्रजाओं के सम्पर्क से इस दीर्घ काल की अवधि में एक ऐसा भाषा-प्रवाह लक्षित होने लगा था, जिसमें विभिन्न जातियों तथा भाषाओं के आगत शब्द आर्य बोलियों में समाहित हो गये थे और आर्यभाषा में एक नया परिवर्तन लक्षित होने लगा था। अतएव वैयाकरणों और दार्शनिकों ने आर्यभाषा की साधुता की ओर लक्ष्य दिया। भाषाविषयक परिवर्तन के वेग को अवरुद्ध करने के लिए वैयाकरणों ने दो महान् कार्य किये। प्रथम प्रयत्न में उन्होंने गणों की व्यवस्था की। महर्षि पाणिनि ने 'पृषोदरादि' गणों की सृष्टि कर शब्द-सिद्धि का एक नया मार्ग ही उन्मुक्त कर दिया। दूसरे प्रयत्न में स्वार्थिक प्रत्यय का विधान कर देशी तथा म्लेच्छ भाषाओं से शब्दों को उधार लेकर अपनाने की तथा रचाने-पचाने की एक नयी रीति को ही जन्म दिया। इन दोनों ही कार्यों से संस्कृत का शब्द-भाण्डार विशाल हो गया और भाषा स्थिर तथा निश्चित हो गयी। सम्भवतः इसी ओर लक्ष्य कर मीमांसादर्शन में शबरमुनि कहते हैं कि जिन शब्दों को आर्य लोग किसी अर्थ में प्रयोग नहीं करते, किन्तु म्लेच्छ लोग करते हैं; यथा, पिक, नेम, सत, तामरस आदि शब्दों में सन्देह है।[1] ऋग्वेद में प्रयुक्त कई शब्द मुण्डा भाषा के माने जाते हैं। उदाहरण के लिए कुछ शब्द हैं :

कपोत—दुर्भाग्य दायक (ऋग्वेद १०।१६५।१), लांगल—हल (ऋग्वेद), वार—घोड़े की पूँछ (ऋग्वेद १।३२।१२), मयूर (ऋग्वेद १।१६१।१४), शिम्बल—सेमल पुष्प (ऋग्वेद ३।५३।२२) इत्यादि। जॉ प्रजिलुस्की ने ऐसे अनेक शब्दों की एक लम्बी सूची दी है।[2] काल्डवेल ने भी संस्कृत में अधिगृहीत ऐसे अनेक शब्दों की एक लम्बी सूची विस्तृत विवरण के साथ दी है।[3] यद्यपि संस्कृत वैयाकरणों की दृष्टि में इस प्रकार के शब्द तथा देशी उपादानों के सम्बन्ध में कोई दृष्टि नहीं थी और न उनमें से किसी ने इस बात का विचार ही किया था कि कितने शब्द या उनके मूल रूप (धातु) देशी हैं और कौन-से आगत शब्द विदेशी हैं। परन्तु काल्डवेल, गुण्डर्ट, सिलवां लेवी, प्रजिलुस्की, अमृत रो और ब्लूमफील्ड आदि विद्वानों की खोजों से अब यह निश्चित हो गया है कि भारतीय आर्यभाषाओं में बहुत बड़ी मात्रा में विदेशी उपादान लक्षित होते हैं। ब्लूमफील्ड ने कुछ शब्दों के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला था कि पालि-प्राकृत में प्राक्-वैदिक बोलियों के शब्द-रूप निहित हैं। वेदों में शिष्ट भाषा का प्रयोग किया गया है। वैदिक युग की बोलचाल की भाषा प्राकृत ही थी जो कुछ बातों में संहिताओं की साहित्यिक भाषा से भिन्न थी। अनेक वैदिक युग की बोलियों

१. "चोदितं तु प्रतीयेत अविरोधात् प्रमाणेन।"
"अथ यान्शब्दान् आर्या न कस्मिंश्चिदर्थे आचरन्ति म्लेच्छास्तु कस्मिंश्चित् प्रयुञ्जते यथा— पिक-नेम सत-तामरस आदि शब्दाः तेषु सन्देहः।" —शबरभाष्य, अ. १, पा. ३, सू. १०, अ. ६

२. द्रष्टव्य है : प्रि-आर्यन एण्ड प्रि-ड्रैविडियन, पृ. ६-१०

३. काल्डवेल, रॉबर्ट : ए कम्पेरेटिव ग्रैमर ऑव द ड्रैविडियन ऑर साउथ इण्डियन फेमिली ऑव लैंग्वेजेज, मद्रास, पृ. ५६७-६८८, तृतीय संस्करण, १९६१

के शब्द आज भी विभिन्न प्रदेशों में प्रचलित हैं। इन प्राकृत बोलियों की एक प्रमुख विशेषता 'देशी' शब्दों की बहुलता है। ऋग्वेद आदि में प्रयुक्त वंक (वक्र), मेह (मेघ), पुराण (पुरातन), तितउ (चालनी), जूर्ण (जूना, पुराना), उलूखल, (उदूखल, ओखली), उच्छेक (उत्सेक) और अजगर आदि प्राकृत बोलियों के शब्द उपलब्ध होते हैं। इन देशी शब्दों की ग्रहणशीलता 'देशी' की प्राचीनता को सिद्ध करती है। ज्यूल ब्लॉख ने भी 'देशी' को प्राकृत का प्राचीन रूप कहा है। उनके अनुसार देशी प्राकृत का एक प्राचीन पूर्व-रूप है जो बहुत रोचक है। क्योंकि इससे उसे छोड़कर अज्ञात भाषाओं के अस्तित्व का पता चलता है। 'देशी' केवल शैली और आज भी पायी जाने वाली भाषाओं की शब्दावली में लिये गये अंशों की ओर संकेत करती है।[1] प्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक बीम्स के अनुसार देशी शब्द सदा से लोक-बोलियों में प्रयुक्त रहे हैं। साहित्य की भाषा में प्रायः उनके प्रयोग नहीं मिलते। महर्षि पतंजलि ने महाभाष्य के वार्तिक 'सर्व देशान्तरे' में यह निर्दिष्ट किया है कि यदि कहीं पर कोई धातु या नाम-रूप किसी विशिष्ट अर्थ का द्योतक नहीं है, तो वह समझना चाहिए कि किसी क्षेत्र विशेष में वह अर्थबोधक है। अतः अन्य क्षेत्र में उसके अर्थ का सन्धान करना उचित है। (महाभाष्य १,६-१०)

प्रथम अवस्था :

भाषावैज्ञानिकों ने भारतीय आर्यभाषाओं के विकास के तीन स्तरों का निर्देश किया है। डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार ये तीन स्तर हैं—प्रथम प्राकृत, द्वितीय प्राकृत तथा तृतीय प्राकृत। प्राकृत का अर्थ है—नैसर्गिक एवं अकृत्रिम भाषा।[2] प्राकृत जनसाधारण की बोली अथवा बोलियों को कहा जाता था। शताब्दियों तक आर्यभाषा इसी नाम से प्रचलित रही है। अतएव प्रथम स्तर की प्राकृत के अन्तर्गत प्राचीन वैदिक मन्त्रों की उन ऋचाओं की परिगणना की जाती है, जिनकी भाषा वैदिक युग में जनसाधारण की थी। वस्तुतः साहित्यिक भाषाओं का विकास तत्कालीन बोलियों के आधार पर हुआ है। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि परवर्ती वैदिक साहित्य में साहित्यिक सौष्ठव तथा कृत्रिमत परिलक्षिता होती।

आदि काल से ही प्राकृत भाषाओं की जड़ें जनता की बोलियों के भीतर जमी हुई हैं।[3] यद्यपि आज उस बोलचाल की प्राकृत का मूल रूप नहीं मिलता, क्योंकि बोली जाने वाली भाषा सदा विकासशील रहती है और बोलचाल की भाषाओं में साहित्य नहीं लिखा जाता है। भाषा-विज्ञान के अध्ययन से यह भलीभाँति सिद्ध हो चुका है कि

१. ब्लॉख, ज्यूल : भारतीय-आर्यभाषा, १९६३, अनु. डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ. १५
२. ग्रियर्सन, सर जॉर्ज अब्राहम, अनु. डॉ. उदयनारायण तिवारी : भारत का भाषा-सर्वेक्षण, खण्ड १, भाग १, पृ. २३६-३७
३. पिशेल, रिचर्ड, अनु. डॉ. हेमचन्द्र जोशी : प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, पृ. १४

प्राकृत संस्कृत का विकृत रूप नहीं है। जो लोग 'प्रकृतिः संस्कृतम्' कहकर उससे उत्पन्न होने वाली प्राकृत का निर्वचन करते हैं, उनका अभिप्राय उस साहित्यिक प्राकृत से होता है, जिसका 'मॉडल' (आकार-प्रकार) संस्कृत-व्याकरण की समता में प्रस्तुत किया गया है और जिसका व्याकरण सदा संस्कृत-व्याकरण को ध्यान में रखकर लिखा गया है। इतना ही नहीं, प्राकृत भाषा को वैयाकरणों ने संस्कृत के आधार पर समझाया है, इसलिए प्राकृत के नियम संस्कृत के व्याकरण के आधार पर बने और यह निर्देश किया गया कि जहाँ संस्कृत में यह विभक्ति होती है, उसके स्थान पर प्राकृत में यह अमुक विभक्ति हो जाती है।

साहित्यिक प्राकृतों का भी एक आदर्श स्तर रहा है, जिसके प्रमाण प्राचीन अभिलेखों में मिलते हैं। यद्यपि प्राचीन समय में प्राकृत राजसभा की भाषा थी और सिन्ध से लेकर मध्यदेश तथा मगध तक बोली जाती थी, किन्तु समय-समय पर अन्य भाषाओं का प्रभाव भी इस पर अपना पानी चढ़ाता रहा। जब से प्राकृत में साहित्यिक रचना आरम्भ हुई, तभी से यह संस्कृत की प्रतिस्पर्धा में आ गयी और संस्कृत के समानान्तर ही इसका साहित्यिक विकास होने लगा। परन्तु कालान्तर में जन-भाषा से इसका सम्पर्क हटता चला गया। यहाँ तक कि भाषा को कृत्रिम एवं साहित्यिक बनाने के लिए अनेक संस्कृत शब्दों को विकृत कर उनका प्रयोग भरती के शब्दों के साथ किया गया। वास्तव में 'भाषा' शब्द का प्रयोग कालान्तर में साहित्यिक भाषा के लिए किया गया। भारतीय आर्यभाषा का सर्वप्राचीन यह रूप ऋग्वेद में लक्षित होता है। इसे एक प्रकार की साधुभाषा भी कहा गया है। प्रो. एण्टोने मैलेट ने ऋग्वेद की भाषा का मूल आर्यभाषी प्रदेश की एक पश्चिमी बोली को ही बताया है। उनके अनुसार मूल वैदिक भाषा में ईरानी की भाँति केवल 'र' ध्वनि ही थी।[1] अवेस्ता और वैदिक भाषाओं के तुलनात्मक अध्ययन से यह प्रमाणित हो चुका है कि वैदिक भाषाओं का समय ई. पू. २००० से प्राचीनतर नहीं हो सकता।[2] अतएव भाषा-विकास के स्तर की प्रथम अवस्था का समय ई. पू. २००० से ६०० ई. पू. माना जा सकता है।

ई. पू. आठवीं शताब्दी के लगभग भाषा की वह संक्रमणशील अवस्था परिलक्षित होने लगती है, जिसमें साहित्यिक भाषा विभिन्न बोलियों के सम्पर्क में आने लगती है तथा उत्तरीय जनों की बोली को आदर्श माना जाने लगता है। भाषा का प्रवाह मूलतः जनबोलियों के संगम से विकसित हुआ और इसलिए परवर्ती संस्कृत रचनाओं में इतना अन्तर बढ़ता गया कि बाद में यह समझना भी एक प्रकार से कठिन-सा हो गया कि संस्कृत वैदिक भाषा से विकसित हुई है। न जाने भाषागत कितने संक्रमण इस काल ने देखे और परिणामतः जब बोलियों को महत्त्व प्रदान किया गया, तो पालि और प्राकृत

१. द्रष्टव्य है—डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या : भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, पृ. ६३
२. वही, पृ. ७०

जैसी भाषाएँ साहित्यिक आदर्श के रूप में अवस्थित हो गयीं। यही वह समय था, जबकि भ्रमणशील अन्य जातियों की भाँति व्रात्य वैदिक परम्पराओं से हटकर जिस भाषा का जैसा प्रयोग करते थे, वह सामाजिकों को मान्य था। यद्यपि वे वैदिक धर्म में दीक्षित नहीं थे, किन्तु दीक्षा पाने वालों की भाँति भाषा बोलते थे।[1] बोलचाल की यह भाषा वैदिक काल में आम जनता की भाषा थी जो कुछ बातों में संहिताओं की साहित्यिक भाषा से भिन्न थी।[2] वेदों में अधिकतर शिष्ट भाषा को सुरक्षित रखने का प्रबल किया गया है, किन्तु अनायास ही कुछ बोलियों के रूपों का भी समावेश हो गया है! यह भी कहा जाता है कि भारत में आर्यों के विस्थापित होने के अनन्तर भारतीय आर्य भाषा का विकास तीव्र गति से हुआ। वैदिक युग में बोलियाँ अत्यन्त विकसित हो चली थीं। विभिन्न जातियों के सम्पर्क से विविध बोलियों में समावर्तन हुआ और परिणामतः साहित्य की भाषा का मानकीकरण करना पड़ा। वास्तव में आर्यबोली के स्वरूप का पता ऋग्वेद से नहीं चलता।[3] यह बात अवश्य है कि जिस रूप में वेदों की भाषा आज हमारे सामने है, निश्चित ही उसका मूल रूप उससे पुराना रहा होगा; क्योंकि विभिन्न पीढ़ियों के परिवर्तन से ध्वनिविषयक कुछ-न-कुछ परिवर्तन अवश्य लक्षित होते हैं। यद्यपि मन्त्रोच्चार की विधि अत्यन्त पवित्र और सुरक्षात्मक रूप में रही, किन्तु निश्चित ही मूल भाषा इससे भिन्न रही होगी।[4] भाषा-विकास के इतिहास में एक समय ऐसा भी आता है जब वेदों की भाषा को समझना अत्यन्त कठिन हो जाता है। वह केवल पुरोहित वर्ग तक सीमित हो जाती है। किन्तु वैदिक बोलियों का प्रवाह शिष्ट तथा सामान्य जनता के दो तटों के मध्य निर्बाध गति से प्रवाहित होता रहता है। बोली का प्रवाह कभी रुकता नहीं है। यथार्थ में बोलियों की विकासशील अवस्था से ही प्राकृत भाषा का जन्म हुआ।

भाषा-विकास की प्रथम अवस्था में ऋग्वेद की भाषा में मुख्यतः 'र' पाया जाता है, किन्तु प्राकृत-बोलियों में 'ल' भी मिलता है। साथ ही भाषा के इतिहास से हम यह भी भलीभाँति जानते हैं कि प्राचीन ईरानी भाषा में प्रत्येक भारोपीय 'ल' का परिवर्तन 'र' में हो गया था।[5] वाकरनागल का यह कथन उचित ही प्रतीत होता है कि ऋग्वेद के प्रथम मण्डल की अपेक्षा दशम मण्डल की भाषा में अत्यन्त परिवर्तन लक्षित होता है।[6] अतएव इस मण्डल की भाषा में 'कृणु' के स्थान पर प्राकृतिक धातु 'कुरु' का प्रयोग मिलता है। इसी प्रकार ऋग्वेद का 'चर्' अथर्ववेद तक

१. डॉ. सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या : भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, , पृ. ७१
२. सरकार, दिनेशचन्द्र : ए ग्रामर ऑव द प्राकृत लैंग्वेज, भूमिका, पृ. १
३. पण्डित, डॉ. प्रबोध बेचरदास : प्राकृत भाषा, पृ. १४
४. द्रष्टव्य है—भारत का भाषा-सर्वेक्षण, पृ. २२५
५. सं. मजूमदार, आर. सी. : द वैदिक एज, जिल्द १, पृ. ३३५
६. वही, पृ. ३३६

आते-आते 'चल्' ही जाता है। यही नहीं ऋग्वेद का 'उदुम्बल' (१०।१४।१२) तथा 'भद्रं-भल' (ऋग्वेद, १०।८६।२३) 'मुद्गल' (ऋग्वेद, १०।१०२।६) और 'फाल' (ऋग्वेद, १०।११७।७) आदि शब्दों में 'लकार' परवर्ती प्रयोग है। ऋग्वेद में कई विभक्ति-चिह्न के प्राचीन और नवीन दोनों प्रकार के रूप मिलते हैं। अकारान्त तथा हलन्त शब्दों में प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के द्विवचन में 'आ' और 'औ' दोनों विभक्ति-चिह्न मिलते हैं। ऋग्वेद में 'औ' वाले रूपों की अपेक्षा 'आ' वाले रूप सात गुने अधिक हैं। अकारान्त शब्दों में प्रथमा बहुवचन में 'अस्' और 'असस्' दोनों विभक्ति-चिह्न लगते हैं। नपुंसकलिंग शब्दों में प्रथमा बहुवचन के 'आ' और 'आनि' ये दो विभक्ति-चिह्न हैं। पुराना 'आ' 'आनि' की अपेक्षा ऋग्वेद में तीन और दो के अनुपात में है। अथर्ववेद में स्थिति ठीक इसके विपरीत है।[1] एजर्टन ने संस्कृत ध्वनि-प्रक्रिया का ऐतिहासिक विकास निरूपित करते हुए स्पष्ट रूप से बताया है कि ऋग्वेद में 'र' की प्रचुरता है और 'ल' विरल है, जिससे आर्य-ईरानी से उसका निकट का सम्बन्ध निश्चित होता है। भाषा के परवर्ती विकास में 'ल' स्वच्छन्दता से प्रयुक्त मिलता है। भारोपीय और संस्कृत के सम्बन्ध में 'र' और 'ल' को लेकर कोई नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। क्योंकि संस्कृत में 'ल' बोली के मिश्रण के फलस्वरूप प्राप्त होता है।[2] ऋग्वेद के 'इह' का प्राचीन रूप 'इध' प्राकृत में ही मिलता है जो अवेस्ता 'इद' का समकालिक रूप है। ध्वन्यात्मक विशेषताओं की दृष्टि से हम विशेषकर संस्कृत तथा मध्य क्षेत्र की परवर्ती प्राकृत में पदान्त अस् के स्थान पर 'ओ' के बजाय 'ए' के परिवर्तन का संकेत कर सकते हैं। पूर्वी भारतीय आर्यभाषा की यह भेदक विशेषता थी और इस तरह के उदाहरण सुदूर पूर्व में भी मिलते हैं। ऋग्वेद में 'सूरे दुहिता' में इस प्रकार का एक विभाषिक रूप सुरक्षित है।[3] इसी प्रकार से द्वित्वीकरण की प्रवृत्ति भी प्राकृत के प्रभाव को प्रदर्शित करती है। अथर्ववेद प्रातिशाख्य (३.२६) में सभी पदान्त व्यंजन द्वित्व मिलते हैं। डॉ. वर्मा ने इन द्वित्व व्यंजनों का कारण प्राकृत-बोलियों का मिश्रण बताया है। यद्यपि प्राकृत में सभी व्यंजन पदान्त में द्वित्व नहीं मिलते, किन्तु कुछ बोलियों में ऐसे रूप अवश्य मिलते हैं।[4] प्राकृत के नट्ट, सट्ट, हथ्थ, छड्ड, घट्ट, घल्ल, आदि द्वित्व पदान्त व्यंजनों के रूप आज भी पंजाबी, राजस्थानी, लहन्दी, सिन्धी, कच्छी आदि बोलियों में सुरक्षित हैं। ऋक्-अथर्व-प्रातिशाख्य और चारायणीय

---

१. द्रष्टव्य है—परिषद्-पत्रिका, वर्ष ८, अंक ३-४, भाषा-सर्वेक्षणांक, पृ. ४७

२. एजर्टन, फ्रेंकलिन : संस्कृत हिस्टारिकल फोनोलाजी, अमेरिकन ओ. सो., पृ. १६, १९४६

३. बरो, टी. : द संस्कृत लैंग्वेज, वाराणसी, १९६५ (अनु. डॉ. भोलाशंकर व्यास), पृ. ५४

४. वर्मा, सिद्धेश्वर : क्रिटिकल स्टडीज इन द फोनेटिक ऑब्जर्वेशन्स ऑव इण्डियन ग्रैमेरियन्स, भारतीय संस्करण, पृ. १०६, १९६१

शिक्षा में कहा गया है कि अभिनिधान में एक स्पर्श दूसरे स्पर्श रूप में परिणत हो जाता है।[1] भाषा के वास्तविक उच्चारण में ऐसा प्रायः देखा जाता है। भाषाविज्ञान में इसे समीकरण कहा जाता है। 'सप्त' का 'सत्त' और 'तप्त' का 'तत्त' इसी प्रकार के उदाहरण हैं। अभिनिधान अपूर्ण उच्चारण की स्थिति में घटित होता है। इसी प्रकार वैदिक भाषा में पायी जाने वाली स्वरभक्ति प्राकृत की बोलियों में एक सामान्य प्रवृत्ति रही है। प्राकृत में प्रथम पुरुष सर्वनाम के लिए 'से' निपात का प्रयोग पाया जाता है जो अवेस्ता के 'हे, शे' तथा प्राचीन फारसी के 'शइय्' से मिलता है और जो संस्कृत में उपलब्ध नहीं होता।[2] वैदिक भाषा में अनेक शब्द प्राकृत के मिलते हैं, जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं—

जुण्ण (सं. जूर्ण, जीर्ण), तूह—तट, घाट (सं. तूर्थ, तीर्थ, अप. तूह, जि. च. १,१०; म. पु. १७, १२, ८), सिढिल-ढीला (सं. शिथिर, शिथिल, अप. सिढिल, भ. क. ५, २३, ८), णिड्ड (सं. नीड), कट्ट (सं. कृत), विकट्ट (सं. विकृत), गल्ल (सं. गण्ड), दाढा (दंष्ट्रा) और उच्छेक (सं. उत्सेक) आदि।

द्वितीय अवस्था :

विकास की दूसरी अवस्था में लगभग प्रथम ईसवी के पंजाब से खोतान में ले जाये गये धर्मपद के अंश तथा मध्य एशिया के खरोष्ठी लिपि में लिखे हुए अभिलेख एवं उत्तर-पश्चिम भारत के खरोष्ठी अभिलेख अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। मध्य भारतीय आर्यबोली में अभिलिखित ये अभिलेख मध्य एशिया के निय स्थान से प्राप्त हुए हैं, इसलिए ये निय प्राकृत के नाम से जाने जाते हैं। ये शान-शान राज्य की राजदरबारी भाषा में लिखे हुए हैं। इनकी भाषा मूलतः उत्तरी-पश्चिमी है। इनका समय ईसा की लगभग तीसरी शताब्दी कहा जाता है।[3] इनके अतिरिक्त अश्वघोष के नाटकों की प्राकृत भी इसी युग की देन है। अश्वघोष की प्राकृत बोलचाल के अधिक निकट है। वस्तुतः अश्वघोष की भाषा, भास के नाटकों के कुछ प्राकृत अंश तथा भरतमुनि की नाट्यगीतियाँ संस्कृत के शास्त्रीय (classical) नाटकों से पूर्व की हैं।[4] लोकनाट्य पहले आमतौर से प्राकृत में लिखे जाते थे। संस्कृत में लिखे गये नाटकों में भी पचास प्रतिशत के लगभग प्राकृत का समावेश है। इनमें भी अभिनय केवल आम जनता की बोली में हाव-भावों द्वारा किया जाता था। इसलिए भरत मुनि ने प्राकृत की बोलियों का क्षेत्रीय भेदों के अनुसार विवरण दिया है। उनके समय में उत्तर में हिमालय की तलहटी से लेकर पंजाब तक और पश्चिम

---

१. वर्मा, सिद्धेश्वर : क्रिटिकल स्टडीज इन द फोनेटिक ऑब्जर्वेशन्स ऑव इण्डियन ग्रैमेरियन्स, भारतीय संस्करण, पृ. १३७, १९६१
२. बरो, टी. : द संस्कृत लैंग्वेज, अनु. डॉ. भोलाशंकर व्यास, वाराणसी, पृ. ५५, १९६५
३. सेन, सुकुमार : ए कम्पेरेटिव ग्रैमर ऑव मिडिल इण्डो-आर्यन, पृ. १३, द्वि. सं., १९६०
४. ब्लॉख, ज्यूल : भारतीय-आर्यभाषा, अनु. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ. १०, १९६३

में सिन्ध से लेकर गुजरात तक प्राकृत प्रतिष्ठित थी। ईसा की प्रथम शताब्दी से लेकर जिस युग को संस्कृत की समृद्धि का काल कहते हैं, वह प्राकृतों के विकास का भी काल था। इन मध्यभारतीय बोलियों में ही देश का अधिकांश धार्मिक साहित्य लिखा गया। संस्कृत इस समय धार्मिक साहित्य और व्याकरण की भाषा के रूप में रूढ़ हो चुकी थी, जिससे उसका विकास रुक गया।[1] स्वयं महर्षि पाणिनि 'बहुलं छन्दसि' कहकर वैदिक भाषा में प्रयुक्त विभिन्न रूपों (विभाषागत) का विवरण प्रस्तुत कर रहे थे। उनके अतिरिक्त महर्षि यास्क और पतंजलि भी वैभाषिक प्रयोगों का स्वच्छन्दता से उल्लेख करते हुए दिखलाई पड़ते हैं।[2] विकास की इस धारा से नव्य भारतीय आर्यभाषाओं का विकास हुआ। नव्य भारतीय आर्यभाषाओं तथा बोलियों में ऐसे कई सौ शब्द हैं, जिनकी व्युत्पत्ति भारतीय आर्य-उद्गमों से नहीं मिलती। हाँ, उनके प्राकृत पूर्व-रूपों का अवश्य सरलता से पुनर्निर्माण किया जा सकता है। उनका बाहरी रूप सामान्यतः युग्म व्यंजनों या नासिक्यों एवं तत्सम्बन्धित स्पर्शों एवं महाप्राणों से बना हुआ बिलकुल प्राकृत जैसा है तथा उनके व्यक्त भाव भी न्यूनाधिक अंशों में मूलगत या प्राथमिक रहते हैं। उदाहरण के लिए—अड्डा—व्यवधान, परदा; अड्क्क—रुकावट; खिल्ली—खीला; कोरा—अपरिष्कृत या खुरदुरा; खोड्ड—धब्बा; खोस्स—भूसा; गोड्ड—पाँव; गोड्ड—गोद; मुड्ग—मूँगा; ढुड्ढ—ढूँढ़ना; फिक्क—फीका; लोट्ट—लोटना; लुक्क—छिपना, इत्यादि। इस प्रकार के लगभग ४५० भारतीय आर्य पुनर्गठित शब्द नेपाली-कोष में दिये हुए हैं, जिनके मूल शब्द अभारतीय-यूरोपीय अनिश्चित अथवा अज्ञात हैं।[3] मध्य भारतीय आर्यभाषाओं में अन्य बोलियों तथा विदेशी भाषाओं के शब्दों का आदान-प्रदान स्वच्छन्दता से हुआ है। संस्कृत के सम्बन्ध में भी जो यह कहा जाता है कि महर्षि पाणिनि ने आर्येतर प्रजाओं के परस्पर लेन-देन के कारण आर्यभाषा में अपनाये जाने वाले विदेशी शब्दों को रोकने के लिए संस्कृत भाषा को कठोर नियमों में बाँधकर उसे 'अमर' बना दिया, यह किसी एक अंश तक ठीक ही है। क्योंकि हम देखते हैं कि वैदिक भाषा की अपेक्षा संस्कृत में विदेशी भाषाओं के शब्द बहुत हैं। आचार्य पाणिनि ने जहाँ गणपाठों का विधान कर भाषा को व्यवस्थित बनाया, वहीं 'पृषोदरादि' तथा 'स्वार्थिक' प्रत्यय आदि का अभिधान कर आगत शब्दों के लिए प्रवेश-द्वार भी निर्मित कर गये। अतएव केवल अन्य भाषाओं और देशी बोलियों के शब्द ही संस्कृत में नहीं अपनाए, वरन् नये शब्दों का निर्माण और पुनर्निर्माण भी किया

१. तारापोरवाला, डॉ. आई. जे. एस. : संस्कृत सिण्टेक्स, पृ. १३, दिल्ली, १९६७
२. 'चतुर्थ्यर्थे बहुलं छन्दसि' (अष्टाध्यायी २।३।६२), भाषायामुभयमन्वध्यायम् (निरुक्त १ अ., २ पा., ४ खं.), प्रथमायाश्च द्विवचने भाषायाम् (अष्टा. ७।२।८८), भाषायां सदवसश्रुवः (अष्टा. ३।२।१०८), प्रत्यये भाषायां नित्यम् (कात्यायन वार्तिक), नेति प्रतिषेधार्थीयो भाषायाम् (निरुक्त १ अ) सिद्धे शब्दार्थसम्बन्धे लोकतोऽर्थप्रयुक्ते शब्दप्रयोगे शास्त्रेण धर्मनियमः। (महाभाष्य-पतंजलि)
३. चटर्जी, डॉ. सुनीतिकुमार : भारतीय-आर्यभाषा और हिन्दी, पृ. ११५, द्वि. सं., १९५७

गया। भारत तथा बृहत्तर भारत में संस्कृत का विकास इन्हीं मूल प्रवृत्तियों के साथ लक्षित होता है। डॉ. सांकलिया के अनुसार संक्षेप में भारतीय आर्यभाषाओं का विकास इस प्रकार बताया जा सकता है : प्रथम प्राकृत (ई. पू. ३००-१०० ई.), अनन्तर संस्कृत (१००-७०० ई.) और तदनन्तर संस्कृत (७००-१२०० ई.) क्षेत्रीय भाषाओं के रूप में वृद्धिंगत होती जा रही थी।[1] प्रारम्भिक दो शताब्दियों में सम्पूर्ण भारतवर्ष में अनवच्छिन्न रूप से संस्कृत-प्राकृत में अभिलेख लिखे जाते रहे। ३२० ई. गुप्तकाल में संस्कृत सुस्थिर रूप से पाटलिपुत्र में प्रतिष्ठित थी।[2] मथुरा के अभिलेखों से भी पता चलता है कि ईसा की प्रथम शताब्दी तक विशुद्ध प्राकृत का प्रचलन रहा है। दूसरी शताब्दी से संस्कृत में अभिलेख लिखे जाने लगे थे। छठी शताब्दी से उनका विशेष प्रचार हो गया था। फिर भी, प्राकृत का प्रभाव उन पर बराबर लक्षित होता है।[3] यथार्थ में इस युग में प्राकृत और संस्कृत का विकास समानान्तर रूप से हुआ। संस्कृत का अनुसरण करती हुई प्राकृत भी साहित्यिक आसन पर समासीन हुई। यद्यपि साहित्यकारों के द्वारा प्राकृत को कृत्रिम रूप से भी ढाला गया, पर प्राकृत अपना देशीपन नहीं छोड़ सकी। फिर भी, संस्कृत-साहित्य की तुलना में प्राकृत का साहित्य किसी बात में न्यून प्रतीत नहीं होता। सभी प्रकार की साहित्यिक रचनाएँ इस भाषा में लिखी हुई मिलती हैं। आचार्य पाणिनि के युग के अनन्तर प्राकृतों की दो बातें विशेष रूप से लक्षित होती हैं[4]—नये शब्दों का अधिग्रहण और प्राचीन संगीतात्मक स्वराघात की अपेक्षा बलात्मक स्वर-संचार। इस प्रकार यह एक भारतीय आर्यभाषाओं की परवर्ती अवस्था के संक्रमण की स्थिति को द्योतित करती है। इस अवस्था से ही भारतीय आर्यभाषाओं के विकास में एक नया मोड़ तथा महान् परिवर्तन लक्षित होने लगता है। अतएव इस अवस्था से होकर ही नव्य भारतीय आर्यभाषाएँ उत्पन्न होने की प्रक्रिया में बीजांकुर की भाँति परिलक्षित होती हैं। उनका उद्गम सहसा तथा अप्रत्याशित रूप से नहीं हुआ।

प्राकृत भाषा :

तीर्थंकर महावीर और भ. गौतमबुद्ध की भाषा वर्तमान में ज्यों-की-त्यों नहीं मिलती है, किन्तु अशोक के शिलालेखों (२५० ई. पू.) तथा पालि साहित्य के कुछ प्राचीन अंशों में उपलब्ध होती है। प्राकृत के विकास की चार अवस्थाएँ कही गयी हैं। प्राचीनतम प्राकृत—अशोक के अभिलेख, जो पश्चिमी (शौरसेनी) तथा पूर्वी (मागधी) प्राकृतों में निबद्ध हैं। डॉ. चटर्जी ने बुद्ध के समय की उदीच्य, मध्यदेशीय तथा प्राच्य विभाग की

---

१. साँकलिया, एच. डी. : इण्डियाज लैंग्वेज, ई. पू. ३००-१९६० ई., बुलेटिन पूना, पृ. १६, दिस. १९६८
२. वही, पृ. १३
३. मेकडानल, ए. ए. : ए हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर, पृ. २६, पंचम संस्करण, १९५८, दिल्ली
४. वही, पृ. २७

तीन प्रादेशिक बोलियों का उल्लेख किया है। इनके अतिरिक्त ई. पू. तीसरी शताब्दी की खोतन प्रदेशीय भारतीयों की पश्चिमोत्तरी गान्धारी प्राकृत तथा ईसा की प्रथम शताब्दी के लगभग की तुर्किस्तान की निय प्राकृत एवं ई. पू. छठी शताब्दी के मध्य की काठियावाड़ से सीलोन पहुँचायी गयी प्राकृत विशेष रूप से उल्लेखनीय है।[१] इस देश में ईसा पूर्व शताब्दी में मुख्य रूप से भारतीय आर्यबोलियों के चार विभाग प्रसिद्ध थे—(१) उदीच्य (उत्तरी-पश्चिमी बोली), (२) प्रतीच्य (दक्षिणी-पश्चिमी बोली), (३) प्राच्य-मध्य (मध्यपूर्वी बोली) तथा (४) प्राच्य (पूर्वी बोली)। अशोक के शिलालेखों तथा पतंजलि के महाभाष्य के उल्लेखों से भी यह प्रमाणित होता है।[२]

भरतमुनि के समय में हिमालय, सिन्ध तथा उत्तर-पश्चिम पंजाब से लेकर गुजरात तक सामान्य रूप से एक ही बोली प्रचलित थी जो जातीय संस्कार, भौगोलिक प्रभाव तथा उच्चारण आदि के भेद से कालान्तर में निरन्तर कई रूपों में विकसित होती रही और जातिभाषा के रूप में इस युग में आकर संस्कृत तथा प्राकृत रूप में प्रतिष्ठित हो गयी।[३] यद्यपि संस्कृत भाषा साहित्य में मुख्य थी और प्राकृत गौण, किन्तु जन-सामान्य की समझ संस्कृत से परे थी। भारत की जनता अपनी बोलियों में ही माता की गोद से समझती-सोचती आ रही है। शिष्ट जन उस युग में भी संस्कृत के पक्षपाती थे, क्योंकि वह संस्कारयुक्त भाषा थी।

प्राकृत की साज-सँभाल तो बहुत हुई, पर उसका संस्कार कभी नहीं हो सका। वास्तव में बोली जाने वाली भाषा का संस्कार तब तक नहीं होता, जब तक वह साहित्य में एक निश्चित आदर्श रूप को ग्रहण कर स्थिर नहीं हो जाती। प्राकृत की आरम्भ से साहित्य में कई साहित्यिक बोलियाँ रही हैं, जिसमें समय-समय पर सुन्दर रचनाएँ लिखी गयीं। यद्यपि इन बोली-विभागों में कभी कम और कभी अधिक अन्तर रहा है, किन्तु प्रान्तीय बोली-भेद उनमें स्पष्ट लक्षित होते हैं। फिर भी, समय-समय पर संस्कृत का पानी प्राकृतों पर अवश्य चढ़ता रहा है। इतना ही नहीं, संस्कृत की समता में अपना साहित्यिक प्रभाव अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए यह आवश्यक भी था कि प्राकृत का विकास संस्कृत की पद्धति पर हो, और ऐसा हुआ भी। जहाँ प्राकृत-साहित्य में प्राकृत भाषा स्वाभाविक रूप से चलती हुई दिखाई पड़ती है वहाँ वह ठेठ बोली है, किन्तु जहाँ वह काव्यात्मक अनुबन्धों से युक्त तथा संस्कृत से प्रभावापन्न है वहाँ कृत्रिम प्रतीत होती है। श्री रिचर्ड पिशेल का मत है : "यह जनता के द्वारा बोली गयी किसी भाषा के आधार पर बनी थी और राजनीतिक या धार्मिक इतिहास की परम्परा के कारण यह भारत की सामान्य साहित्यिक भाषा बन गयी। भेद इतना है कि यह पूर्णतया असम्भव है कि सब प्राकृत

---

१. चाटुर्ज्या, डॉ. सुनीतिकुमार : भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, पृ. ८३

२. सेन, डॉ. सुकुमार : ए कम्पेरेटिव ग्रामर ऑव मिडिल इण्डो-आर्यन, पृ. ७

३. संस्कारपाठ्यसंयुक्ता सम्यङ् न्याय्यप्रतिष्ठिताः।
द्विविधा जातिभाषा च प्रयोगे समुदाहृताः।। नाट्यशास्त्र (भरत) द्वितीय जिल्द १७, २८

भाषाओं को संस्कृत की भाँति एक मूल भाषा तक पहुँचाया जाए। केवल संस्कृत को ही इसका मूल समझना, जैसा कि कई विद्वान् समझते हैं और इनमें होएफर, लास्सन, भण्डारकर, जेकोबी भी शामिल हैं, भ्रमपूर्ण है। सब प्राकृत भाषाओं का वैदिक व्याकरण और शब्दों का नाना स्थलों में साम्य है; जो बातें संस्कृत में नहीं पायी जातीं।''[1] अतएव साहित्य के रूप में भले ही प्राकृतों को अधिक प्रसिद्धि न मिली हो, पर जन-जन को बोली के रूप में वह भाषा के आदिकाल से ही इस देश में प्रचलित रही है।

संस्कृत-विकृति बनाम प्राकृत :

भारतीय वैयाकरण तथा शिक्षाशास्त्रियों का एक मत है कि प्राकृत संस्कृत का ही विकृत रूप है। उनका यह मत वैयाकरणों के इस निर्देश पर आधारित है कि संस्कृत प्रकृति है, उससे उत्पन्न होने वाली प्राकृत है।[2] सभी प्राकृतों का एकमात्र उत्पत्ति स्थान संस्कृत है।[3] वस्तुतः यह मान्यता केवल संस्कृत की उद्धरणी करने वाले उन शब्दों को लेकर है जिनमें संस्कृत शब्दों का विकार या अपभ्रष्ट रूप लक्षित होता है। अतएव एक ओर जहाँ वैयाकरण संस्कृत से इतर भाषाओं को अपभ्रंश कहकर उपेक्षणीय तथा असाधु बताते हैं, वहीं शब्द की प्रकृति अपभ्रंश का भी निर्देश करते हैं। उनका कथन है[4]—शब्द की प्रकृति ही अपभ्रंश है। सभी स्थलों पर निमित्त के भेद से शब्दों के साधुत्व की व्यवस्था की गयी है। इसलिए शिष्ट जन उन साधु शब्दों के पर्याय रूपों को नहीं मानते। उनकी दृष्टि में 'अश्व' शब्द ही साधु है, 'अस्व' नहीं। वस्तुतः उनका यह नियम भाषा की संकीर्ण प्रवृत्ति का परिचायक है। क्योंकि भाषा का स्वभाव है—परिवर्तनशीलता। संसार के प्रत्येक पदार्थ में प्रत्येक समय जाने-अनजाने कुछ-न-कुछ परिवर्तन की क्रिया होती रहती है। फिर, भौगोलिक तथा जातीय कारणों से कहीं-कहीं कुछ विशिष्ट ध्वनियों का उच्चारण समान रूप से नहीं किया जाता। यही कारण है कि आज भी बंगाली 'साला' को 'शाला' और पंजाबी असाड़ (आषाढ़) को 'हाड़' तथा मारवाड़ी सात को 'हात' बोलता है। उत्तर-प्रदेश के शिक्षित व्यक्ति भी 'भाषा' को 'भासा' और 'दिशा' को 'दिसा' बोलते हैं। अतएव भाषावैज्ञानिक भाषागत प्रक्रियाओं तथा उनके कार्य-कारण भावों को ध्यान में रखकर यह विचार करते हैं कि अमुक परिवार की अमुक

---

१. पिशेल, रिचर्ड : प्राकृत भाषाओं का व्याकरण, अनु. डॉ. हेमचन्द्र जोशी, पृ. ८

२. प्रकृतिः संस्कृतम्। तत्रभवं प्राकृतम् उच्यते। मार्कण्डेय : प्राकृतसर्वस्व, १. १
प्रकृतेः संस्कृतायास्तु विकृतिः प्राकृती मता। नरसिंह : प्राकृतशब्दप्रदीपिका,
—लक्ष्मीधर : षड्भाषाचन्द्रिका, १, २५।

३. प्राकृतस्य तु सर्वं एव संस्कृतं योनिः। वासुदेव : कर्पूरमंजरी की संजीवनी टीका।

४. शब्दः संस्कारहीनो यो गौरिति प्रयुयुक्षिते।
तमपभ्रंशमिच्छन्ति विशिष्टार्थ निवेशनम्।। यथाह संग्रहकारः—'शब्दप्रकृतिरपभ्रंश' इति।
अस्वगोण्यादयः शब्दाः साधवो विषयान्तरे।
निमित्तभेदात् सर्वत्र साधुत्वं च व्यवस्थितम्।। वाक्यपदीय, ब्रह्मकाण्ड, १४८-१४६

भाषा का विकास किन परिस्थितियों में और कैसे हुआ तथा उस भाषा की प्रकृति क्या है ? भारतीय वैयाकरणों की दृष्टि में जो भाषागत विकार लक्षित होता है, उसे ही भाषाविज्ञानिक भाषा का विकास कहते हैं। बिना परिवर्तन हुए किसी भाषा का विकास कैसे हो सकता है ?

यह कहना कि प्राकृत का जन्म संस्कृत से हुआ है, नितान्त भ्रमपूर्ण भी है। क्योंकि भाषाविज्ञान के सिद्धान्त के अनुसार किसी भी भाषा के बल पर कोई स्वतन्त्र भाषा जन्म नहीं लेती। जो भाषाएँ आज विद्यमान हैं, उनका मूल रूप अवश्य किसी-न-किसी बोली में प्रतिष्ठित है। यदि भाषाविज्ञान की दूरबीन लगाकर देखी जाए, तो आज की बोलियों में घुले-मिले तत्त्व किसी-न-किसी रूप में पूर्वकालिक भाषा से सम्बन्धित होंगे। इसलिए भाषा की मध्य अवस्था में से किसी अन्य भाषा का जन्म मान लेना उचित नहीं है। वस्तुतः तथ्य यह है कि बोली और भाषा एक साथ जन्म लेतीं और विकसित होती हैं। यद्यपि व्यवहार में उन दोनों के समय में बहुत अन्तर होता है, किन्तु सहस्राब्दियों के इतिहास में वह समय नगण्य ही होता है। उनमें से जो भाषा सभी प्रकार से नियमबद्ध हो जाती है, उसका विकास रुक जाता है और गति (परिवर्तन) हीनता के कारण कालान्तर में वह मृतप्राय हो जाती है, किन्तु जो बोली मन्थर गति से भाषा की पद्धति पर चलने लगती है और जिसमें साहित्य-रचना होने लगती है, वह साहित्यिक 'भाषा' बन जाती है। वैदिक बोलियाँ इसी प्रकार विकसित होकर विविध नाम-रूपों में प्रतिष्ठित हुईं। केवल वैदिक भाषा में ही नहीं, आर्मेनियन, ग्रीक और लैटिन आदि में भी बोलियाँ सुरक्षित हैं।[१] बोलियों की विविध संक्रमण अवस्थाएँ भाषा के इतिहास में परिलक्षित होती हैं, और विशेषकर यह प्राचीनतम अवस्था २५०० ई. पू. से लेकर २००० ई. पू. तक रही है।[२] यद्यपि महर्षि पाणिनि ने भाषा की अबाधगति को रोकने का महान् प्रयत्न किया, और उसमें बहुत कुछ सफल भी हुए, किन्तु भाषा के विकास को वे भी पूरी तरह नहीं रोक पाये। अन्ततः उन्हें 'पृषोदरादिगण' बनाकर लोकभाषा से समझौता करना पड़ा था। फिर भी, भाषा का बहुत कुछ संस्कार व्यवस्थित रूप से किया, इसमें कोई सन्देह नहीं है। उनके इस भाषा-संस्कार के कारण संस्कृत के प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ के समकालीन लक्ष्मीधर ने कुमार तथा पाणिनि आदि वैयाकरणों के द्वारा संस्कारित भाषा को संस्कृत कहा है।[३] परन्तु संस्कृत अपशब्दों तथा म्लेच्छ-भाषाओं से अछूती नहीं रह सकी। समय-समय पर संस्कृत भाषा में असीरियाई, मिस्री, चीनी, ईरानी तथा अन्य कई देश-प्रदेशों की भाषाओं के शब्द आते रहे और आज भी सुरक्षित हैं। संस्कृत के महाकवि भी अपनी भाषा को सर्वथा पाणिनि के नियमों के अनुसार नहीं ढाल सके, इसलिए

---

१. ग्रे, लुइस एच. : फाउण्डेशन्स ऑव लैंग्वेज, पृ. ३०४, १९५८

२. वही, पृ. ३१०

३. भाषा द्विधा संस्कृता च प्राकृती चेति भेदतः।
कौमारपाणिनीयादिसंस्कृता संस्कृता मता।। षड्भाषाचन्द्रिका, १ : २३

पाणिनि-व्याकरण की दृष्टि से कालिदास और हर्ष जैसे महाकवियों की रचनाओं में अनेक व्याकरणिक अशुद्धियाँ मिलती हैं। अतएव चाहे कोई वैयाकरण हो या साहित्यकार, उसे लोकभाषा का ध्यान अवश्य रखना पड़ता है। फिर, जो प्रयोग व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध होने पर भी यदि जन-जन में प्रचलित हैं, वे परम्परा से साहित्य में भी प्रयुक्त होने लगते हैं। शब्दरूपों तथा प्रयोगों में प्रत्येक युग में कुछ-न-कुछ परिवर्तन होता रहता है। यह निश्चित है कि संस्कृत भाषा एक होने पर भी वाल्मीकि की भाषा से कालिदास और उनकी भाषा से बाणभट्ट की भाषा में अन्तर है। इससे प्रकट है कि भाषा में विकार (विकास) होना ही उसका जीवन है। जब तक भाषा अपने जीवन-काल में रहती है और जितने अधिक समय तक रहती है, उसमें उतना अधिक परिवर्तन होता रहता है। यहाँ तक कि उसका परवर्ती रूप कभी-कभी अपने मूल से इतना अधिक विकसित हो जाता है कि सहसा यह पहचान में भी नहीं आता। वेदों से उपनिषदों की भाषा और उपनिषदों से महाकवि कालिदास, हर्ष आदि की भाषा में अत्यधिक अन्तर लक्षित होता है। यह अन्तर किसी की भाषा में विकार और किसी की भाषा में विकास नाम से जाना जाता है। यथार्थ में किसी भी भाषा का गतिहीन हो जाना अस्वाभाविक है और विकृत होते रहना उसके जीवित रहने का प्रमाण है। महाकवि कालिदास ने इसी बात को प्रकारान्तर से कहा है।[1] देहधारियों की मृत्यु होना स्वाभाविक है। विद्वानों का तो यह कथन है कि जीना ही विकृति है। इसलिए प्राणी जितने भी क्षण जी जाए, उतने से ही सन्तोष करना चाहिए। कवि का यह कथन मनुष्य-जीवन की भाँति भाषा-जीवन के सम्बन्ध में भी भली-भाँति चरितार्थ होता है।

भाषा का जीवन पच्चीस-पचीस वर्षों का न होकर सैकड़ों वर्षों का होता है। फिर, एक दूसरी जाति तथा भाषाओं के शब्द एक-दूसरे से अधिगृहीत होते रहते हैं। अतएव केवल कुछ शब्दों को लेकर यह कहना कि ये असाधु हैं, अपशब्द हैं, शिष्टता मात्र के द्योतक हैं। भाषा के इतिहास में ग्राम्य शब्दों का भी उतना ही महत्त्व है जितना कि नागर शब्दों का। फिर प्रत्येक साहित्यिक भाषा को अपनी पूर्वावस्था से बहुत कुछ बदल जाना पड़ता है। अतएव महर्षि पतंजलि का यह कथन 'अपशब्द बहुत हैं, शब्द (साधु) बहुत कम हैं। एक-एक शब्द के अनेक अपभ्रंश-रूप मिलते हैं, जैसे कि 'गौ', इस एक शब्द (साधु) के लिए गावी, गोणी, गोता, गोपोतलिका इत्यादि बहुत से अपभ्रंश रूप हैं'[2]—शब्दों के विकृत रूपों से सम्बन्धित न होकर 'गौ' वाचक अनेक शब्दों के असाधु-विधान से है। साधु-असाधु का निर्णय कौन करे ? वास्तव में उस युग में ब्राह्मणों

---

१. मरणं प्रकृतिः शरीरिणां विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः।
क्षणमप्यवतिष्ठते श्वसन्यदि जन्तुर्ननु लाभवानसौ।। रघुवंश, ८, ८७

२. भूयांसोऽपशब्दाः, अल्पीयांसः शब्दा इति। एकैकस्य हि शब्दस्य बहवोऽपभ्रंशाः।
तद्यथा गौरित्यस्य शब्दस्य गावी, गोणी गोता, गोपोतलिकेत्यादयो बहवोऽपभ्रंशाः।
—महाभाष्य, १ अ., १ पा. १ आ.

की भाषा साधु थी और म्लेच्छों (नीच जनों) की भाषा असाधु थी।[1] उनके कथन से यह भी प्रतीत होता है कि अशुद्धोच्चार के वशीभूत होकर शब्दों को बिगाड़कर नहीं बोलना चाहिए। किन्तु ये सब भाषा सम्बन्धी शिक्षाएँ हैं जो केवल संस्कृत भाषा को ध्यान में रखकर लिखी गयी हैं। इनसे प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा का कोई सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि जिन शब्दों का निर्देश पतंजलि ने किया उनमें से 'गौणी' शब्द पालि[2] में, 'गोणा-गोणी' प्राकृत[3] में तथा संस्कृत[4] में एवं पालि-प्राकृत में 'गोण-गावी' रूप मिलते हैं।[5] प्राकृत में 'गोणा' का अर्थ गाय और 'गोणी' तथा 'गावी' का अर्थ भी गाय है। 'गोण' का अर्थ बैल है। सम्भवतः 'गोपोतलिका' का अर्थ जवान गाय है। इनमें से गावी (गाभी) का प्रयोग बँगला में और 'गोणी' का प्रयोग आज भी सिन्धी भाषा में मिलता है। प्राकृत के कई ग्रन्थों में 'गावी' और 'गावीओ' के प्रयोग गाय अर्थ में मिलते हैं।[6] अतएव जिन्हें असाधु, अपशब्द या अपभ्रंश समझा जाता है, वास्तव में वे विभाषाओं में प्रयुक्त होने वाले शब्द हैं। संस्कृत के वैयाकरणों ने उन्हें असाधु केवल इसीलिए बता दिया कि वे शिष्ट वर्ग के द्वारा प्रयुक्त नहीं होते थे। संस्कृत के प्रसिद्ध समालोचक दण्डी का कथन उचित है कि शास्त्र में संस्कृत से भिन्न भाषा अपभ्रंश कही गयी है।

अपभ्रंश क्या है ?

जिस प्रकार प्राकृत का अर्थ है—स्वाभाविक भाषा, उसी प्रकार अपभ्रंश का अर्थ है—जन-बोली। जन-बोली से अभिप्राय सामान्य लोगों की बोलचाल की भाषा से है। दूसरे शब्दों में हम उसे नीच लोगों की भाषा अर्थात् 'ग्राम्य भाषा' कह सकते हैं। संस्कृत के 'वाचस्पत्यकोश' में इसका एकअर्थ 'ग्राम्यभाषा' भी है। सामान्य रूप से वैयाकरणों की भाषा में 'अपभ्रंश' का अर्थ 'अपशब्द' है और अपशब्द का अर्थ है—ठीक से उच्चरित न होने वाले (बिगड़े) शब्द। लोकभाषा में इसका रूढ़ अर्थ है—गिरना, खिसकना। भाषा-विकास की दृष्टि से यह मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषाओं तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की मध्यवर्ती विकसित अवस्था है जो वर्तमान आर्यभाषाओं की पुरोगामिनी है। डॉ. ग्रियर्सन के अनुसार स्थानीय प्राकृत को अपभ्रंश कहा गया है।[7] स्थानीय प्राकृत से उनका अभिप्राय बोलचाल की क्षेत्रीय भाषा से है।

---

१. तेऽसुरा हेलयो हेलय इति कुर्वन्तः पराबभूवुः। तस्माद् ब्राह्मणेन न म्लेच्छितवै—
नापभाषितवै, म्लेच्छो ह वा एष यदपशब्दः। वही, १, १, १
२. गोणनम्हि वा सुहिना सुच। पालीव्याकरण (कात्यायन), द्वितीय कल्प, प्रथम खण्ड २६, ३०
३. व्यवहारसूत्र उ. ४, गोणी (ओघ २२ भा), गोणा (पाइअसद्दमहण्णव, पृ. ३०१), गूगि-गोणी (उक्तिरत्नाकर)
४. जाध गोणा ! जाध (यातं गावौ यातं), मृच्छकटिक, अंक ६
५. गोण (प्राकृतकल्पतरु, २।१।१३), देशीनाममाला, २, १०४
६. गोर्गावी। प्राकृतलक्षण, २, १६, शब्दानुशासन (हेमचन्द्र), ८।२।१७४
७. भारत का भाषा-सर्वेक्षण, पृ. २४३।

आचार्य भरतमुनि के उल्लेखों से भी यही पता चलता है कि अपभ्रंश बोलचाल की भाषा थी। उन्होंने 'उकारबहुला' कहकर जिस भाषा का परिचय दिया है, वह हिमाचल प्रदेश से लेकर सिन्ध तथा उत्तर पंजाब तक प्रचलित थी।[१] इस उत्तर भारतीय बोली को ही वैयाकरणों ने अपभ्रंश नाम दिया है। यद्यपि बहुत पहले प्राकृत को भी अपभ्रंश कहा जाता था, क्योंकि संस्कृत को छोड़कर जितनी भी भाषाएँ थीं, वे सब अपभ्रंश कहलाती थीं। किन्तु प्राकृत भाषा के साहित्यिक स्थान पर आरूढ़ हो जाने पर मूल बोली को प्राकृत तथा साहित्य की भाषा को भी मूल बोली से सम्बद्ध होने के कारण प्राकृत कहा गया। प्राकृत की इस परम्परा में ही जब प्राकृतें लोकबोलियों से हटने लगीं, तब जिस विकसित अवस्था का स्वरूप देखने को मिला, उसे अपभ्रंश नाम दिया गया। भाषा-विकास की यह वह अवस्था थी, जिसमें भारतीय आर्यभाषा अपनी संयोगावस्था से वियोगावस्था में संक्रमित होने लगी थी। पण्डित गुलेरी जी के शब्दों में—"विक्रम की सातवीं शताब्दी से ग्यारहवीं तक अपभ्रंश की प्रधानता रही और फिर वह पुरानी हिन्दी में परिणत हो गयी। इसमें देशी की प्रधानता है। विभक्ति घिस गयी हैं, खिर गयी हैं, एक ही विभक्ति 'हं' या 'आहं' कई काम देने लगी है। एक कारक की विभक्ति से दूसरे का भी काम चलने लगा है। वैदिक भाषा की अविभक्तिक निर्देश की विरासत भी इसे मिली। विभक्तियों के खिर जाने से कई अव्यय या पद लुप्तविभक्तिक पद के आगे रखे जाने लगे, जो विभक्तियाँ नहीं हैं। क्रियापदों में मार्जन हुआ।"[२] इस प्रकार लोकभाषा की परम्परा के रूप में आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं को अपनी परम्परागत शृंखला से जोड़ने वाली भाषा का नाम अपभ्रंश है। परम्परा के रूप में ईसा की तीसरी शताब्दी के लगभग यह बोली ऐसे साँचे में ढलने लगी थी जो निय प्राकृत के अधिक निकट थी और जिससे अपभ्रंश के नवीन नाम-रूपों का विकास हुआ। वस्तुतः यह प्राकृतों की वह अन्तिम अवस्था कही जाती है जो प्राकृतों की तीसरी भूमिका (साहित्यिक प्राकृत) के अनन्तर साहित्य की भाषा के रूप में देशी भाषाओं से मिश्रित परिलक्षित होती है। यह जनबोली की अपेक्षा काव्य की भाषा अधिक है। किन्तु जिन वैयाकरणों ने तथा विद्वानों ने प्राकृत को ही अपभ्रंश माना है, उन्होंने अवश्य भूल की है।

प्राकृत अपभ्रंश नहीं है

यद्यपि भाषा के क्रमिक विकास को समझाने के लिए यह कहा जा सकता है कि अपभ्रंश प्राकृतों की अन्तिम अवस्था है, किन्तु स्वरूप की दृष्टि से अपभ्रंश आधुनिक भारतीय

---

१. हिमवत्सिन्धुसौवीरान् ये जनाः समुपाश्रिताः।
उकारबहुला तज्ज्ञस्तेषु भाषां प्रयोजयेत्।। नाट्यशास्त्र, १७, ६२

२. गुलेरी, पं. चन्द्रधर शर्मा : पुरानी हिन्दी, प्रथम संस्करण, पृ. ८

आर्यभाषाओं की वह पूर्ववर्ती अवस्था है, जिसमें से समस्त आधुनिक आर्यभाषाओं को अपनी स्थिति का निर्माण करना पड़ा था। अपभ्रंश प्राकृतों की उस स्थिति से विकसित नहीं हुई, जिसमें प्राकृत का साहित्य लिखा गया। यह बात अलग है कि आगे चलकर अपभ्रंश की वही स्थिति हुई, जो साहित्य की भाषा में बँधकर कृत्रिम हो जाने पर प्राकृत की हुई थी। किन्तु भाषा-सम्बन्धी यह स्थिति अधिकतर मध्यकाल की रही है। मध्यकाल में (लगभग दसवीं से चौदहवीं शताब्दी के मध्य) प्राकृत तथा अपभ्रंश—दोनों के ही साहित्य पर संस्कृत का प्रभाव रहा है। अतएव साहित्यिक शैलियों के अनुरूप संस्कृत के पदविन्यास, शब्द-योजना तथा समस्त पदावली का अपभ्रंश साहित्य पर प्रभाव लक्षित होता है। परन्तु प्राकृत की भाँति अपभ्रंश का आदर्श संस्कृत नहीं थी। बारहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध संस्कृत-साहित्य समालोचक वाग्भट का स्पष्ट कथन है कि अपभ्रंश विभिन्न प्रदेशों में बोली जाने वाली ठेठ बोली है।[१] अतएव अपभ्रंश प्राकृत की विभाषाओं से विकसित मानी जा सकती है, किन्तु प्राकृत ही अपभ्रंश है अथवा प्राकृत से ही अपभ्रंश का जन्म हुआ है, कहना उचित नहीं है। क्योंकि वैदिक और अवेस्ता भाषा की कुछ विशेषताएँ पालि और प्राकृत में ही नहीं, अपभ्रंश में भी मिलती हैं।[२] दूसरे विभक्तियों में ही नहीं, प्रत्यय और परसर्गों में भी प्राकृत से अपभ्रंश में स्पष्ट अन्तर परिलक्षित होता है। अपभ्रंश में देशी रूपों की बहुलता है। 'य' श्रुति भी विशेष रूप से अपभ्रंश में मिलती है। उसमें व्यंजनलोप की प्रक्रिया भी विशेष रूप से लक्षित होती है। यही नहीं, अपभ्रंश पर आर्येतर भाषाओं का प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है। अतएव डॉ. कीथ की यह मान्यता कि अपभ्रंश प्राकृत की जनबोलियों से भिन्न नहीं है, निरापद नहीं है। वस्तुतः वैदिक युग में भी जनबोलियाँ थीं, इसका प्रमाण अपभ्रंश में मिलता है।[३] फिर आचार्य रुद्रट का यह कथन 'प्राकृतमेवापभ्रंशः' प्राकृत की उस प्राचीन परम्परा का निर्देश करता है जो कालान्तर में महाराष्ट्री प्राकृत के आदर्श रूप में प्रतिष्ठित हो गयी थी। और फिर, देशी भाषाओं की दृष्टि से उन्होंने अपभ्रंश को प्राकृत कहा है। क्योंकि संस्कृत को छोड़कर सभी देशी भाषाएँ प्राकृत नाम से अभिहित की गयी हैं। मराठी का प्राचीन साहित्य इसी प्राकृत भाषा (देशी या अपभ्रंश) में लिखा गया है।[४] हिन्दी में भी यह परम्परा गोस्वामी तुलसीदास तक अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित परिलक्षित होती है। तुलसीदास जी के समय तक प्राकृत-अपभ्रंश आदि भाषा या भाखा समझी जाती थी। प्राकृत से उनका अभिप्राय प्रादेशिक भाषा से प्रतीत होता है।[५] अपनी भाषा को उन्होंने ग्राम्यगिरा भी कहा है।

१. अपभ्रंशस्तु यच्छुद्धं तत्तद्देशेषु भाषितम्। वाग्भटालंकार, १ अ.।
२. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री—भविसयत्तकहा तथा अपभ्रंश-कथाकाव्य, पृ. ४-६।
३. भारत का भाषा-सर्वेक्षण, पृ. २४६
४. आतां संस्कृता अथवा प्राकृता।
   भाषा जाली जे हरिकथा।।—एकनाथ
   तथा—प्राकृत लोक न जाणति मूल, उगेंच इला कथिताती सचाई।—मराठी छन्द से उद्धृत
५. जे प्राकृत कवि परम सयाने, भाषा जिन्ह हरिचरित बखाने।—रामचरितमानस, बालकाण्ड
   भाषा भनिति भोरि मति मोरी, हँसिबे जोग हँसें नहिं खोरी।—वही, बालकाण्ड

आचार्य वाग्भट और हेमचन्द्र ने भी अपभ्रंश का उल्लेख ग्राम्य भाषा के रूप में किया है। संक्षेप में, पं. चन्द्रधरशर्मा गुलेरी जिसे पुरानी हिन्दी कहते हैं, डॉ. एल. पी. टेस्सिटरी जिसे पुरानी राजस्थानी कहते हैं और गुजराती जिसे जूनी गुजराती तथा बंग एवं मिथिलावासी जिसे अपनी पुरानी भाषा कहते हैं, वस्तुतः वह अपभ्रंश है। यह अपभ्रंश लगभग सभी भारतीय आर्यभाषाओं की जननी कही गयी है। डॉ. टेस्सिटरी के विचारों में—''तथ्य यह है कि जिस भाषा को मैं 'प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी' नाम से पुकारता हूँ, उसमें वे सभी तत्त्व हैं जो गुजराती के साथ-साथ मारवाड़ी के उद्भव के सूचक हैं और इस तरह वह भाषा स्पष्टतः इन दोनों की सम्मिलित माँ है। यह बहुत पहले ही स्वीकार किया जा चुका है कि गुजराती और मारवाड़ी एक ही उद्‌गमस्थल शौरसेन अपभ्रंश से उत्पन्न हुई हैं।''[१] इस प्रकार यह अलग-अलग प्रदेशों में अलग-अलग नाम से अभिहित होती रही है। यह आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के विकास के लिए एक सामान्य भूमिका रही है।

अपभ्रंश और देशी :

भारत में जनभाषा में लिखित साहित्य की भाषा को देशी कहने का प्रचलन प्राचीन प्रतीत होता है। प्राकृत-युग में इसका विशेष प्रचार था। पादलिप्तसूरि (पाँचवीं शती) ने प्राकृत में निबद्ध 'तरंगवई' की भाषा को देशी कहा है। इस कथा में देशी वचनों की प्रचुरता परिलक्षित होती है। उद्योतनसूरि (आठवीं शती) ने महाराष्ट्री प्राकृत में निबद्ध 'कुवलयमालाकहा' को देशी कहा है। विभिन्न देशी भाषाओं का परिचय भी दिया है। कथा का कुछ अंश संस्कृत में और कुछ अपभ्रंश में भी लिखित मिलता है। इनके अतिरिक्त जनबोलियों के अनेक शब्दों का प्रयोग इस कथा में लक्षित होता है। इसी प्रकार कोऊहल ने महाराष्ट्री प्राकृत में लिखित 'लीलावईकहा' की भाषा को महाराष्ट्र की देशी भाषा कहा है। ग्यारहवीं-बारहवीं शती की रचना पं. दामोदर कृत 'उक्तिव्यक्तिप्रकरण' की भाषा को डॉ. चटर्जी प्राचीन कोसल देश की बोली कोसली मानते हैं।[२] लेखक ने ग्रन्थ की भाषा को अपभ्रंश कहा है और अपभ्रंश से उसका अभिप्राय आम जनता की बोली से है। जिस बोली का प्रत्येक प्रदेश में नीच जन तक व्यवहार करते हैं, वह अपभ्रंश भाषा है।[३] इससे स्पष्ट है कि अपभ्रंश एक प्रकार से लोकभाषा के सामान्य रूप में शताब्दियों तक बोली जाती रही है। और बोलचाल की

---

१. टेस्सिटरी, डॉ. एल. पी. : अनु. नामवरसिंह : पुरानी राजस्थानी, द्वितीय संस्करण, पृ. ४

२. दामोदर, पण्डित, सम्पादक—डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : उक्तिव्यक्तिप्रकरण की प्रस्तावना, पृ. ६

३. देशे देशे लोको वक्ति गिरा भ्रष्टया यया किंचित्।
सा तत्रैव हि संस्कृतरचिता वाच्यत्वमायाति।।—उक्तिव्यक्तिप्रकरण, ६
—प्रतिदेशभिन्ना येयं सर्वजनसाधारण्या भाषा गावी गोणी प्रभृतिका सोऽपभ्रंश उच्यते।
ततो देशे देशे प्रतिविषयं लोकः पामरजनो यया यया गिरापभ्रष्टया यत् किंचिदभिधेयं वस्तु वक्ति व्यवहरति सापभ्रंशभाषा।—वही, टीका

अवस्था में प्राकृत की भाँति देशी नाम से प्रचलित रही है। साधुसुन्दरगणि के 'उक्तिरत्नाकर' में मुख्य रूप से देशी शब्दों का संग्रह मिलता है। अतएव सामान्य रूप से प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा में लिखित रचनाओं को देशी कहा गया है। आचार्य हेमचन्द्र ने स्पष्ट रूप से प्राकृत भाषाविशेष को देशी कहा है।[1] वास्तव में हमारे विचार में देशी भाषाओं में लिखा गया साहित्य लोक-साहित्य था जो अपनी प्रादेशिक बोली तथा परम्परा में रचा गया था। किन्तु संस्कृत-साहित्य के अनुकरण पर परवर्ती काल में जो भी काव्य लिखे गये, उनकी भाषा ठेठ बोली नहीं रह सकी, उनमें कृत्रिमता तथा शास्त्रीयता का मोह परिव्याप्त है। अतएव क्षेत्रीय भाषा को आधार मानकर ही किसी भी भाषा में लिखी गयी रचना को देशी कहा गया है, और इसलिए अपभ्रंश के अधिकतर कवियों ने अपनी भाषा को देशी कहा है। महाकवि स्वयम्भू का कथन है कि यह रचना संस्कृत तथा प्राकृत रूपी पुलिनों से अलंकृत एवं देशी भाषा के दो तटों से उज्ज्वल है।[2] पुष्पदन्त अपनी नम्रता प्रदर्शित करते हुए कहते हैं कि न तो मैं छन्दशास्त्र के नियमों को भलीभाँति जानता हूँ और न विचक्षण तथा देशी भाषा का ही जानकार हूँ।[3] पद्मदेव, लक्ष्मण तथा अन्य अपभ्रंश के कवि भी अपने काव्य की भाषा का परिचय देशी कहकर देते हैं। लाखू ने भी देशी भाषा का निर्देश किया है।[4] अपभ्रंश के कवि या तो अपनी भाषा को देशी कहते हैं या फिर भाषा। उन्होंने अपने काव्य की भाषा को अपभ्रंश नहीं कहा। अपभ्रंश नाम वैयाकरणों का दिया हुआ है। संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश—ये तीनों ही नाम वैयाकरणों के गढ़े हुए जान पड़ते हैं। क्योंकि वाल्मीकि और पाणिनि के समय में संस्कृत भाषा मात्र थी। अपभ्रंश के कवियों में से केवल स्वयम्भू और पुष्पदन्त ने देशी भाषा के अतिरिक्त 'अवहंस' शब्द का प्रयोग भी किया है।[5]

उनके अवहंस कहने से यह स्पष्ट हो जाता है कि देशी भाषा की काव्य-परम्परा ही आगे चलकर अपभ्रंश कहलायी। क्योंकि उन्होंने जिस देशी भाषा में रचना करने का उल्लेख किया है, उसी के लिए अन्य प्रकरण में 'अवहंस' शब्द का निर्देश किया है। इस शब्द का प्राचीन उल्लेख ही नहीं, विवरण भी 'कुवलयमालाकथा' में प्राप्त होता है। अपभ्रंश के सम्बन्ध में कवि उद्योतनसूरि का कथन है कि यह वह भाषा है, जिसमें संस्कृत-प्राकृत के शुद्धाशुद्ध पदों का मिश्रित रूप मिलता है और जो नवीन वर्षाकालीन

---

१. देसविसेसपसिद्धीइ भण्णमाण अणंतया हुंति।
तम्हा अणाइपाइअपयट्टभासाविसेसओ देसी।।—देशीनाममाला, १, ४

२. सक्कयपायय पुलिणालंकिय देसीभासा उभय तडुज्जल।—पउमचरिउ १।२।३-४

३. ण हउं होमि वियक्खणु ण मुणमि लक्खणु छंदु देसि ण वियाणमि।—महापुराण १।८।१०

४. देसभास लक्खण ण तक्कओ, मुणमि णेव आयमहिं गुरुक्कओ।—जिणयत्तचरिउ, १ सं., ६

५. जो पाउअस्स सारो तस्स मए सक्कलक्खणं सिट्ठं।
एत्ताहे अवहंसे साहिज्जंतं णिसामेह।।—स्वयम्भू छन्द, ४, १
तथा—सक्कउ पायउ पुण अवहंसउ, वित्तउ उप्पाइउ सपसंसउ। महापुराण, ५।१८।६

जलद के प्रपात से पूर द्वारा प्लावित पहाड़ी नदी के वेग के समान सम-विषमता से समन्वित मानवती प्रणयिनी के वार्तालाप की भाँति सरस तथा सुन्दर है।[1] अतएव देशी भाषा भी महत्त्वपूर्ण रही है। विद्यापति उल्लसित होकर कहते हैं—'देसिल बअना सब जन मिट्ठा'—अर्थात् देशी वचन सभी को मीठे लगते हैं। वस्तुतः मधुरता ही देशी भाषा की पहचान है। जैन वाङ्मय तथा 'कुवलयमालाकहा' के अध्ययन से विदित होता है कि इस देश में मुख्य रूप से अठारह देशी भाषाएँ प्रचलित रही हैं। श्री एल. बी. गाँधी तथा डॉ. जैन देशी भाषा और अपभ्रंश को एक ही मानते हैं, किन्तु परममित्र शास्त्री उनसे सहमत नहीं हैं। उनका यह कथन है कि प्राकृत और अपभ्रंश के कवियों ने अपने काव्य को देशभाषा यानी जनभाषा के रूप में प्रयुक्त किया है। अपभ्रंश जनभाषा के बहुत निकट है। इसके साहित्य में देशी शब्दों की प्रधानता है, किन्तु देशभाषा और अपभ्रंश भाषा एक ही नहीं हैं।[2] डॉ. शास्त्री के इन विचारों की व्याख्या करना आवश्यक है। यथार्थ में अपभ्रंश के प्रारम्भिक कवि प्राकृत की परम्परा का अनुकरण करते आ रहे थे। प्राकृत में अपनी रचना को 'देशी' कहना रूढ़ हो गया था। यद्यपि उन पर देशी भाषाओं का प्रभाव रहा है, किन्तु वे ठीक से किसी जनबोली का प्रतिनिधित्व नहीं करतीं। तरंगवई, लीलावई तथा कुवलयमालाकहा आदि के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि उनके युग में विभिन्न देशी भाषाओं का प्रचलन था, किन्तु काव्यात्मक भाषा प्राकृत, अवहंस या अपभ्रंश उनसे भिन्न थी। आम जनता की भाषा के कुछ ही नमूने तथा वाक्यगत प्रयोग हमें साहित्य में मिलते हैं। अतएव इस साहित्य को लोक साहित्य कहने का अभिप्राय यही है कि प्रान्त विशेष की भाषा के आधार पर अपभ्रंश का साहित्य लिखा गया जो लोक-जीवन की विभिन्न प्रवृत्तियों से समन्वित है और जिसमें देशी परम्परा का पूर्ण योग है। परन्तु उनमें कोई भी रचना किसी प्रान्त विशेष की ठेठ बोली में नहीं लिखी गयी। भारतीय साहित्य की यह परम्परा है कि वह पूरी तरह से किसी शुद्ध बोली में लिखित नहीं मिलता है।यहाँ तक कि हिन्दी में जो अवध या ब्रज की भाषा में रचनाएँ लिखी गयीं, उन पर इतर आर्यभाषाओं का प्रभाव परिलक्षित होता है। केवल इसी अर्थ में अपभ्रंश देशी से भिन्न है। किन्तु सामान्य रूप से अवधी भाषा में लिखे गये 'रामचरितमानस' की भाँति अपभ्रंश के काव्य भी देशी भाषा के काव्य हैं। इनकी परम्परा आज भी लोक-साहित्य में अक्षुण्ण है। अपभ्रंश-साहित्य में गीति, चर्यापद, रास एवं चर्चरी तथा फागु आदि ऐसी रचनाएँ भी मिलती हैं जो सरल भाषा में जनभाषा में लिखी गयी हैं। 'कुवलयमालाकहा' में भी 'चर्चरीरास' तथा विभिन्न ग्रामीण संवाद देशी परम्परा के ही सूचक हैं। वास्तव में अपभ्रंश भाषा तथा उसके साहित्य में ग्रामीण तथा साहित्यिक

---

१. ता किं अवहंसं होहइ ? हूं तंपि णो जेण सक्कअ-पायय उभयसुद्धासुद्ध पयसमतरंगरंगंतवग्गिरं णव पाउसजलयपवाहपूरपव्वालिय गिरिणइसरिसं समविसमं पणयकुवियपियपणइणी समुल्लावसरिसं मनोहरं।—कुवलयमालाकहा

२. शास्त्री, डॉ. परममित्र : अपभ्रंश और देशी, नागरीप्रचारिणी-पत्रिका, वर्ष ६६, अंक १-२, पृ. ७६

दोनों ही परम्पराएँ उपलब्ध होती हैं। वाग्भट तथा आचार्य हेमचन्द्र आदि ग्राम्यभाषा का उल्लेख करते हैं। नमिसाधु तो यहाँ तक कहते हैं कि कुछ लोग उपनागर, आभीर और ग्राम्यभेद से अपभ्रंश के तीन प्रकार मानते हैं, किन्तु देशभेद से उसके अनेक भेद हैं।[१] वस्तुतः ये अनेक भेद जनपदीय बोलियों को छोड़कर अन्य नहीं हैं। पं. हरगोविन्ददास का यह विशिष्ट मत ऐतिहासिक अध्ययन से भी प्रमाणित होता है कि पंजाब और मध्य देश के बाहर के अन्य प्रदेशों में उस समय आर्य लोगों की जो प्रादेशिक प्राकृत भाषाएँ प्रचलित थीं,उनसे ही ये देशी शब्द गृहीत हुए हैं। यही कारण है कि वैदिक और संस्कृत साहित्य में देशी शब्दों के अनुरूप कोई शब्द (प्रतिशब्द) नहीं पाया जाता है।[२] इसका यह भी अर्थ नहीं है,जैसा कि कुछ विद्वान् समझते हैं कि प्राकृत और देशी एक है, परन्तु अपभ्रंश और देशी भिन्न-भिन्न हैं। वस्तुतः देशी कथ्य भाषा का वाचक शब्द है, किन्तु प्राकृत तथा अपभ्रंश शब्द साहित्य-पद के लिए रूढ़ हो जाने के कारण कालान्तर में भिन्न अर्थ के वाचक हो गये। अतएव देशी शब्द आज जिस रूढ़ अर्थ में हमारे सामने है, उससे यह निश्चित हो जाता है कि अपभ्रंश को रिक्थ के रूप में देशी भाषा यानी जनबोली का आधार अविच्छिन्न रूप से प्राप्त हुआ है। फिर, शास्त्री जी का यह कथन उचित ही है कि गोस्वामी तुलसीदास ने भी मानस की भाषा को 'भाषा' कहकर पुकारा है। अतः देशी या देशभाषा का प्रयोग समसामयिक भाषा काव्य के लिए प्रयुक्त हुआ है।[३] मराठी भाषा के आदि कवि मुकुन्दराज (११२८-११९८ ई.) ने भी देशी भाषा में रचना की है। उनका कथन है[४]—यदि कल्पतरु के फल घर के ही झाड़ में फलें, तो फिर कौन उन्हें ग्रहण नहीं करेगा ? भाषा चाहे देशी हो या मराठी, यदि उसमें उपनिषद् का तत्त्व हो, तो उसे हम गाँठ में क्यों न बाँधें ? रंगनाथ या नाथमुनि (सं. ८२४-८२४ ई.) ने आलवारों के उपदेश के प्रचार के लिए देशी भाषाओं में गायन का प्रबन्ध कराया था। रामानन्द, एकनाथ आदि अन्य भारतीय सन्तों ने अपनी बानियों की रचना देशी भाषाओं में की थी। कबीरदास जी ने स्पष्ट ही कहा है—"कबिरा संसकरत कूपजल भाखा बहता नीर।"

वस्तुतः प्रत्येक जीवित भाषा के लिए कोई-न-कोई आकर भाषा होती है। यूरोप की भाषाओं के लिए ग्रीक और लेटिन आकर भाषाएँ हैं। अतएव शेक्सपियर की भाषा में बहुत से ग्रीक और लेटिन शब्द पाये जाते हैं। उर्दू के लिए अरबी आकर भाषा है। इसी प्रकार आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के लिए संस्कृत आकर भाषा है। परन्तु

१. काव्यालंकारटीका, २, १२
२. पाइअ-सद्द-महण्णवो, प्रथम संस्करण का उपोद्घात, पृ. २१
३. नागरीप्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६६, अंक १-२, पृ. ७६
४. कल्पतरुचेनि पाडें। जरी फलती घरची झाडें।।
तरी तिये आवडीयेनि कोडें। न लावावी कां ?
देशी हो का मरहाटी। परी उपनिषदाची च राहाटी।।
तरी हा अर्थुजी वाचिया गाँठी। कां न गाँधावा ?

संस्कृत इन भाषाओं की उद्गमस्रोत नहीं है। सम्भव है कि आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं में संस्कृत के पचास प्रतिशत शब्द मिलते हों अथवा तत्सम शब्दों का समावेश हो, किन्तु लगभग उतने ही तद्भव तथा देशज शब्द भी उनमें पाये जाते हैं। व्यवहार में सिक्कों के चलन की भाँति भाषा में शब्द चलते हैं। इसलिए नये शब्द उन सिक्कों की भाँति होते हैं जो पुराने सिक्कों को चलन के बाहर कर देते हैं। ऐसे शब्दों के सिक्के भाषा-शास्त्र में 'तद्भव' कहे जाते हैं। किन्तु देशज शब्द बिलकुल नये 'करेन्सी नोट' की भाँति होते हैं। इनकी संख्या दिनोंदिन बढ़ती रहती है। डॉ. चटर्जी के शब्दों में—"आर्यभाषा का इतिहास ज्यों-ज्यों आगे बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों इन अनुकार-शब्दों की बढ़ती हुई संख्या भी द्रष्टव्य बनती जाती है। 'देशीनाममाला' में कुछ अनुकार-शब्द हैं। द्राविड़ तथा निषाद (आस्ट्रिक) दोनों भाषाओं के अनुकार शब्द उनका एक बहुत महत्त्वपूर्ण भाग है।"[1] यह ज्ञात हो जाने पर कि देशी शब्द किसी भी भाषा में आगत एवं प्रयुक्त बिलकुल नवीन शब्द हैं, एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि ये देशी शब्द कहाँ से आये ? आचार्य हेमचन्द्र का कथन है कि जो शब्द शास्त्र के अनुसार प्रकृति, प्रत्यय आदि के संयोग से निष्पन्न नहीं होते तथा संस्कृत के शब्दकोशों में अप्रसिद्ध हैं, पर अन्य लक्षणकारों के द्वारा प्रतिपादित शक्तिसम्पन्न हैं वे इस देशी शब्दसंग्रह में निबद्ध हैं।[2] वस्तुतः उनका यह लक्षण एकदेशीय है। अतएव 'देशीनाममाला' में कुछ शब्द ऐसे भी मिलते हैं जो संस्कृत शब्दों से व्युत्पन्न कहे जाते हैं। किन्तु अधिकतर शब्द ऐसे हैं जिनकी व्युत्पत्ति का अनुमान संस्कृत से नहीं होता। भारतवर्ष में संस्कृत और प्राकृत के दोनों प्रकार के शब्द प्रसिद्ध रहे हैं। संस्कृत में शिष्ट वर्ग के शब्द हैं और प्राकृत में जनसामान्य के। प्रसिद्ध भाषावैज्ञानिक बीम्स के अनुसार भले ही इन शब्दों का प्रयोग साहित्य में न किया गया हो, किन्तु जनता की बोलियों में वे सदा प्रयुक्त होते रहे हैं।[3] इसलिए सम्भव है कि 'देशीनाममाला' में तद्भव शब्द भी देशी की कोटि में कहीं-कहीं मान लिये गये हों, किन्तु अधिकतर देशी शब्द प्राकृत तथा भारोपीय एवं द्राविड़ी बोलियों में प्रचलित रहे हैं। इसलिए द्रविड़ भाषाओं में देशी शब्द उनके शब्दकोशों में अधिगृहीत हैं तथा वे उनका एक अंग है।[4] 'देशीनाममाला' में

---

१. चटर्जी, डॉ. सुनीतिकुमार : भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, पृ. ११०
२. जे लक्खणे ण सिद्धा ण पसिद्धा सक्कयाहिहाणेसु।
ण य गउणलक्खणासत्तिसंभवा ते इह णिबद्धा। देशीनाममाला, १, ३
३. बीम्स जॉन : कम्पेरेटिव ग्रामर ऑव माडर्न आर्यन लैंग्वेजेज ऑव इण्डिया, १८७२, पृ. २४, प्रथम जिल्द
४. रामानुजस्वामी, पी. वी. : देशीनाममाला, १६३८, इण्ट्रोडक्शन ९, पृ. १०
५. देखिए, 'इण्डियन एण्टिक्वेरी' जिल्द १६, पृ. ३३-३६ में प्रकाशित के. अमृत रो का 'द्राविडियन एलीमेण्ट इन प्राकृत' शीर्षक लेख। तथा—डॉ. ए. एन. उपाध्ये का 'कनारीज वर्ड्स इन देशी लेक्सीकन्स' शीर्षक लेख, प्रकाशित 'एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट', जिल्द १२, पृ. २७७-८४

संगृहीत शब्दों में से अनेक कनड़ी, तमिल, आदि द्रविड़ भाषाओं के शब्द हैं।[1]

अतएव निश्चय ही देशी शब्द संस्कृत से भिन्न भारतीय आर्येतर प्रजाओं के शब्द हैं जो संस्कृत के किसी भी शब्दकोश में नहीं मिलते। और जो शब्द मिलते भी हैं वे भिन्न अर्थ में परिलक्षित होते हैं। शब्दकोशों में ही नहीं, अपभ्रंश के काव्य-साहित्य में भी देशी उधार लिये गये शब्द दिखाई पड़ते हैं। आर्येतर भाषाओं के अनेक शब्द अपभ्रंश-साहित्य में घुल-मिल गये हैं। उदाहरण के लिए अक्का, अप्पा, कडप्प, कुड़, कुड़व तथा कुरुल आदि शब्द लिये जा सकते हैं। श्री रत्न एन. श्रियन ने ऐसे ४६ शब्दों की लम्बी सूची सप्रमाण प्रकाशित की है जिसमें कनड़ी, तमिल, तेलुगु तथा तुलु आदि में पाये जाने वाले शब्द सम्मिलित हैं।[1] यही नहीं, उन्होंने देशी शब्दों की चार श्रेणियाँ निर्धारित की हैं। ये चार श्रेणियाँ हैं : (१) देश्य-देशीसम शब्द, (२) अनुकरणमूलक शब्द, (३) विदेशी ऋण शब्द और (४) शुद्ध देशी शब्द। अतएव यह कहना भ्रमपूर्ण है कि संगृहीत देशी शब्दों में जनबोलियों के ठेठ शब्द नहीं मिलते। श्री एस. एन. घोषाल के अनुसार ग्रियर्सन और उनके मानने वालों ने अपभ्रंशों को ठेठ बोलियाँ माना है, जिनका जन्म बोलचाल की प्राकृतों से हुआ और जिनका व्याकरणिक रूप तथा संघटन भी प्राकृत बोलियों से बना। उनकी अपेक्षा नाटकों की प्राकृत कुछ साहित्यिक रूपों में मिलती है। अपभ्रंश ने साहित्य का स्थान छठी शताब्दी में प्राप्त किया।[2] अतएव यह निश्चित है कि छठी शताब्दी तक अपभ्रंश वर्नाक्युलर (देशीय या प्राकृत) भाषा रही है। इसके प्रमाण भरतमुनि के नाट्यशास्त्र के 'मोरल्लउ नच्चंतउ' तथा अन्य निर्देशों से लेकर 'स्वयम्भूच्छन्द' तक बराबर मिलते हैं। स्वयम्भू ने आर्यदेव की रचना का एक उदाहरण दिया है :

काइं करउं हउं माए। पिउ ण गणइ लग्गी पाए।
मण्णु धरंतेहो जाइ। कढिण उत्तरंग भणाइ।।

इसकी ब्रजभाषा से तुलना कीजिए—का करौं हौं माइ, पिउ न गनै लागी पाए। राजस्थानी में तो आज भी बोलचाल में 'पाए लागी', 'पिउ न गनै', काइं करउं' आदि प्रयोग प्रचलित हैं। अपभ्रंश की परवर्ती रचनाओं में विभिन्न बोलियों के स्पष्ट उदाहरण मिलते हैं। अतएव इससे इनकार नहीं किया जा सकता कि अपभ्रंश जन-बोलियों के रूप में नहीं मिलती। फिर, यह कहना कि अपभ्रंश और देशी भिन्न-भिन्न हैं, उचित नहीं जान पड़ता। डॉ. सिंह ने डॉ. जैन के विचारों का समर्थन करते हुए कहा है[3]—इनका कथन सत्य है, पर अपभ्रंश को देशी मानने के काल की भी एक अवधि है। चौदहवीं

१. 'भारतीय विद्या' जिल्द २५, अंक १-२ में प्रकाशित रत्न एन. श्रियन का 'सम फारन लोन वर्ड्स इन पुष्पदन्ता'ज अपभ्रंश' शीर्षक लेख।
२. इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, जिल्द ३०, सं. ३ में प्रकाशित 'अपभ्रंश एण्ड पोस्ट अपभ्रंश फीचर्स इन द अर्ली प्राकृत्स', पृ. २४५-६३
३. सिंह, डॉ. शिवप्रसाद : कीर्तिलता और अवहट्ठ भाषा, पृ. ४३

शती के आस-पास एक बार फिर भाषा को देशी, ग्रामगिरा आदि कहने का जोर बढ़ा। विद्यापति के अतिरिक्त महाराष्ट्री कवि ज्ञानेश्वर ने भी कहा :

"अम्हो प्राकृते देशीकारे बन्धे गीता।"

स्पष्ट रूप से 'ज्ञानेश्वरी' में परवर्ती अपभ्रंश-रूपों की बहुलता होने पर भी वह मराठी है। सम्पूर्ण महानुभाव सम्प्रदाय के साहित्य के सम्बन्ध में भी यही कहा जा सकता है जो कि प्राचीन मराठी में लिखा गया कहा जाता है। वस्तुतः जनबोली के आधार पर लिखी गयी किसी भी रचना को देशीय या प्राकृत कहने की प्रथा हमें पाँचवीं शताब्दी से मिलने लगती है। और यह धारा लगातार दसवीं शताब्दी तक चलती है। बीच की कुछ शताब्दियों में अवश्य पुष्पदन्त के समय से लगभग दसवीं शताब्दी से अपभ्रंश के रूढ़ हो जाने से अपभ्रंशकवि अपने काव्य की भाषा देशी न कहकर भाषा कहने लगे थे। किन्तु अपभ्रंशों का देशीप्रवाह किसी-न-किसी रूप में पन्द्रहवीं-सोलहवीं शताब्दी तक बराबर चलता रहा। अतएव पन्द्रहवीं शती के कवि पं. रइधू की विभिन्न रचनाओं में अत्यन्त सरल भाषा का प्रयोग मिलता है जो बोलचाल के निकट है। सिद्धचक्रकथा की ये पंक्तियाँ देखिए :

ता सेट्ठि पयंपइ तहि तुरन्तु, तुहुं वीरु महारउ धम्मपुत्तु।
पें मंग्गहि जीवलु जो फुरइ तोहि, दह सहस तणउ दइ सेट्ठि मोहि।।

उक्त शब्दों में से तुरन्तु, मंग्गहि (माँगना), तोहि (तुझे), दइ (दो), मोहि (मुझे) आदि विभिन्न लोकबोलियों के शब्द हैं। वाक्यगत प्रयोग भी इसी प्रकार के हैं; जैसे :

अमरावइ णं खसि पडिय। तें मग्गिउ वरु णरवइ अभीहु।

अर्थात्—मानो अमरावती खिसक पड़ी हो। उसने नरपति से अभय वर माँगा। इतना ही नहीं, अपभ्रंश भाषा में बारहवीं शताब्दी के लिखे हुए दो शिलालेख भी मिलते हैं। यद्यपि उनकी भाषा शुद्ध अपभ्रंश नहीं है, पर उनमें अपभ्रंश-प्रवृत्ति स्पष्ट लक्षित होती है। इनमें से एक शिलालेख मध्यप्रदेश के दमोह जिले में हटा तहसील से आठ मील दूर जटाशंकर स्थान से प्राप्त हुआ है। यह शिलालेख नागरी लिपि में लिखा हुआ है जो बारहवीं शताब्दी के पूर्वार्ध का अनुमानित है।[1] शिलालेख की भाषा अपभ्रंश है। इसके लेखक कवि रल्ह हैं जो अपभ्रंश के कवि जान पड़ते हैं। अपभ्रंश में रल्ह कवि की लिखी हुई 'जिनदत्तचउपई' मिलती है जो तेरहवीं शताब्दी की रचना है। शिलालेख मूल रूप में परिशिष्ट के अन्त में दिया जा रहा है। भाषा की जानकारी के लिए एक पंक्ति निम्नांकित है :

---

१. जर्नल ऑव इण्डियन हिस्ट्री के जिल्द ६१, भाग ३ में प्रकाशित 'जटाशंकर स्टोन इन्सक्रिप्शन ऑव विजयसिंह' शीर्षक बालचन्द्र जैन का लेख

सुहकरण चरण तिभुवणहरण सुकवि रल्ह परिसुक्खइ भुंभुकदेव।

इसी प्रकार 'ढोला मारू रा दूहा' में कुछ अपभ्रंश के दोहे मिलते हैं जो इस प्रकार हैं :

जिणि देखें सज्जण वसइ, तिणि दिसि वज्जउ वाउ।
उआं लगे मो लग्गसी, ऊही लाख पसाउ।।
हइ रे जीव निलज तूं, निकस्यू जात न तोहि।
पिय विछुडत निकस्यउ नहीं, रह्यउं लजावण मोहि।।३७३।।

इस प्रकार अपभ्रंश एक जनप्रचलित बोली थी जो परवर्ती काल में साहित्य की माध्यम बनी और जिसमें उस युग की जनवादी प्रवृत्तियाँ मुखरित हुई। इसका एक प्रमाण यह भी है कि 'शिक्षा' ग्रन्थ में स्वरभक्ति के उच्चारण के सन्दर्भ में जिस भौगोलिक क्षेत्र का उल्लेख किया गया है, वह अर्द्धमागधी और अपभ्रंश का क्षेत्र है[1] और सम्भव है कि स्वरभक्ति का प्रसार अपभ्रंश की बोलियों के कारण हुआ हो। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के अनेक शब्द अपभ्रंश भाषा में मिलते हैं। हिन्दी भाषा की पूर्ण परम्परा आज तक अपभ्रंश भाषा और साहित्य में सुरक्षित है। अपभ्रंश और हिन्दी भाषा को परस्पर जोड़ने वाली कड़ी के रूप में 'अवहट्ठ' का नाम लिया जाता है। अधिक प्रामाणिक और स्पष्ट रूप से अवहट्ठ भाषा के कवि मैथिलकोकिल विद्यापति कहे जाते हैं। उन्होंने अपनी भाषा को देशी और अवहट्ठ दोनों रूपों में प्रकट किया है। यदि हम शब्द-रूपों की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन करें, तो अपभ्रंश और अवहट्ठ में विशेष अन्तर नहीं दिखाई पड़ेगा।[2]

अपभ्रंश का एक अन्य शिलालेख टोडाराय कृत 'राउरवेल' है जो लगभग ग्यारहवीं शताब्दी का लिखा हुआ माना जाता है। यह शिलालेख प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम, बम्बई में सुरक्षित है। अपभ्रंश का एक अन्य शिलालेख महाकालमन्दिर, उज्जैन से प्राप्त हुआ है जो बहुत छोटे-छोटे टुकड़ों में होने से पूर्ण रू - से पढ़ा नहीं जा सका है।

अपभ्रंश और अवहट्ठ

अपभ्रंश के कवियों के उल्लेख से प्रतीत होता है कि 'अवहट्ठ' शब्द का प्रयोग परवर्ती अपभ्रंश के लिए किया गया है; जो परिनिष्ठित अपभ्रंश ढल चली थी और जिसके रूपों में बहुत कुछ परिवर्तन हो चुका था। जिस प्रकार अपभ्रंश के कवि अपशब्दों के प्रति सजग थे और अपशब्दों से भिन्न देशी भाषा का परिचय दे रहे थे, उसी प्रकार अवहट्ठ के

---

१. वर्मा, डॉ. सिद्धेश्वर : द फोनेटिक आब्जर्वेशन्स ऑव इण्डियन ग्रैमेरियन्स, पृ. ५०, दिल्ली, १९६१
२. मित्र, कालीपाद : सम नभाआ वर्ड्स फ्रॉम अपभ्रंश, इण्डियन हिस्टारिकल क्वार्टरली के जिल्द २०, सं. ३, सित. १९४४ के अंक में प्रकाशित लेख, पृ. २५१-२७४

कवि भी अवभंस और अवहंस के प्रति सावधान थे तथा उसी स्वर में देशी भाषा का गान कर रहे थे। अधिकतर विद्वान् इस बात से सहमत हैं कि 'कीर्तिलता' की अवहट्ट भाषा मैथिली अपभ्रंश का ही परवर्ती रूप है। अपभ्रंश के कवि अद्दहमाण (अब्दुलरहमान) ने 'अवहट्ट' का उल्लेख स्वतन्त्र भाषा के रूप में किया है। वास्तव में डॉ. शिवप्रसाद सिंह का यह कथन उचित जान पड़ता है कि 'हमारे विचार से अवहट्ट परवर्ती अपभ्रंश का वह रूप है जिसके मूल में परिनिष्ठित अपभ्रंश यानी शौरसेनी है। व्यापक प्रचार के कारण इसमें कई रूप दिखाई पड़ते हैं। परवर्ती अपभ्रंश या अवहट्ट भिन्न-भिन्न स्थानों की क्षेत्रीय भाषाओं से प्रभावित हुई है।''[१] भाषागत परम्परा मूल में एक है, किन्तु देश, काल-प्रभाव से कुछ परिवर्तन हो जाने के कारण देशी की ही भाँति अवहट्ट का भी नाम लिया जाने लगा था। डॉ. वीरेन्द्र श्रीवास्तव ने इसे और भी अधिक स्पष्ट शब्दों में इस प्रकार कहा है—'कीर्तिलता प्राच्य अपभ्रंश का, विशेषतः अवहट्ट का रमणीय निदर्शन है। अपभ्रंश की सामान्यतः कालसीमा ईसा की पाँचवीं शताब्दी से चौदहवीं शताब्दी तक है। तेरहवीं शताब्दी में ही आधुनिक आर्यभाषाओं का पृथक् अस्तित्व दिखाई देने लगता है। तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दी संक्रान्तिकाल है। इस काल में परिनिष्ठित अपभ्रंश का लौकिक भाषाओं के साथ सम्मिश्रण हुआ। इस मिश्रण को ही अवहट्ट कहा जाता है, जैसा विद्यापति ने 'देसिल वयना' इस पद्य में निर्दिष्ट किया है।''[२] कीर्तिलता का निम्नलिखित पद्य परिनिष्ठित अपभ्रंश का उदाहरण माना जाता है :

तिहुअण खेतहि काइं तसु कित्तिवल्लि पसरेइ।
अक्खरखंभारंभ जउ मंचा बंधि न देइ।।

अतएव लोकभाषा में कीर्तिपताका और कीर्तिलता की रचना भले ही मैथिली प्रभावापन्न हो, किन्तु अपभ्रंश से वे सर्वथा अछूती नहीं हैं और यही भाषा-विषयक स्थिति निर्दिष्ट करने के हेतु 'अवहट्ट' शब्द का प्रयोग किया जाता रहा है। यद्यपि अपभ्रंश के कवियों ने अपनी भाषा को देशी और अवहट्ट भी कहा है, किन्तु वह एक शैली मात्र है। और यह भी सत्य है कि उनके समय तक भाषा की एक ऐसी अवस्था का जन्म नहीं हुआ था, जिसे वे अपनी परम्परा से कोई अन्य नाम-रूप दे सकते।

डॉ. सुकुमार सेन अवहट्ट से ब्रजबोली की उत्पत्ति मानते हैं। उनके अनुसार परवर्ती अवहट्ट ने, जिसके ऊपर मैथिली आदि स्थानीय भाषाओं का प्रभाव अवश्य पड़ा था, पन्द्रहवीं तथा सोलहवीं शताब्दी में ब्रजबोली का रूप धारण किया था। सूरदास आदि प्राचीन ब्रजभाषा के कवियों की रचनाएँ, जो अहिन्दी शब्द या पद हैं, वे इसी प्राचीन अवहट्ट या प्राचीन ब्रजबोली के हैं। विद्यापति की कीर्तिलता में भी अवहट्ट और

१. सिंह, डॉ. शिवप्रसाद : कीर्तिलता और अवहट्ट भाषा, पृ. ७, द्वि. सं., १९६४
२. श्रीवास्तव, डॉ. वीरेन्द्र : अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पृ. २९१, १९६५
३. सेन, डॉ. सुकुमार : 'भारतीय साहित्य' में प्रकाशित लेख में उद्धृत, प्रथम अंक, पृ. ७७, जन. १९५६

ब्रजबोली का ऐकान्तिक सम्बन्ध पाया जाता है;[२] किन्तु सामान्यतया बुन्देली की दो धाराएँ मध्य युग में प्रचलित रही हैं—प्रथम 'ओकारान्त' की, जो कन्नौजी और ब्रज में भलीभाँति प्रचलित थी और दूसरी 'उकारान्त' की, जिसका प्रसार बुन्देलखण्ड से लेकर पांचाल प्रदेश तक था। फिर, डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी का यह कथन कि पश्चिमी या शौरसेनी अपभ्रंश गुजरात तथा पश्चिमी पंजाब से लेकर बंगाल तक सम्भवतः जनबोली के रूप में प्रचलित रही और निश्चित रूप से शिष्टजनों की भाषा एवं सभी प्रकार के काव्यात्मक रूपों के लिए सर्वथा उपयुक्त भाषा रही है।[१]

तृतीय अवस्था :

प्राचीन युग की प्राकृत ही अशोक के अभिलेखों की स्थिति से गुजरती हुई लगभग दसवीं शताब्दी के मध्ययुगीन प्राकृत के रूप में मुख्यतः चार बोलियों में विभक्त की जा सकती है। पश्चिम में सिन्ध की घाटी में अपभ्रंश, दोआब में शौरसेनी, मथुरा में भी उसका केन्द्र था। इसके उपविभागों में गौर्जरी (गुजराती), अवन्ती (पश्चिमी राजस्थानी) और महाराष्ट्री (पूर्वी राजपूतानी)। प्राच्य प्राकृत मागधी और अर्धमागधी रूप में परिलक्षित होती हैं। अपभ्रंश से सिन्धी, पश्चिमी पंजाबी, और कश्मीरी; शौरसेनी से पूर्वी पंजाबी और हिन्दी (जूनी अवन्ती) तथा गुजराती; जबकि मागधी के दो रूपों में से मराठी और बंगाल की अन्य बोलियाँ निकली हैं। आधुनिक बोलियों के विकासोन्मुख होने का समय १००० ई. है।[१] अपने मौलिक अर्थ में 'अपभ्रंश' का अर्थ है—विपथगामी। पतंजलि ने इसका प्रयोग प्राचीन मध्यकालीन भारतीय भाषा के कुछ रूपों के लिए किया है जो उस समय की संस्कृत में सामान्य थे, परन्तु उनकी दृष्टि में असाधु हैं।[२] लगता है कि वैयाकरणों ने शब्द-रचना की दृष्टि से ही किसी शब्द को असाधु माना होगा, क्योंकि अर्थ की दृष्टि से असाधुता का प्रश्न ही नहीं उठ सकता। 'गौ' के लिए 'गावी' या 'गोणी' शब्द अपभ्रंश में प्रचलित है, तो इससे वैयाकरण को क्या कठिनाई है ? केवल यही कि वह संस्कृत में इस शब्द को नहीं अपना सकता है, क्योंकि संस्कृत व्याकरण की रूप-पद्धति के अनुसार वह निष्पन्न नहीं होता। अतएव शब्द-रचना संस्कृत से भिन्न होने के कारण जो शब्द असाधु या भ्रष्ट हैं, उनसे भरित भाषा अपभ्रंश है। अपभ्रंश नव्य भारतीय आर्यभाषाओं की वह अवस्था है जो मध्यकालीन तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के बीच एक सेतु के समान है। यह आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का

---

१. चटर्जी, डॉ. सुनीतिकुमार : द ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट ऑव बेंगाली लैंग्वेज, पृ. ११३

२. मेक्डानोल, आर्थर ए. : ए हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर, पंचम संस्करण, पृ. १२७, १९५८

३. ब्लाख, ज्यूल्स : इण्डो-आर्यन, अनु. अल्फ्रेड मास्टर, पृ. २१, पेरिस, १९६५
Apabhramsa—Its original sense is something 'aberrant'. Patanjali applies it to certain forms of old Middle Indian, in common use in the Samskrit of this time, but from his point of view, incorrect.' (p. 21)

वह पूर्वरूप है जिससे सभी नव्य भारतीय आर्यभाषाओं का निकास एवं उन्मेष हुआ। वास्तव में शब्द की प्रकृति ही अपभ्रंश है। फिर, आज 'संस्कृत' शब्द का उच्चारण ही ठीक से नहीं हो सकता। 'सांस्कुरुत' उच्चारण ठीक है या 'संसकिरत'; इसका निर्णय कैसे किया जा सकता है ?

भर्तृहरि ने परम्परा से आगत तथा प्रसिद्ध एवं रूढ़ स्वतन्त्र अपभ्रंश भाषा का उल्लेख किया है।[1] केवल शब्दों की ओर संकेत होने से यह नहीं समझना चाहिए कि उनका लक्ष्य कुछ शब्दों की ओर ही है, वरन् ऐसे शब्दरूपों तथा वाक्यों से भरित भाषा की ओर भी है। शास्त्र में तो संस्कृत से भिन्न सभी (प्राकृत भी) भाषाएँ अपभ्रंश कही जाती रही हैं।[2] इसका मुख्य कारण यही प्रतीत होता है कि इन अपभ्रंश बोलियों में प्रयुक्त देशी शब्द प्रामाणिकता की कोटि में नहीं आ सके। प्राकृतों की भाँति अपभ्रंश भी मुख्य रूप से उत्तरी-पश्चिमी बोली से निकली, इसलिए वह किसी प्रदेश की प्रतिनिधि भाषा नहीं थी; वरन् भाषागत अवस्थाविशेष का प्रतिनिधित्व अवश्य करती है। अपभ्रंश छठी शताब्दी के लगभग साहित्यिक भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी, तभी तो छठी शताब्दी के प्रसिद्ध काव्यशास्त्री भामह संस्कृत, प्राकृत की भाँति अपभ्रंश का भी काव्यभाषा के रूप में उल्लेख करते हैं।[3] यद्यपि अपभ्रंश का बोली के रूप में ई. पू. लगभग तीसरी शताब्दी में उल्लेख मिलता है। भरतमुनि ने 'उकारबहुला' के रूप में जिस बोली का उल्लेख किया है और संस्कृत-साहित्य के समालोचकों—दण्डी, नमिसाधु, लक्ष्मीधर, आदि ने 'आभीरादिगिरः' कहकर जिसका परिचय दिया है और महाकवि कालिदास ने 'विक्रमोर्वशीय' में अपभ्रंश के दोहों में भाषा का जो निदर्शन प्रस्तुत किया है, उससे अपभ्रंश का एक यथार्थ रूप हमारे सामने आता है। आ. नमिसाधु ने स्पष्ट रूप से आभीरी या अपभ्रंश भाषा के लक्षण मागधी में कहे हैं जो एक रूढ़ि मात्र थी। उन्होंने प्राकृत की प्रधानता होने के कारण अपभ्रंश को भी उसके अन्तर्गत गिनाते हुए अपभ्रंश के तीन मुख्य भेदों का निर्देश किया है—उपनागर, आभीर और ग्राम्य। संस्कृत काव्यशास्त्रियों के विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि अपभ्रंश जनसामान्य की एक ग्राम्य भाषा थी। राजा भोज के युग में (१०२२-६३ ई.) प्राकृत की भाँति अपभ्रंश का भी अच्छा प्रचार था। कहा जाता है कि स्वयं राजा भोज संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश के अच्छे जानकार थे तथा तीनों भाषाओं में रचना करते थे। काव्य में भी तीनों भाषाओं का इस युग में समान रूप से महत्त्व था। गुजरात में अपभ्रंश का विशेष प्रचार था। वहाँ के लोग केवल अपभ्रंश से ही सन्तोष का अनुभव करते

---

१. "नाप्रकृतिरपभ्रंशः स्वतन्त्रः कश्चिद् विद्यते। सर्वस्यैव हि साधुरेवापभ्रंशस्य प्रकृतिः। प्रसिद्धेस्तु रूढितामापद्यमानाः स्वातन्त्र्यमेव केचिदपभ्रंशा लभन्ते। तत्र गौरिति प्रयोक्तव्ये अशक्त्या प्रमादादिभिर्वा गाव्यादयस्तत्प्रकृतयोपभ्रंशाः प्रयुज्यन्ते।"—वाक्यपदीप, १,१४८, वार्तिक
२. "शास्त्रे तु संस्कृतादन्यदपभ्रंशतयोदितम्।"—काव्यलक्षण (दण्डी), १,१६
३. "संस्कृतं प्राकृतं चान्यदपभ्रंश इति त्रिधा।"—काव्यालंकार, १,१६

थे। यही नहीं, लाट देश के वासी संस्कृत से द्वेष रखते थे और प्राकृत को रुचिपूर्वक सुनते थे। गौडदेशीय लोगों को भी प्राकृत अच्छी लगती थी। शालिवाहन राजा के काल में प्राकृत का विशेष अभ्युदय हुआ। प्राकृत से भरित होने के कारण अपभ्रंश की रचना भी अत्यन्त भव्य और सरस है। इसे मगध और मथुरा के लोग बोलते थे जो कविजनों को भी इष्ट थी।[1] राजशेखर ने काव्य की मुख्य चार भाषाओं का निर्देश किया है। उसके अनुसार संस्कृत सुनने में दिव्य, प्राकृत स्वभाव से मधुर, अपभ्रंश सुभव्य और भूतभाषा सरस है। 'काव्यमीमांसा' के विवरण से पता चलता है कि अपभ्रंश का प्रचलन मारवाड़ में ही नहीं, सम्पूर्ण प्राचीन राजस्थान, पश्चिमी पंजाब, गुजरात तथा मालवा में भी था। मुख्य रूप से डॉ. तगारे अपभ्रंश के पश्चिमी, दक्षिणी और पूर्वी तीन भेद मानते हैं।[2]

अपभ्रंश का लिखित साहित्य अभी तक उत्तर भारत को छोड़कर दक्षिण, पूर्व और पश्चिम तीनों भागों से प्राप्त हो चुका है। शैवागम साहित्य में प्राकृत तथा अपभ्रंश की प्रधानता है। अभी इस पर शोधकार्य नहीं हुआ। किन्तु इस ओर विशेष रूप से लक्ष्य देना आवश्यक प्रतीत होता है। वास्तव में प्राकृत और अपभ्रंश ही इस देश की ऐसी भाषाएँ हैं जो सहस्रों वर्षों से प्रवर्तित भाषाओं के इतिहास में विशेषतः आर्यभाषाओं का विकास करने वाली हैं। इनके बिना इस देश का भाषाविषयक इतिहास सदा अपूर्ण रहेगा। वाकरनागल ने बहुत पहले ही यह तथ्य हमारे सामने रखा था कि वैदिक युग में भी बोलियाँ थीं; इसका प्रमाण अपभ्रंश में मिलता है। सच बात तो यह है कि द्वितीय प्राकृत में व्याकरण सम्बन्धी अनेक ऐसे रूप मिलते हैं, जिनकी व्याख्या पाणिनीय संस्कृत द्वारा नहीं की जा सकती। इसमें से एक पंचमी (अपादान) की अथवा सप्तमी की विभक्ति 'हि' है जो पालि तथा प्राचीन संस्कृत 'धि' से उद्भूत हुई है; साहित्यिक संस्कृत से नहीं। 'धि' का ही यह रूप प्रत्यय रूप से ग्रीक में 'थि' मिलता है। वैदिक युग में भी इस प्रत्यय का प्रयोग मिलता है। किन्तु जिस परिनिष्ठित बोली से संस्कृत प्रादुर्भूत हुई है, उसमें इसका अभाव है।[3] (देखो, प्रो. वाकरनागल : एल्टिण्डिश्चे ग्रामेतिक, पृ. २०)

अपभ्रंश की ध्वनि-प्रक्रिया प्राकृत की वर्णानुपूर्वी से भिन्न नहीं है और न अलग कोई प्रतीकात्मक पद्धति इसमें पायी जाती है। आचार्य भरतमुनि तथा प्राकृत के वैयाकरणों के अनुसार संस्कृत से प्राकृत की वर्णमाला कुछ भिन्न है। बोलियों में सरलीकरण की प्रवृत्ति वैदिक युग से ही बराबर बनी रही है। अपभ्रंश में ह्रस्व 'ए' और 'ओ' का प्रयोग उसके बोली रूप को द्योतित करता है। संस्कृत में 'ए, ओ' सन्ध्यक्षर हैं; किन्तु अपभ्रंश में उनकी स्थिति भिन्न है। बोलियों में इनका प्रयोग स्वतन्त्र स्वर के

१. महाराजा भोज : सरस्वतीकण्ठाभरण, २.१३-२६
२. तगारे, डॉ. जी. वी. : हिस्टारिकल ग्रैमर ऑव अपभ्रंश, पृ. १५-१६, १९४८
३. ग्रियर्सन, सर जार्ज अब्राहम : भारत का भाषा-सर्वेक्षण, खण्ड १, भा. १, अनु. डॉ. उदयनारायण तिवारी, पृ. २३२, १९५९

रूप में होता रहा है। जब बोलियों का बराबर प्रभाव साहित्यिक संस्कृत पर पड़ रहा था, तब उनमें भी सन्धि की प्रवृत्ति मन्थर पड़ गई थी। ऋक्संहिता में पादान्त और पादादि की सन्धि में भी यह वृत्ति स्पष्ट रूप से लक्षित होती है कि इन दशाओं में मूल पाठ में सन्धि होती ही नहीं थी और पादान्त तथा पादादि में सन्धि का होना व्याकरण की दृष्टि से उचित नहीं है।[१] डॉ. आल्सडोर्फ का कथन बिलकुल ठीक है कि अपभ्रंश की प्रवृत्ति अन्त्य स्वरों के ह्रस्वीकरण की ओर है। इससे अपभ्रंश की सरलीकरण की सामान्य प्रवृत्ति का ही संकेत मिलता है। ईसा की प्रथम सहस्राब्दी के मध्य में आरम्भ हुई अपभ्रंश भाषा-परम्परा तुर्की-ईरानी विजय के समय भी बराबर चल रही थी। कालिदास के 'विक्रमोर्वशीय' में अपभ्रंश के कुछ दोहे मिलते हैं। यदि ये प्रक्षिप्त हों अथवा आद्य द्वितीय प्राकृत की कालिदास-कालीन—४०० ई. —अपभ्रंश के परिवर्तित रूप हों, तो साहित्यिक अपभ्रंश-साहित्य का श्रीगणेश उक्त तिथि के आस-पास गिना जा सकता है। अपभ्रंश की कुछ विशेषताएँ, उदा. अन्तिम 'ओ' का क्षयित होकर 'उ' हो जाना, इसके भी पहले ईसा की तृतीय शताब्दी में ही पश्चिमोत्तरी प्राकृत में दृष्टिगोचर होती है।[२] इस प्रकार अपभ्रंश प्राकृत की मूल परम्परा की मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा की यह अवस्था है जो नव्य भारतीय आर्यभाषाओं की पुरोगामिनी है और आधुनिक आर्यबोलियों की सामान्य पूर्वरूप है।

अपने व्यापक अर्थ में अपभ्रंश किसी भी उस भाषा की द्योतक है जो किसी भी रूप में साधु भाषा से विपथगामी है। परिणामतः यह सभी भारतीय लोकबोलियों का सामान्य नाम है।[३] वस्तुतः यह मध्यकालीन उस जनभाषा के लिए प्रयुक्त नाम है जो लगभग छठी शताब्दी से पन्द्रहवीं शताब्दी तक प्राकृतों की अन्तिम अवस्था में साहित्यिक भाषा के रूप प्रयुक्त होती थी और जो हिन्दी, गुजराती, राजस्थानी, सिन्धी, पंजाबी और बंगला आदि की मूल रही है।

डॉ. ग्रियर्सन तथा उनके समर्थकों के अनुसार यह स्पष्ट है कि अपभ्रंश जन-सामान्य की भाषा थी, जिसकी उत्पत्ति व्याकरणिक स्तर पर प्राकृत बोलियों से हुई थी। छठी शताब्दी में अपभ्रंश ने साहित्य के पद पर आसन ग्रहण कर लिया था।[४] अतः विभाषा, अपभ्रष्ट या विपथगामी होने का प्रश्न ही नहीं उठता है। क्योंकि प्रायः साहित्य में प्रयुक्त भाषा नियत, व्यवस्थित तथा साधु होती है जिसे आज की भाषा में मानक भाषा कहते हैं।

---

१. घोष, बटकृष्ण : प्राकृतिक सन्धि इन द ऋक्संहिता, इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, जिल्द ६, भा. १
२. चटर्जी, डॉ. सुनीतिकुमार : भारतीय-आर्यभाषा और हिन्दी, पृ. ११७, द्वि. सं. १९५७
३. पिशेल, आर. : कम्पेरेटिव ग्रैमर ऑव द प्राकृत लैंग्वेज, अनु. सुभद्र झा, पृ. ३१, द्वि. सं., १९६५
४. घोषाल, प्रो. एस. एन. : अपभ्रंश एण्ड पोस्ट अपभ्रंश फीचर्स इन द अर्ली प्राकृत्स, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली जिल्द ३०, सं. ३, पृ. २४५-२६३

अपभ्रंश की विभिन्न बोलियों से आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का जन्म माना जाता है। डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार (१) शौरसेनी से पश्चिमी हिन्दी, नागर अपभ्रंश से राजस्थानी, गुजराती, पहाड़ी बोलियाँ, (२) पैशाची अपभ्रंश से लहन्दा और पंजाबी, (३) ब्राचड़ अपभ्रंश से सिन्धी, (४) महाराष्ट्री अपभ्रंश से मराठी, (५) अर्द्धमागधी अपभ्रंश से पूर्वी हिन्दी और (६) मागधी अपभ्रंश से बिहारी, बंगाली, उड़िया और असमिया भाषाओं का विकास हुआ है।[1] असमिया में प्राचीन लोकगीतों को छोड़कर अपभ्रंशमिश्रित प्रथम रचना हेमसरस्वती रचित 'प्रह्लादचरित' मानी जाती है जो चौदहवीं शताब्दी की रचना कही जाती है। डॉ. सुकुमार सेन का कथन है[2]—'अनुमानतः दसवीं-ग्यारहवीं शताब्दी से पूर्व अंचल की अपभ्रंश के गर्भ से बंगला का जन्म हुआ।' उस समय जनसाधारण की शिक्षा के लिए गणित के नियम एवं सांसारिक अभिज्ञता तथा व्यावहारिक नीतिबोध के सूत्र आदि अपभ्रंश के 'छड़ा' गानों के आकार में ही रचे जाते थे। वे आज भी प्रचलित हैं। गणित के वे 'छड़े' आज 'आर्या' नाम से जाने जाते हैं।[3] बंगला भाषा का प्राचीनतम रूप 'चर्यागीति' में सुरक्षित माना जाता है और चर्यागीति पूर्वी अपभ्रंश का उत्कृष्ट निदर्शन है। डॉ. विरंचिकुमार बरुआ के अनुसार असमिया भाषा का विकास सम्भवतः 'मागधी' या 'गौड़ी' अपभ्रंश से हुआ है।[4]

श्री परीक्षित हाजरिका ने अपने शोधपत्र 'द कामरूपी अपभ्रंश' में चर्यापदों को कामरूपी अपभ्रंश में लिखा हुआ माना है और यह मान्यता प्रतिपादित की है कि कामरूपी अपभ्रंश पूर्वी मागधी अपभ्रंश से निकली है। भौगोलिक, जातीय, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक दृष्टि से पूर्वी मागधी दो मुख्य भागों में विभक्त की जा सकती है—गौड़, कामरूपी। कामरूपी संस्कृति किरातों (भीलों) की आदिम संस्कृति पर आधारित है। आदिम कामरूप आर्यों तथा अनार्यों का अद्भुत मिश्रण है। कामरूपी अपभ्रंश का समय छठी शताब्दी से बारहवीं शताब्दी के मध्य कहा गया है। कश्मीरी भाषा के प्रथम दर्शन तेरहवीं शताब्दी के कवि शितिकण्ठ के 'महानयप्रकाश' नामक ग्रन्थ में होते हैं। 'तान्त्रिका' अपभ्रंश के निकट है। गुजराती भाषा का आदि काव्यग्रन्थ शालिभद्रसूरि कृत 'भरतेश्वरबाहुबलिरास' बारहवीं शताब्दी की परवर्ती अपभ्रंश की रचना मानी गयी है। इसी प्रकार 'रेवन्तगिरिरासो' भी जूनी गुजराती या परवर्ती अपभ्रंश की काव्यरचना है। प्राचीन मराठी के ग्रन्थकारों ने अपनी भाषा के दो नाम दिये

---

१. तिवारी, डॉ. भोलानाथ : हिन्दी भाषा, पृ. ६५, १९६६
२. सेन, डॉ. सुकुमार : भारतीय वाङ्मय, भाग ३, पृ. ६, वर्धा, १९५१
३. वही, पृ. ११
४. वही, पृ. ७१

हैं—प्राकृत और देशी।[1] मराठी में ऐसे बहुत से शब्द हैं जिनका संस्कृत से सम्बन्ध जोड़ना कठिन है। उदाहरण के लिए कुछ शब्द हैं—डोला, पोट, हाउ, वाट, आई, बाप, ढोरी, थेंब, गवत, इत्यादि। इसी प्रकार दिण्डी, ओवी वगैरह छन्द ठेठ देशी माने जाते हैं।[2] पन्द्रहवीं शताब्दी के सन्तोष मुनि नाम के ग्रन्थकार ने कहा है[3]—मागधी और शौरसेनी, पैशाची अपभ्रंश जानो। संस्कृत और प्राकृत ये षट्वाणी, छह भाषा पर मानो। इससे जान पड़ता है कि महाराष्ट्र में पन्द्रहवीं शताब्दी तक काव्यभाषा के रूप में अपभ्रंश प्रचलित थी। महाराष्ट्र के महानुभाव सम्प्रदाय के साहित्य में अपभ्रंश भाषा प्राचीन मराठी के रूप में आज तक सुरक्षित है। तुकाराम महाराज के अभंगों में भी अपभ्रंश के शब्दों के नमूने मिलते हैं। जैसे—अखाम (अक्षम), आणी (अनी), दिठी (दृष्टि), निकी (नीक), बापुला (बाप), माठ (मन्द), मादला (मादल), तन (तृण), चांग (चांगला), अठरा (अठारह), इत्यादि। पैशाची अपभ्रंश की ही एक शाखा व्राचड़ अपभ्रंश मानी गयी है जो आज की सिन्धी भाषा की जननी कही जाती है। ऐतिहासिक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि मध्य युग में मारवाड़ी (वर्तमान राजस्थानी) और गुजराती, ब्रज, कन्नौजी और बुन्देली परस्पर में बहुत कम भिन्न थीं। किन्तु उत्तरवर्ती काल में विभिन्न परिवर्तनों से उनमें बहुत अन्तर आ गया। इसी प्रकार व्राचड, चूलिका और कैकय पैशाची भी आरम्भ में एक थीं; परन्तु जातीय जीवन तथा प्रादेशिक भिन्नता एवं संस्कृति की भिन्नता से उनमें बहुत अन्तर लक्षित होने लगा है। इन्हें ऐसा ही समझना चाहिए जैसा कि कोंकणी और महाराष्ट्री में भेद होते हुए भी मूल में कोई अन्तर नहीं है। इसी प्रकार आज भी हिन्दकी, सिन्धी और कच्छी तीनों ही बोलियाँ कुछ हेर-फेर के साथ लगभग समान हैं। और इन तीनों का ही मूल व्राचड़ अपभ्रंश है।[4] मेकडानल के विचार में सिन्धी ही नहीं, पश्चिमी पंजाबी और कश्मीरी भी अपभ्रंश की इस धारा से विकसित हुई हैं।[5] डॉ. जॉर्ज ग्रियर्सन का यह कथन कि दक्षिण-पूर्व में सिन्धी कच्छी बोली से होती हुई गुजराती में विलीन हो जाती है[6] और यह अपभ्रंश की विकसित अवस्था की प्रतिपादक है, महत्त्वपूर्ण है; क्योंकि आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ ही नहीं, उनका साहित्य भी अपभ्रंश भाषा और साहित्य का अनुगमन करता है। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का अधिकतर साहित्य बारहवीं शताब्दी का लिखा हुआ मिलता है। दसवीं शताब्दी की कोई भी रचना अभी तक

---

१. ज्ञानेश्वरी, अ. ११, ओ. २२; १०।४४, ४६; १२, १२।
२. भावे, कै. विनायक लक्ष्मण : महाराष्ट्र-सारस्वत, पृ. ७, चौथी आवृत्ति, शक १८७३
३. वही, पृ. १० : 'मागधी आणि शौरसेनी, पिशाच अपभ्रंश जाणी।
संस्कृत प्राकृत या षट्वाणी, आणिकें उपन्न भाषा। ।''
४. जेतली, श्री कृष्णचन्द्र टोपणलाल : सिन्धी भाषा का संक्षिप्त परिचय, पृ. ६५
५. मेकडानल, ए. : ए हिस्ट्री ऑव संस्कृत लिटरेचर, पृ. २७
६. ग्रियर्सन, सर जॉर्ज अब्राहम (अनु. डॉ. उदयनारायण तिवारी) : भारत का भाषा-सर्वेक्षण, खण्ड १, भाग १, पृ. २६१, १९५९

उपलब्ध नहीं हो सकी है। यदि भाषा के विकास की दृष्टि से विचार किया जाए, तो स्पष्ट हो जाएगा कि अपभ्रंश भाषा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की जननी है। उदाहरण के लिए, अपभ्रंश का एक वाक्य है —'घोड़ा मारिउ'। हिन्दी में इसके लिए 'घोड़ों ने मारा', पंजाबी में 'घोड़याँ ने कुट्या' और गुजराती में 'घोड़ाओ ए मार्युं' तथा मराठी में 'घोड्यॉंनी मारिले' एवं सिन्धी में 'घोड़े मारयो' और असमिया में 'घोड़ायेइ मारिले' प्रयोग प्रचलित हैं। इसी प्रकार छत्तीसगढ़ी में 'घोरा मन मारे' और बुन्देलखण्डी में 'घोरन ने मारो' प्रयोग चलते हैं। बंगला में भी 'घोड़ा गुली मेरेछे' प्रयोगों को देखने से स्पष्ट है कि 'घोड़ा' अपभ्रंश भाषा का शब्द आज तक सभी आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में प्रचलित है। दक्षिण की भाषाओं की परम्परा अवश्य भिन्न है; जैसे : कुदिर ए तल्ली (मल.), गुर्रमुलुछे कोट्टावट्टा रचना की दृष्टि से भी वे भिन्न हैं।

अपभ्रंश-साहित्य का प्रारम्भिक काल

आधुनिक युग में प्राच्य विद्याओं के उत्तरोत्तर अध्ययन एवं अनुसन्धान से अब यह स्पष्ट हो चुका है कि संस्कृत, प्राकृत की भाँति अपभ्रंश एक स्वतन्त्र भाषा थी और उसमें शास्त्रीय परम्परा के स्तर पर साहित्य रचा गया। यद्यपि आज अपभ्रंश का सम्पूर्ण साहित्य उपलब्ध नहीं है, किन्तु जो कुछ प्राप्त हो सका है वह परिमाण में अल्प होने पर भी मूल्य में भारी है। भाषागत शब्द-रूपों की दृष्टि से निय प्राकृतों से लेकर आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की पूर्व अवस्था तक अपभ्रंश का सतत प्रवाह लक्षित होता है। यद्यपि अपभ्रंश पर प्राकृतों का पानी विशेष रूप से चढ़ता रहा है, किन्तु परवर्ती काल में वह संस्कृत भाषा और साहित्य से भी प्रभावापन्न रही है। वस्तुतः अपभ्रंश भाषा और साहित्य उत्तर मध्यकालीन भारतीय आर्यभाषा और साहित्य की वह शृंखला है जो एक ओर संस्कृत तथा प्राकृत से सम्बद्ध है तथा दूसरी ओर आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं और उनके साहित्य से सम्पृक्त है। अतएव प्राच्य साहित्य के अध्येताओं और अनुसन्धित्सुओं के लिए इस भाषा और साहित्य का विशेष महत्त्व है।

अपभ्रंश का सर्वप्रथम उल्लेख ई. पू. तृतीय शताब्दी में रचित महर्षि पतंजलि के महाभाष्य में मिलता है। भाष्यकार पतंजलि से लेकर आचार्य हेमचन्द्रसूरि तक सभी संस्कृत वैयाकरणों ने किसी-न-किसी रूप में अपभ्रंश का उल्लेख किया है। किन्तु उनके विवरण से पता चलता है कि अपभ्रंश उनके समय में एक विकृत (विकसित) भाषा थी। आचार्य हेमचन्द्र के समय में अवश्य अपभ्रंश एक पूर्ण साहित्यिक भाषा छन्द, व्याकरणशास्त्र आदि से समृद्ध हो चुकी थी। अतएव इस दृष्टि से विचार किया जाए, तो अपभ्रंश का प्रारम्भिक काल भाष्यकार पतंजलि के समय से मानना चाहिए। किन्तु उनके निर्देशों से यह स्पष्ट नहीं होता कि अपभ्रंश तब तक भाषा का स्थान ग्रहण कर

चुकी थी। यथार्थ में भाषा के पद पर आसीन होने के लिए कम-से-कम दो-तीन सौ वर्षों का समय लगा होगा। अतएव हम यह मान सकते हैं कि लगभग प्रथम शताब्दी के पूर्व तक का काल अपभ्रंश भाषा की रचनागत प्रक्रिया का प्रयोग-काल था। अपभ्रंश तब तक साहित्य की भाषा नहीं बनी थी। इसलिए इसे हम प्रयोग-काल भले ही कह लें, किन्तु अपभ्रंश का 'उकारबहुला' बोली के रूप में प्रथम स्पष्ट उल्लेख भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में मिलता है। नाट्य लोकधर्मी होते हैं। प्रत्येक युग में लिखे जाने वाले नाटकों में पात्रों के अनुसार भाषा का विधान किया जाता रहा है। अतएव संस्कृत के नाटकों में भी संस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं का प्रयोग मिलता है। अपभ्रंश शब्द-रूपों की सर्वप्रथम बानगी हमें संस्कृत के नाटकों में मिलती है। अभी इस दृष्टि से संस्कृत नाटकों का मूल्यांकन नहीं किया गया। विविध भारतीय भाषाओं के क्रमिक विकास के अध्ययन की दृष्टि से संस्कृत के प्रारम्भिक नाटक विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। आचार्य भरतमुनि (ई. पू. २००-२०० ई.) के 'मोरल्लउ नच्चन्तउ। महागमे सम्भन्तउ।।' (३२, ६६) से लेकर अश्वघोष के 'सारिपुत्र प्रकरण', भास के 'पंचरात्र', कालिदास के 'विक्रमोर्वशीय' तथा शूद्रक के 'मृच्छकटिक' आदि नाटकों में अपभ्रंश की उकारान्त प्रवृत्ति की छाप स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।[1] संस्कृत नाटकों में उद्धृत प्राकृत-अपभ्रंश तथा अपभ्रंशमिश्रित संस्कृत-प्राकृत के अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि अपभ्रंश बहुत पहले से ही बोलचाल की भाषा प्रचलित थी। इसे नाट्यकारों ने 'देशभाषा' के नाम से अभिहित किया था। भरतमुनि का कथन अत्यन्त स्पष्ट है :

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि देशभाषाविकल्पनम्।
भाषा चतुर्विधा ज्ञेया दशरूपे प्रयोगतः।।
संस्कृतं प्राकृतं चैव यत्र पाठ्यं प्रयुज्यते।
अतिभाषार्यभाषा च जातिभाषा तथैव च।। १७, २६-२७

भाषा चार प्रकार की कही गयी है—अतिभाषा, आर्यभाषा, जातिभाषा तथा योन्यन्तरी। देवताओं की वाणी को अतिभाषा, राजाओं की बोली को आर्यभाषा, शिष्ट तथा म्लेच्छ लोगों की बोली के भेद से दो प्रकार की जातिभाषा (संस्कृत, प्राकृत), और पशु-पक्षी आदि की बोली को योन्यन्तरी भाषा नाट्यशास्त्र में कही गयी है।[2] सामान्यतः जन-सामान्य प्राकृत का व्यवहार करता था। दरिद्र, अशिक्षित, ऐश्वर्य से प्रमत्त, श्रमण, तपस्वी, भिक्षुक, भागवत, तापस, बालक आदि तथा निम्न वर्ग के लोगों के लिए नाटक में प्राकृत के प्रयोग का विधान है। केवल शिष्ट, वेदपाठी ब्राह्मण, चोक्ष, गणिका तथा शिल्पी आदि के लिए संस्कृत भाषा के प्रयोग का अभिधान है।[3] अन्य तथा सभी शुद्र जातियों के लिए शौरसेनी भाषा एवं देशी छन्दों तथा भाषा के प्रयोग का निर्देश किया

१. विशेष जानकारी के लिए परिशिष्ट द्रष्टव्य है।
२. भरतमुनि : नाट्यशास्त्र, १७, २८-३२
३. वही, १७, ३३-३६

गया है। नाट्य में काव्य के रूप में विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं का उल्लेख किया गया है। मुख्य रूप से सात भाषाओं का निर्देश है—मागधी, अवन्तिजा, प्राच्या (पूर्वी), शौरसेनी, अर्द्धमागधी, बाह्लीका (पंजाबी ?) और दाक्षिणात्या। निम्नवर्ग के तथा जंगली लोगों की भाषा विभाषा कही गयी है।[1] इस प्रकार भरतमुनि ने 'देश भाषा' और 'विभाषा' के रूप में जिन बोलियों का उल्लेख किया है, वे उस युग की देशी भाषाएँ थीं। उनके द्वारा निर्दिष्ट 'आभीरोक्ति' और 'उकारबहुला' का सम्बन्ध अपभ्रंश से रहा है। अतएव अपभ्रंश का निकास तथा विकास देशी-परम्परा से हुआ है। संस्कृत काव्यों के प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ के समकालीन लक्ष्मीधर का कथन तो और भी स्पष्ट है। उनके अनुसार अपभ्रंश आभीर आदि बोलियों का निचय है। उसमें कहीं-कहीं अपशब्द होने के कारण कवि जन उसका प्रयोग नहीं करते।[2] उक्त तथा अन्य उल्लेखों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि अपभ्रंश जन सामान्य की भाषा थी जो आगे चलकर काव्य की भाषा बन गयी।

अपभ्रंश : काव्यभाषा

अपभ्रंश काव्य की भाषा कब बनी, यह कहना बहुत कठिन है। किन्तु अनुमान यह है कि छठी शताब्दी के लगभग अपभ्रंश में काव्य-रचना होने लगी थी। क्योंकि वलभीनरेश धरसेन द्वितीय (५५६-६४ ई.) के शिलालेख से पता चलता है कि उनके पिता गुहसेन संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश तीनों भाषाओं में प्रबन्ध काव्य रचने में निपुण थे।[3] संस्कृत के छठी शताब्दी के प्रसिद्ध समालोचक भामह ने भी संस्कृत, प्राकृत के साथ अपभ्रंश में काव्य-रचना का विधान किया है।[4] छठी शताब्दी में भाषाकाव्य की रचना होने लगी थी। महाकवि बाणभट्ट ने अपनी प्रसिद्ध रचना 'हर्षचरित' में प्राकृत के प्रसिद्ध कवि प्रवरसेन के साथ गद्यकार भट्टारक हरिचन्द्र का उल्लेख किया है।[5] अतएव सातवीं शताब्दी में भाषाकाव्य की जो परम्परा प्रचलित थी, वही हमें अपभ्रंश की काव्य-रचनाओं में परिलक्षित होती है। और इसके निदर्शन महाकवि स्वयम्भू के 'स्वयम्भूछन्द' में मिलते हैं। अपभ्रंश के प्राचीनतम जिन कवियों का उल्लेख मिलता है, उनमें गोविन्द और चतुर्मुख विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यद्यपि उन दोनों महाकवियों की रचनाएँ अभी तक उपलब्ध नहीं हो सकी हैं, किन्तु अपभ्रंश के कई प्राचीन कवियों ने उनकी रचनाओं

---

१. वही १७, ४७-५०

२. अपभ्रंशस्तु भाषा स्यादाभीरादिगिरां चयः।
कविप्रयोगानर्हत्वान्नापशब्दः स तु क्वचित्।।—षड्भाषाचन्द्रिका, १, ३१

३. इण्डियन एण्टिक्वेरी, भा. १०, पृ. २८४, अक्तूबर, १८८१

४. भामह : काव्यालंकार, १, १६

५. पदबन्धोज्ज्वलो हारी कृतवर्णक्रमस्थितिः।
भट्टारहरिचन्द्रस्य गद्यबन्धो नृपायते।।—हर्षचरित, १, १२

का सादर उल्लेख किया है। कवि गोविन्द ने कृष्णविषयक प्रबन्धकाव्य लिखा था। इसकी सूचना महाकवि स्वयम्भू के 'स्वयंभूच्छन्द' से मिलती है।[5] महाकवि स्वयम्भू के अतिरिक्त देवसेनगणि, नयनन्दी तथा धनपाल (पालनपुरवासी) आदि ने गोविन्द कवि का उल्लेख किया है। महाकवि धवल कृत 'हरिवंशपुराण' की आद्य प्रशस्ति से केवल इतना विदित होता है कि गोविन्द श्वेताम्बर जैन थे और उन्होंने 'सनत्कुमारचरित' नामक मनोहर प्रबन्धकाव्य रचा था।[1] किन्तु अनुमान यह किया जाता है कि वे सौराष्ट्र के निवासी थे और उन्होंने अपभ्रंश भाषा में सनत्कुमारचरित के अतिरिक्त कृष्णकाव्य (हरिवंशविषयक) आदि विषयों पर सुन्दर रचनाएँ रची थीं। गोविन्द की भाँति चतुर्मुख भी महाकवि थे। अपभ्रंश के प्रायः सभी प्रमुख कवियों ने चतुर्मुख का सादर स्मरण किया है। महाकवि धवल ने तो हरिवंशकथा चतुर्मुख के अनुसार ही कही है।[2] कवि हरिषेण, श्रीचन्द्र, धवल, पं. लक्ष्मण, धनपाल, वीर, रइधू तथा महिन्दु आदि ने चतुर्मुख और स्वयम्भू का समान रूप से उल्लेख किया है। महाकवि स्वयम्भू के शब्दों में चतुर्मुख 'पद्धडिया के सम्राट्' थे। अपभ्रंश साहित्य को चतुर्मुख की पद्धडिया छन्द की देन अपूर्व है। अतः महाकवि स्वयम्भू के पूर्ववर्ती कवियों में गोविन्द, चतुर्मुख, गोवर्धन, गोनद, द्रोण आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इन कवियों के उल्लेख से जहाँ अपभ्रंश भाषा और साहित्य की प्राचीनता का पता लगता है, वहीं प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य की महत्त्वपूर्ण कड़ी का परिचय उनकी रचनाओं के नमूने उपलब्ध होने से मिल जाता है। अतः यह निश्चित है कि महाकवि स्वयम्भू की पूर्ववर्ती परम्परा दीर्घकाल से चली आ रही थी। 'स्वयम्भूच्छन्द' में पूर्ववर्ती जिन अपभ्रंश कवियों की रचनाओं के उद्धरण मिलते हैं, उन कवियों के नाम हैं[3]—चतुर्मुख, धूर्त, माउरदेव, धनदेव, आर्यदेव, छइल्ल, गोविन्द, शुद्धशील, जिनदास, इत्यादि। इसी प्रकार स्वयम्भू के 'रिट्ठणेमिचरिउ' में भी अपभ्रंश के सुप्रसिद्ध कवि चतुर्मुख का नामोल्लेख है। अतएव महाकवि स्वयंभू के लगभग दो सौ वर्षों पूर्व से यह परम्परा विकसित हुई प्रतीत होती है। इसी सन्दर्भ में भामह के कथन को ध्यान में रखकर यह निश्चय हो जाता है कि छठी शताब्दी में अपभ्रंश काव्यों की रचना होने लगी थी। क्योंकि गोविन्द और चतुर्मुख जैसे महाकवि स्वयम्भू से कई दशकों के पूर्व काव्य-रचना कर चुके थे। अतएव महाकवि स्वयम्भू के लिए वे आदर्श बन सके।

उक्त विवरण के अतिरिक्त 'कुवलयमालाकहा' के अध्ययन से पता चलता है कि सन् ७७८ ई. में विभिन्न देशी भाषाएँ प्रचलित थीं और संस्कृत के साथ प्राकृत तथा अपभ्रंश में भी काव्य-रचना होती थी। कई स्थलों पर अपभ्रंश के निदर्शन भी कथा में मिलते हैं। उदाहरण के लिए—मध्यदेश में 'तेरे मेरे आउ', मालवा में 'भाउय भइणी तुम्हे' और

---

५. महाकवि स्वयम्भू : स्वयम्भूच्छन्द ४।१०।२।४।११।१

१. लणकुमार जं विरयउ मणहरु, कइ गोविंद पवरु सेयंबरु।—हरिवंशपुराण १।३।१६

२. हरि-पंडुवाण कहा चउमुह वासेहिं भासियं जह या।—वही, १।१।२

३. महाकवि स्वयम्भू : स्वयम्भूच्छन्द ४।२।१।४।१२।१

गुजरात में 'णउ रे भल्लउं' तथा कोशल में 'जल तल ले' आदि जो वचन-व्यवहार प्रचलित था, वह अपभ्रंश से बहुत कुछ साम्य रखता है।[४] यही नहीं, कथा में प्रयुक्त गीत अपभ्रंश की गीति-शैली से रंचमात्र भी भिन्न नहीं जान पड़ते। जैसे :

रणंत लोह संखलं झरंत देठभलं
खलंत पाय बंधणं ललंत रज्जु चूलयं।
चलंत कण्ण संखयं फुरंत दीह चामरं
रणंत हार घंटयं गलंत गंडवासयं।।

वस्तुतः 'कुवलयमालाकहा' देशी भाषा में निबद्ध होने के कारण देशी भाषाओं से प्रभावापन्न है। अतएव भाषा सरल प्राकृत होने पर भी अपभ्रंश के निकट है। उदाहरण के लिए—अवि य कच्छिज्जंति गइंदे, पल्लाणिज्जंति तुरंगमे, भारिज्जंति करहे, भरिज्जंति बइल्ले, जुप्पंति रहवरे, जोइज्जंति सयडे, उड्डाविज्जंति भारिए, संभाविज्जंति जंपाणिए, संभारिज्जंति कम्मयरए, संजमिज्जंति भंडयरे, संवेल्लिज्जंति पडउडीओ, परिहिज्जंति समायोगे, घेप्पंति य सरसरासगइसचक्कोंतासि णिवहे पक्कलपाइक्कणिवहेणं ति।'

तथा—

मारेह खाह पियह य किं वा पढिएण किं व धम्मेण।
एयं चिय चिंतेंतो भरिऊणं काहलो होइ।।
जो उण गुरुयण सेवी धम्माधम्माइं जाणिउं महइ।।
सुय देवय गुरु भत्तो भारिउं सो पंडिओ होइ।।

एवं—

हण हण हण त्ति मारे चूरे फालेह लेह लुंपेह।
खर सिंग सद्द हलबोल गब्भिणो धाइओ सद्दो।।
सो णत्थि कोइ देसो भूमि विभायम्मि णेय सो पुरिसो।
जो तत्थ णेय विद्धो अदिट्ठ भिल्लाण भल्लीहिं।।

इस प्रकार संस्कृत के नाटकों से लेकर प्राकृत तथा संस्कृत-साहित्य में अपभ्रंश के बिखरे हुए नमूने मिलते हैं। लोकभाषाओं के साहित्यीकरण की यह प्रवृत्ति हमें ईसा की लगभग दूसरी शताब्दी से दसवीं शताब्दी तक सतत प्रवर्तमान परिलक्षित होती है। अतएव अभिनवगुप्त के 'तन्त्रसार' में भी प्राकृत-अपभ्रंश मिश्रित काव्य रचना मिलती है। शैवागम साहित्य में, मराठी के प्राचीन महानुभाव सम्प्रदाय के साहित्य में तथा जूनी गुजराती साहित्य में अपभ्रंश कविता के अच्छे नमूने लक्षित होते हैं।[१] पं. दामोदर कृत 'उक्तिव्यक्तिप्रकरण' में, जो कि ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी की रचना कही जाती है,

---

४. विशेष विवरण के लिए परिशिष्ट देखिए।

१. तुरिआगतरलग्गु घट्टुब्बोहिणहं उज्जोअसि एह।
वितता समत्थ फुरण कमेण कमेणलिहालमिसाणमिपंचायतु।।६, २।।
सोच्छिअ भासइ भवतरु विसरउ सअलउ अद्धजालु निअघअणिपरिमेहहरो।।६, १०।।

कोशली अपभ्रंश भाषा का अच्छा परिचय मिलता है। उदाहरण के लिए :

अंधारीं राति चोरु ढूक
आगि लागें बांस फूट
छूट धाछा भमि भमि कूद
पूत करें वधावें नाच।

इसी प्रकार साधुसुन्दरगणि विरचित 'उक्तिरत्नाकर' में देशी शब्दों का विशेष रूप से संग्रह लक्षित होता है जिसमें अधिकांश अपभ्रंश शब्द हैं। निश्चय ही भारतीय आर्यभाषा का दसवीं शताब्दी का सम्पूर्ण साहित्य किसी-न-किसी रूप में अपभ्रंश भाषा और साहित्य से प्रभावित तथा अपभ्रंश शब्दावली से आकलित रहा है। यह परम्परा अनवच्छिन्न रूप से गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरितमानस' तक प्रवर्तमान रही है। भाषाविदों का यह कथन इस सन्दर्भ में समुचित प्रतीत होता है कि भारतीय आर्यभाषा के मूर्धन्य वर्ण देशी उत्पत्ति के हैं, क्योंकि द्रविड़ भाषाओं में 'ओ' नहीं होता। और यही कारण है कि वैदिक मूर्धन्य 'ळ' का प्रयोग भले ही लौकिक संस्कृत में न होता हो, पर महाराष्ट्र तथा दक्षिण के परिवारों में आज भी अपने उच्चारण के साथ शुद्ध रूप में प्रचलित है। इस प्रकार देशीकाव्य की परम्परा ईसवी की लगभग तृतीय शताब्दी से प्रारम्भ हुई, अनुमानित है। डॉ. जैन के शब्दों में "प्राकृत कथा-साहित्य का काल ईसवी सन् की लगभग चौथी शताब्दी से लेकर साधारणतया १६वीं-१७वीं शताब्दी तक चलता है। इसमें कथा, उपकथा, अन्तर्कथा, आख्यान, आख्यायिका, उदाहरण, दृष्टान्त, वृत्तान्त और चरित आदि के भेद से कथाओं के अनेक रूप दृष्टिगोचर होते हैं।"[1] लगभग पाँचवीं शताब्दी के अनन्तर ही अपभ्रंश का साहित्य लिखा गया। यद्यपि अपभ्रंश का प्रारम्भिक साहित्य आज उपलब्ध नहीं है, किन्तु प्राकृत की परम्परा में होने पर भी अनुमान यह किया जाता है कि वह लोकभाषा का साहित्य रहा होगा। प्राकृत के भी काव्य साहित्य में लोक-साहित्य के सामान्य रूप लक्षित होते हैं।

अपभ्रंश साहित्य का काल-विभाजन

यद्यपि अपभ्रंश का बोली के रूप में ई. पू. लगभग तीसरी शताब्दी में उल्लेख मिलता है, किन्तु अनुमान यह है कि अपभ्रंश उस युग में नाट्य बोली के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी और नाटकों में उसका प्रयोग होने लगा था। अतएव अपभ्रंश का आदिकाल ई. पू. तीसरी शताब्दी से माना जा सकता है। काल-विभाजन इस प्रकार है :

१. आदिकाल—ई. पू. ३०० से ६०० ई. तक।
(भाष्यकार पतंजलि से लेकर संस्कृत साहित्य के समालोचक आचार्य भामह तक)

---

१. जैन, डॉ. जगदीशचन्द्र : प्राकृत साहित्य का इतिहास, पृ. ३६०

२. मध्यकाल—६००-१७०० ई.

(अ) पूर्व मध्यकाल—६००-१२०० ई.

(चतुर्मुख-स्वयम्भू से लेकर आचार्य हेमचन्द्र तक)

(ब) उत्तर मध्यकाल—१२००-१७०० ई.

(आचार्य हेमचन्द्र सूरि से कवि भगवतीदास तक)

३. आधुनिक काल (अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से)

(रिचर्ड पिशेल से लेकर अब तक)।

वैयाकरण भर्तृहरि के वाक्यपदीय में उद्धृत आचार्य व्याडि, महर्षि पतंजलि तथा भरत मुनि के नाट्यशास्त्र में उल्लिखित 'उकारबहुला' बोली तथा अपभ्रंश का निर्देश स्पष्ट रूप से अपभ्रंश भाषा के अस्तित्व को सूचित करते हैं। किन्तु परवर्ती उद्धरणों से तथा साहित्यिक रचनाओं के परिशीलन से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि निश्चित रूप से छठी शताब्दी में अपभ्रंश में काव्य-रचना होने लगी थी। अतएव छठी शताब्दी के पूर्व का काल अपभ्रंश का वह युग रहा होगा, जिसमें प्राकृत की धारा से अपभ्रंश का स्वतन्त्र विकास हो रहा था और प्राकृत-साहित्य में अपभ्रंश का भी देशी भाषा के रूप में प्रयोग होने लगा था। अभी इस दृष्टि से प्राकृत-साहित्य का अध्ययन व समुचित मूल्यांकन नहीं हो सका है। भाषा की दृष्टि से अवश्य डॉ. चटर्जी के निष्कर्ष महत्त्वपूर्ण तथा मान्य हैं। उनका कथन है—"ईसा की प्रथम सहस्राब्दी के मध्य में आरम्भ हुई अपभ्रंश भाषा-परम्परा तुर्की-ईरानी विजय के समय में भी बराबर चल रही थी। अपभ्रंश की कुछ विशेषताएँ, उदाहरण के लिए अन्तिम 'ओ' का क्षयित होकर 'उ' हो जाना, इसके भी पहले ईसा की तृतीय शताब्दी में ही पश्चिमोत्तरी प्राकृत में दृष्टिगोचर होती है।"[1] इस प्रक्रिया के निर्माण में लगभग दो शताब्दियाँ अवश्य लगी होंगी। अतएव पाँचवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अपभ्रंश भाषा के अस्तित्व का ही नहीं, साहित्य का भी अनुमान होने लगता है। पं. राहुल सांकृत्यायन ने अपभ्रंश-काल का समय ५५०-१२०० ई. माना है[2] जो उचित जान पड़ता है। क्योंकि बाणभट्ट ने भाषाकवि ईशान का उल्लेख किया है जो प्राकृतकवि से भिन्न है। छठी शताब्दी के पूर्व अपभ्रंश काव्य रचने का अनुमान इसलिए भी किया जा सकता है कि भरत मुनि ने विभाषा के रूप में जिन बोलियों का उल्लेख किया है; अभिनवगुप्त ने उनकी पुष्टि करते हुए ग्रामीण जनों की बोलियों को अपभ्रंश कहा है।[3] उक्त दोनों प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि छठी शताब्दी के लगभग निश्चय रूप से अपभ्रंश भाषा में काव्य-रचना होने लगी थी।

इस प्रकार अपभ्रंश-साहित्य के इतिहास में भाषा एवं सांस्कृतिक दृष्टि से छठी शताब्दी

---

१. चटर्जी, डॉ. सुनीतिकुमार : भारतीय आर्यभाषा और हिन्दी, पृ. ११७, १९५७
२. सांकृत्यायन, राहुल : संस्कृत काव्यधारा, पृ. ४७२
३. भाषा संस्कृतापभ्रंशः। भाषापभ्रंशस्तु विभाषा। सा तत्तद्देश एव गह्वरवासिनां प्राकृतवासिनां च। भरत मुनि कृत नाट्यशास्त्र की विवृति, १७, ४६

अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रही है। छठी शताब्दी के पूर्व का युग अपभ्रंश का आदिकाल रहा है, जिसमें अपभ्रंश बोली के विभिन्न स्तरों का विकास करती हुई कदाचित् लोकनाट्यों के माध्यम से साहित्य के सिंहासन पर प्रतिष्ठित हुई। छठी शताब्दी का परवर्ती काल भाषा तथा साहित्य का वह संक्रमण काल रहा है, जिसमें आभिजात्य प्रवृत्तियों में निरन्तर परिवर्तन होता रहा और साहित्य किंचित् नव दिशा की ओर उन्मुख हुआ। अतएव लोक-साहित्य की कई विशेषताएँ अपभ्रंश-साहित्य में लक्षित होती हैं। इस साहित्य का ज्यों-ज्यों विकास होता गया, यह शास्त्रीय परम्परा से हटकर जनवादी प्रवृत्तियों से समन्वित होता गया। अपभ्रंश काव्य में स्वच्छन्दतामूलक प्रवृत्तियाँ परवर्ती काल में विशेष रूप से विकसित हुईं। वस्तुतः मध्यकाल (६००-१७०० ई.) ही और मुख्य रूप से पूर्व मध्यकाल अपभ्रंश की काव्य-रचना का प्रमुख काल रहा है। पूर्व मध्यकाल में विशेष रूप से प्रबन्ध काव्य लिखे गये। प्रबन्ध काव्यों की संख्या अपभ्रंश साहित्य में सबसे अधिक है। सभी प्रबन्ध काव्य सन्धियों में निबद्ध हैं और सन्धियाँ कड़वकबद्ध हैं। प्रबन्ध काव्यों की यह विशेष शैली अपभ्रंश साहित्य की देन है। परवर्ती काल में हिन्दी में रचे गये चरितमूलक या प्रेमाख्यानक अथवा लोकाख्यानक काव्यों पर अपभ्रंश प्रबन्ध काव्यों की इस शैली की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ती है। शैलीगत प्रयोगों के विविध रूपों की दृष्टि से भी अपभ्रंश और हिन्दी काव्यों का अभी तक प्रामाणिक विवेचन प्रस्तुत नहीं किया गया। उदाहरण के लिए, हिन्दी के महाकवि तुलसीदास और विशेषकर सूरदास की विभिन्न पद-शैलियों पर तथा विद्यापति के गीतों पर अपभ्रंश शैली का पूर्ण प्रभाव परिलक्षित होता है। अपभ्रंश-साहित्य में अधिगृहीत वस्तु ही लोकाख्यानक नहीं है, वरन् प्रयुक्त गीत तथा अधिकांश छन्द लोक-शैली में अनुस्यूत हैं। लोक-शैली के विभिन्न रूप विविध शताब्दियों में रचे गये अपभ्रंश काव्यों में लक्षित होते हैं। जिस प्रकार कहीं-कहीं लोक-कथाओं को आभिजात्य परिवेश दे दिया गया है या साभिप्राय अथवा सोद्देश्यमूलक घटनाओं की संयोजना की गयी है, उसी प्रकार गीतों एवं मात्रिक वृत्तों को वर्णिक रूपों में भी वर्णित किया गया है और कहीं-कहीं संस्कृत के वर्णिक वृत्तों में भी वर्णन किये गये हैं। इस प्रकार प्रमुख त्रिविध शैलियों में अपभ्रंश के प्रबन्ध-काव्य रचे हुए मिलते हैं। रचनागत भेद से अपभ्रंश-साहित्य में पौराणिक महाकाव्य, चरितकाव्य, कथाकाव्य, प्रेमाख्यानक काव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य आदि काव्यविधाएँ परिलक्षित होती हैं। प्राकृत तथा अपभ्रंश-साहित्य में काव्य के रूप में कथाएँ लिखने की प्रवृत्ति अत्यन्त प्राचीन प्रतीत होती है। तीर्थंकर महावीर और उनके अनुयायी श्रमणसाधुओं में दृष्टान्त तथा निदर्शन रूप में कथा कहने की प्रवृत्ति अत्यन्त व्यापक थी। कथाएँ लिखकर एवं मौखिक रूप में धर्म, अर्थ और काम पुरुषार्थ के मर्म को समझाने के लिए कही जाती थीं। आज तक जैन साधुओं में यह परम्परा अक्षुण्ण है। सातवीं शताब्दी के लगभग प्राकृत तथा अपभ्रंश में

१. ताओ पुण पंच कहाओ। तं जहा—सयलकहा, खंडकहा, उल्लावकहा, परिहासकहा, तहावरा कहिय त्ति।—कुवलयमाला, पृ. ४

कई प्रकार की कथा-मूलक काव्य रचनाएँ हो चुकी थीं, जिनका विवेचन संस्कृत में आचार्य आनन्दवर्धन और प्राकृत में आचार्य हेमचन्द्र ने किया। उद्योतनसूरि ने पाँच प्रकार की कथाओं का उल्लेख किया है[1]—सकलकथा, खण्डकथा, उल्लापकथा, परिहासकथा तथा क्षुद्रकथा। संस्कृत में कथा गद्य में तथा प्राकृत-अपभ्रंश में पद्य में लिखने का प्रचार था। गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' प्राकृत की प्राचीन तथा महत्त्वपूर्ण रचना रही है जो आज उपलब्ध नहीं होती। संस्कृत के परवर्ती कथा, चरित तथा आख्यायिका लेखकों पर 'बृहत्कथा' का अत्यन्त प्रभाव परिलक्षित होता है। यद्यपि संस्कृत में भी कुछ कथाओं का संकलन पद्य में किया गया, किन्तु वह 'बृहत्कथा' का अनुकरण मात्र है। मूलतः संस्कृत कथाएँ गद्य में हैं। वेदों में अवश्य कुछ आख्यानों का निर्देश मिलता है। परन्तु वे उस अर्थ में कथाएँ नहीं कही जा सकतीं, जिस रूप में 'बृहत्कथा' तथा अन्य पद्यबद्ध कथाएँ विस्तार से वर्णनात्मक रूप में लिखी गयीं। उनमें केवल वर्णन ही प्रधान नहीं है, किन्तु भाव, चरित्र तथा दृश्यों का भी प्रसंगानुसार सूक्ष्म अंकन हुआ है। अतएव घटनाओं एवं आख्यानों के उल्लेखों से उनकी तुलना करना समुचित नहीं होगा। इसी प्रकार अन्य संहिता आदि ग्रन्थों में दृष्टान्त निदर्शक आख्यानों का ही निर्देश मिलता है। ऐसे आख्यान 'बृहत्कथा' तथा कथाकाव्य से नितान्त भिन्न हैं, और इसलिए इनकी परिगणना काव्य साहित्य के अन्तर्गत नहीं की जानी चाहिए।

आठवीं शताब्दी से ही अपभ्रंश में लिखा हुआ सिद्ध साहित्य मिलने लगता है। अपभ्रंश का अधिकतर साहित्य आठवीं से बारहवीं शताब्दी के मध्य लिखा गया। इस साहित्य में जनवादी प्रवृत्तियों से लेकर सामन्तीय भावनाओं तक का सरस एवं सूक्ष्म चित्रण परिलक्षित होता है। दसवीं शताब्दी में प्राकृत मिश्रित अपभ्रंश अथवा स्वतन्त्र रूप से अपभ्रंश भाषा में शिलांकित होने लगे थे। राजा भोज के द्वारा उत्कीर्ण कराये गये शिलालेखों में प्राकृत के साथ अपभ्रंश के भी निदर्शन प्राप्त होते हैं जो आज भी धारा नगरी की श्री को अलंकृत करने वाले हैं। राजा भोज के द्वारा विरचित 'सरस्वती कण्ठाभरण' में अपभ्रंश के कई पद्य मिलते हैं।[1] उनके युग में अपभ्रंश भाषा और साहित्य का अच्छा प्रचार था। परवर्ती काल में अपभ्रंश-साहित्य का उत्तरोत्तर विकास होता गया। इन शताब्दियों में अपभ्रंश संस्कृत और प्राकृत भाषाओं के साथ विकासशील रही। अतएव अपभ्रंश-साहित्य पर संस्कृत भाषा और साहित्य का प्रभाव भलीभाँति लक्षित होता है। अपभ्रंश के प्रबन्ध काव्यों पर विशेष रूप से महाकवि कालिदास और बाणभट्ट की काव्य-कृतियों का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। दृश्य-वर्णनों में ही नहीं, बिम्ब-विधान और समासमूलक शैली पर भी संस्कृत साहित्य की स्पष्ट छाप दिखाई पड़ती है।

अपभ्रंश-साहित्य विभिन्न विधाओं में विकसित होता रहा। जन-जीवन की साधारण से साधारण घटनाओं तथा लोकोपयोगी विषयों पर इस साहित्य की रचना होती रही। अतएव स्तुति-पूजा से लेकर पौराणिक एवं महाकाव्यों तक की रचना अपभ्रंश भाषा में

१. परिशिष्ट द्रष्टव्य है।

हुई। विभिन्न प्रकार की गीतियाँ भी लिखी गयी। सिद्धों की गीतियों के अतिरिक्त स्वतन्त्र रूप से कई प्रकार की गीतियाँ मिलती हैं। इन गीतियों में नेमिगीत, पार्श्वगीत, चेतनगीत आदि मुख्य काव्यात्मक रचनाएँ हैं। यह गीति-साहित्य प्राकृत, अपभ्रंश और हिन्दी भाषा में भी रचा गया। किन्तु आज तक न तो वह प्रकाश में ही आया और न आज तक उसकी भाषा तथा कलात्मक विशेषताओं का विचार किया गया। वल्लव कृत नेमीश्वरगीत, छीहल कृत उदरगीत तथा गुणचन्द रचित नेमिराजुलगीत एवं सिंहनन्दि विरचित रावलियो गीत आदि कई प्रकार के गीत हैं। अधिकतर गीत लोकशैली में लिखे गये। जिस प्रकार अपभ्रंश साहित्य की यह विशेषता है कि लोककथाओं और लोकगीतों को आभिजात्य या परिनिष्ठित रूप दिया गया, उसी प्रकार कहीं-कहीं संस्कृत-साहित्य की आभिजात्य वृत्ति का भी अनुकरण किया गया; परन्तु उनमें भी लोकधर्मी यथार्थताओं का विशेष रूप से सन्निवेश परिलक्षित होता है। यही कारण है कि चर्चरी, रास, फागु, चूनड़ी आदि विधाओं में लोकधर्मी प्रवृत्ति प्रवर्तमान है। यही नहीं, काव्य-साहित्य में विविध वर्णिक और मात्रिक छन्दों को भी विभिन्न लोक-शैलियों में ढालकर प्रयोग किया गया। अतएव आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के साहित्य में अस्सी प्रतिशत छन्द अपभ्रंश साहित्य से आगत हैं। अपभ्रंश के प्रायः सभी मुख्य छन्द मराठी, गुजराती तथा राजस्थानी-साहित्य में देखने को मिल जाते हैं, जिनका विकास लोक-परम्परा से हुआ है। परवर्ती काल में अपभ्रंश-साहित्य में परिनिष्ठित अपभ्रंश में लिखने की प्रवृत्ति प्रचलित हो जाने पर भी लोकभाषा की शब्दावली तथा लोकशैलियों का बराबर प्रयोग होता रहा। इस दृष्टि से पं. रइधू और विद्यापति का अध्ययन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा। रइधू की भाषा में जहाँ बुन्देली, व्रज तथा राजस्थानी शब्द मिलते हैं, वहीं विद्यापति की पदावली में मिथिला, अवहट्ठ तथा देशी शब्दावली ही नहीं, लोकगीतों की विभिन्न शैलियों का समाहार भी लक्षित होता है। लोक-शैलियों में निबद्ध होने के कारण विद्यापति के गीत विभिन्न अंचलों में मौखिक रूप से सुरक्षित रह सके। यद्यपि अपभ्रंश की प्रबन्ध रचनाओं में विभिन्न मात्रिक छन्दों का प्रयोग मिलता है, किन्तु उन पर कई स्थलों पर लोकप्रचलित गीतात्मक शैलियों का प्रभाव परिलक्षित होता है। यही कारण है कि अपभ्रंश के अनेक छन्द संस्कृत-प्राकृत-अपभ्रंश के छन्द-ग्रन्थों में नहीं मिलते। जो मिलते भी हैं, उनमें कहीं-न-कहीं कुछ अन्तर दिखाई पड़ता है। इसलिए एक ही प्रबन्धकाव्य के सभी छन्दों का वर्गीकरण और विश्लेषण करना एक स्वतन्त्र शोध का विषय है। अभी तक अपभ्रंश काव्य साहित्य के छन्दों का इस प्रकार से स्वतन्त्र रूप में कोई अध्ययन नहीं किया गया। अतएव यह भी एक शोध-अनुसन्धान का अच्छा विषय है।

प्राकृत का कथा-साहित्य

यद्यपि लोकाख्यान सहस्रों वर्षों से जन-जन की भाषा में प्रत्येक देश में मौखिक रूप से

प्रचलित रहे हैं, किन्तु उनका लिखित रूप बहुत प्राचीन नहीं है। साहित्य लेखन की परम्परा के प्रचलित हो जाने के बहुत बाद लोकाख्यानों का सन्निवेश काव्यात्मक रूपों में संस्कृत और तदनन्तर प्राकृत-साहित्य में किया गया। लोकाख्यानों का समावेश भारतीय साहित्य में किन्हीं अभिप्राय विशेषों को लक्ष्य में रखकर किया गया परिलक्षित होता है। अतएव अभिप्रायों के अनुरूप उनमें विविध रूप संयोजना के साथ लक्षित होते हैं। कहीं-कहीं तो लोकाख्यान धार्मिक अभिप्रायों में ऐसे संयोजित मिलते हैं कि उनका रूप ही परिवर्तित हो गया है और वे धार्मिक कथा मात्र बन गये हैं। जिनमें परिवर्तन कम या किंचित् मात्र हुआ है, वे आज भी लोक-कथा के रूप में जनमानस में प्रचलित हैं। प्राकृत का कथा-साहित्य लोक-जीवन तथा धार्मिक जीवन से विशिष्ट संयोजित है। अतः कथा-साहित्य की लगभग सभी प्रकार की जनवादी, रोमाण्टिक, सामन्तीय एवं वैयक्तिक प्रवृत्तियाँ इस साहित्य में प्राप्त होती हैं। इन्हीं प्रवृत्तियों का कालान्तर में अपभ्रंश साहित्य में प्रकृत एवं यथार्थ रूप में चित्रण मिलता है। अपभ्रंश कथाकाव्य की इस स्वतन्त्र विधा का अनुशीलन किया जा चुका है,[1] किन्तु प्राकृत के विपुल कथा-साहित्य का न तो अभी तक सर्वेक्षण किया गया है और न किसी काव्यात्मक रूप में उसका विशिष्ट अध्ययन। अतएव अनुसन्धान की दिशा में यह विशिष्ट एवं शोध-खोज का क्षेत्र है। लोक-साहित्य की प्रवृत्तियों के विश्लेषण की दृष्टि से ही नहीं, काव्य के विभिन्न रूपों का भी स्वतन्त्र अध्ययन किया जा सकता है। इसी प्रकार युग विशेष में लिखी गयी रचनाओं का भाषा की दृष्टि से भाषावैज्ञानिक अध्ययन भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिए आचार्य हरिभद्रसूरि के युग की भाषा का विशिष्ट अध्ययन इसी सन्दर्भ में किया जा सकता है। हमारी जानकारी में इस प्रकार के अध्ययन गुजराती भाषा में किये जा चुके हैं। (ए स्टडी ऑव द गुजराती लैंग्वेज ऑव सिक्स्टीन्थ सेन्चुरी)। प्राकृत और अपभ्रंश के कुछ तुलनात्मक अध्ययन भी इस दिशा में उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के सन्दर्भ में सम्पूर्ण परम्परा को स्पष्ट रूप से जानने के लिए इस प्रकार के अध्ययन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माने जाएँगे।

प्राकृत का कथा-साहित्य निम्नलिखित है—

१. अंजनासुंदरीचरिय-गुणसमृद्धिमहत्तरा। बड़ा भण्डार जेसलमेर
२. आर्द्रकुमारकथानक। संघवी पाडा भण्डार, पाटन
३. एलकाक्षकथा। संघवी पाडा भण्डार, पाटन
४. कलावतीकथा '' ''
५. गजसुकुमालकथा '' ''
६. चारुदत्तकथा '' ''

---

१. शास्त्री, डॉ. देवेन्द्रकुमार : भविसयत्तकहा तथा अपभ्रंश कथाकाव्य, प्रकाशक : भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, १९७०

७. दामन्नककथा—संघवी पाडा भण्डार, पाटन
८. दिवाकरकथा ,, ,,
६. धनश्रीकथा ,, ,,
१०. धन्यशालिभद्रकथा ,, ,,
११. धन्यसुन्दरीकथा ,, ,,
१२. नर्मदासुन्दरीकथा—महेन्द्रसूरि। ताड़पत्र प्रति। तपागच्छ उपाश्रय भण्डार, जैसलमेर।
१३. नागदत्तकथा—संघवी पाडा भण्डार, पाटन
१४. पादलिप्ताचार्यकथा ,, ,,
१५. पुष्पवतीकथा ,, ,,
१६. प्रत्येकबुद्धकथा ,, ,,
१७. प्रदेशिकथा ,, ,,
१८. बप्पभट्टिकथा ,, ,,
१६. मल्लवादिकथा ,, ,,
२०. रत्नचूडकथा ,, ,,
२१. लीलावतीकथा—भूषणभट्टतनय। ताड़पत्र प्रति। बड़ा भण्डार, जैसलमेर।
२२. वंकचूलकथा (गद्य सचित्र)। संघवी पाडा भण्डार, पाटन
२३. वज्रकर्णकथा ,, ,,
२४. वसुमित्रकथा ,, ,,
२५. विक्रमकथा ,, ,,
२६. विक्रमसेनकथा ,, ,,
२७. विलासवतीकथा ,, ,,
२८. शीलवतीकथा—आज्ञासुन्दर। तपागच्छ उपाश्रय भण्डार, जैसलमेर
२६. समराइच्चकहा—हरिभद्रसूरि। संघ भण्डार, पाटन।
३०. सागरचन्द्रकथा—संघवी पाडा भण्डार, पाटन
३१. सिद्धसेनकथा ,, ,,
३२. सुकोशलकथा ,, ,,

अपभ्रंश-कथाकाव्य

काव्य की भाव-भूमि पर अपभ्रंश के कथाकाव्यों में लोककथाओं का साहित्यिक रूप में किन्हीं अभिप्रायों के साथ वर्णन किया गया, लक्षित होता है। लोक-जीवन के विविध तत्त्व इन कथाकाव्यों में सहज ही अनुस्यूत हैं। क्या कथा, क्या भाव और क्या छन्द तथा शैली सभी लोकधर्मी जीवन के अंग जान पड़ते हैं। अतः कथाकाव्य का नायक

आदर्श पुरुष ही नहीं, राजा, राजकुमार, बनिया, राजपूत, आदि कोई भी साधारण पुरुष अपने पुरुषार्थ से अग्रसर हो अपने व्यक्तित्व तथा गुणों को प्रकट कर यशस्वी परिलक्षित होता है। एक उभरता हुआ व्यक्तित्व सामान्य रूप से सभी कथाकाव्यों में दिखाई पड़ता है। अपभ्रंश के इन कथाकाव्यों के अध्ययन से जहाँ सामाजिक यथार्थता का परिज्ञान होता है, वहीं धार्मिक वातावरण में तथा इतिहास के परिप्रेक्ष्य में जातीयता और परम्परा का भी बोध होता है। कथाकाव्यों में एक विशेष प्रवृत्ति यह है कि वे धार्मिक तत्त्वों से भरित नहीं हैं। उनमें लोकजीवन का उन्मुक्त प्रकाश है। और उनसेऋभी अधिक उन्मुक्तता अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्यों में परिलक्षित होती है। अपभ्रंश के प्रमुख कथाकाव्य निम्नलिखित हैं :

भविसयत्तकहा (भविष्यदत्तकथा-धनपाल), जिनदत्तकथा (लाखू), विलासवतीकथा (सिद्धसाधारण), श्रीपालकथा (रइधू), सिद्धचक्रकथा (नरसेन), सप्तव्यसनवर्जनकथा (पं. माणिक्यचन्द्र), भविष्यदत्तकथा (विबुधश्रीधर), सुकुमालचरित्र (श्रीधर), सनत्कुमारचरित (हरिभद्रसूरि), श्रीपालचरित्र (दामोदर), हरिषेणचरित्र, इत्यादि।

अपभ्रंश का कथा-साहित्य प्राकृत की ही भाँति प्रचुर तथा समृद्ध है। अनेक छोटी-छोटी कथाएँ व्रत-सम्बन्धी आख्यानों को लेकर या धार्मिक प्रभाव बताने के लिए लोकाख्यानों को लेकर रची गयी हैं। अकेली रविव्रतकथा के सम्बन्ध में अलग-अलग विद्वानों की लगभग एक दर्जन रचनाएँ मिलती हैं। केवल भट्टारक गुणभद्र रचित सत्रह कथाएँ उपलब्ध हैं। इसी प्रकार पं. साधारण की आठ कथाएँ तथा मुनि बालचन्द्र की तीन एवं मुनि विनयचन्द्र की तीन कथाएँ मिलती हैं। अपभ्रंश-कथाकोश के अन्तर्गत कई अज्ञात रचनाएँ देखने को मिलती हैं। श्रीचन्द्र का कथाकोश प्रसिद्ध ही है। इसके अतिरिक्त आगरा स्थित दि. जैन मन्दिर, धूलियागंज में, जयपुर तथा दिल्ली में भी अज्ञातनामा अपभ्रंश कथाकोश मिलते हैं। इन सबकी छानबीन की जाए, तो लगभग एक सौ से भी अधिक स्वतन्त्र कथात्मक रचनाएँ उपलब्ध होती हैं। इनके अतिरिक्त आचार्य नेमिचन्द्रसूरि विरचित 'आख्यानकमणिकोश' में वर्णित तथा महेश्वसूरि कृत संजममंजरी की टीका में एवं मानसूरि कृत 'मनोरमाचरित्र' में भी अपभ्रंश की प्राकृत-अपभ्रंश मिश्रित कई कथाएँ हैं। अभी तक इस समग्र कथा-साहित्य का सर्वेक्षण तथा अनुशीलन नहीं किया गया है। भारतीय संस्कृति की अनुसन्धानात्मक दिशा में प्रवृत्त विद्वानों को इन कथाओं का भी अध्ययन करना चाहिए, जिससे मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति के कतिपय नवीन तथ्य भी प्रकाशित हो सकेंगे। यही नहीं, इन कथाओं से कुछ महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक तथ्यों के सम्बन्ध में भी जानकारी प्रकाश में आ सकेगी। अतः इस दृष्टि से अपभ्रंश के कथाकोशों का सम्पूर्ण अध्ययन व अनुशीलन होना आवश्यक है।

अप॰ श-चरितकाव्य

अपभ्रं॰ के चरितकाव्यों में पौराणिक महापुरुषों या अधिकतर त्रेसठ शलाका पुरुषों का जीवन-॰रित्र वर्णित है। ये एक प्रकार से सकल कथाएँ हैं, जिनमें पौराणिक शैली से कथा-ना॰क का जीवन बचपन से ही असाधारण रूप में चित्रित किया गया है। महापुरुषों का जीव॰-चरित्र अतिलौकिक तथा धार्मिक तत्त्वों से अनुरंजित है। आकार की दृष्टि से साधार॰ातः चरितकाव्य चार सन्धियों से लकर बीस-बाईस तक सन्धियों में निबद्ध है। पूर्व भवान्तरों तथा अन्य अवान्तर घटनाओं से प्रायः सभी चरितकाव्यों का कलेवर वृद्धिंगत हुआ है। फिर भी, चरितकाव्य पौराणिक काव्यों की अपेक्षा आकार में छोटे होते हैं। बारह या तेरह सन्धियों से लेकर लगभग सवा सौ सन्धियों तक के पुराणकाव्य उपलब्ध होते हैं। इनमें सभी नाटकीय तत्त्वों की अन्विति भलीभाँति लक्षित होती है। इनमें से प्रमुख पौराणिक महाकाव्य हैं—

१. हरिवंशपुराण—धवल, १२२ सन्धियाँ, कौरव-पाण्डव, श्रीकृष्ण, आदि महापुरुषों का जीवनचरित्र।

२. पाण्डवपुराण—यशःकीर्ति, ३४ सन्धियाँ, पाँच पाण्डवों की जीवनगाथा।

३. हरिवंशपुराण—यशःकीर्ति, १३ सन्धियाँ, हरिवंश की उत्पत्ति-विकास आदि का वर्णन।

४. हरिवंशपुराण—श्रुतकीर्ति, ४४ सन्धियाँ, कौरव-पाण्डव आदि का वर्णन।

५. हरिवंशपुराण—पं. रइधू, १४ सन्धियाँ, ऋषभचरित, हरिवंशोत्पत्ति, वसुदेव, बलभद्र, नेमिनाथ, पाण्डव आदि का वर्णन।

६. हरिवंशपुराण—महाकवि स्वयम्भू, ११२ सन्धियाँ, श्रीकृष्ण के जन्म से हरिवंश तक की भवावली का विस्तृत वर्णन।

अपभ्रंश के चरितकाव्य निम्नलिखित हैं : नेमिनाथचरित्र (अमरकीर्तिगणि), शान्तिनाथपुराण (महिन्दु), प्रद्युम्नचरित (सिंह), पार्श्वनाथचरित्र (देवदत्त), नेमिनाथचरित्र (लक्ष्मण), बाहुबलीचरित्र (धनपाल), चन्द्रप्रभचरित्र (भ. यशःकीर्ति), पार्श्वनाथचरित्र (श्रीधर), सम्भवनाथचरित्र (तेजपाल), सन्मतिजिनचरित्र (पं. रइधू), जम्बूस्वामीचरित्र (सागरदत्तसूरि), शान्तिनाथचरित्र (शुभकीर्ति), पार्श्वनाथचरित्र (पद्मकीर्ति), पार्श्वनाथचरित्र (बुध असवाल), वर्द्धमानकाव्य, (हरिश्चन्द्र) वर्द्धमानचरित्र (श्रीधर), चन्द्रप्रभचरित्र (श्रीधर), वज्रस्वामीचरित्र (वरदत्त), मेघेश्वरचरित्र, धन्यकुमारचरित्र, सुकौशलचरित्र, जीवन्धरचरित्र, यशोधरचरित्र (पं. रइधू), नागकुमार, यशोधरचरित्र (पुष्पदन्त), जम्बूस्वामीचरित्र (देवदत्त), श्रेणिकचरित्र (जयमित्रहल), शान्तिनाथचरित्र (ठाकुरसी), पार्श्वनाथचरित्र (देवचन्द), शान्तिनाथचरित्र (देवचन्द्रसूरि), नेमिनाथचरित्र, चन्द्रप्रभचरित्र (दामोदर), मल्लिनाथचरित्र (जिनप्रभसूरि), अगरसेनचरित्र (माणिक्यराज), सुदर्शनचरित्र (नयनन्दी), हनुमच्चरित्र, इत्यादि।

अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्य

अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्यों का विकास प्राकृत की उस लोक-परम्परा से हुआ, जिसमें पादलिप्तसूरि की तरंगवती, कोऊहल की लीलावती, धनेश्वरसूरि का सुरसुन्दरीचरित्र, विजयसिंहसूरि का भुवनसुन्दरीचरित्र तथा जिनहर्षगणि की रत्नशेखरकथा एवं मलयसुन्दरी आदि साहित्यिक कथाएँ तथा मौखिक रूप में वत्सराज कथा (हर्षवर्द्धनगणि), सर्वांगसुन्दरी और उदयनकथा आदि प्रचलित रही हैं। इन कथाओं में प्रेम की विशुद्धता एवं अमरता के साथ जीवन-दर्शन भी अभिव्यंजित हुआ है। प्राकृत के प्रेमाख्यानक काव्यों में सर्वप्राचीन पादलिप्तसूरि रचित 'तरंगवतीकथा' उपलब्ध होती है। तरंगवती की कथा जीवन की सरसता से ओतप्रोत विलासिता की वह विशुद्ध गाथा है, जिसमें सच्चे प्रेम को ही मूर्तिमान किया गया है। वातावरण और कथा में सभी ओर रोमान्स है। प्राकृत और अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्यों में नायक-नायिका के प्रेम-व्यापारों का निर्द्वन्द्व भाव से चित्रण हुआ है। इसलिए इन काव्यों में रूप-दर्शन, चित्र-दर्शन, पुतली-दर्शन या अन्य किसी रूप-सौन्दर्य अथवा वस्तु-दर्शन से नायक या नायिका के स्व प्रेमी या प्रेमिका की प्राप्ति के लिए व्याकुल हो जाना, प्राप्ति का उपाय करना, सब कुछ भूलकर उसी का ध्यान करना, वियोग में झूरना, अनहोनी घटनाओं का घटित हो जाना, एक बार मिलन हो जाने पर भी फिर से बिछुड़ जाना और अन्त में सभी प्रकार की कठिनाइयों पर विजय प्राप्त कर सफल होने का वर्णन किया गया है। हिन्दी के सूफी प्रेमाख्यानक काव्यों में भी उक्त विशेषताएँ भलीभाँति परिलक्षित होती हैं। अपभ्रंश के प्रमुख प्रेमाख्यानक काव्य हैं :

१. विलासवतीकथा—साधारण सिद्धसेन
२. जिनदत्तकथा—लाखू
३. जिनदत्तचउपई—रल्ह
४. पउमसिरीचरिउ—धाहिल
५. सुदंसणचरिउ—नयनन्दी
६. सुदर्शनचरित्र—माणिक्यनन्दी

अभी तक अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्यों पर स्वतन्त्र रूप से कोई शोध-कार्य नहीं किया गया है। यद्यपि सूफी प्रेमाख्यानक काव्यों से अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्य वस्तु में ही नहीं, रहस्यात्मक अभिव्यंजना में भी भिन्न हैं, किन्तु संस्कृत-प्राकृत की आनुपूर्वी में काव्यात्मक सौन्दर्य की दृष्टि से ही नहीं, उन्मुक्त विलास तथा जीवन्त प्रेम-निदर्शन की दृष्टि से भी उनका अत्यन्त महत्त्व है। यही नहीं, हिन्दी साहित्य के रीतिकालीन काव्यों की आधारभूमि के लिए भी उनमें शृंगारात्मक प्रवृत्तियाँ अभिव्यंजित परिलक्षित होती हैं। अतः सूफी साहित्य में परिव्याप्त आध्यात्मिक सौन्दर्य की रसवन्ती अभिव्यंजना को छोड़कर शृंगार तथा प्रेम की सभी प्रकार की समानधर्मी प्रवृत्तियाँ अपभ्रंश के

प्रेमाख्यानक काव्यों में व्याप्त हैं।

अपभ्रंश के खण्डकाव्य

अपभ्रंश के खण्डकाव्यों में सबसे अधिक स्फीत और प्रेरक काव्य कवि हरिदेव का 'मयणपराजयचरिउ' तथा अब्दुल रहमान कृत 'सन्देशरासक' है। दोनों ही काव्य प्रकाशित हो चुके हैं। इनके अतिरिक्त कुछ खण्डकाव्य इस प्रकार हैं :

१. कुमारपालप्रतिबोध—सोमप्रभसूरि (मुद्रित)
२. नेमिजिनवरप्रबन्ध—लावण्यसमय
३. भरतेश्वरबाहुबलिघोररास—वज्रसेनसूरि
४. वज्रस्वामीचरित्र—वरदत्त
५. मल्लिनाथकाव्य—विनयचन्द्रसूरि
६. बुद्धिरसायण—महीराज (पत्र सं. ३०, सरस्वती भवन, नागोर)
७. जम्बूस्वामीचरिय—महेन्द्रसूरिशिष्य
८. आत्मसंबोधनकाव्य—पं. रइधू
९. सम्यकत्वकौमुदी—पं. रइधू
१०. नेमिनाथफागु—राजशेखरसूरि
११. वड्डमाणकहा—नरसेन
१२. बाहुबली पाथडी—अभयवली
१३. वज्रस्वामीरास—जयसागर
१४. सुगंधदशमीकथा—उदयकीर्ति (प्रकाशित)
१५. नेमिनाथरास—कुमुदचन्द्र मुनि
१६. महावीरचरित्र—अभयदेवसूरि
१७. सुभद्राचरित्र—अभयगणि
१८. हरिषेणचरित्र—अज्ञात
१९. मल्लिनाथचरित्र—जिनप्रभ
२०. मल्लिनाथकाव्य—जयमित्रहल
२१. नागकुमारचरित्र—पुष्पदन्त
२२. करकण्डुचरित्र—मुनि कनकामर
२३. यशोधरचरित्र—पुष्पदन्त

इनके अतिरिक्ति कई बड़ी-बड़ी कथाएँ जो कि छन्दोबद्ध हैं, खण्डकाव्य के अन्तर्गत आती हैं। इनकी संख्या सबसे अधिक है। कतिपय कथाओं के नाम इस प्रकार हैं—मेघमालाव्रतकथा (कवि ठकुरसी), पुरन्दरविधानकथा (अमरकीर्ति), सुगन्धदशमीव्रतकथा (उदयकीर्ति), रुक्मणिविधानकथा (क्षत्रसेन), इत्यादि।

अपभ्रंश का रास-साहित्य

१. अंतरंगरास—जिनप्रभ
२. अनुप्रेक्षारास—जल्हिग
३. आबूरास—पाल्हण
४. उपदेशरसायनरास—जिनदत्तसूरि
५. कच्छूलीरास—प्रज्ञातिलक
६. कुट्टणिरासय—तिल्हण (मुद्रित)
७. कुमारपालरास—अज्ञात
८. कुमारपालदेवरास—सोमतिलक
९. गयसुकुमालरास—देल्हण
१०. गौतमरास—अज्ञात
११. गौतमस्वामीरास—विनयप्रभ उपाध्याय
१२. चन्दनबालारास—आसगु
१३. चूनड़ीरास—विनयचन्द
१४. चैतिरासा—ब्र. उंदू
१५. जम्बूस्वामिरास—धर्मसूरि
१६. जीवदयारास—आसगु
१७. जोगटरास—अज्ञात
१८. थूलिभद्दरासु—अज्ञात
१९. दोहाणुप्रेक्षारास—लक्ष्मीचन्द
२०. नवकाररास—अज्ञात
२१. नेमिरास—जिनप्रभ
२२. नेमिनाथरास—सुमतिगणि (मुद्रित)
२३. पंचकल्याणकरास—विनयचन्द
२४. पंचपंडवचरितरास—शालिभद्रसूरि (मुद्रित)
२५. पोसहरास—अज्ञात
२६. बुद्धिरास—शालिभद्रसूरि
२७. बुद्धिरसायण—पं. महीराज
२८. भरतबाहुबलीरास—शालिभद्रसूरि (मुद्रित)
२९. मनकरहारास—पाहल
३०. महावीररास—अभयतिलकमणि
३१. योगीरासो—योगीन्द्र
३२. रेवन्तगिरिरास—विजयसेनसूरि (मुद्रित)

३३. रोहिणीरास—अज्ञात
३४. वज्रस्वामीरास—जयसागर
३५. शान्तिनाथरास—अज्ञात
३६. शान्तिनाथदेवरास—लक्ष्मीतिलकगणि
३७. श्रावकविधिरास—मेरुनन्दन
३८. सप्तक्षेत्रिरासु—अज्ञात (मुद्रित)
३९. समरारास—अम्बदेवसूरि (मुद्रित)
४०. समाधिरास—चारितसेनमुनि
४१. सालिभद्ररासु—राजतिलक
४२. सीताहरणरासु—सागरचन्द

अपभ्रंश के रूपककाव्य

अपभ्रंश साहित्य में विभिन्न काव्य-विधाओं की भाँति रूपककाव्यों की रचना कोई नवीन वस्तु नहीं रही। सामान्य रूप से मुक्तक या खण्डकाव्यों में निबद्ध कई रूपक रचनाएँ आज भी उपलब्ध होती हैं। अधिकतर रचनाएँ तेरहवीं शताब्दी से सोलहवीं शताब्दी के मध्य में रची गयीं। सोमप्रभसूरि के 'कुमारपालप्रतिबोध' के अन्तर्गत 'जीव मनःकरण संलाप कथा' के रूप में एक कथा से अनुविद्ध रूपक-रचना लक्षित होती है। काव्य सरस तथा सूक्तियों से रोचक एवं मनोरंजक है। दूसरा रूपक-काव्य कवि हरिदेव द्वारा विरचित 'मयणपराजयचरिउ' है जो भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हो चुका है। इसमें कामदेव और जिन के जय-पराजय को सरागी और वीतरागी के रूपक के द्वारा अत्यन्त सरस वर्णित किया गया है। अपभ्रंश के उपलब्ध रूपककाव्यों में यह श्रेष्ठ रचना है। सम्भवतः इसी रचना से प्रेरित होकर सोलहवीं शताब्दी में बूचिराज (वल्ह) ने 'मयणजुज्झ' तथा 'सन्तोषतिलकजयमाल' की रचना की। दोनों ही रूपक रचनाएँ हैं और भाषा की दृष्टि से पुरानी हिन्दी के निकट हैं। रचनाएँ आकार में छोटी-छोटी हैं। इसी प्रकार पाहल कृत 'मनकरहारास' भी एक लघु रूपककाव्य है; किन्तु रचना सुन्दर और स्फीत है। मन और इन्द्रियों को संयमित करने के लिए सुन्दर काव्यरचना प्रसूत की है। इस काव्य की कई हस्तलिखित प्रतियाँ दिल्ली तथा जयपुर के जैन भण्डारों में मिलती हैं। संक्षेप में, अपभ्रंश के रूपककाव्यों की सूची इस प्रकार है :

१. जीव मनःकरण संलापकथा—(कुमारपालप्रतिबोध के अन्तर्गत)—सोमप्रभसूरि
२. मदनपराजयचरित—कवि हरिदेव
३. मदनयुद्ध—बूचिराज
४. सन्तोषतिलकजयमाल—बूचिराज
५. मनकरभारास—पाहल
६. मणुयसन्धि—पाहल

अपभ्रंश के सन्धिकाव्य

इधर पिछले दशक में अपभ्रंश की जो मुख्य रूप से शोध-खोज हुई है, उसमें विशेषरूप से सन्धिकाव्य प्रकाश में आये हैं। श्री अगरचन्द नाहटा ने इस सम्बन्ध में कई हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं में सम्बन्धित लेखों द्वारा जानकारी प्रदान की थी तथा 'जैनगुर्जर कविओ', भाग १' में प्रकाशित विभिन्न रचनाओं का उल्लेख किया था। सन्धिकाव्य की परम्परा मूलतः प्राकृत-अपभ्रंश काव्यों की मुख्य विधा है। क्योंकि सन्धि-रचना ही इस साहित्य में प्रचलित रही है। महाकवि स्वयम्भू के 'पउमचरिउ' से लेकर भगवतीदास के 'मिगांकलेखाचरिउ' तक नवम शताब्दी से सत्रहवीं शताब्दी तक रचे गये काव्य सन्धिबद्ध हैं। जब कवि अपनी विषय-वस्तु तथा भावप्रवणता के साथ अपनी कल्पना को प्रबन्ध का रूप नहीं दे पाया होगा, तो अपूर्ण एवं परित्यक्त इस साहित्यिक विधा के इस सापेक्षिक लघु आकार को सन्धिकाव्य नाम दिया गया होगा। तभी से सन्धिकाव्य की परम्परा प्रवर्तमान है। अधिकतर सन्धिकाव्य एक सन्धि में निबद्ध काव्य रचनाएँ हैं। अधिकतर सन्धिकाव्य ग्यारहवीं शताब्दी से लेकर पन्द्रहवीं के मध्य के लिखे हुए मिलते हैं। ये निम्नलिखित हैं :

१. स्थूलभद्रसन्धि—देवचन्द्रसूरि

२. नर्मदासुन्दरीसन्धि—जिनप्रभसूरि

३-७. अनाथिसन्धि, अंतरंगसन्धि, चउरंगसन्धि, मयणरेहासन्धि, जीवानुशास्तिसन्धि— जिनप्रभसूरि

८. शीलसन्धि—ईश्वरगणि

९. भावनासन्धि—जयदेवगणि

१०. शीलसन्धि—जयशेखरसूरिशिष्य

११. मणुयसन्धि—पाहल

१२-१३. शीलसन्धि, केसीगौतमसन्धि—रत्नशेखरसूरि

१४-२०. ऋषभपारणकसन्धि, महावीरचन्दनबालापारणासन्धि, गजसुकुमालसन्धि, शालिभद्रमहाऋषिसन्धि, अवन्तिसुकुमालसन्धि, मेतार्यमहामुनिसन्धि, पुराणर्षि सन्धि—रत्नप्रभसूरि

२१. उपदेशसन्धि—हेमसार कवि

२२. आनन्दश्रावकसन्धि—विनयचन्द्र

२३. उपधानसन्धि—जयशेखरसूरिशिष्य

स्फुट रचनाएँ

अपभ्रंश में कई प्रकार की स्फुट रचनाएँ मिलती हैं। ये स्तुति, स्तोत्र, पूजा और जयमाला

से लेकर अनुप्रेक्षा, भावना, कुलक, फागु, विवाहलु, छप्पय, आदि अनेक रूपों में उपलब्ध होती हैं। इनके अतिरिक्त चर्चागीतियाँ, चर्यापद तथा गीत, उपदेश, आदि भी परिलक्षित होते हैं। कुछ प्रमुख विषय की रचनाएँ इस प्रकार हैं :

अनुप्रेक्षा : अनुप्रेक्षा (ईश्वर), अनुप्रेक्षा (पं. जगसी), अनुप्रेक्षा (अल्हू कवि), अनुप्रेक्षारास (जल्हिग), द्वादशानुप्रेक्षा (पं. जोगदेव), मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा (पं. जोगदेव), द्वादशानुप्रेक्षा (लक्ष्मीचन्द)

भावना : भावसंग्रह (श्रुतिमुनि), सम्यक्त्वभावना (पं. रइधू), भावनासार (जिनप्रभसूरि)

चउवीसी : चउवीसी (देल्ह), त्रिंशत्जिनचउवीसी (अज्ञात)

कुलक : कालस्वरूपकुलक (जिनदत्तसूरि), भावनाकुलक (जिनप्रभ), ज्ञानप्रकाशकुलक, दानादिकुलक, धर्माधर्मविचारकुलक, धर्मोपदेशकुलक, सिद्धिकुलक, सुभाषितकुलक, (जिनप्रभसूरि), ज्ञानप्रकाशकुलक (जिनप्रभाचार्य), सुभाषितकुलक (जिनभद्र), भावनाकुलक (जिनेश्वरसूरि), उपदेशकुलक (देवसूरि) आत्मसंबोधकुलक (जिनप्रभ), उपदेशकुलक (जिनदत्तसूरि)

फागु : नेमिनाथफागु (जिनेश्वरसूरि), नेमिनाथकुमारराजीमतीचरित्रफागु (माणिक्यसुन्दर), शालिभद्रफागु (पोमा कवि), जिनचन्द्रसूरिफागु (अज्ञात)

विवाहलु : आर्द्रकुमारविवाहलु (देपाल कवि), जिनचन्द्रसूरिविवाहलु (सहजज्ञान) विवाहलउ (जिनेश्वरसूरि)

छप्पय : उवएसमालाकहाणयछप्पय (रत्नसिंहसूरिशिष्य), आगम के अष्टपद (छप्पय) (सोहल)

चउपई : नेमिनाथचउपई (विनयचन्द्रसूरि), जिनदत्तचउपई (रल्ह), सुदर्शनचउपई (वस्तिग), चतुर्गतिचतुष्पदिका (वस्तिग), पद्मावती चौपई (जिनप्रभसूरि)

चर्चरी : चर्चरी (जिनदत्तसूरि), चच्चरि (सोलण), धर्मचच्चरि (अज्ञात)

गीत : नेमीश्वरगीत (वल्हव), गुणस्थानगीत (ब्र. श्रीवर्द्धन), नेमिगीत आदि।

जयमाल : अकृत्रिमचैत्यालय, अणंत की जयमाल, अभयकुमार जयमाल, कण्हजयमाला, गुरुपादुका जयमाला (भ. महीचन्द्र), गणधरजयमाल, दशरथजयमाल, दशलक्षणजयमाल (रइधू), दशलक्षणजयमाल (भाऊकवि), दशलाक्षणिक जयमाल (पं. भावशर्मा), नन्दीश्वर जयमाल, नन्दीश्वर पूजाजयमाल (चन्द्रकीर्ति), नीलांजस जयमाल, पंचपरमेष्ठि जयमाल, पंचमेरुजयमाल, पंचमेरुजयमाला (मुनि सकलकीर्ति), भरतजयमाल, मणकरहाजयमाल, रोहिणीजयमाल, लोहजयमाल, शिवकुमार की जयमाल, षोडशकारणजयमाल (रइधू), सरस्वती जयमाला (भ. महीचन्द्र), रत्नत्रयपूजाजयमाल (ऋषभदास), सोलहकारणपूजा जयमाल, सिंहसंबोधनजयमाल आदि।

प्राच्य विद्याओं का अध्ययन

प्राच्य विद्याओं के अध्ययन में प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा एवं साहित्य का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। जिस प्रकार उसका साहित्य विपुल अंश में अप्रकाशित तथा अज्ञात है, उसी प्रकार अभी तक अधिकतर विद्वान् उसके महत्त्व से अनजान हैं। यद्यपि भारतीय विद्याओं के अमरीका, जापान तथा यूरोप के केन्द्रों में संस्कृत तथा भारतीय विषयों के सम्यक् अध्ययन के लिए पालि तथा प्राकृत का ज्ञान सम्प्रति आवश्यक समझा जाने लगा है, किन्तु भारतवर्ष में इस अध्ययन की अवस्थिति लगभग पूर्ववत् है। इसका कारण यही प्रतीत होता है कि पालि तथा प्राकृत भाषाएँ सम्प्रदायविशेष की भाषाएँ समझी जाती रही हैं; किन्तु अब यह भ्रम दूर हो जाना चाहिए। प्राकृत-भाषाएँ वैदिक युग के पूर्व से ही बोलचाल के रूप में प्रचलित रही हैं। आज की क्षेत्रीय बोलियों पर उनका बहुत कुछ प्रभाव लक्षित होता है। प्राकृत बोलियाँ अधिकतर परम्परागत हैं। साहित्य में जो प्राकृत प्रयुक्त लक्षित होती है, वह परवर्ती काल की है। प्राकृत बोलियों का प्रतिनिधित्व करती हैं; इसके प्रमाण तथा संकेत भरत मुनि के नाट्यशास्त्र, शैवागम-साहित्य, विक्रमोर्वशीय तथा मृच्छकटिक में मिलते हैं। 'मृच्छकटिक' सम्पूर्ण संस्कृत-साहित्य में एक विशिष्ट रचना है जो तीन-चौथाई प्राकृत में लिखित है। इसी प्रकार, लोकनाट्य मूलतः जनबोलियों में प्रचलित रहे हैं। आज भी उनकी परम्परा कहीं-कहीं सुरक्षित है। भारतीय-ईरानी तथा निय प्राकृत के अध्ययन से यह तथ्य और भी स्पष्ट हो जाता है कि प्राकृतों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है।

विदेशों में भारतीय भाषाओं का सर्वप्रथम अध्ययन अब्राहम रोजर्स के भर्तृहरि के अनुवाद से प्रारम्भ होता है जो सन् १६५१ ई. में डच भाषा में किया गया था। उस समय और उसके बाद जो भी अध्ययन किया गया, वह संस्कृत भाषा तथा साहित्य से सम्बद्ध था। आधुनिक युग में देश-विदेशों में पालि तथा प्राकृत का अध्ययन संस्कृत की अपेक्षा बहुत देर से हुआ। पालि का अध्ययन प्राकृत से पहले ही हो चुका था। यद्यपि पालि भाषा यूरोप में सत्रहवीं शती में पहुँच गयी थी, किन्तु पालि भाषा का वैज्ञानिक अध्ययन सन् १८२४ ई. में आरम्भ हुआ। सन् १८२६ ई. में बर्नोफ तथा लास्सन का संयुक्त रूप से 'ऐसे सुर ला पालि' निबन्ध प्रकाशित हुआ, जिसमें बुद्ध की मूल शिक्षाओं के सम्बन्ध में प्रकाश डाला गया था। अध्ययन की इस दिशा में भाषाशास्त्रियों की मुख्य प्रवृति विशेष रूप से तुलनात्मक अध्ययन की ओर थी। अतएव पॉट (सन् १८३३-३६ ई.) की प्रसिद्ध पुस्तक 'द एटिमोलॉजिकल स्टडी ऑव इण्डो-यूरोपियन लैंग्वेजेज' इसी समय प्रकाश में आयी। इसके कुछ वर्षों के बाद ही सन् १८६१ ई. में श्लाइशर का महान् कार्य 'कम्पेरेटिव वर्क इन द ग्रामर ऑव इण्डो-यूरोपियन लैंग्वेजेज' पुस्तक प्रकाशित हुई। किन्तु इन दोनों पुस्तकों का विषय आर्यभाषाओं में केवल संस्कृत से सम्बद्ध था। प्राकृत का विचार तब तक नहीं किया

गया था और इसका मुख्य कारण प्राकृत-साहित्य का प्रकाश में न आना कहा जा सकता है। यूरोप तथा अन्य देशों में संस्कृत की जानकारी को पहुँचाने का बहुत कुछ श्रेय सर विलियम जोन्स को है। सन् १७८६ ई. में रॉयल एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता की संस्थापना के समय उनके इन उद्‌गारों से कि संस्कृत भाषा प्रचीनता में चाहे जो हो, बनावट में सुन्दर, ग्रीक से भी अधिक पूर्ण, लैटिन से भी विपुल और उनसे कहीं अधिक उत्कृष्ट है—विश्व के विद्वानों का ध्यान समग्र रूप से संस्कृत की ओर आकृष्ट होकर उस पर केन्द्रित हो गया। किन्तु प्राकृत के सम्बन्ध में ऐसा नहीं हुआ।

भारतवर्ष में प्राच्य विद्याओं का अध्ययन आधुनिक युग में बहुत समय बाद में आरम्भ हुआ। प्राच्य विद्याओं के अध्ययन में भी प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य का अध्ययन अन्य शाखाओं की अपेक्षा सबसे बाद में आरम्भ हो सका। प्राकृत के अध्ययन का सर्वप्रथम उल्लेख चार्ल्स विल्किन्स के 'अभिज्ञान-शाकुन्तल' के अध्ययन के साथ मिलता है। फ्रांसीसी विद्वान् विल्किन्स का यह महान् स्वप्न था कि संस्कृत तथा प्राकृत के साथ शकुन्तला नाटक का अध्ययन तथा प्रकाशन मेरे द्वारा हो। इस दिशा में जहाँ तक पता लगता है, हेनरी टॉमस कोलब्रुक (सन् १७६७-१८२८ ई.) प्रथम प्राच्य विद्याओं के विशारद थे। उन्होंने संस्कृत के साथ प्राकृत भाषा, संस्कृत-प्राकृत छन्दःशास्त्र, दर्शन, जैनधर्म, बौद्धधर्म आदि पर विद्वत्तापूर्ण निबन्ध लिखे थे। वस्तुतः प्राकृत तथा जैनधर्म का अध्ययन डॉ. जे. जी. बूलर की खोज के बाद ही आरम्भ होता है। सन् १८६६ ई. के लगभग डॉ. बूलर ने बर्लिन (जर्मनी) पुस्तकालय के लिए पाँच सौ जैनग्रन्थ खोजकर भेजे थे। उनके जीवन का अधिकांश समय भारतीय हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज में बीता था। यथार्थ में उन्होंने अपनी खोज-रिपोर्टों के द्वारा शोधकार्य आरम्भ किया था, जिससे आकृष्ट होकर इस दिशा में भारतीय विद्वान् प्रवृत्त हुए। उन्होंने १८८७ ई. में जर्मन भाषा में अपने शोधकार्य के आधार पर जैनधर्म से सम्बद्ध एक पुस्तक लिखी जो अत्यन्त लोकप्रिय हुई। इसका अँगरेजी अनुवाद सन् १९०३ ई. में लन्दन से 'द इण्डियन सेक्ट ऑव द जैन्स' नाम से प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक में डॉ. बूलर ने स्पष्ट रूप से निरूपित किया कि जैनधर्म भारतवर्ष के बाहर अन्य देशों में भी ले जाया गया था और इसका उद्देश्य मनुष्य को सब प्रकार के बन्धनों से मुक्त करना है। उनके इस अध्ययन के पश्चात् 'कम्पेरेटिव रिलीजन' की शाखा का सूत्रपात हुआ। परिणामतः सन् १८८७ ई. में लन्दन से मेजर जे. जी. आर. फर्लांग की महत्त्वपूर्ण कृति 'शार्ट स्टडीज इन द सायन्स ऑव कम्पेरेटिव रिलीजन्स' प्रकाशित हुई। अपनी इस पुस्तक में उन्होंने शिलालेखों में उत्कीर्ण प्राकृत भाषा का भी उल्लेख किया है। इस प्रकार उन्नीसवीं शती के आरम्भ होने के पूर्वचरण में मुख्य रूप से जैनधर्म तथा प्राकृत का जो अध्ययन किया गया, वह आरम्भिक एवं विवरण-प्रधान होने पर भी महत्त्वपूर्ण था। इस युग में प्राच्य विद्या के अध्येताओं में जॉन जॉर्ज बूलर का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वे यथार्थ में अन्वेषक तथा शोधकर्ता थे। दूसरे महत्त्वपूर्ण गवेषक एवं

संशोधक वेबर थे। उन्होंने डॉ. बूलर द्वारा बर्लिन-पुस्तकालय के लिए प्रेषित पाँच सौ जैनग्रन्थों का अनुशीलन कर जैन-साहित्य पर खोजपूर्ण प्रकाश डाला। इस दिशा में उनका महान् कार्य कई वर्षों के अनवरत परिश्रम के फलस्वरूप भारतीय साहित्य (Indischen Studien) के रूप में सन् १८८२ ई. में प्रकाशित हुआ। भारतीय साहित्य का इतिहास सत्रह जिल्दों में विवेचित किया गया। प्राच्य विद्याओं के अध्ययन का यह युग जर्मन तथा भारत के केन्द्रों में विकसित हुआ, जिसमें ओरियण्टल तथा आक्सीडेण्ट का भलीभाँति अध्ययन-चिन्तन किया गया। इस युग में मुख्य रूप से विविध धर्मों का अध्ययन तुलनात्मक वैज्ञानिक पद्धति पर किया गया और इसी प्रकार विभिन्न प्राचीन भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन भाषाविज्ञान के रूप में आरम्भ हुआ। सामान्यतः इन सभी अध्ययनों का प्रधान केन्द्र जर्मनी था। वैदिक, बौद्ध और जैन तीनों का आरम्भिक एवं महत्त्वपूर्ण आलोचन-विवेचन जर्मनी के विद्वानों के द्वारा व्यवस्थित रूप से किया गया। जैनधर्म का अध्ययन तथा विवेचन करने वाले तीनों जर्मनी विद्वान्—जेकोबी, वेबर और लॉयमन महान चिन्तक एवं मार्गदर्शक थे। जर्मनी में भी विशेष रूप से बर्लिन में लॉयमन, उनके शिष्य डब्ल्यू. ब्रिटमन, वाल्टर शुब्रिंग, लुडविग आल्सडोर्फ, आदि की परम्परा आज तक प्रचलित है जो विभिन्न विद्यापीठों के माध्यम से भारतीय प्राच्यविद्या को समुन्नत बनाये रखने के लिए गतिशील हैं।

जिस प्रकार अपभ्रंश प्राकृत की परम्परा से अपने प्रारम्भिक रूप में संलग्न रही, उसी प्रकार इसका अध्ययन भी प्राकृत से सम्बद्ध रहा है। देश-विदेशों में आधुनिक युग में इसकी जानकारी प्राकृत भाषाओं के माध्यम से ही प्राप्त हुई। प्राकृत भाषा के सम्बन्ध में तुलनात्मक रूप से कदाचित् सर्वप्रथम सन् १८६६ में फ्रेडरिक हेग (Fradrich Hauge) ने अपने शोध-प्रबन्ध में विचार किया था। उनका प्रबन्ध 'बगलेचुंग डेस प्राकृत उण्ड डेर रोमानिश्चन श्प्राखन' नाम से जूरिख से प्रकाशित हुआ। इसी समय जॉन बीम्स की प्रसिद्ध पुस्तक १८७२ में 'कम्परेटिव ग्रामर ऑव द आर्यन लैंग्वेजेज ऑव इण्डिया' प्रकाशित हुई। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के अध्ययन के लिए यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई। इसमें तीन भागों में आर्यभाषाओं की प्राचीन परम्परा पर प्रकाश डालते हुए वर्तमान आर्यभाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया गया। सन् १८६६ में जेकब वाकरनागल (Jacob Wackernagal) की महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'एल्टिनडिश्च ग्रामर' (Altindische Grammatik) का प्रथम भाग प्रकाश में आया। इस पुस्तक में अधिकारी विद्वान् ने सर्वप्रथम इस तथ्य को प्रकाशित किया कि वैदिक युग में बोलियाँ प्रचलित थीं। इसका प्रमाण यह है कि सप्तमी विभक्ति का अधिकरण 'हि' पालि तथा प्राचीन संस्कृत (वैदिक) के 'धि' से विकसित हुआ है जो शास्त्रीय संस्कृत में नहीं मिलता। इसी प्रकार का शब्द-प्रयोग वैदिक काल में ग्रीक भाषा में प्रयुक्त होता था जो शास्त्रीय नहीं था। इस विचार की पुष्टि करते हुए डॉ. ग्रियर्सन ने अत्यन्त दृढ़ता के साथ प्रतिपादन किया कि वैदिक युग की बोलियाँ सचमुच अपभ्रंश थीं।

यथार्थ में द्वितीय स्तर की प्राकृतों में प्राप्त होने वाले रूपों की शास्त्रीय संस्कृत के सन्दर्भ में व्याख्या नहीं की जा सकती। और इसलिए साहित्यिक प्राकृतों की अपेक्षा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के अध्ययन व अनुसन्धान के लिए अपभ्रंश का महत्त्व अधिक है। वस्तुतः अपभ्रंश का व्यवस्थित अध्ययन आधुनिक युग में जर्मनी विद्वान् रिचर्ड पिशेल से आरम्भ होता है। उन्होंने आचार्य हेमचन्द्र कृत 'सिद्धहेमशब्दानुशासन' प्राकृतव्याकरण का व्यवस्थित रीति से प्रथम बार सम्पादन किया जो १८७७ ई. में प्रकाशित हुआ। वास्तव में आचार्य हेमचन्द्र के इस प्राकृत व्याकरण का अत्यन्त महत्त्व है। पिशेल महोदय ने इस व्याकरण के सम्पादन के साथ इस कृति के सम्बन्ध में जो मान्यताएँ स्थापित की हैं, उनका ही उल्लेख उन्होंने अपने प्राकृत भाषाओं के व्याकरण में किया है। यह महान् व्याकरण ग्रन्थ उस समय के ज्ञात तथा प्रकाशित एवं अप्रकाशित अनेक ग्रन्थों के अनुशीलन के आधार पर २५-३० वर्षों के सुदीर्घ परिश्रम से तैयार किया गया था। सन् १९०० ई. में इसका प्रकाशन जर्मनी के स्ट्रासवर्ग नगर से हुआ। इसमें लगभग प्राकृत की पच्चीस व्याकरण-रचनाओं का विवेचन विभिन्न सन्दर्भों में किया गया है। चण्ड का प्राकृतलक्षण तब तक प्रकाशित हो चुका था। डॉ. हार्नले ने इसे आर्षव्याकरण कहा था। इसका संस्करण उन्होंने तैयार किया था जो 'द प्राकृत लक्षणम् एण्ड चण्डाज ग्रैमर ऑव द एन्शण्ट प्राकृत, भाग १' नाम से १८८० में कलकत्ता से प्रकाशित हो चुका था। इसी प्रकार १८८६ में ब्यूलर की पुस्तक 'इयूबर डास लेवन डेस जैन मोएन्शेस हेमचन्द्रा' विएना से प्रकाशित हो चुकी थी। डॉ. पिशेल ने इन सभी को अपने व्याकरण में उद्धृत किया है। कोलब्रुक का मत उद्धृत करते हुए उनका कथन है—कोलब्रुक का मत था कि जैनों के शास्त्र मागधी प्राकृत में लिखे गये हैं जो संस्कृत के नाटकों से भिन्न भाषा में हैं। यह मागधी प्राकृत संस्कृत से निकली है। लास्सन का विचार था कि मागधी प्राकृत और महाराष्ट्री एक ही भाषाएँ हैं। किन्तु होएफर इस बात पर दृढ़ रहे कि जैन शास्त्रों की प्राकृत भाषाएँ कुछ भिन्न तथा विशेष अवश्य हैं। परन्तु जेकोवी इस सिद्धान्त पर पहुँचे कि जैन शास्त्रों की भाषा बहुत प्राचीन महाराष्ट्री है। इस प्रकार रिचर्ड पिशेल के 'ग्रैमैटिक डेर प्राकृत-श्प्राखन' प्रकाशित होने के पूर्व प्राकृत भाषा के सम्बन्ध में हॉर्नले, लास्सन, होएफर तथा वेबर आदि के मत प्रकाश में आ चुके थे। परन्तु अपभ्रंश भाषा के सम्बन्ध में विचार कर लिखने वाले पिशेल प्रथम विद्वान् थे। इस दिशा में उनका प्रथम कार्य 'देशीनाममाला' के सम्पादन के रूप में प्रकट हुआ जो १५ मार्च, १८८० में जर्मनी के कील नगर से प्रकाशित हुई। इसके परिचय में पिशेल ने विविध शब्दों का विचार त्रिविक्रम के प्राकृत-व्याकरण तथा हेमचन्द्र के प्राकृतव्याकरण (हस्तलिखित ग्रन्थों) के आधार पर किया। अपभ्रंश के अध्ययन के लिए ये दोनों ही व्याकरण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। इन प्राकृतव्याकरणों के अन्त में अपभ्रंश का व्याकरण भी सम्मिलित है।

लास्सन ने 'इन्स्टीट्यूसीओनेस लिंगुआए प्राकृतिकाए' में तथा पिशेल ने

प्राकृतव्याकरण में एक स्वर से यह माना है कि अपभ्रंश वास्तव में जनता के द्वारा बोली जाती रही होंगी। अपभ्रंश बोलियों का उल्लेख करते हुए डॉ. पिशेल ने स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया है कि बहुत प्राचीन समय से ही इन बोलियों में साहित्यिक रचनाएँ लिखी जाती रही हैं। भरत मुनि के नाट्यशास्त्र में उल्लिखित 'शौरसेनं समाश्रित्य भाषा कार्या तु नाटके' कथन से भी यही तात्पर्य है कि अपभ्रंश बोलियों में नाटक लिखे जाते रहे होंगे, तभी नाट्यशास्त्र में विधान किया गया। रिचर्ड पिशेल ने भलीभाँति अपभ्रंश बोलियों का जनबोलियों तथा लोकनाट्यों से सम्बन्ध स्थापित किया। उनका कथन है कि जिन्हें बंगाल में जात्रा और उत्तर भारत में रास आदि कहा जाता है, वास्तव में ये वही नाटक हैं जो अल्मोड़ा और नेपाल में भी आमोद-प्रमोद के लिए जनता के द्वारा खेले जाते हैं। इनका एक नमूना 'हरिश्चन्द्र नृत्यम्' के रूप में जर्मनी में प्रकाशित हुआ है। इस अपभ्रंश को कभी किसी ने प्राकृत नहीं बताया। यह वह अपभ्रंश भाषा है जो दण्डिन् के अनुसार काव्य की भाषा थी और जो रविकर के अनुसार प्राकृत से नाममात्र को भिन्न रही है। रविकर के मत में दो प्रकार की अपभ्रंशों में भेद बताया गया है। प्रथम प्रकार की अपभ्रंश प्राकृत से निर्गत है और दूसरी प्रकार की देशभाषा अपभ्रंश है। इस तरह कई प्रमाणों तथा विभिन्न विचारों का आलोचन कर रिचर्ड पिशेल ने युक्तियुक्त रूप से यह निष्कर्ष फलित किया कि केवल संस्कृत को ही प्राकृतों का मूल समझना, जैसा कि कई विद्वान् समझते हैं और इन विद्वानों में होएफर, लास्सन, भण्डारकर और जेकोबी भी सम्मिलित हैं, भ्रमपूर्ण है। सभी प्राकृत भाषाओं का वैदिक व्याकरण के शब्दों तथा नाना स्थलों पर साम्य है और ये बातें संस्कृत में नहीं पायी जातीं। इन शब्दों में आधुनिक युग में प्रथम बार प्राकृत तथा अपभ्रंश की उत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रचलित एवं प्रचारित भ्रम का निरसन कर रिचर्ड पिशेल ने मौलिक एवं निष्पक्ष विचारों को प्रस्तुत किया। उनके इस महत्त्वपूर्ण अध्ययन की प्रमुख विशेषता है—शोधपूर्ण एवं तुलनात्मक विवेचन। लगभग सात दशकों की इस दीर्घ अवधि में उनके प्राकृत भाषाओं के अध्ययन का वही महत्त्व आज भी है जो प्रकाशन के समय था। उनकी यह पुस्तक किसी भी महान् थीसिस (शोधप्रबन्ध) से कम नहीं है। मध्य भारतीय आर्यभाषाओं के अध्ययन के लिए आज तक यह सन्दर्भ ग्रन्थ का काम दे रही है। इससे इसकी महत्ता स्पष्ट है। यह मूल ग्रन्थ जर्मन भाषा में लिखा गया था, जिसका अँगरेजी अनुवाद डॉ. सुभद्र झा ने किया था और जो मोतीलाल बनारसी दास के यहाँ से प्रकाशित भी हो चुका है। हिन्दी में मूल जर्मन से इसका अनुवाद डॉ. हेमचन्द्र जोशी के द्वारा अविकल रूप से किया गया, जो बाद में १९५८ में बिहार-राष्ट्र-भाषा-परिषद् से प्रकाशित हुआ। अँगरेजी में यह 'कम्पेरेटिव ग्रैमर ऑव द प्राकृत लैंग्वेज' तथा हिन्दी में 'प्राकृत भाषाओं का व्याकरण' नाम से प्रकाशित किया गया।

प्राकृत के पाणिनि

प्राकृत भाषाओं का व्याकरण लिख कर यथार्थ में रिचर्ड पिशेल अमर हो गये। पाणिनि ने संस्कृत भाषा का जैसा व्यवस्थित व्याकरण लिखा था, वैसा ही व्यवस्थित तथा तुलनात्मक विवेचन पिशेल ने प्राकृत भाषाओं का किया है। उनके इस विवेचन के अन्तर्गत अपभ्रंश की ध्वनियाँ, स्वर तथा रूप-रचना सम्बन्धी प्रवृत्तियों का तुलनात्मक विचार किया गया है। अतएव विद्वानों का यह कथन कि पिशेल प्राकृत के पाणिनि थे, उचित ही है। यद्यपि श्रीमती डोल्ची नित्ति ने पिशेल की कुछ भूलों का उल्लेख किया है, किन्तु अभी तक उन निदानों तथा पूर्वापर विचारों का सम्यक् पर्यालोचन नहीं हो सका है। वस्तुतः पिशेल महोदय ने वैदिक भाषाओं के मूल उत्स से लेकर प्राकृत-अपभ्रंश बोलियों की प्रकृति-प्रवृत्ति का विशेष रूप से अनुशीलन किया है। उनके समय में जो सामग्री उपलब्ध थीं या सम्बन्धित सामग्री उपलब्ध हो सकती थी, उस सबका विचार उन्होंने किया है। अपने इस व्याकरण में उन्होंने विषय से सम्बन्धित सभी विचारों तथा आलोचनाओं का अध्ययन कर समालोचनात्मक टिप्पणियों के रूप में युक्तियुक्त तथा सटीक विवेचन किया है। इसी व्याकरण की पूर्ति के रूप में उनकी लिखी हुई 'माटेरिआलिसन् त्सुर् डेस् अपभ्रंश' १६०२ में बर्लिन से प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में अपभ्रंश का पहली बार स्वतन्त्र रूप से विचार तथा विवेचन किया गया। ये दोनों ही ग्रन्थ मध्ययुगीन भारतीय आर्यभाषाओं के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए हैं। इनकी सफलता का मुख्य कारण वैदिक साहित्य का सम्यक् अध्ययन रहा है। डॉ. पिशेल, कील तथा बर्लिन विश्वविद्यालय में आजीवन संस्कृत का अध्यापन करते रहे। इनकी लिखी हुई 'वैदिक स्टडीज' पुस्तक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस प्रकार तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में पिशेल सदैव स्मरणीय रहेंगे।

प्राकृत-अपभ्रंश के महान् विद्वान् के रूप में दूसरे भाषाशास्त्री डॉ. हर्मन जेकोबी हैं। सौभाग्य से जेकोबी भी जर्मनी थे। पिशेल की भाँति जेकोबी भी भारतीय विद्या के विशेष प्रेमी थे। उनका सम्पूर्ण जीवन अध्ययन-अध्यापन में बीता। वे जर्मन के बॉन विश्वविद्यालय में भारतीय विद्या के प्राध्यापक थे। डॉ. पिशेल ने प्राकृतों की जिस दिशा में अध्ययन-अध्यापन का कार्य किया था, उसी कार्य को डॉ. जेकोबी ने अग्रसर किया। इसके साथ ही उन्होंने मुख्य रूप से जैनागमों का गम्भीर अध्ययन किया। सूत्रग्रन्थों का अध्ययन और संशोधन तथा सम्पादन करना ही उनका प्रारम्भिक उद्देश्य था। परन्तु धीरे-धीरे जैन साहित्य में उनकी रुचि समाविष्ट होती गयी। उन्होंने सबसे पहले 'उत्तराध्ययनसूत्र' का अध्ययन किया। उस पर उन्होंने एक टीका भी लिखी। टीका में कितनी ही प्राकृत-कथाओं का उल्लेख देख कर उन्होंने कथाओं का एक संग्रह तैयार किया, जो पाठ्य-पुस्तक 'औसगे वैल्ते एर्से लिंगन इन महाराष्ट्री' (महाराष्ट्री से चुनी हुई कहानियाँ) के रूप में १८८६ में लिपजिग (जर्मन) से प्रकाशित हुई। इसके परिचय

(इण्ट्रोडक्शन) में महाराष्ट्री प्राकृत के सम्बन्ध में विशद विवेचन किया गया है। इस परिचय का अँगरेजी अनुवाद डॉ. ए. एम. घाटगे ने किया जो 'द जैन एण्टिक्वेरी' में प्रकाशित हो चुका है। अपने इस प्राथमिक वक्तव्य में डॉ. जेकोबी ने वैदिक भाषाओं से लेकर आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं तक के विकास की जिस धारा का ऐतिहासिक दृष्टि से अध्ययन किया था और जिस बात को पिशेल महोदय पहले ही प्राकृतों के व्याकरण के रूप में लिख चुके थे, उसी आधार पर उन्होंने अपभ्रंश के बहुविध रूपों तथा बोलियों का विचार किया। उनके स्पष्ट विचार हैं—भारतीय आर्यभाषाएँ विकास की तीन अवस्थाओं को पार कर चुकी हैं। वे तीन अवस्थाएँ हैं—संस्कृत (वैदिक, इपिक और क्लासिकल) मध्यभारतीय या प्राकृत (पाली, प्राकृत, महाराष्ट्री और अपभ्रंश) तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ। उत्तर बौद्धों की गाथा बोलियों का विचार करते हुए वे कहते हैं कि जिस प्रकार उच्च जर्मन के लोग अपनी प्रवृत्ति के अनुसार निम्न जर्मन की भाषा में बोलते और सोचते हैं, उसी प्रकार गाथाओं की प्राकृत भी संस्कृत के अनुरूप लिखी गयी, जिससे उस पर संस्कृत का प्रभाव दिखलाई पड़ता है। वास्तव में महाराष्ट्री अपने युग की साहित्यिक भाषा रही है। पालि, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाएँ ध्वनि, वाक्य-रचना एवं बनावट में एक-दूसरे से भिन्न हैं। प्राकृत अलग है और अपभ्रंश अलग। प्राकृत से अपभ्रंश में जटिलता तथा रूपों की कमी है। महाराष्ट्री प्राकृत का भी अधिकतर प्रयोग जैन-साहित्य में हुआ है। इस प्रकार कई महत्त्वपूर्ण बातों की चर्चा उन्होंने इस ग्रन्थ की भूमिका में की है। मुख्य रूप से उन्होंने अपभ्रंश को एक स्वतन्त्र भाषा निरूपित किया। डॉ. जेकोबी ने प्राकृत वाङ्मय का विशेष रूप से अनुशीलन किया। अतएव आचारांगसूत्र, उत्तराध्ययनसूत्र, कल्पसूत्र, कालकाचार्यकथानक, पउमचरियं और समराइच्चकहा आदि प्राकृत ग्रन्थों को उत्तम रीति से संशोधित सम्पादित कर प्रकाशित किया। वस्तुतः सम्पादन और प्रकाशन की दृष्टि से इनका विशेष महत्त्व है। किन्तु प्राकृतों का महत्त्व तथा स्वरूप निर्धारण करने में जो तलस्पर्शी सूक्ष्मदृष्टि तथा विवेचन की पद्धति रिचर्ड पिशेल में लक्षित होती है, वह जेकोबी में नहीं है। उनका महत्त्व विशेष रूप से अपभ्रंश-साहित्य की खोज करने में समाहित है।

अपभ्रंश साहित्य के प्रथम अन्वेषक

यद्यपि पिशेल महोदय के पूर्व ही हर्मन जेकोबी जैन साहित्य का महत्त्व प्रतिपादित कर चुके थे, किन्तु 'प्राकृत भाषाओं का व्याकरण' से प्रभावित होकर उन्होंने प्राकृत साहित्य की प्रचुरता तथा अपभ्रंश-साहित्य के अस्तित्व का अनुमान लगा लिया था। रिचर्ड पिशेल को भी इस बात का अत्यन्त दुःख था कि केवल आचार्य हेमचन्द्र के प्राकृत-व्याकरण में उद्धृत तथा अन्य व्याकरणों में उदाहृत भाषा के नमूनों को छोड़कर अपभ्रंश का कोई साहित्य उपलब्ध नहीं हो सका था। अतएव अपभ्रंश का कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ न मिलने

से वे चाहते हुए भी इसका विशेष एवं विस्तृत विवेचन नहीं कर सके। उनके विचार में अपभ्रंश का साहित्य अवश्य था, किन्तु वह लुप्त हो चुका था। अतएव पिशेल, बीम्स, होएफर, लास्सन और भण्डारकर आदि के इस विचार से सहमत नहीं हुए कि प्राकृत भाषाएँ कृत्रिम तथा काव्य की भाषाएँ हैं। उनका मत सेनार से बिलकुल मिलता है कि प्राकृत भाषाओं की जड़ें जनता की बोलियों के भीतर जमी हुई हैं। अपनी इस मान्यता को कई स्थानों पर उन्होंने सप्रमाण पुष्ट किया है। वस्तुतः यही उनका मूल विवेचन है। यदि उस समय अपभ्रंश-साहित्य की एक भी रचना उन्हें प्राप्त हो जाती, तो उन्हें बड़ा बल एवं आधार प्राप्त हो जाता। किन्तु उनका अनुमान पुष्ट था, यह देखकर आज आश्चर्यचकित हो जाना पड़ता है। कम-से-कम सामग्री के आधार पर अच्छे-से-अच्छा विवेचन प्रस्तुत कर शोध की एक नवीन दिशा को उन्होंने जन्म दिया; इसमें कोई सन्देह नहीं है।

अपभ्रंश साहित्य के अनुसन्धान की कथा हर्मन जेकोबी की भारतीय यात्रा से सम्पृक्त है। जेकोबी ने बहुत पहले ही इस बात का दृढ़ अनुमान कर लिया था कि अपभ्रंश साहित्य अवश्य ही भारत के किसी-न-किसी कोने में अज्ञात पड़ा है। अतएव इस खोज-यात्रा के सन्दर्भ में उन्होंने दो बार भारत के लिए जर्मनी से प्रवास किया। अपने द्वितीय प्रवास में सन् १६१३-१४ में भारतवर्ष के कई प्रमुख जैन भण्डार-केन्द्रों का परिभ्रमण किया। मार्च १६१४ में जेकोबी अहमदाबाद पहुँचे। गुजरात, राजपूताना के कितने ही जैन ग्रन्थ-भण्डारों का अवलोकन करते हुए जब आशा-निराशा की तरंगों में डूबते-उतराते वे अहमदाबाद के एक जैन ग्रन्थ-भण्डार को देखने गये, तभी एक जैन साधु के पास रखी हुई एक प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थ की प्रति पर उनकी दृष्टि पड़ी। उन्होंने जब उस ग्रन्थ के सम्बन्ध में पूछा, तो बताया गया कि यह प्राकृत की कोई अज्ञात रचना है। स्वभावतः जेकोबी महोदय ने उसे उलट-पलटकर देखा और उस ग्रन्थ की दो-चार पंक्तियों को ध्यान से पढ़ा। ग्रन्थ पढ़ते ही जेकोबी अत्यन्त चमत्कृत हुए और हर्ष से उछल पड़े। तुरन्त ही उनके मुख से जो शब्द निकल पड़े उनका भाव था कि 'अरे ! यह तो कोई अपभ्रंश रचना लग रही है।' उन्हें उस समय उतना ही आनन्द प्राप्त हुआ, जितना कि पुत्ररत्न की प्राप्ति के समय होता है। उस ग्रन्थ को समग्र रूप से पढ़ने की उत्सुकता और उत्साह में वे वहीं उपाश्रय में बैठकर तुरन्त अपने हाथ से प्रतिलिपि करने लगे। यहाँ तक कि उस दिन वे पूरी रात जागते रहे और उस कथाग्रन्थ की प्रतिलिपि करते रहे। जिस साधु के भण्डार से यह काव्यग्रन्थ मिला था, वह साधु डॉ. जेकोबी को काव्यग्रन्थ देने के लिए तैयार नहीं था। अतएव डॉ. जेकोबी कई दिनों तक लगातार बैठ कर उसकी नकल करते रहे, और बाद में अवशिष्ट पत्रों की फोटोकॉपी तैयार करवायी। यह काव्यग्रन्थ अपभ्रंश भाषा में महाकवि धनपाल का लिखा हुआ 'भविसयत्तकहा' था। अपभ्रंश साहित्य का यह प्रथम महत्त्वपूर्ण काव्य डॉ. जेकोबी के सतत प्रयास से प्रकाश में आया। कुछ दिनों के बाद सौराष्ट्र के प्रवास में

उन्हें एक दूसरा काव्यग्रन्थ उपलब्ध हुआ। यह राजकोट के एक साधु के पास से प्राप्त हुआ था। इस ग्रन्थ का नाम 'नेमिनाथचरित' था। इसकी पूर्ण हस्तलिखित प्रति ही जर्मन विद्वान् को मिल गयी थी। इस प्रकार अपभ्रंश ग्रन्थों की पहली जानकारी डॉ. जेकोबी को प्राप्त हुई थी।

उन दिनों प्रथम महायुद्ध के विप्लव-बादल चारों ओर मँडरा रहे थे। विश्वव्यापी महायुद्ध प्रारम्भ हो गया था। इसलिए लगभग चार वर्षों तक जेकोबी महोदय कुछ भी प्रकाशित नहीं कर सके। सन् १९१८ ई. में म्यूनिक रायल एकेडेमी से 'भविसयत्तकहा' का प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ जो व्याकरण, शब्द-रचना, शब्दकोश आदि से भलीभाँति अलंकृत था। एक ही प्रति पर आधारित होने के कारण ग्रन्थ में अशुद्धियों का रह जाना स्वाभाविक ही था, किन्तु परिश्रम बहुत अधिक किया गया था। अपभ्रंश का सर्वप्रथम प्रकाशित होने वाला यही साहित्यिक ग्रन्थ था। इसके प्रकाशित होने के तीन वर्षों के पश्चात् सन् १९२१ में डॉ. जेकोबी ने आचार्य हरिभद्रसूरि विरचित 'नेमिनाथचरित' के अन्तर्गत 'सनत्कुमारचरित' का सुसम्पादित संस्करण प्रकाशित किया। सन् १९२३ में भारतवर्ष में प्रथम बार गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ोदा से सी. डी. दलाल और पी. डी. गुणे के द्वारा सुसम्पादित 'भविष्यदत्तकथा' का प्रकाशन किया गया। उसके बाद अनेक अपभ्रंश ग्रन्थों का पता लगता गया। भारतीय विद्वान् जिन्हें प्राकृत का समझते रहे, उनमें से कई ग्रन्थ अपभ्रंश के निकले। यहाँ तक कि पूना में संस्कृत हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज के समय जो जैन ग्रन्थ निर्दिष्ट किये गये थे, उन्हें प्राकृत का बताया गया था, किन्तु पं. नाथूराम प्रेमी ने उन अपभ्रंश ग्रन्थों के सम्बन्ध में प्रकाश डाला था। भारतवर्ष में विगत तीन दशकों के पूर्व तक सामान्य रूप से प्राकृत तथा अपभ्रंश में कोई अन्तर नहीं समझा जाता था। आज भी अधिकतर संस्कृत के विद्वान् अपभ्रंश को संस्कृत या प्राकृत से उत्पन्न तथा अभिन्न मानते हैं। डॉ. जेकोबी ने इस साहित्य को खोजकर वास्तव में महान् उपकार किया।

डॉ. जेकोबी के अनुसन्धान के उपरान्त अपभ्रंश भाषा के सम्बन्ध में जो नये सिरे से विचार किया गया, उसमें मौलिकता की दृष्टि से डॉ. एल. पी. टेस्सिटरी का योगदान मुख्य है। यद्यपि उनका मुख्य शोध-कार्य पश्चिमी राजस्थानी पर है, किन्तु राजस्थानी और गुजराती का पूर्ण विचार अपभ्रंश के मूल सन्दर्भ में हुआ है। उनका शोध-निबन्ध 'नोट्स आन द ग्रैमर ऑव द ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी विद स्पेशल रिफ्रेंस टु अपभ्रंश एण्ड गुजराती एण्ड मारवाड़ी' शीर्षक से 'इण्डियन एण्टिक्वेरी' में धारावाहिक रूप से १९१४ के अप्रैल से लेकर १९१६ के जून तक के कई अंकों में प्रकाशित हुआ। वास्तव में यह एक शोध-प्रबन्ध ही है। इसका हिन्दी अनुवाद 'पुरानी राजस्थानी' के नाम से नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से वि. सं. २०१२ में प्रकाशित किया गया। इसके अनुवादक विषय के तत्त्वज्ञ श्री नामवरसिंह हैं। जैसा कि डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी ने कहा है कि यह राजस्थानी तथा गुजराती भाषातत्त्व की बुनियादी पुस्तक है, वैसे ही

यह भी कहा जा सकता है कि अपभ्रंश-युग के ध्वनि-तत्त्व के विकास की दिशा को समझने के लिए यह वास्तव में बुनियादी पुस्तक है। डॉ. नामवरसिंह के शब्दों में, "तेस्सितोरी ने अपभ्रंश और आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के बीच की उस खोयी हुई कड़ी के पुनर्निर्माण का प्रयत्न किया है जिसके बिना आधुनिक भाषा का ऐतिहासिक व्याकरण लिखा ही नहीं जा सकता।" वस्तुतः टेस्सिटरी ने ध्वनि-विचार भाषावैज्ञानिक प्रक्रिया के सर्वथा अनुकूल तथा युक्तयुक्त किया है। उनका कथन है कि प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी में भी वही ध्वनि-व्यवस्था है जो अपभ्रंश में है, अन्तर केवल इतना है कि प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी में जैन महाराष्ट्री की तरह आद्य 'ण' तथा मध्यम 'ण्ण' दन्त्य हो जाते हैं। अपने इस अध्ययन में टेस्सिटरी ने प्राकृत भाषाओं के व्याकरण, लास्सन, डॉ. हॉर्नले तथा ट्रम्प आदि के विचारों का भलीभाँति आश्रय लिया है। लेखक ने परिशिष्ट में प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी की दस रचनाओं के संकलित उदाहरण भी दिये हैं।

यद्यपि डॉ. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन का महान् शोध-कार्य 'भारतीय भाषाओं का सर्वेक्षण' बहुत समय पहले ही प्रारम्भ हो चुका था, किन्तु सर्वेक्षण की प्रथम जिल्द 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑव इण्डिया' के नाम से सन् १९२७ में प्रकाशित हुई। इसके प्रथम भाग में डॉ. ग्रियर्सन ने भारतीय आर्यभाषाओं के विकास के तीन सोपानों को तीन प्राकृतों के नाम से अभिहित किया है। उनकी मान्यता है कि शताब्दियों से भारतीय आर्यभाषा प्राकृत नाम से पुकारी जाती रही है। प्राकृत का अर्थ है—नैसर्गिक एवं अकृत्रिम भाषा। इसी प्रकार इन प्राकृतों की आधारभूत बोलचाल की जनभाषाएँ रही हैं। इन प्राकृतों के मुख्य दो रूप थे—पश्चिमी तथा पूर्वी प्राकृत। पश्चिमी प्राकृत शूरसेन प्रदेश अथवा गंगा के मध्य दोआब के निकट से लेकर सुदूर पश्चिमोत्तर प्रान्त में—वर्तमान अफगानिस्तान तथा बलोचिस्तान प्रदेश में—निश्चित रूप से प्रचलित थी। पूर्वी प्राकृत की प्रमुख भाषा मागधी थी। अपभ्रंश जनता की भाषा थी, जिसे स्थानीय प्राकृत भी कहा गया है। अपभ्रंश की विभिन्न विभाषाओं से ही आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास हुआ—यह डॉ. ग्रियर्सन की मुख्य मान्यता है। इसका विस्तार से विचार करने वाले प्रथम विद्वान् ग्रियर्सन ही हैं। मुख्य रूप से उन्होंने सिन्धु नदी के निचले प्रदेश की अपभ्रंश को व्राचड, दक्षिण की दाक्षिणात्य, पूर्व में बंगाल की खाड़ी तक औड्र अथवा औत्कल अपभ्रंश, छोटा नागपुर, बिहार तथा उत्तर प्रदेश के आधे भाग में वाराणसी तक मागध अपभ्रंश का प्रसार था। इस प्रकार डॉ. ग्रियर्सन ने अपभ्रंश की विभिन्न विभाषाओं से आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं का विकास मानकर विकास की अवस्थाओं का वास्तविक रूप प्रस्तुत किया।

डॉ. ग्रियर्सन के ही समकालीन पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने वि. सं. १९७८ में नागरी प्रचारिणी पत्रिका न. सं., भाग २ में 'पुरानी हिन्दी' के नाम से एक नवीन अवधारणा प्रस्तुत की, जिसके अनुसार अपभ्रंश की उत्तरकालिक अवस्था की भाषा को 'पुरानी

हिन्दी' कहा गया। गुलेरी जी के अनुसार, ''पुरानी गुजराती, पुरानी राजस्थानी, पुरानी पश्चिमी राजस्थानी आदि नाम कृत्रिम हैं और वर्तमान भेद को पीछे की ओर ढकेल कर बनाये गये हैं। जैसे नानक से लेकर दक्षिण के हरिदासों तक की कविता 'ब्रज-भाखा' कहलाती थी, वैसे अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी कहना अनुचित नहीं, चाहे कवि के देशकाल के अनुसार उसमें कुछ रचना प्रादेशिक हो।'' वस्तुतः गुलेरी जी की यह मान्यता मान्य नहीं हो सकी। क्योंकि अपभ्रंश को पुरानी हिन्दी कहने में कोई लाघव नहीं था। फिर, अपभ्रंश का विपुल साहित्य उनके समय तक प्रकाश में नहीं आया था, जिसमें देशी भाषा, अवहंस, अवहट्ठ आदि कई शब्दों का प्रयोग अपनी भाषा के लिए मिलता है। अतएव उनका सुझाव व्यावहारिक होने पर भी मान्य नहीं हो सका।

इधर प्राकृत भाषा का परिचयात्मक व्याकरण तथा साहित्य का विचार करते हुए ए. सी. वुल्नर ने 'इण्ट्रोडक्शन टु प्राकृत' लिखा जो सन् १६१७ में प्रकाशित हुआ। इस पुस्तक में उन्होंने डॉ. ग्रियर्सन और जेकोबी की मान्यताओं का उल्लेख करते हुए ऋग्वेद में प्राप्त होने वाली प्राकृत-ध्वनियों तथा ध्वनि-तत्त्वों की विविधता का उल्लेख किया। संस्कृत की तुलना वुल्नर ने लेटिन से की जो शिक्षित तथा पण्डितों की भाषा रही है। अपभ्रंश को उन्होंने स्पष्ट रूप से परवर्ती प्राकृत कहा है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि प्राकृत की सामान्य विशेषताएँ सामान्य रूप से अपभ्रंश में मिलती हैं, किन्तु भाषा-रचना की दृष्टि से दोनों सर्वथा भिन्न हैं।

इस बीच अपभ्रंश का बहुत कुछ साहित्य प्रकाश में आया। सन् १६१६ में बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता से म. म. हरप्रसाद शास्त्री के द्वारा 'बौद्धगान ओ दोहा' का प्रकाशन हुआ। प्रो. हीरालाल जैन का महत्त्वपूर्ण लेख 'अपभ्रंश-साहित्य '(लिटरेचर)' 'इलाहाबाद यूनिवर्सिटी स्टडीज, भाग १' में प्रकाशित हुआ, जिसमें कई अज्ञात अपभ्रंश रचनाओं का प्रथम बार विवरण प्रस्तुत किया गया। कुछ समय बाद सन् १६२६ में रायबहादुर हीरालाल का 'केटलॉग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द सी. पी. एण्ड बरार', नागपुर से तथा १६३० में एच. डी. वेलणकर का 'केटलाग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स' जिल्द ३-४, बम्बई से एवं 'जिनरत्नकोष' (१६४४) पूना से प्रकाशित हुए, जिनमें अपभ्रंश रचनाओं का विवरण मिलता है। प्रकाशन की दिशा में बीसवीं शताब्दी का तृतीय शतक अपभ्रंश के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है। 'भविष्यदत्तकथा' के प्रकाशन के अनन्तर गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज के अन्तर्गत ही पं. लालचन्द्र भगवान् गाँधी के दो संकलन 'प्राचीन गुर्जर काव्य-संग्रह' तथा 'अपभ्रंश-काव्यत्रयी' क्रमशः १६२० एवं १६२७ में प्रकाशित किये गये। इधर डॉ. बाबूराम सक्सेना ने 'कीर्तिलता' का विधिवत् सम्पादन किया, जो पुस्तक के रूप में नागरी प्रचारिणी सभा, काशी से १६२६ में प्रकाशित हुई। किन्तु इन सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य डॉ. पी. एल. वैद्य तथा डॉ. हीरालाल जैन का था। डॉ. वैद्य के द्वारा सम्पादित 'यशोधरचरित' १६३१ में तथा डॉ. जैन द्वारा सम्पादित 'सावयधम्मदोहा' १६३२ में

तथा 'पाहुडदोहा' एवं 'णायकुमारचरिउ' १६३३ में कारंजा से प्रकाशित हुए। इसी समय राहुल सांकृत्यायन ने हिन्दी-अपभ्रंश के प्राचीनतम कवि और उनकी कविताओं के सम्बन्ध में कदाचित् पहली बार आलोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया। लगभग १६३४ से ३७ के बीच टी. बरो के द्वारा प्रकाशित विभिन्न शोधपत्रों एवं पुस्तक 'द लैंग्वेज ऑव द खरोष्ट्री डाकुमेण्ट्स' से निय-प्राकृत के सम्बन्ध में नयी जानकारी प्राप्त हुई।

अपभ्रंश-साहित्य का सम्पादन-काल

यद्यपि 'प्राकृत व्याकरण' सन् १८७७ ई. में तथा 'भविष्यदत्तकथा' सन् १६१८ में प्रकाशित हो चुकी थी, किन्तु यथार्थ में १६वीं शती का अन्तिम चरण अपभ्रंश की अनुसन्धानात्मक खोज-खबर का काल था। अपभ्रंश का प्रारम्भिक काल भाषा के शोध एवं अनुसन्धान का था, जो लगभग सन् १८३५ ई. से प्रारम्भ होकर लगभग सन् १६१५ ई. तक का समय था। इन लगभग पचास वर्षों में अपभ्रंश के सम्बन्ध में नानाविध अनुमान किये गये तथा भाषा की दृष्टि से कई विद्वानों ने ऊहापोह किया। लगभग सन् १६१५ से १६३० ई. तक का समय अपभ्रंश साहित्य की खोज का समय था। इसके तुरन्त बाद ही अपभ्रंश-साहित्य का सम्पादन-काल आरम्भ हो जाता है। सन् १६३१ से १६६० ई. तक का समय अपभ्रंश-साहित्य का सम्पादनकाल रहा है। इस काल में डॉ. पी. एल. वैद्य द्वारा सम्पादित 'जसहरचरिउ' के अतिरिक्त तीन भागों में महाकवि पुष्पदन्त कृत 'महापुराण' सम्पादित होकर सन् १६३७-४१ ई. में माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रन्थमाला, बम्बई से प्रकाशित हुआ। इसी समय राहुल जी ने 'हिन्दी काव्यधारा' का सम्पादन किया, जिसमें ७५०-१२०० ई. तक के ८४ सिद्धों तथा अन्य अपभ्रंश कवियों की काव्य रचनाओं के अंश १६४५ ई. में प्रकाशित हुए। इसी काल में मुनि जिनविजय जी द्वारा सम्पादित मेरुतुंगाचार्य विरचित 'प्रबन्ध चिन्तामणि' (शान्तिनिकेतन, वि. सं. १६८६), राजशेखर सूरि कृत 'प्रबन्ध कोश' (सं. १६६१), 'पुरातन प्रबन्ध-संग्रह' (सं. १६६२) एवं 'सन्देशरासक' (सन् १६४५ ई.) प्रकाशित हुए। डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये द्वारा सम्पादित 'परमात्मप्रकाश' और 'योगसार' सन् १६३७ ई. में ही प्रकाश में आ चुके थे। इस सामग्री के प्रकाशन से तथा 'जिनरत्नकोश' (पूना, सन् १६४४ ई.) के प्रकाशित हो जाने से अपभ्रंश का बहुत कुछ साहित्य जानकारी में आ गया। किन्तु आलोचनात्मक दृष्टि से इसका अध्ययन सन् १६५० ई. के पूर्व नहीं किया गया। यद्यपि हिन्दी साहित्य के समर्थ समालोचक डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी सन् १६४० ई. में 'हिन्दी साहित्य की भूमिका' में अपने क्रमबद्ध विचार प्रकट कर चुके थे और पं. नाथूराम प्रेमी 'जैन साहित्य और इतिहास' (सन् १६४२ ई.) में स्वयम्भू आदि की स्थिति का विचार-अनुशीलन कर चुके थे, किन्तु इस साहित्य का वास्तविक मूल्यांकन डॉ. द्विवेदी जी ने 'हिन्दी-साहित्य का आदिकाल' (सन् १६५२ ई.) में मुख्य रूप से किया।

ग्रन्थ-सूची के निर्माण का कार्य भी इन्हीं वर्षों में सम्पन्न हुआ। सर्वप्रथम

'बृहत्‌टिप्पनिका' नामक प्राचीन जैन ग्रन्थसूची अनुमानतः विक्रम की पन्द्रहवीं शताब्दी के लगभग लिखी गयी थी। यह मुख्य रूप से अणहिल्लपुर, पाटण, खम्भात, भरुच और प्रभासपाटण के मुख्य भण्डारों की ग्रन्थ-सूची कही जाती है। आधुनिक युग में कदाचित् प्रथम बार जर्मनी से १८६७ ई. में 'वीनेर जेटिश्चिफ्रट फु डी कुण्डे डेस मोरजेनलेण्डस' प्रकाशित हुआ, जिसमें पृष्ठ २६७-३१२ पर अर्नेस्ट ल्युमन के द्वारा निर्मित 'ए लिस्ट ऑव द स्ट्रासवर्ग कलेक्शन ऑव दिगम्बर मेन्युस्क्रिप्ट्स' का प्रकाशन किया गया। इसमें २०० हस्तलिखित दिगम्बर जैन-ग्रन्थों की सूची है। भारतवर्ष में कोल्हापुर से सं. १६०० में 'ए केटलॉग ऑव द मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द मठ ऑव श्री लक्ष्मीसेन भट्टारक पट्टाचार्य महास्वामिन्' हिन्दी में प्रकाशित हुआ। अनन्तर वि. सं. १६६५ में श्री जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स, बम्बई से 'जैनग्रन्थावलि' प्रकाशित हुई। इसी प्रकार सन् १६१८ में सूरत से मोहनलाल जी जैन-भण्डार-सूची का प्रकाशन झबेरचन्द रायचन्द ने कराया। किन्तु व्यवस्थित रूप से यह कार्य श्री चिमनलाल डाह्याभाई दलाल के द्वारा सम्पन्न हुआ। उनकी पुस्तक 'पाटणना भण्डारो अने खास करीना तेमां रहेलुं अपभ्रंश तथा प्राचीन गुजराती साहित्य' सन् १६१४ में प्रकाशित हुई। यथार्थ में हर्मन जेकोबी के अनन्तर अपभ्रंश साहित्य की शोध-अनुसन्धान की दिशा में यह एक महत्त्वपूर्ण चरण था, जिसके प्रकाशित होते ही अपभ्रंश की साहित्यिक सामग्री का पता चल सका। यही नहीं, १६२३ में 'केटलॉग ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स इन जैसलमेर भण्डाराज' के बड़ौदा ओरियण्टल सीरीज से प्रकाशन के साथ ही अपभ्रंश का बहुत-सा साहित्य प्रकाश में आ गया। सन् १६२५ में पूना से 'लिस्ट्स ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स कलेक्टेड फॉर द गवर्नमेण्ट मेन्युस्क्रिप्ट्स लाइब्रेरी' प्रकाशित हो गया। सन् १६२६ में नागपुर से रायबहादुर हीरालाल के द्वारा सम्पादित 'केटलॉग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द सेण्ट्रल प्रोविन्सेज एण्ड बेरार' वास्तव में एक महत्त्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय कार्य है। मुनि श्री चतुरविजय जी के द्वारा सम्पादित 'लींबड़ीना जैनज्ञानभण्डारनी हस्तलिखित सूची' वि. सं. १६८५ में बम्बई से प्रकाशित हुई। इसी प्रकार श्री ऐलक पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भवन, बम्बई से लेकर आचार्य श्री विनयचन्द ज्ञानभण्डार-ग्रन्थसूची, जयपुर तक कई छोटी-बड़ी ग्रन्थ-सूचियाँ प्रकाशित हुईं। इनमें बनारसीदास द्वारा सम्पादित 'पंजाबभण्डार सूची', 'एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा', पूना से १६४४ में प्रकाशित 'जिनरत्नकोश' तथा 'खम्भात शान्तिनाथ प्राचीन ताड़पत्रीय जैन भण्डारसूची' उल्लेखनीय हैं। गत दो दशाब्दों में मुनि जिनविजय जी द्वारा सम्पादित 'ए केटलॉग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द राजस्थान ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट' (जोधपुर संग्रह), डॉ. कस्तूरचन्द जी कासलीवाल के द्वारा सम्पादित 'राजस्थान के जैन शास्त्रभण्डारों की ग्रन्थसूची' ५ भाग तथा पं. अम्बालाल प्रेमचन्द शाह के द्वारा लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर, अहमदाबाद से प्रकाशित तीन भाग 'केटलॉग ऑव संस्कृत

एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। इसी प्रकार १९९४ में प्रकाशित 'ए केटलॉग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द डेकन कॉलेज पोस्टग्रेज्युएट एंड रिसर्च इन्स्टीट्यूट', जिल्द १ अत्यन्त उपयोगी है। तदनन्तर सन् १९८१ से १९८५ के बीच भट्टारकीय ग्रन्थभण्डार स्थित हस्तलिखित ग्रन्थों की विस्तृत सूची डॉ. प्रेमचन्द जैन द्वारा 'भट्टारकीय ग्रन्थभण्डार नागोर' के नाम से तीन जिल्दों में प्रकाशित हुई जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व उपयोगी है।

भाषाविषयक अनुशीलन

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जॉन लेडन ने एक महत्त्वपूर्ण स्थापना प्रस्तुत की थी, जिसके अनुसार अवेस्ता की भाषा को एक प्रकार की प्राकृत और शौरसेनी कहा गया था। कुछ देशी-विदेशी विद्वानों ने प्राकृतों का विचार करते हुए किसी-न-किसी रूप में वैदिक तथा अवेस्ता की भाषा से लोकभाषा के रूप में प्राकृत का सम्बन्ध निरूपित किया है। डॉ. स्टीन की खोतान से नियप्राकृत के अभिलेखों की खोज के अनन्तर यह सिद्ध हो चुका है कि भारत के बाहर भी प्राकृत भाषा बोलचाल के रूप में रही है। डॉ. आल्सडोर्फ ने अपभ्रंश की ओर विशेष रूप से ध्यान देकर व्याकरणगत विशेषताओं का निर्देश किया। आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के सन्दर्भ में पिछले पाँच दशकों में अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किये गये। किन्तु आज तक के प्रकाशित सभी प्राकृत व्याकरणों में सर्वोत्तम और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ सिद्धहेमशब्दानुशासन (१०८८-११७२ ई.) आचार्य हेमचन्द्र का प्राकृत भाषा का व्याकरण है। वस्तुतः यह ग्रन्थ का आठवाँ अध्याय है।

प्राकृत व्याकरण पर सबसे पहले होएफर ने अपनी पुस्तक 'डे प्राकृत डिअलेक्टो लिब्रिदुओ' में सन् १८३६ में (बर्लिन में) अपने विचार प्रकट किये थे। प्रायः उसी समय लास्सन ने अपनी पुस्तक 'इन्स्टीट्यूसी ओनेस लिंगुआए प्राकृतिकाए' प्रकाशित की। इसमें प्राकृत भाषा से सम्बन्धित प्रचुर सामग्री प्रस्तुत की गयी थी। यह पुस्तक बॉन (जर्मनी) से सन् १८३९ में प्रकाशित हुई थी। इस प्रकार इस शताब्दी के पूर्व में विशेषतया प्राकृत भाषा का अध्ययन किया गया। इस अध्ययन का कारण मूल रूप से तुलनात्मक भाषा वैज्ञानिक प्रवृत्ति कही जा सकती है, जिसके मूल में भाषा की सर्वप्राचीन अवस्था की खोज करना था। इसी विषय से सम्बन्धित ८ दिसम्बर १९३६ में 'लिंग्विस्टिक कान्फ्रेंस बर्लिन' में लुडविग आल्सडोर्फ ने 'द ओरिजन ऑव द न्यु इण्डो-आर्यन स्पीचेज' नामक शोधपत्र में १५०० ई. पू. से लेकर आधुनिक युग तक की प्राकृत बोलियों का संक्षिप्त विवेचन किया था। अपने शोधपत्र में उन्होंने प्राकृत बोलियों का प्रभाव वेदों तथा परवर्ती संस्कृत साहित्य पर भी बताया। मूल रूप में प्राचीन भारतीय आर्यभाषाओं के विकास क्रम में महत्त्वपूर्ण योग प्राकृत बोलियों का रहा है। यह उनके शोधपत्र में विवेचित मुख्य विचार था। उनके बाद अनेक विद्वानों ने इस विषय पर अपने विचार स्वतन्त्र रूप से प्रकट किये। उन सभी में प्रबोध बेचरदास

पण्डित के विचार उल्लेखनीय हैं। उन्होंने अपने प्राकृत भाषा के व्याख्यान में जो पार्श्वनाथ विद्याश्रम से पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुका है, अपनी मान्यताओं को अधिक प्रामाणिक रूप से प्रस्तुत किया। अपभ्रंश और जूनी गुजराती की दृष्टि से डॉ. भायाणी ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। भारतीय विद्या पत्रिका (१७, ३-४) में इस सम्बन्ध में पूरी एक लेखमाला ही प्रकाशित हुई। गुजराती तथा अपभ्रंश के कई शब्दों का व्युत्पत्तिमूलक अध्ययन उन्होंने प्रस्तुत किया। बाद में डॉ. श्रीमती श्रियन ने देश्य शब्दों का भलीभाँति विचार कर पुष्पदन्त के महापुराण का देशी शब्दों के सन्दर्भ में विशेष रूप से अनुशीलन कार्य किया। चतुर्मुख के सम्बन्ध में भी भायाणी जी ने पर्याप्त प्रकाश डाला, जिससे अपभ्रंश साहित्य लगभग एक शताब्दी पहले का भलीभाँति निश्चित हो गया। यद्यपि राहुल सांस्कृत्यायन बहुत पहले ही अपभ्रंश साहित्य का मूल्यांकन कर चुके थे और गोस्वामी तुलसीदास के 'रामचरितमानस' पर अपभ्रंश के महाकवि स्वयम्भू का प्रभाव 'हिन्दीकाव्यधारा' की भूमिका में प्रतिपादित कर चुके थे, किन्तु डॉ. तोमर, बाहरी, नामवरसिंह, डॉ. हरिवंश कोछड़ और डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन ने हिन्दी साहित्य के सन्दर्भ में विचार किया। भाषा की अपेक्षा साहित्य के सम्बन्ध में ही इन विद्वानों की पुस्तकों में अनुशीलन किया गया। हिन्दी में अपभ्रंश भाषा का अध्ययन प्रस्तुत करने वाली डॉ. वीरेन्द्र श्रीवास्तव की पुस्तक बहुत अच्छी है। इसमें केवल अपभ्रंश का ही नहीं, अपभ्रंश की उत्तरकालिक अवस्था अवहट्ठ का भी अनुशीलन किया गया है। पं. राहुल सांस्कृत्यायन ने ही ज्ञानसागर ग्रन्थावली के प्राक्कथन (पृ. १) में यह उल्लेख किया कि १०० से अधिक अपभ्रंश रचनाएँ तोफुर में तिब्बती अनुवाद में मिली हैं, जिनका भारतवर्ष में अस्तित्व नहीं है। आज तक ये रचनाएँ किसी भारतीय भण्डार में उपलब्ध नहीं हुईं। इस दिशा में डॉ. कासलीवाल ने राजस्थान के जैन ग्रन्थ-भण्डारों की ५ भागों में ग्रन्थ-सूचियाँ प्रकाशित कर महत्त्वपूर्ण कार्य किया। इसी प्रकार से आगरा और दिल्ली के जैन भण्डारों की ग्रन्थ-सूचियाँ अपने-अपने ढंग से तैयार हुईं। वास्तव में ग्रन्थ-सूची के सम्पादन तथा प्रकाशन का कार्य इतना सरल नहीं है, जितना कि समझा जाता है। किसी भी अच्छी ग्रन्थ-सूची में ग्रन्थ से सम्बन्धित पूरा विवरण होना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। केवल ग्रन्थ के पत्रों की संख्या, आकार तथा लेखक के नाम का उल्लेख कर देने से वह ग्रन्थ-सूची नहीं बन जाती। उसकी प्रशस्ति के विवरण के उल्लेख के साथ उससे सम्बन्धित सभी सूचनाएँ, भाषा की प्रामाणिकता के बोधक कतिपय अंश, लेखक के परिचय से सम्बन्धित विवरण का निर्देश होना भी आवश्यक है। इस दृष्टि से अभी तक श्रीजिनरत्नकोश, ला. द. शोधसंस्थान, अहमदाबाद तथा जोधपुर संग्रह की संस्कृत और प्राकृत ग्रन्थों की प्रकाशित सूचियाँ अच्छी कही जा सकती हैं। किन्तु इनसे भी अच्छी सूचियों के प्रकाशन की आवश्यकता है, जिनमें ग्रन्थ से सम्बन्धित सभी प्रकार का विवरण मिल सके। विदेशी विद्वानों के द्वारा इस प्रकार की आदर्श ग्रन्थ-सूचियों का प्रकाशन हो चुका है। उनकी आदर्श-पद्धति पर यह कार्य

किया जा सकता है। अब समय आ गया है, जब इस प्रकार के कार्य का ही विशेष रूप से मूल्यांकन एवं श्रेय-सम्पादन हो सकेगा।

अपभ्रंश-साहित्य में शोध-कार्य

अपभ्रंश-साहित्य में विश्वविद्यालय स्तर पर भारतवर्ष में प्रथम शोध-कार्य की दिशा में डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये का नाम गौरव के साथ स्मरण किया जाएगा। सन् १९३९ में बम्बई विश्वविद्यालय द्वारा उनका महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध 'श्री योगीन्दुदेवाज परमात्मप्रकाश एण्ड योगसार' डी. लिट्. की उपाधि के लिए स्वीकृत किया गया था। द्वितीय डॉ. हीरालाल जैन का 'अपभ्रंश स्टडीज' है जो सन् १९४४ में नागपुर विश्वविद्यालय के द्वारा डी. लिट्. की उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ था। किन्तु यह शोध-प्रबन्ध अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका। प्रथम प्रकाशित शोध-प्रबन्ध डॉ. उपाध्ये का १९३७ में प्रकाशित हुआ। द्वितीय गजानन वासुदेव तगारे का 'हिस्टारिकल ग्रैमर ऑव अपभ्रंश' था जो १९४० में पूना से प्रकाशित हुआ। एम. ए. का लघु प्रबन्ध डॉ. नामवरसिंह की लोकप्रिय पुस्तक 'हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग' है, जिसका प्रकाशन-काल १९५२ है। १९५३ में सिंघी जैन ग्रन्थमाला से डॉ. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी का बम्बई विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत 'पउमचरिउ' (विविध पाठभेद, विस्तृत प्रस्तावना, शब्दकोश आदि से समलंकृत) का प्रकाशन हुआ। यद्यपि रामसिंह तोमर को सन् १९५१ में ही प्रयाग विश्वविद्यालय से 'प्राकृत अपभ्रंश का साहित्य और उसका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव' विषय पर डी. फिल्. की उपाधि मिल चुकी थी, किन्तु यह प्रबन्ध १९६५ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्रकाशित हुआ। इस प्रबन्ध में प्राकृत तथा अपभ्रंश साहित्य का मुख्य रूप से विवरणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है, जिससे कुछ महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ मिलती हैं। दूसरा महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध डॉ. हरिवंश कोछड़ का 'अपभ्रंश-साहित्य' है, जिस पर १९५२ में दिल्ली विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि मिली थी। इस प्रबन्ध में पूर्व प्रकाशित सभी पुस्तकों तथा प्रबन्धों से अधिक अपभ्रंश-साहित्य के सम्बन्ध में जानकारी मिलती है, इसलिए परिचयात्मक होने पर भी महत्त्वपूर्ण है। यथार्थ में सम्पूर्ण अपभ्रंश साहित्य का सम्यक् मूल्यांकन विविध सूचनाओं के सन्दर्भ में लेखक के लिए प्रस्तुत कर सकना सम्भव भी नहीं था। अतएव रूपक, कथा, महाकाव्य, खण्डकाव्य तथा मुक्तक के अन्तर्गत एवं गद्य के नमूने तथा निदर्शन प्रस्तुत करने के साथ ही लगभग तीस पृष्ठों में आलोचनात्मक अध्ययन भी प्रस्तुत किया गया है जो महत्त्वपूर्ण है। इसी वर्ष डॉ. नामवरसिंह को 'रासो की भाषा' पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि प्राप्त हुई। डॉ. धर्मवीर भारती का शोध-प्रबन्ध 'सिद्ध साहित्य' १९५३ में इलाहाबाद विश्वविद्यालय में डी. फिल्. की उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ। इसका प्रकाशन १९५५ में किताब महल, इलाहाबाद से हुआ। इसमें अपभ्रंश भाषा के बौद्ध सन्त कवियों के साहित्य का

अनुशीलन, सन्धा भाषा, प्रतीक, भाषा-शैली तथा छन्दों के अध्ययन के रूप में किया गया है। सन् १९५७ में डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (इन्दौर) को आगरा विश्वविद्यालय द्वारा 'अपभ्रंश साहित्य' विषय पर पी-एच. डी. की उपाधि से सम्मानित किया गया। इस शोध-प्रबन्ध में प्रथम बार प्रकाशित अपभ्रंश-साहित्य का समालोचनात्मक विस्तृत अध्ययन किया गया। किन्तु अप्रकाशित अपभ्रंश-साहित्य के सम्बन्ध में जो विवरण डॉ. कोछड़ के प्रबन्ध में मिलता है, उसका इसमें अभाव है। कुल मिलाकर साहित्यिक दृष्टि से अपभ्रंश की रचनाओं का जो समीक्षात्मक अनुशीलन किया गया, उसमें विचारों की मौलिकता तथा प्रतिपादन की प्रौढ़ता लक्षित होती है। सन् १९५८ में आगरा विश्वविद्यालय की पी-एच. डी. उपाधि के लिए डॉ. अम्बादत्त पन्त का 'अपभ्रंश काव्य—परम्परा और विद्यापति' नामक शोध-प्रबन्ध स्वीकृत हुआ। इसमें अपभ्रंश की निरुक्ति से लेकर अपभ्रंश-साहित्य के विभिन्न रूपों तथा अवहट्ठ, पुरानी हिन्दी आदि के जन्म एवं विकास का अध्ययन विद्यापति की भाषा के सन्दर्भ में किया गया है। १९५६ में ही डॉ. शम्भूनाथसिंह का शोध-प्रबन्ध 'हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप-विकास' काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की पी-एच. डी. की उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ, जिसमें अपभ्रंश के काव्य-रूपों का विचार तथा विशेषकर रोमाण्टिक काव्यों का विवेचन विस्तार से किया गया। १९५६ में ही डॉ. राजकुमार जैन का महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध 'पुष्पदन्त—एक अध्ययन' आगरा विश्वविद्यालय में पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत किया गया, जिसमें विस्तार से नागवंश के विकास के साथ ही पुष्पदन्त की काव्यकृतियों का समालोचनात्मक अध्ययन किया गया। १९६२ में राजस्थान विश्वविद्यालय की पी-एच. डी. उपाधि के लिए डॉ. गोवर्धनदास शर्मा का 'प्राकृत और अपभ्रंश—उनका डिंगल साहित्य पर प्रभाव' तथा डी. लिट्. के लिए डॉ. भोलाशंकर व्यास का 'पुरानी हिन्दी भाषा और साहित्य के विषय में 'प्राकृतपैंगलम्' का योग' प्रबन्ध स्वीकृत किये गये। १९६३ में डॉ. राजनारायण पाण्डे का 'महाकवि' पुष्पदन्त—एन अपभ्रंश पोइट ऑव टेन्थ सेंचुरी' प्रबन्ध आगरा विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ। आगरा विश्वविद्यालय से ही डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन शास्त्री का प्रबन्ध 'भविसयत्तकहा और अपभ्रंशकथाकाव्य' १९६४ में पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत किया गया। इस शोध-प्रबन्ध में पहली बार काव्य-साहित्य में कथाकाव्य और चरितकाव्य की भिन्न-भिन्न काव्य-विधाओं का विवेचन कर उनका स्वरूप निर्दिष्ट किया गया। भविष्यदत्तकथा के अतिरिक्त अधिकतर अप्रकाशित कथा-काव्यों का अनुशीलन इस प्रबन्ध में किया गया। इस प्रकार स्वतन्त्र काव्य-विधा के अध्ययन के साथ ही अपभ्रंश-कथाओं का लोकतात्त्विक अध्ययन भी प्रस्तुत किया गया। इसी वर्ष डॉ. राजाराम जैन का प्रबन्ध 'रइधू साहित्य का समालोचनात्मक परिशीलन' पी-एच. डी. के लिए मगध विश्वविद्यालय से स्वीकृत हुआ। इस प्रकार अपभ्रंश सम्बन्धी शोध-कार्य उत्तरोत्तर समालोचनात्मक दिशा की ओर अग्रसर होता रहा। तिश्योशी नारा के कलकत्ता

विश्वविद्यालय से १९६४ में 'स्टडी ऑव अवहट्ठ एण्ड प्रोटो-बैंगाली' स्वीकृत शोध-प्रबन्ध में अपभ्रंश और अवहट्ठ के मौलिक अन्तर का स्पष्ट निर्देश किया गया तथा अवहट्ठ को बंगला का पूर्व रूप बताया गया। यद्यपि डॉ. वीरेन्द्र श्रीवास्तव का शोध-प्रबन्ध 'अपभ्रंश भाषा का अध्ययन' पटना विश्वविद्यालय से डी. लिट्. के लिए १९६२ में स्वीकृत हुआ था, किन्तु प्रकाशन दिल्ली से १९६५ में हुआ। इस प्रबन्ध में अपभ्रंश भाषा का व्याकरणात्मक अध्ययन तथा विशेष रूप से अर्थपरक अध्ययन प्रस्तुत किया गया। विवेचन पुष्ट तथा प्रामाणिक है। परिशिष्ट में 'राउलवेल' की भाषा का भी अध्ययन किया गया है। सन् १९६४ में ही डॉ. सत्यरंजन वन्द्योपाध्याय का 'द ईस्टर्न स्कूल ऑव प्राकृत ग्रैमेरियन्स' कलकत्ता विश्वविद्यालय से पी-एच. डी. की उपाधि के लिए स्वीकृत किया गया। प्राकृत वैयाकरणों के सम्बन्ध में डॉ. सत्यरंजन बनर्जी का कार्य महत्त्वपूर्ण है। दक्षिण भारत में भी दाक्षिणात्यों के द्वारा सम्पन्न शोध-कार्य में एच. एन. नरसिंहमूर्ति का हिन्दी भाषा में 'भारतीय रामायणों का अध्ययन' और म. व. चित्रलिंगय्या का 'पउमचरिउ और रामचन्द्रचरितपुराण का तुलनात्मक अध्ययन' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

प्रगति की दिशा में

गत पाँच दशकों में अपभ्रंश भाषा और साहित्य के सम्बन्ध में जो शोध-कार्य हुआ है, वह महत्त्वपूर्ण होने पर भी गुणात्मक दृष्टि से पर्याप्त एवं उत्कृष्ट कोटि का नहीं है। क्योंकि न तो अपभ्रंश का सम्पूर्ण साहित्य अभी तक प्रकाशित हो पाया है और न इसके सम्बन्ध में की गई खोजों का विवरण ही प्रकाशित हो सका है। प्रकाशन के क्षेत्र में भारतीय ज्ञानपीठ ही एक ऐसी संस्था है जो सम्पादन, समालोचना, अनुवाद आदि सभी प्रकार के प्रकाशनों में विशेष रुचि लेती है। अतएव अपभ्रंश का अल्प साहित्य ही विद्वानों के हाथों में पहुँच पाता है। फिर, इस क्षेत्र में कार्य करने वाले विद्वानों की भी कमी है। जहाँ तक राष्ट्रभाषा तथा हिन्दी के माध्यम और उसके साहित्य का प्रश्न है, अधिकतर शोधार्थियों की रुचि इस ओर है और होनी चाहिए। कारण यह है कि उनके सामने एक विशाल क्षेत्र अनुसन्धान के लिए उन्मुक्त है। अभी इस पर कार्य ही क्या हुआ है ? हिन्दी-साहित्य के सन्दर्भ में तो इससे अच्छा और उपयुक्त दूसरा क्षेत्र नहीं है। क्या भाषा, क्या छन्द, क्या शैली, क्या शिल्प तथा काव्य की लगभग सभी विधाओं में लिखे गये साहित्य का सम्यक् मूल्यांकन, अनुशीलन व आलोचन अत्यन्त आवश्यक है। हिन्दी साहित्य की अधिकतर काव्य-प्रवृत्तियों के विकास में अपभ्रंश-साहित्य का योग रहा है। अतः अब समय आ गया है, जब हिन्दी के स्नातक इस दिशा में तत्परता से शोध-कार्य में संलग्न होकर अध्ययन-अनुशीलन कर रहे हैं। हमारी जानकारी में भारतवर्ष के विभिन्न विश्वविद्यालयों में इन दिनों कई विद्वान् शोध-कार्य कर रहे हैं।

इसके अतिरिक्त डॉ. राजाराम जैन 'कवि रइधू' के सम्पूर्ण साहित्य का सम्पादन व

अनुशीलन कर १५ भागों में 'रइधू-ग्रन्थावली' का प्रकाशन-कार्य कर रहे हैं। इसका प्रथम और द्वितीय भाग जीवराज ग्रन्थमाला से मुद्रित हो चुका है। लेखक स्वयं 'अपभ्रंश कोश' के कार्य में संलग्न है। अभी तक लगभग दस सहस्र शब्दों की संकलना हो चुकी है। ये दोनों ही महत्त्वपूर्ण कार्य होने जा रहे हैं। तीसरा महत्त्वपूर्ण कार्य 'अपभ्रंश दोहाकोश' का है। अपभ्रंश की कई छोटी-छोटी रचनाएँ दोहों के रूप में मिलती हैं। यद्यपि मुनि रामसिंह का 'पाहुड दोहा', मुनि योगीन्द्र का 'परमात्मप्रकाश' लक्ष्मीचन्द्र का 'श्रावकाचार' तथा महानन्दि का 'आणंदा' प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु सुप्रभाचार्य का 'सुप्पयदोहा', 'बारक्खरी दोहा', महीराज कृत 'बुद्धिरसायन' तथा 'द्वादशानुप्रेक्षा' आदि विभिन्न रचनाओं को मिलाकर लगभग दो-तीन सहस्र अपभ्रंश दोहों का संकलन-कार्य भी लेखक के द्वारा किया जा रहा है। लगभग दो सहस्र दोहों का संकलन हो चुका है।

अपभ्रंश तथा जैन साहित्य के अध्ययन-केन्द्र

उक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि प्राकृत तथा अपभ्रंश आदि भाषाओं तथा प्राच्य-विद्याओं का आधुनिक युग में सबसे पहले अध्ययन-केन्द्र जर्मनी था। जर्मन के कई विद्वानों के सतत परिश्रम तथा मेधावी अध्यवसाय में प्राच्यविद्याओं का नये रूप से अध्ययन गम्भीरता के साथ किया गया। यह अध्ययन कई दृष्टियों से हुआ। भारतवर्ष में सर्वप्रथम इस प्रकार का अध्ययन-केन्द्र भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट है जो आज भी अपनी परम्परा का भलीभाँति पालन कर रही है। जैन साहित्य के अध्ययन-केन्द्र के रूप में 'प्राकृत विद्यापीठ', बैशाली (बिहार) की सबसे पहले स्थापना हुई। यद्यपि पार्श्वनाथ विद्याश्रम (हिन्दू विश्वविद्यालय), वाराणसी भी इस दिशा में बहुत समय से प्रवर्तमान है और इधर इस संस्थान के द्वारा विशेष रूप से शोध-अनुसन्धान कार्य हुआ है। परन्तु इस दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य एल. डी. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, अहमदाबाद से सामने आये हैं। पं. अम्बालाल प्रेमचन्द शाह के कार्य तथा डॉ. ह. चू. भायाणी के कार्य प्रशंसनीय हैं। इस शोध-संस्थान के अन्तर्गत कई शोध-छात्रों ने भी अच्छे शोधप्रबन्ध लिखे तथा लिख रहे हैं। इधर मैसूर विश्वविद्यालय के अन्तर्गत जैनविद्याओं (जैनियालॉजी) का जो पीठ स्थापित हुआ है, उसमें निस्सन्देह डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये के निर्देशन में महत्त्वपूर्ण कार्य हुए। इसी प्रकार धारवाड़ विश्वविद्यालय में भी कुछ कार्य चल रहा है। मगध विश्वविद्यालय के अन्तर्गत भी डॉ. राजाराम जैन के सतत प्रयत्न से जैन सिद्धान्त भवन, आरा ने एक शोध-संस्थान का रूप ले लिया है।

विदेशों में पूर्व जर्मनी में फ्री यूनिवर्सिटी, बर्लिन में प्रोफेसर डॉ. क्लौस-ब्रुहन (Klaus Bruehn) जैन लिटरेचर एण्ड माइथालॉजी, इण्डियन आर्ट एण्ड इकोनोग्राफी का अध्यापन-कार्य कर रहे हैं। उनके सहयोगी डॉ. चन्द्रभाल त्रिपाठी बुद्धिस्ट-जैन लिटरेचर तथा डॉ. मोनीका 'जैन लिटरेचर' का अध्यापन करने में संलग्न हैं। इसी प्रकार

पेनीसिलवानिया यूनिवर्सिटी (विश्वविद्यालय) में नॉर्मन ब्राउन के निर्देशन में प्राकृत तथा जैन साहित्य पर शोध-अनुसन्धान कार्य चल रहा है। भारतवर्ष में 'इन्स्टीट्यूट ऑव इण्डिक स्टडीज' के अन्तर्गत कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में संस्कृत, प्राकृत, हिन्दी आदि विषयों पर स्नातक शोध-कार्य कर रहे हैं। अन्य देशों में सम्प्रति तुलनात्मक भाषाशास्त्र (कम्पेरेटिव फिलालॉजी) के अन्तर्गत वैदिक, संस्कृत एवं आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं आदि का अध्ययन-विश्लेषण किया जा रहा है। यह कार्य रूस और अमरीका—दोनों देशों में प्रगतिशील है। प्राकृत भाषाओं का विशेष रूप से अध्ययन बेलजियम में किया जा रहा है। वहाँ पर डॉ. जे. डेल्यु 'जैनिज्म तथा प्राकृत' पर शोध-कार्य में संलग्न हैं। इसी प्रकार डॉ. एल. डी. राय 'क्लासिकल संस्कृत एण्ड प्राकृत' तथा प्रो. डॉ. ए. आर. फोहले 'क्लासिकल संस्कृत, प्राकृत एण्ड इण्डियन रिलीजन' एवं डॉ. ए. श्चार्पे 'एन्शियेण्ट इण्डियन लैंग्वेजेज एण्ड लिटरेचर वैदिक, क्लासिकल संस्कृत एण्ड प्राकृत' पर अध्ययन कर रहे हैं। विश्वभारती शान्तिनिकेतन में डॉ. रामसिंह तोमर के निर्देशन में भी अपभ्रंश का शोध-कार्य 'नैरेटिव पोइट्री इन अपभ्रंश लिटरेचर' पर पी-एच. डी. के लिए किया जा चुका है। इसी प्रकार डॉ. भायाणी के निर्देशन में तथा डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री के निर्देशन में अपभ्रंश-विषयक शोध-कार्य हो रहे हैं।

अपभ्रंश में शोध की दिशाएँ

अभी तक के अपभ्रंश के शोध-कार्य के सम्बन्ध में एक व्यापक परिप्रेक्ष्य तथा विपुल साहित्य को ध्यान में रखकर यह कहा जा सकता है कि वास्तविक शोध-कार्य बहुत कम हुआ है, करने के लिए बहुत है। अपभ्रंश का कुल साहित्य लगभग छह सौ रचनाओं का है। इनमें से लगभग पचास प्रतिशत छोटी-छोटी रचनाएँ हैं तथा लगभग पचास स्फुट एवं अज्ञात रचनाएँ हैं। दो सौ के लगभग ही ऐसी रचनाएँ हैं जो प्रबन्ध काव्य की कोटि की हैं। उनमें से लगभग दश रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं और बीस साहित्यिक कृतियाँ प्रकाशनाधीन हैं। किन्तु सम्पूर्ण साहित्य का एक-चौथाई भी अभी तक प्रकाशित नहीं हो सका है। इसके प्रकाशन की अत्यन्त आवश्यकता और उपयोगिता है। इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह है कि जो भाषा लगभग छठी शताब्दी से सोलहवीं-सत्रहवीं शताब्दी तक काव्यभाषा रही हो, किन्तु उसका कोई शब्दकोश न लिखा गया हो। यह उचित है कि लोकयुगीन बोली से अनुप्राणित भाषा में लिखे जाने के कारण विभिन्न युगों में इसके कोश की आवश्यकता प्रतीत न हुई हो, किन्तु आज इसकी उपयोगिता से मुख-विमुख नहीं किया जा सकता है। केवल अपभ्रंशकोश की ही नहीं, 'हिन्दीव्युत्पत्ति शब्दकोश' की भी परम आवश्यकता है। हिन्दी के किसी भी कोश का सफल संकलन तथा सम्पादन बिना प्राकृत, अपभ्रंश के कोश के नहीं हो सकता। संस्कृत कोशों में भी बहुत-से देशज शब्द मिलते हैं। उन पर अभी तक किसी ने गम्भीरतापूर्वक प्रकाश नहीं

डाला। अतएव हमारी दृष्टि से अपभ्रंश भाषा और साहित्य की नव्य शोधदिशाएँ निम्नलिखित हो सकती हैं :

१. हिन्दी का व्युत्पत्तिमूलक शब्दकोश (सम्पूर्ण विकास-अवस्थाओं पर आधारित)
२. भारतीय कृष्णकाव्य की परम्परा में अपभ्रंश कवियों का योग
३. भारतीय भाषाओं के विकास में अपभ्रंश का योग
४. अपभ्रंश तथा हिन्दी के प्रेमाख्यानक काव्यों का तुलनात्मक अध्ययन
५. महाकवि स्वयम्भू की काव्यकृतियों का भाषाशास्त्रीय अध्ययन
६. अपभ्रंश के चरितकाव्य
७. लोकतत्त्व की दृष्टि से अपभ्रंश के प्रबन्ध काव्यों का विवेचन
८. अपभ्रंश के खण्डकाव्य
९. अपभ्रंश की काव्य-शैलियों का विकास
१०. अपभ्रंश काव्य-साहित्य में प्रयुक्त कथाभिप्राय
११. मध्यकालीन हिन्दी साहित्य पर अपभ्रंश साहित्य का प्रभाव
१२. अपभ्रंश का रासा-साहित्य
१३. प्रतीक-परम्परा तथा अपभ्रंश साहित्य
१४. अपभ्रंश का शृंगारमूलक साहित्य
१५. हिन्दी साहित्य की रीतिकालीन शृंगारिक रचनाओं पर अपभ्रंश काव्यों का प्रभाव
१६. अपभ्रंश का वीररसात्मक साहित्य
१७. अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्य
१८. अपभ्रंश का गीतिसाहित्य।

यद्यपि 'प्राकृत शब्दकोश' के सम्बन्ध में यह बात सच है कि आज तक सम्पूर्ण साहित्य का अनुशीलन कर बृहत् कोश तैयार नहीं हो सका है। किन्तु यह बात प्राकृत कोश के सम्बन्ध में भी यथार्थ है। वास्तव में प्राच्यविद्याओं के अध्ययन-क्रम में एक बात स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है कि 'कोशग्रन्थों' का समीक्षात्मक, शोधात्मक एवं व्युत्पत्तिमूलक समग्र अध्ययन नहीं किया गया। संस्कृत में कई प्रकार के कोश हैं—एकार्थक और अनेकार्थक, निघण्टु तथा निरुक्त भी। किन्तु उनका सर्वेक्षण आज तक नहीं किया गया। उनका ठीक से विचार नहीं हुआ। केवल पाठ तैयार होते रहे हैं। प्राकृत में साहित्य के ग्रन्थों के पाठ तैयार होते रहे। जब तक टेक्स्ट न हों, उनका विचार कैसे किया जाए? यह बात प्राकृत के सन्दर्भ में ही नहीं, अपभ्रंश के सन्दर्भ में भी ठीक है। अतः यह कहना उचित होगा कि पिछले पच्चीस-तीस वर्षों में प्राकृत में जो शोध-कार्य हुआ है, वह मुख्यतः मूल ग्रन्थों के सम्पादनों से सम्बद्ध है। अपभ्रंश में यह स्थिति सन्तोषजनक नहीं है। यद्यपि डॉ. हीरालाल जी के कुछ ग्रन्थ अच्छी तरह से सम्पादित होकर हिन्दी अनुवाद के साथ भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु

अभी तक कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के सम्पादन तथा प्रकाशन की आवश्यकता बनी हुई है। कतिपय महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की सूची इस प्रकार है :

१. इष्टोपदेश : अमरकीर्ति
२. धवल : हरिवंशपुराण
३. लाखू : जिनदत्तचरित्र
४. सागरदत्तसूरि : जम्बूस्वामीचरित्र
५. श्रुतकीर्ति : हरिवंशपुराण
६. अमरकीर्ति : नेमिनाथचरित्र
७. देवसेनगणि : सुलोचनाचरित्र
८. धनपाल : बाहुबलिचरित्र
९. पूर्णभद्र मुनि : सुकुमालस्वामीचरित्र
१०. भगवतीदास : मृगांकलेखाचरित्र
११. तेजपाल : सम्भवनाथचरित्र
१२. यशःकीर्ति : पाण्डवपुराण, हरिवंशपुराण
१३. लक्ष्मण : नेमिनाथचरित्र
१४. शुभकीर्ति : शान्तिनाथचरित्र
१५. श्रीधर : पार्श्वपुराण, सुकुमालचरित्र।

उक्त अपभ्रंश काव्यों का सम्पादन-समालोचन तथा स्वतन्त्र रूप से समीक्षात्मक अध्ययन किया जा सकता है। वस्तुतः सम्पादन के कार्य में डॉ. पी. एल. वैद्य, डॉ. ह. चू. भायाणी तथा डॉ. हीरालाल जैन के कार्य आदर्श हैं। अनुवाद की दृष्टि से भी डॉ. जैन के कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। डॉ. ए. एन. उपाध्ये ने प्राकृत तथा अपभ्रंश दोनों प्रकार के काव्यग्रन्थों का सम्पादन तथा समालोचन कुशलता के साथ किया है। अतएव शोध-कार्य करने वालों को उनके कार्यों का तथा विषय का ध्यान रखना चाहिए, जिससे किसी प्रकार की पुनरावृत्ति न हो। भाषा की दृष्टि से भी इधर डॉ. भायाणी के प्रकाशित प्राकृत तथा अपभ्रंश-सम्बन्धी कतिपय निबन्ध अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी हैं। इसी प्रकार अपभ्रंश के काव्यों में प्रयुक्त छन्दों के अध्ययन पर डॉ. एच. डी. वेलणकर का कार्य महत्त्वपूर्ण है। वे इस विषय के एकमात्र अधिकारी विद्वान् हैं। स्वयम्भूछन्द तथा छन्दोऽनुशासन आदि उपयोगी ग्रन्थ उनके द्वारा सम्पादित तथा समालोचित हैं। अतः उनका उपयोग किया जा सकता है।

वर्तमान और भविष्य

इधर विगत दशक में कई संगोष्ठियों, परिषदों तथा सेमिनार में प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषा और साहित्य विषयक शोधपत्रों का वाचन होता रहा है। मई १९६८ में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग की सहायता द्वारा शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर में एक त्रिदिवसीय

'प्राकृत सेमिनार' आयोजित हुआ था। इसमें लगभग चालीस विद्वान् सम्मिलित हुए थे। १६६८ के अक्तूबर मास में ही अखिल भारतवर्षीय प्राच्य विद्या सम्मेलन के अवसर पर भारतीय ज्ञानपीठ के द्वारा 'जैन साहित्य संगोष्ठी' का भव्य आयोजन किया गया था, जिसमें ५० विद्वान् सम्मिलित हुए थे। अधिवेशन में पठित शोध-निबन्धों की सूची इस प्रकार है (प्रकाशित, अनेकान्त, २२, ३-४, पृ. १८६ से उद्धृत) —

१. द समराइच्च कहा एण्ड विलासवईकहा।

२. अपभ्रंश साहित्य की एक अप्रकाशित महत्त्वपूर्ण कृति—पुण्णासवकहा।

३. अपभ्रंश का एक महत्त्वपूर्ण काव्य : सिरिपालचरिउ।

४. द अपभ्रंश पैसेज फ्राम अभिनवगुप्ताज तन्त्रसार एण्ड द्वात्रिंशिकावृत्ति।

५. प्राकृतिज्म इन वेदाज।

इस प्रकार भारतीय विद्याओं में रुचि रखने वाले विद्वानों का झुकाव अब दिनोंदिन उक्त अध्ययन की ओर बढ़ रहा है। इससे जहाँ अपभ्रंश भाषा और साहित्य के शोध-अनुसन्धान की प्रगति होगी, वहीं प्राच्यविद्याओं के ज्ञान का भी विकास होगा। अतः आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं तथा उनके साहित्य में शोध-अनुसन्धान कार्य में तथा अध्येताओं को अब विशेष रूप से इसके अध्ययन-अनुशीलन में प्रवृत्त होना चाहिए।

अपभ्रंश भाषा का आज तक कोई स्वतन्त्र तथा मौलिक शब्दकोश नहीं लिखा गया। यद्यपि डॉ. नरेशकुमार ने 'अपभ्रंश-हिन्दी-कोश' में प्रकाशित अपभ्रंश रचनाओं के शब्दकोश के आधार पर संकलन कर अपभ्रंश कोश की रचना की है, किन्तु अनेक दृष्टियों से उसमें तरह-तरह की कमियाँ दृष्टिगोचर होती हैं। अतः आज भी एक ऐसे 'अपभ्रंश कोश' की आवश्यकता बनी हुई है जिसमें सम्पूर्ण अपभ्रंश साहित्य की शब्द-संकलना हो। केवल 'पाइयसद्दमहण्णव' तथा 'अर्द्धमागधी कोश' के पाँचवें भाग में लगभग एक सहस्र शब्द मिलते हैं जो ठेठ अपभ्रंश के हैं। लेखक ने 'अपभ्रंशकोश' के निर्माण की दिशा में कुछ कार्य किया है और लगभग दश सहस्र अपभ्रंश के शब्दों की संकलना हो चुकी है। यह ठीक है कि प्राकृत भाषा और साहित्य से अपभ्रंश भाषा और साहित्य विच्छिन्न नहीं रहा है, किन्तु यह भी ठीक है कि आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं और उनके साहित्य के लिए भी अपभ्रंश भाषा और साहित्य उपजीव्य रहा है। इस सम्बन्ध में स्व. डॉ. वासुदेवशरण जी अग्रवाल के विचार उद्धरणीय हैं। नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ६३, अंक १ में पृ. ४६ पर उन्होंने लिखा था : "अपभ्रंश साहित्य का जब तक कोश के रूप में संग्रह न होगा तब तक हिन्दी एवं अन्य प्रादेशिक भाषाओं के सहस्रों शब्दों की व्युत्पत्ति का उद्धार नहीं हो सकता।" इस सम्बन्ध में एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा :

नाइत मांझ भंवर हति गीवां।—पद्मावत, ५३७,६ (जायसी)

इसमें 'नाइत' शब्द सामुद्रिक व्यापारी के अर्थ में प्रयुक्त है। यही अर्थ स्वयम्भू के

'पउमचरिउ' (३१।७।१) तथा 'भविसयत्तकहा' (८।१३।१) में परम्परा से पहले से ही वर्तमान था। किन्तु अपभ्रंश साहित्य की जानकारी न होने से यह अर्थ ज्ञात न हो सका। इसलिए हिन्दी कोश के सम्पादन के लिए यह आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है कि पहले अपभ्रंश कोश का निर्माण हो जाए। डॉ. अग्रवाल जी ने यह भी बताया कि अपभ्रंश भाषा में जो विशुद्ध संस्कृत परम्परा से बाहर लोक-जीवन में प्रचलित थे और पार्श्वद्वार से संस्कृत में सम्मिलित किये गये, ऐसे शब्द भी मिलते हैं। उदाहरण के लिए : वैदिक 'इड्व' शब्द आज भी हिन्दी में इंडुरी रूप में प्रचलित है। अँगरेजी, हिन्दी तथा गुजराती में प्रकाशित कई लेखों में तथा परिषदों के शोध-पत्रों में इस विषय के निबन्ध प्रकाशित हो चुके हैं, किन्तु समग्र रूप से किसी भाषा विशेष का व्युत्पत्तिमूलक कोश केवल मराठी को छोड़कर इधर प्रकाशित नहीं हुआ। आज सभी आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के शब्दों के सर्वेक्षण का कार्य होना चाहिए जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं का वास्तविक महत्त्व भी इस प्रकार के कार्यों से तथा 'कोश-रचना' से भली-भाँति प्रकट हो सकेगा। संस्कृत में भी देशी भाषाओं के जिन शब्दों का समावेश तथा संस्कृतीकरण हो गया है, वह भी एक स्वतन्त्र अध्ययन का विषय है। सम्प्रति ऐसे ही विषयों पर शोध-कार्य वास्तविक एवं उपादेय हो सकता है। केवल एक ही विषय पर विविध प्रकार से आवृत्ति करना शोध-जगत् के लिए कदापि मान्य एवं उचित नहीं होगी। किन्तु आज हिन्दी-जगत् में शोध-कार्य के नाम पर भाषा, लोक-साहित्य तथा विभिन्न विधाओं पर जो प्रबन्ध प्रकाश में आ रहे हैं, वे केवल देखते ही बनते हैं।

द्वितीय अध्याय

अपभ्रंश के मूल ग्रन्थ, प्रकाशित शोध-प्रवन्ध, निबन्ध एवं पुस्तकें

अपभ्रंश के प्रकाशित मूल ग्रन्थ

१. रिचर्ड पिशेल (सं.) : हेमचन्द्राज ग्रैमेतीक देर प्राकृत श्प्राखन (हेमचन्द्र का प्राकृत व्याकरण), २ जिल्दों में, हॉल (जर्मनी), १८७७-१८८०
२. रिचर्ड पिशेल (सं.) : देशी नाममाला, कील (जर्मनी), १८८०, प्रकाशित 'इण्डियन एन्टिक्वेरी' में, अक्तूबर, १८८१
३. रिचर्ड पिशेल (सं.) : मटेरिलियन जूर केण्टनिस डेस अपभ्रंश, बर्लिन, १६०२
४. महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री : बौद्धगान ओ दोहा, बंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता, १६१६
५. हर्मन जेकोवी (सं.) : भविसयत्तकहा, मैंचन (जर्मनी), १६१८
६. पी. डी. गुणे : द संजममंजरी ऑव महेसरसूरि एनल्स ऑव द भण्डारकर रिसर्च इन्स्टिट्यूट, पूना, जिल्द १, पृ. १५७-१६६, १६१८
७. मुनि जिनविजय (सं.) : कुमारपालप्रतिबोध गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ौदा, १६२०
८. सी. डी. दलाल (सं.) : प्राचीन गुर्जरकाव्य संग्रह, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ौदा, १६२०
६. हर्मन जेकोवी (सं.) : सणयकुमारचरिउ, मैंचन (जर्मनी), १६२१
१०. सी. डी. दलाल और पी. डी. गुणे (सं.) : भविसयत्तकहा, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ौदा, १६२३, द्वितीय संस्करण, १६६७
११. प्राकृत षोडशकारण जयमाला, प्रकाशक—जैन साहित्य मन्दिर, सागर, वि. सं. १६८३
१२. लालचन्द्र भ. गाँधी (सं.) : अपभ्रंश-काव्यत्रयी, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ौदा, १६२७, द्वितीय संस्करण, १६६७
१३. एच. डी. वेलणकर : वैराग्यसार ऑव सुप्रभाचार्य, एनल्स ऑव भण्डारकर

ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टिट्यूट, पूना, जिल्द ६, पृ. २७२-२८०, १६२८
१४. डॉ. पी. एल. वैद्य (सं.) : हेमचन्द्र—प्राकृत व्याकरण, पूना, १६२८
१५. एल. ऑल्सडोर्फ (सं.) : डेर कुमारपाल प्रतिबोध, हम्बर्ग (जर्मनी), १६२८
१६. पं. हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द सेठ (सं.) : पाइअ-सद्द-महण्णवो, कलकत्ता, १६२८, द्वि. सं., १६६३
१७. एम. सी. मोदी : भावनासन्धिप्रकरणं ऑव जयदेव मुनि (एन अपभ्रंश पोइट्री), एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टिट्यूट, पूना, जिल्द ११, भा. १, पृ. १-३१, १६३०
१८. एम. डी. बनर्जी (सं.) : द देशीनाममाला ऑव हेमचन्द्र, कलकत्ता, १६३१
१६. डॉ. परशुराम लक्ष्मण वैद्य (सं.) : महाकवि पुष्पदन्त कृत जसहरचरिउ, कारंजा जैन सीरीज, ग्रन्थ सं. १, कारंजा, १६३१
२०. हीरालाल जैन (सं.) : सावयधम्मदोहा, कारंजा जैन सीरीज, ग्रन्थ सं. २, कारंजा, १६३२
२१. हीरालाल जैन (सं.) : मुनि रामसिंह कृत पाहुडदोहा, कारंजा जैन सीरीज, ग्रन्थ सं. ३, कारंजा, १६३३
२२. हीरालाल जैन (सं.) : महाकवि पुष्पदन्त कृत णायकुमारचरिउ, देवेन्द्रकीर्ति जैन सीरीज, ग्रन्थ सं. १, कारंजा, १६३३, द्वि. सं., भारतीय ज्ञानपीठ, १६७२
२३. मुनि जिनविजय (सं.) : मेरुतुंगाचार्य रचित प्रबन्ध चिन्तामणि, शान्तिनिकेतन, वि. सं. १६८६
२४. हीरालाल जैन (सं.) : मुनि कनकामर कृत करकण्डचरिउ, कारंजा जैन सीरीज, ग्रन्थ सं. ४, कारंजा, १६३४
२५. एन. एन. चौधुरी (सं.) : डाकार्णव, कलकत्ता, १६३५
२६. पी. सी. बागची (टिप्पण व अनुवाद) : दोहाकोश, जर्नल ऑव द डिपार्टमेण्ट ऑव लेटर्स, जिल्द २८, पृ. ६-१६०, १६३५
२७. एम. सी. मोदी (सं.) : अपभ्रंश-पाठावली (गुजराती में), अहमदाबाद, १६३५
२८. डॉ. लुडविग ऑल्सडोर्फ (सं.) : हरिवंशपुराण (पुष्पदन्त कृत महापुराण के अन्तर्गत), 'हरिवंशपुराण, ईन एब्श्चनित्त ऑश देर अपभ्रंश वेल्थहिस्टोरी, महापुराण तिसट्ठिमहापुरिसगुणालंकार वन पुष्पदन्त, हम्बर्ग (जर्मनी), १६३६
२६. डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये (सं.) : परमप्पयासु (परमात्मप्रकाश, योगसार), परमश्रुत प्रभावक मण्डल, बम्बई, १६३७, द्वि. सं. १६६०, तृ. सं. १६७३
३०. डॉ. पी. एल. वैद्य (सं.) पुष्पदन्त कृत महापुराण, प्रथम खण्ड, माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १६३७

३१. पी. सी. बागची (सं.) : दोहाकोश, कलकत्ता, १६३८
३२. पी. वी. रामानुजस्वामी (सं.) : द देशीनाममाला ऑव हेमचन्द्र बाय आर. पिशेल, विजयानगरम्, १६३८
३३. पं. लालचन्द्र भगवान गाँधी (सं.) : भरतबाहुबलिरास (गुजराती) अहमदाबाद, वि. सं. १६६७
३४. हजारीप्रसाद द्विवेदी (हिन्दी अनुवाद) : प्रबन्ध चिन्तामणि, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १६४०
३५. डॉ. पी. एल. वैद्य (सं.) : पुष्पदन्त कृत महापुराण, द्वितीय खण्ड, माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १६४०, तृतीय खण्ड, १६४१
३६. लद्दू और गोरे (सं.) : पउमचरिउ, पूना, १६४१
३७. नरोत्तमदास स्वामी (सं.) : अपभ्रंश-पाठमाला, प्रथम भाग, इण्डियन प्रेस लि., इलाहाबाद, बि. सं. १६६६
३८. मुनि जिनविजय और भायाणी (सं.) : अब्दुल रहमान कृत सन्देशरासक, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १६४५
३६. पं. बेचरदास दोशी (सं.) : देसीसद्दसंगहो, प्रथम भाग, १६४७
४०. मधुसूदन मोदी तथा भायाणी (सं.) : धाहिल कृत पउमसिरीचरिउ, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १६४८
४१. देवेन्द्रकुमार जैन : अपभ्रंश-प्रकाश, वर्णी जैन ग्रन्थमाला, वाराणसी, १६५०
४२. चारलोटे क्रोसे : एन्शियेण्ट जैना हायमन्स, सिन्दिया ओरि. इं., उज्जैन, १६५२
४३. डॉ. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी (सं.) : पउमचरिउ, भा. १, २, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, ग्रन्थांक ३४, ३५, बम्बई, १६५३
४४. डॉ. पी. एल. वैद्य (सं.) : त्रिविक्रम विरचित प्राकृत शब्दानुशासन, जीवराज जैन ग्रन्थमाला, सोलापुर, १६५४
४५. जगन्नाथ शर्मा (सं.) : अपभ्रंश-दर्पण, पटना, १६५५
४६. प्रबोधचन्द्र बागची और शान्तिभिक्षु शास्त्री (सं.) : चर्यागीतिकोश, विश्वभारती शान्तिनिकेतन, १६५६
४७. देवेन्द्रकुमार जैन (हिन्दी अनुवाद) : पउमचरिउ, भा. १, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १६५७
४८. राहुल सांकृत्यायन (अनुवाद सहित) : दोहाकोश, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, १६५७
४६. मुनि जिनविजय (सं.) : साधु सुन्दरगणि रचित उक्तिरत्नाकर, जयपुर, १६५७
५०. देवेन्द्रकुमार जैन (अनुवाद) : पउमचरिउ, भा. २, ३, भारतीय ज्ञानपीठ, १६५८
५१. डॉ. हेमचन्द्र जोशी (अनुवाद) : रिचर्ड पिशेल कृत प्राकृत भाषाओं का

व्याकरण, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, १६५८
५२. वासुदेवसिंह (सं.) : आणंदा, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, बर्ष ६४, अंक १, पृ. ५७-६३, वि. सं. २०१६
५३. हजारीप्रसाद द्विवेदी और विश्वनाथ त्रिपाठी (अनुवाद) : सन्देशरासक, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई, १६६०
५४. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी (सं.) : सिद्धहेमगत अपभ्रंश व्याकरण (गुजराती में), बम्बई, १६६०, द्वि. सं. १६७१
५५. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी (सं.) पउमचरिउ, भा. ३, बम्बई, १६६१
५६. ह. दा. वेलणकर (सं.) : छन्दोऽनुशासन, भारतीय विद्याभवन, बम्बई, १६६१
५७. पं. दीपचन्द पाण्ड्या (सं.) : कवि लक्ष्मीचन्द्र रचित सावयधम्मु दोहा, केकड़ी (राजस्थान), वि. सं. २०१७
५८. ह. दा. वेलणकर (सं.) स्वयम्भूछन्द, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, १६६२
५६. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : हरिदेव रचित मयणपराजयचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १६६२
६०. पं. परमानन्द जैन शास्त्री (सं.) : जैनग्रन्थ-प्रशस्ति-संग्रह (अपभ्रंश), द्वितीय भाग, वीर सेवा मन्दिर, दिल्ली, १६६३
६१. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : करकण्डचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १६६४
६२. प्रफुल्लकुमार मोदी (सं.) : पद्मकीर्ति कृत पासणाहचरिउ, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी, १६६५
६३. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : सुगन्धदशमी कथा, भारतीय ज्ञानपीठ, १६६६
६४. डॉ. बिमलप्रकाश जैन (सं.) : महाकवि वीर कृत जम्बूसामिचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ, १६६८
६५. रमणीकविजय (सं.) : आनन्दश्रावक सन्धि, महावीर जैन विद्यालय सुवर्णमहोत्सव ग्रन्थ १, पृ. १६६-१७२, बम्बई, १६६८
६६. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : मुनि श्रीचन्द्र कृत कहकोसु, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, अहमदाबाद, १६६६
६७. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (अनुवाद) : पउमचरिउ, भा. ४, भारतीय ज्ञानपीठ, १६६६
६८. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (अनुवाद) : पउमचरिउ, भा. ५, भारतीय ज्ञानपीठ, १६७०
६६. ह. चू. भायाणी, मधुसूदन चि. मोदी (सं.) : हरिभद्रसूरि रचित नेमिनाहचरिउ, प्रथम खण्ड, ला. द. भा. सं. विद्यामन्दिर, अहमदाबाद, १६७०, द्वितीय

खण्ड, १९७१

७०. डॉ. हीरालाल जैन (सम्पादन, अनुवाद) : सुदंसणचरिउ, प्राकृत जैन विद्यापीठ, वैशाली, १९७०

७१. डॉ. हीरालाल जैन (सम्पादन, अनुवाद) : पुष्पदन्त कृत जसहरचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ, १९७२

७२. डॉ. हीरालाल जैन (सम्पादन, अनुवाद) : पुष्पदन्त कृत णायकुमारचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ, १९७२

७३. मधुसूदन सी. मोदी (सं.) : अमरकीर्ति कृत छक्कमोवएसो, गायकवाड़ ओरियन्टल सीरीज, १९७२

७४. ह. चू. भायाणी, मधुसूदन चि. मोदी (सं.) : सणतकुमारचरिय, ला. द. भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर, अहमदाबाद, १९७४

७५. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : वीरजिणिंदचरिउ (पुष्पदन्त कृत महापुराणान्तर्गत), भारतीय ज्ञानपीठ, १९७४

७६. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (सं.) : नरसेनदेव कृत सिरिवालचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, १९७४

७७. डॉ. राजाराम जैन (सं.) : विबुह श्रीधर रचित वड्ढमाणचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९७५

७८. डॉ. राजाराम जैन (सं.) : रइधू ग्रन्थावली, प्रथम भाग, जीवराज जैन ग्रन्थमाला, सोलापुर, १९७५

७९. डॉ. भायाणी और अगरचन्द नाहटा (सं.) : प्राचीन गुर्जरकाव्यसंचय, अहमदाबाद, १९७६

८०. डॉ. आर. एम. शाह (सं.) : साधारण कवि कृत विलासवईकहा, एल. डी. सीरीज, ग्रन्थांक ६१, अहमदाबाद, १९७७

८१. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (अनुवाद) : पुष्पदन्त कृत महापुराण, भा. १, २, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली, १९७९

८२. डॉ. आर. एम. शाह (सं.) : सन्धिकाव्यसमुच्चय, एल. डी. सीरीज, ग्रन्थांक ७२, अहमदाबाद, १९८०

८३. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (अनुवाद) : पुष्पदन्त कृत महापुराण, भा. ३, १९८१, भा. ४, १९८३, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नयी दिल्ली

८४. भँवरलाल पोल्याका (सं.) : मुनि विनयचन्द्र कृत चूनड़िया, जैन विद्या संस्थान, जयपुर, १९८५

८५. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री (सम्पादन, अनुवाद) : महानन्दि देव कृत आणंदा, जैन विद्या संस्थान, जयपुर, १९८५

८६. डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर' (सं.) : संबोहपंचासिया और वयकहा, जैन

अनुशीलन केन्द्र, १९८५

८७. भँवरलाल पोल्याका (सम्पादन, अनुवाद) : मुनि कनककीर्ति कृत णेमिसुर की जयमाल एवं कवि नण्हु कृत पाण्डे की जयमाल, जयपुर, १९८५

८८. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (सम्पादन, अनुवाद) : स्वयम्भूदेव कृत रिट्ठणेमिचरिउ, (यादव काण्ड), भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, १९८५

८९. डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर' (सं.) : महाकवि यशःकीर्ति कृत चंदप्पहचरिउ, वीरसेवा मन्दिर ट्रस्ट, वाराणसी, १९८६

९०. भगवती मुनि निर्मल (सं.) : हेमचन्द्राचार्य रचित कुमारपालचरितम् (अष्टम सर्ग अपभ्रंश), उदयपुर, १९८६

९१. भँवरलाल पोल्याका (सं.) : समाधि, जैन विद्या संस्थान, जयपुर, १९८६

९२. भँवरलाल पोल्याका (सं.) : बुद्धिरसायण ओणमचरित, जयपुर, १९८७

९३. डॉ. राजाराम जैन (सं.) : रइधू ग्रन्थावली, द्वितीय भाग, सोलापुर, १९८८

९४. डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर' (सं.) : हरिषेण कृत धम्मपरिक्खा, नागपुर, १९९०

९५. राकेश जैन शास्त्री, ब्र. हरिलाल जैन (अनुवाद) : मुनिवर रामसिंह रचित पाहुड दोहा, नागपुर, १९९२

९६. डॉ. रामसिंह तोमर (सं.) : स्वयम्भूदेव कृत रिट्ठणेमिचरिउ (हरिवंशपुराण), भा. १, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, ग्रन्थांक २५, अहमदाबाद, १९९३

९७. मुनि जिनविजय (सं.) : सोमप्रभाचार्य कृत कुमारपाल प्रतिबोध, संशोधित द्वितीयावृत्ति, वि. सं. २०५१

९८. बिन्दु भट्ट (अनुवाद) : ह. चू. भायाणी द्वारा सम्पादित सिद्धहेमगत अपभ्रंश व्याकरण (गुजराती से हिन्दी), अहमदाबाद, १९९४

९९. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री (सम्पादन, अनुवाद) : मुनि रामसिंह कृत पाहुड दोहा (प्रेस में)

१००. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री (सं.) : अपभ्रंश दोहा-कोश

१०१. डॉ. राजाराम जैन (सं.) : अणथमीकहा

भारत के बाहर के विश्वविद्यालयों से अपभ्रंश के स्वीकृत शोध-प्रबन्ध

१. आर. ओटो फ्रेंक : हेमचन्द्राज लिंगानुशासन विद द कमेण्ट्री, डी. फिल्. हेतु स्वीकृत शोध-प्रबन्ध, गॉटिंगन, १८८६

२. निकोलस मिर्नोव : द धर्मपरीक्षा : ए स्टडी इन द लिटरेचर एण्ड हिस्ट्री ऑव रिलीजन्स, स्ट्रासबर्ग विश्वविद्यालय से डी. फिल्. हेतु स्वीकृत शोध-प्रबन्ध, लिपजिग, १९०३

३. तुकाराम लद्दू : प्रोलागमेना टु त्रिविक्रमाज प्राकृत ग्रैमर, हॉल विश्वविद्यालय से डी. फिल्. उपाधि के लिए स्वीकृत, हॉल (जर्मन), १९१२

४. वाल्टर डेनेक : दिगम्बर टेक्स्टे, देयर लैंग्वेज प्रभृति, हम्बर्ग विश्वविद्यालय से डी. फिल्. उपाधि के लिए स्वीकृत, आइने दर्शटिलुंग इहरेर श्प्राख, हम्बर्ग यूनिवर्सिटी, १९२३, प्र. १९२५, उण्ड इहरेज इन्हाल्ट्स

५. लुडविग आल्सडोर्फ : द कुमारपाल प्रतिबोध : एन इण्ट्रोडक्शन टु अवर नॉलेज, अपभ्रंश एण्ड द स्टोरी लिटरेचर ऑव द जैनाज, हम्बर्ग यूनिवर्सिटी से डी. फिल्. उपाधि हेतु स्वीकृत, १९२८, प्र. १९३० (अल्ट-यु न्यू इण्डिश्चे स्टडियन २)

६. लुडविग आल्सडोर्फ : हरिवंशपुराण : ए पोर्सन ऑव द महापुराण ऑव पुष्पदन्त एण्ड इण्ट्रोडक्शन ऑव द स्टडी ऑव अपभ्रंश टेक्स्ट, बर्लिन विश्वविद्यालय से १९३५ में डी. फिल्. उपाधि हेतु स्वीकृत शोध-प्रबन्ध, हम्बर्ग, १९३६ (अल्ट-यु न्यू इण्डिश्चे स्टडियन ५)

७. क्लोस ब्रुहन : शीलांकाज चउपन्न-महापुरिसचरिय, हम्बर्ग विश्वविद्यालय से डी. फिल्. उपाधि के लिए स्वीकृत प्राकृत शोध-प्रबन्ध, १९५४

भारतीय विश्वविद्यालयों से अपभ्रंश के स्वीकृत शोध-प्रबन्ध

प्राकृत की अपेक्षा अपभ्रंश भाषा और साहित्य में शोध-कार्य अत्यन्त विलम्ब से हुआ। इसका मुख्य कारण यही कहा जा सकता है कि उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ होने तक अपभ्रंश-साहित्य की कोई भी स्वतन्त्र रचना प्रकाश में नहीं आयी थी। अतः प्राच्य विद्या-जगत् में विद्वान् यह धारणा बनाने लगे थे कि अपभ्रंश का साहित्य विलुप्त हो गया है। प्राकृत भाषा और साहित्य में शोध-कार्य का जन्म अर्नेस्ट ल्युमन के 'औपपातिकसुत्त' के १८९२ ई. में लिपजिग (जर्मन) से प्रकाशित होते ही प्रारम्भ हो जाता है। इस दिशा में प्रथम शोधोपाधि प्राप्त करने का श्रेय भी अर्नेस्ट ल्युमन को जाता है। अतः अपभ्रंश भाषा और साहित्य के जन्म की भाँति उसके अध्ययन और प्रकाशन का इतिहास भी प्राकृत भाषा और साहित्य से पूर्णतया सम्बद्ध है। यही कारण है कि निम्नलिखित विवरण में अपभ्रंश से सम्बन्धित प्राकृत के अध्ययन का भी उल्लेख किया गया है।

१. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये : श्री योगीन्दुदेवाज परमात्मप्रकाश एण्ड योगसार, बम्बई विश्वविद्यालय से डी. लिट्. उपाधि के लिए १९३६ में स्वीकृत शोध-प्रबन्ध, रायचन्द ग्रन्थमाला, आगास, १९३७, द्वितीय संस्करण १९६०, तृ. सं. १९७३

२. मधुकर अनन्त मेहण्डले : हिस्टारिकल ग्रैमर ऑव इन्स्क्रिप्शनल प्राकृत्स, बम्बई विश्वविद्यालय से १९४३ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, प्रकाशित, पूना, १९४८

३. हीरालाल जैन : अपभ्रंश स्टडीज, नागपुर विश्वविद्यालय से डी. लिट्. हेतु स्वीकृत, १६४४, अप्रकाशित

४. गजानन वासुदेव तगारे : हिस्टॉरिकल ग्रैमर ऑव अपभ्रंश, पी-एच. डी. उपाधि हेतु बम्बई विश्वविद्यालय से १६४६ में स्वीकृत तथा प्रकाशित, पूना, १६४८

५. रामसिंह तोमर : प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य और हिन्दी पर उसका प्रभाव, प्रयाग विश्वविद्यालय से १६५१ में डी. फिल्. हेतु स्वीकृत शोध-प्रबन्ध, प्रकाशित, इलाहाबाद, १६६४

६. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी : द पउमचरिउ ऑव स्वयम्भूदेव, बम्बई विश्वविद्यालय से १६५२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत शोध-प्रबन्ध, सिंधी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १६५३

७. श्रीमती रत्ना नागेश श्रियन : ए क्रिटिकल स्टडी ऑव महापुराण ऑव पुष्पदन्त, बम्बई विश्वविद्यालय से १६५२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, एल. डी. सीरीज, अहमदाबाद, १६६६

८. हरिवंश कोछड़ : अपभ्रंश साहित्य, दिल्ली विश्वविद्यालय से १६५२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, दिल्ली, १६५६

६. वामन महादेव कुलकर्णी : द स्टोरी ऑव राम इन जैना लिटरेचर एज प्रजेण्टेड वाय श्वेताम्बर एण्ड दिगम्बर इन द प्राकृत, संस्कृत एण्ड अपभ्रंश लैंग्वेजेज, बम्बई विश्वविद्यालय से १६५२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अहमदाबाद, १६६०

१०. के. बी. अभ्यंकर : द स्टोरी ऑव राम इन जैना लिटरेचर एज प्रजेण्टेड वाय श्वेताम्बर एण्ड दिगम्बर इन द प्राकृत, संस्कृत एण्ड अपभ्रंश लैंग्वेजेज, बम्बई विश्वविद्यालय से १६५२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११. धर्मवीर भारती : सिद्ध-साहित्य, प्रयाग विश्वविद्यालय से १६५३ में डी. फिल्. उपाधि हेतु स्वीकृत, इलाहाबाद, १६५५

१२. इन्द्रपाल सिंह : आदिकालीन हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, लखनऊ विश्वविद्यालय से १६५५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१३. देवेन्द्रकुमार जैन : अपभ्रंश भाषा और साहित्य, आगरा विश्वविद्यालय से १६५७ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, भारतीय ज्ञानपीठ, १६६५

१४. भालचन्द्रराव तैलंग : भारतीय आर्यभाषा परिवार की मध्यवर्तिनी देश भाषाओं की धाराएँ, नागपुर विश्वविद्यालय से १६५७ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१५. शिवप्रसाद सिंह : सूरपूर्व ब्रजभाषा और उसका साहित्य, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से १६५७ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, वाराणसी, १६६४

१६. अम्बादत्त पन्त : अपभ्रंश काव्य परम्परा और विद्यापति, आगरा विश्वविद्यालय से १६५८ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१७. राजकुमार जैन : आचार्य पुष्पदन्त : एक अध्ययन, आगरा विश्वविद्यालय से १६५६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१८. भोलाशंकर व्यास : प्राकृत पैंगलम्—ए टेक्स्ट ऑव प्राकृत एण्ड अपभ्रंश मीटर्स, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से १६५६ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी, १६५६, भा. २, १६६२

१६. हरिशंकर शर्मा : आदिकाल का हिन्दी जैन साहित्य, प्रयाग विश्वविद्यालय से १६५६ में डी. फिल्. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

२०. प्रेमसागर जैन : हिन्दी के भक्तिकाव्य में जैन साहित्यिकों का योगदान (वि. सं. १४००-१८००), आगरा विश्वविद्यालय से १६५६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १६६४

२१. मंगल विहारी शरण : सिद्धों की सन्ध्या भाषा, पटना विश्वविद्यालय से १६५६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, पटना, १६७३

२२. नेमिचन्द्र शास्त्री : हरिभद्र के प्राकृत कथा-साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन, भागलपुर विश्वविद्यालय से १६६१ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, वैशाली, १६६५

२३. धन्यकुमार जैन : जैन साहित्य का प्राचीन हिन्दी साहित्य पर प्रभाव, अलीगढ़ विश्वविद्यालय से १६६१ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

२४. वासुदेवसिंह : अपभ्रंश और हिन्दी के रहस्यवादी साहित्य का अध्ययन (१८वीं शती तक), आगरा विश्वविद्यालय से १६६२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

२५. ओमप्रकाश दीक्षित : जैन कवि स्वयम्भू कृत पउमचरिउ तथा तुलसी कृत रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन, आगरा विश्वविद्यालय से १६६२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

२६. गोवर्धन शर्मा : प्राकृत और अपभ्रंश—उनका डिंगल साहित्य पर प्रभाव, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से १६६२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, कानपुर, १६६५

२७. वीरेन्द्र श्रीवास्तव : अपभ्रंश भाषा का अध्ययन, पटना विश्वविद्यालय से १६६३ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, दिल्ली, १६६५

२८. राजनारायण पाण्डे : महाकवि पुष्पदन्त : दशमी शताब्दी के एक अपभ्रंश कवि, आगरा विश्वविद्यालय से १६६३ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, प्रकाशित

२६. देवनारायण शर्मा : पउमचरिउ और रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन,

विहार विश्वविद्यालय से १६६३ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, वैशाली, १६८१

३०. देवेन्द्रकुमार (जैन) शास्त्री : भविसयत्तकहा तथा अपभ्रंशकथाकाव्य, आगरा विश्वविद्यालय से १६६४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, भारतीय ज्ञानपीठ, १६७०

३१. राजाराम जैन : रइधू साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन, विहार विश्वविद्यालय से १६६४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, प्रकाशित, १६७१

३२. विधाता मिश्र : ए लिंग्विस्टिक स्टडी ऑव प्राकृत विथ स्पेशल रिफ्रेन्स टु हिन्दी, पटना विश्वविद्यालय से १६६४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

३३. सत्यरंजन बनर्जी : द ईस्टर्न स्कूल ऑव प्राकृत ग्रैमेरियन्स, कलकत्ता विश्वविद्यालय से १६६४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत

३४. तिश्योशी नारा : ए स्टडी ऑव अवहट्ठ एण्ड प्रोटो-बेंगाली कलकत्ता विश्वविद्यालय से १६६४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत

३५. संकटाप्रसाद उपाध्याय : महाकवि स्वयम्भू, आगरा विश्वविद्यालय से १६६५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, प्रकाशित, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ़, १६६६

३६. परममित्र शास्त्री : हेमचन्द्र के अपभ्रंश सूत्रों की पृष्ठभूमि और उनका भाषावैज्ञानिक अध्ययन, बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर से १६६५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

३७. नरेन्द्रप्रसाद वर्मा : अपभ्रंश के स्फुट साहित्यिक मुक्तक, विहार विश्वविद्यालय से १६६५ में पी-एच.डी. उपाधि हेतु स्वीकृत

३८. चंचल कुमारी : अपभ्रंश कथा-साहित्य का अध्ययन, शान्तिनिकेतन विश्वभारती से १६६५ में पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

३९. गजानन नरसिंह साठे : पउमचरिउ एवं रामचरितमानस का तुलनात्मक अध्ययन, बम्बई विश्वविद्यालय से १६६६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

४०. कृष्णचन्द्र आचार्य : ए क्रिटिकल एडीशन ऑव मार्कण्डेयाज प्राकृतसर्वस्व, उत्कल विश्वविद्यालय से १६६६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, अहमदाबाद, १६६८

४१. इन्द्रपाल सिंह : अपभ्रंश साहित्य में शृंगार, लखनऊ विश्वविद्यालय से १६६७ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

४२. एन. पी. शर्मा : अपभ्रंश के स्फुट साहित्यिक मुक्तक, बिहार विश्वविद्यालय

से १९६७ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

४३. विधातृ अविनाश बोरा : द डेवलपमेण्ट ऑव लेटर अपभ्रंश लिटरेचर इन वेस्टर्न इण्डिया, गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद से १९६७ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

४४. त्रिलोकीनाथ पाण्डेय : आदिकालीन हिन्दी काव्य में प्रयुक्त काव्यरूपों और छन्दयोजना का ऐतिहासिक और तुलनात्मक अध्ययन, कलकत्ता विश्वविद्यालय से १९६७ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

४५. विमलप्रकाश जैन : वीर कृत जम्बूसामिचरिउ का समालोचनात्मक अध्ययन, जबलपुर विश्वविद्यालय से १९६८ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, भारतीय ज्ञानपीठ, १९६८

४६. मुरारीमोहन सेनगुप्त : हिस्ट्री ऑव अपभ्रंश लैंग्वेज एण्ड लिटरेचर, जादवपुर विश्वविद्यालय से १९६८ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

४७. प्रेमचन्द जैन : अपभ्रंश कथाकाव्यों के शिल्प का हिन्दी प्रेमाख्यानक काव्यों के शिल्प पर प्रभाव, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से १९६९ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अमृतसर, १९७३

४८. कैलाशनाथ टण्डन : पुष्पदन्त की भाषा, लखनऊ विश्वविद्यालय से १९६९ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

४९. चन्द्रप्रकाश त्यागी : हिन्दी में प्रयुक्त देशी शब्दों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से १९६९ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, दिल्ली, १९७३

५०. सिद्धनाथ पाण्डे : अपभ्रंश कथासाहित्य का हिन्दी कथासाहित्य पर प्रभाव (१७वीं सदी तक), प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद से १९६९ में डी. फिल्. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

५१. मदनगोपाल शर्मा : सधारु कृत प्रद्युम्नचरित के विशेष सन्दर्भ में प्रद्युम्नचरितकाव्य का तुलनात्मक तथा आलोचनात्मक अध्ययन, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से १९६९ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

५२. रणजीतकुमार साहा : सिद्धों की अपभ्रंश कृतियों का अध्ययन, शान्तिनिकेतन विश्वभारती से १९६९ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

५३. जगदीशप्रसाद कौशिक : अपभ्रंश भाषा के विकासक्रम में पश्चिमी राजस्थानी, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से १९७० में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

५४. भगवतीप्रसाद मिश्र : जैन दोहाकाव्य : एक अध्ययन (वि. सं. ७५० से १३७५), बम्बई विश्वविद्यालय से १९७० में पी-एच. डी. उपाधि हेतु

स्वीकृत, अप्रकाशित

५५. सनतकुमार चुन्नीलाल रंगाटिया : ए स्टडी ऑव जैना रास लिटरेचर टिल फिफ्टीन्थ सेन्चुरी ए. डी., गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद से १६७० में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

५६. चन्द्रदेव रे : प्राकृत शिलालेखों का आलोचनात्मक अध्ययन, मगध विश्वविद्यालय से १६७० में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

५७. धन्नालाल जैन : करकण्डचरिउ—एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, (सन्दर्भ, वस्तु, शिल्प और भाषा) अहिल्यादेवी विश्वविद्यालय, इन्दौर से १६७० में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

५८. छोटेलाल शर्मा : प्राकृत रामकाव्य परम्परा, राजस्थान विश्वविद्यालय से १६७० में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

५६. सुभाषचन्द्र मिश्र : अपभ्रंश एवं हिन्दी की सन्धिकालीन कृतियों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन, जबलपुर विश्वविद्यालय से १६७१ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६०. शम्भुनाथ सिंह : प्राचीन भारत में काव्यरूपों का विकास और पुरानी हिन्दी के काव्यरूप, मगध विश्वविद्यालय से १६७१ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६१. एस. के. शाह : जैन परम्परा का रामकथा साहित्य : एक अनुशीलन, पूना विश्वविद्यालय से १६७१ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, प्रकाशित

६२. नथुनी सिंह : अपभ्रंश और हिन्दी काव्यरूपों का तुलनात्मक अध्ययन, मगध विश्वविद्यालय से १६७१ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६३. प्रमोदकुमार सिंह : अपभ्रंश के हैम मुक्तकों की अर्थ-योनियाँ, बिहार विश्वविद्यालय से १६७१ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६४. अपर बलराम : करकण्डचरिउ और मध्ययुगीन हिन्दी के प्रबन्धकाव्य : कथा-शिल्प की परम्परा का तुलनात्मक अध्ययन, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से १६७१ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६५. सूरजमुखी देवी जैन : अपभ्रंश का जैन रहस्यवादी साहित्य और उसका कबीर पर प्रभाव, आगरा विश्वविद्यालय से १६७२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६६. कु. कुसुमलता जैन : लीलावईकहा के विशेष सन्दर्भ में प्राकृत-कथाकाव्यों का आलोचनात्मक अध्ययन, अहिल्यादेवी विश्वविद्यालय, इन्दौर से १६७२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६७. नित्यानन्द मुद्गल : शौरसेनी अपभ्रंश और पश्चिमी हिन्दी की उत्पत्ति, आगरा विश्वविद्यालय से १६७२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६८. मदन पाण्डेय : अपभ्रंश के काव्यरूप और हिन्दी पर उनका प्रभाव, हिन्दू विश्वविद्यालय, बाराणसी से १६७२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६६. ओमप्रकाश शर्मा : अपभ्रंश के चरितकाव्य : एक अनुशीलन, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन से १६७२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

७०. शिवमूर्ति शर्मा : हेमचन्द्र की देशीनाममाला का आलोचनात्मक एवं ध्वन्यात्मक अध्ययन, प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद से १६७३ में डी. फिल्. उपाधि के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

७१. मानधाता राय : सूरसागर और प्राकृत-अपभ्रंश का कृष्ण साहित्य, हिन्दू विश्वविद्यालय, बाराणसी से १६७३ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

७२. योगेन्द्रनाथ शर्मा : पउमचरिउ और रामचरितमानस के नारी पात्रों का तुलनात्मक अध्ययन, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय से १६७३ में शोधोपाधि के लिए स्वीकृत, मेरठ, १६७६

७३. रामवरन पाठक : स्वयम्भू की भाषा, लखनऊ विश्वविद्यालय से १६७४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

७४. शान्ति जैन : जैन मिस्टिसिज्म, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर से १६७४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

७५. सूर्यनारायण पाण्डेय : चौदहवीं शताब्दी के अपभ्रंश हिन्दी-साहित्य में वर्णित भारत, प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद से १६७४ में डी. लिट्. उपाधि के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

७६. पुष्पलता जैन : हिन्दी के मध्यकालीन जैन काव्य में रहस्य भावना, नागपुर विश्वविद्यालय से १६७५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, लखनऊ, १६८५

७७. मुद्रिका जैन : स्टडी ऑव हेमचन्द्राज शब्दानुशासन, गुजरात विश्वविद्यालय से १६७५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

७८. सुकुमारी चतुर्वेदी : सिद्धहैमशब्दानुशासनगत अपभ्रंश का समग्र अनुशीलन और उसका हिन्दी पर प्रभाव, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन से १६७५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

७६. महेशी मलिक : पुष्पदन्त का रामकाव्य और कृष्णकाव्य—एक विश्लेषणात्मक अध्ययन, अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर से १६७५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८०. मदनलाल : हिन्दी रामकथा साहित्य के मुख्य पात्रों का संस्कृत, प्राकृत एवं

अपभ्रंश रामकथा साहित्य के पात्रों के साथ तुलनात्मक अध्ययन, पंजाब विश्वविद्यालय से १६७५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८१. कमला गुप्त : जम्बूसामिचरिउ : कथावस्तु का समग्र अनुशीलन, अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर से १६७५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८२. रामकिशोर : अपभ्रंश मुक्तक काव्य का हिन्दी मुक्तक काव्य पर प्रभाव, प्रयाग विश्वविद्यालय, इलाहाबाद से १६७५ में डी. फिल्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८३. नागेन्द्रनाथ उपाध्याय : तान्त्रिक बौद्ध सिद्धाचार्य कृष्णवज्रपाद की अपभ्रंश रचनाओं का अध्ययन एवं सम्पादन, कानपुर विश्वविद्यालय से १६७६ में डी. लिट्. उपाधि के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

८४. उषारानी : आदिकालीन साहित्य के काव्यरूप, मेरठ विश्वविद्यालय से १६७६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८५. लेखराज यादव : भविसयत्तकहा और पद्मावत की कथानक रूढ़ियाँ और काव्यरूढ़ियाँ, दिल्ली विश्वविद्यालय से १६७६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८६. सीताराम शर्मा : जैन परम्परा में रामकथा, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से १६७६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८७. सुरेन्द्रकुमार शर्मा : स्वयम्भू के पउमचरिउ के उपाख्यानों का रामायण एवं रामचरितमानस के साथ तुलनात्मक अध्ययन, मेरठ विश्वविद्यालय से १६७६ में पी-एच. डी. उपाधि के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

८८. गेंदालाल शर्मा : शौरसेनी अपभ्रंश एवं साहित्यिक ब्रजभाषा के व्याकरणिक रूपों का तुलनात्मक अध्ययन, आगरा विश्वविद्यालय से १६७७ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

८९. रिसालसिंह डवास : आदिकालीन हिन्दी साहित्य का शब्द-भण्डार, मेरठ विश्वविद्यालय से १६७७ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६०. गोविन्दप्रसाद शर्मा रजनीश : हिन्दी के आदिकालीन काव्यरूप : फाग, रास, चर्चरी और बारहमासा का साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन, आगरा विश्वविद्यालय से १६७७ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६१. उषा अग्रवाल : ए कम्पेरेटिव स्टडी ऑव द स्टोरी ऑव राम एज प्रजेण्टेड इन जैना संस्कृत, प्राकृत एण्ड अपभ्रंश लिटरेचर, मेरठ विश्वविद्यालय से १६७८ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

६२. एन. एल. रस्तोगी : ए क्रिटिकल एण्ड सोशलिस्टिक स्टडी ऑव वररुचीज प्राकृतप्रकाश, १६७८ में लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. उपाधि

के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

९३. रामनिवास गुप्ता : पउमचरिउ और उसका उत्तरकालीन हिन्दी चरितकाव्य पर प्रभाव, १९७९ में महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक द्वारा पी-एच. डी. की उपाधि के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

९४. एम. एल. गंगावत : आदिकालीन हिन्दी रास साहित्य : एक अध्ययन, १९८० में राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

९५. विद्यावती जैन : महाकवि सिंह और उनका पज्जुण्णचरिउ, १९८१ में मगध विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

९६. डी. बी. पठान : पुष्पदन्त एण्ड हिज वर्क्स इन अपभ्रंश, १९८१ में कोल्हापुर विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

९७. राधाकान्त मिश्र : लिंग्विस्टिक स्टडी ऑव ईस्टर्न अपभ्रंश विद स्पेशल रिफ्रेन्स टु द लैंग्वेज ऑव द सिद्धाज, १९८१ में उत्कल विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

९८. महेन्द्रपाल शास्त्री : हेमचन्द्र और पाणिनि का तुलनात्मक अध्ययन, १९८२ में दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, प्रकाशित

९९. सुदर्शन मिश्र : महाकवि पुष्पदन्त और उनका महापुराण : एक अध्ययन, १९८२ में बिहार विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, प्रकाशित, वैशाली, १९८७

१००. साध्वी साधना : अपभ्रंश जैन साहित्य एवं मानव मूल्य, १९८२ में मेरठ विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, प्रकाशित, नयी दिल्ली, १९९८

१०१. बाबूलाल सेठी : महाकवि पुष्पदन्त विरचित आदिपुराण, एक सांस्कृतिक अध्ययन, १९८२ में राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

१०२. सुनीता जैन : संस्कृत, प्राकृत एवं अपभ्रंश भक्तिकाव्य परम्परा में जैन कवियों का हिन्दी पद-साहित्य : एक समालोचनात्मक अध्ययन, १९८३ में बिहार विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच.डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

१०३. भानुप्रताप चौबे : सन्देशकाव्य-परम्परा और सन्देशरासक, १९८३ में हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

१०४. देवकुमार जैन : जोइन्दु की भाषा, १९८३ में रायपुर विश्वविद्यालय द्वारा पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, अप्रकाशित

१०५. अरुणकुमार सिंह : सन्देशरासक और पद्मावत का तुलनात्मक अध्ययन, बिहार विश्वविद्यालय से १९८३ में पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत, प्रकाशित,

वैशाली, १६६८

१०६. कैलाशनाथ टण्डन : अपभ्रंश के कवि, लखनऊ विश्वविद्यालय से १६८३ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१०७. राय हनुमानप्रसाद : अपभ्रंश महाकवि स्वयम्भू और उनका पउमचरिउ : काव्यशास्त्रीय एवं सांस्कृतिक अध्ययन, मगध विश्वविद्यालय, बोधिगया से १६८४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१०८. सुरेन्द्रबहादुर सिंह : अपभ्रंश मुक्तक काव्य परम्परा का हिन्दी मुक्तक काव्य पर प्रभाव, लखनऊ विश्वविद्यालय से १६८४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१०६. मो. यामीन : पउमचरिउ में लोकतत्त्व, गढ़वाल विश्वविद्यालय से १६८५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११०. योगेन्द्रनाथ मिश्रा : सन्देशरासक का भाषावैज्ञानिक अध्ययन, हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी से १६८६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१११. लताकुमारी पाण्डेय : अपभ्रंश कृष्णकाव्य के परिप्रेक्ष्य में सूरसागर, हिन्दू विश्वविद्यालय, बाराणसी से १६८६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११२. सुरेन्द्रकुमार जैन : पासणाहचरिउ : एक समीक्षात्मक अध्ययन, रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय से १६८६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११३. अलका प्रचण्डिया : अपभ्रंशकाव्य में लोकोक्तियाँ, मुहावरे और हिन्दी पर उनका प्रभाव, आगरा विश्वविद्यालय से १६८८ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११४. श्रीमती शान्तिब्रह्मचारी : अपभ्रंश कथानक रूढ़ियों के आलोक में अपभ्रंश के चरित काव्य, मगध विश्वविद्यालय से १६८८ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११५. आदित्य प्रचण्डिया : अपभ्रंश भाषा का पारिभाषिक कोश, आगरा विश्वविद्यालय से १६८८ में डी. लिट्. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११६. सदानन्द शाही : अपभ्रंश का धार्मिक मुक्तक काव्य और मध्यकालीन सन्तकाव्यधारा, गोरखपुर विश्वविद्यालय से १६८६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११७. गोदावरी नागवानी : सन्देशरासक में प्रयुक्त शब्दों का व्युत्पत्तिपरक अनुशीलन, रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर से १६८६ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११८. साध्वी अनुपमा श्री : जैन साहित्य (८०० ई. से १२०० ई. तक) का

अनुशीलन, चरितकाव्य के विशेष सन्दर्भ में, जोधपुर विश्वविद्यालय से १९९२ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

११९. सुदीप जैन : योगीन्दु : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, राजस्थान विश्वविद्यालय, से १९९४ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

१२०. श्रीमती सन्तोष गोधा : श्रीचन्द्र कृत दर्शनरत्नकरण्डकथा का सम्पादन एवं आलोचनात्मक अध्ययन, सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, से १९९५ में पी-एच. डी. उपाधि हेतु स्वीकृत, अप्रकाशित

अपभ्रंश विषयक प्रकाशित शोध-निबन्धों तथा पुस्तकों की सूची

१. होएफर : डे प्राकृत डिआलेक्टो लिब्रि दुओ, बर्लिन, १८३६

२. लासन : इन्स्टीट्यूलीओनेस लिंगुआए प्राकृतिकाए, बॉन, १८३७

३. डॉ. स्टीवेन्सन : आब्जर्वेशन ऑन द मराठी लैंग्वेज, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, न्यू सीरीज, लन्दन, जिल्द ७, पृ. ८४-९१, १८४१

४. Erlauterungen and Berichtegungen zu orientalischen schriftstellern, Von F. Tuch, Heft I. p. 57-65, 1846

५. स्पीगल : म्युंशनर गेलैर्ने आण्टसाइगन, १८४९

६. जे. स्टीवेन्सन डी. डी. : ए कम्पेरेटिव वोकेबुलरी ऑफ द नॉन-संस्कृत वोकेबुल्स ऑव द वर्नाक्युलर लैंग्वेजेज ऑव इण्यिआ, द जर्नल ऑव द बोम्बे ब्रान्च ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, जिल्द ४, सं. १५, पृ. ११७-१३१, १८५२

७. ई. बी. कॉवेल (सं.) : प्राकृत प्रकाश ऑव वररुचि, लन्दन, १८५४, द्वि. सं. १८६८

८. धनजीभाई फ्रेमजी : ऑन द ओरिजिन एण्ड आथेण्टिसिटी ऑव द एरियन फेमिली ऑव लैंग्वेजेज, बम्बई, १८६१

९. फ्रेडरिक हेग : वर्गलेचुंग डेस् प्राकृत उण्ड डेर रोमानिश्चनश्प्राखन, १८६९

१०. जॉन बीम्स : ऑन द ट्रीटमेण्ट ऑव द नेक्सस इन दे निओआर्यन लैंग्वेजेज ऑव इण्डिया, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, न्यू सीरीज, लन्दन, जिल्द ५, भाग १, पृ. १४९-१९३, १८७०

११. डॉ. अर्नेस्ट ट्रम्प : ग्रैमर ऑव दि सिन्धी लैंग्वेज कम्पेयर्ड विद द संस्कृत, प्राकृत एण्ड द कागनेट इण्डियन वर्नाक्युलर्स, १८७२ (मूल जर्मन, १८६१-६२)

१२. जॉन बीम्स : कम्पेरेटिव ग्रैमर ऑव द आर्यन लैंग्वेजेज ऑव इण्डिया, लन्दन, १८७२
१३. एफ. एस. गूज : ऑन द नॉन-आर्यन एलीमेण्ट इन हिन्दी स्पीचेज, द इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द १, पृ. १०३-१०६, ५ अप्रैल, १८७२
१४. डॉ. जे. एच. ब्युह्लर : द देशी शब्दसंग्रह ऑव हेमचन्द्र, द इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द २, भा. १८, पृ. १७-२१, जून, १८७३
१५. डॉ. जे. एच. ब्युह्लर : ऑन ए प्राकृत ग्लासरी इनटायटिल्ड पाइयलच्छी, द इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द ३, पृ. १६६-१६८, १८७४
१६. रिचर्ड पिशेल : डे ग्रैमेतिकिस् प्राकृतिकिस्, बर्लिन, १८७४
१७. ई. बी. कॉवेल : ए शार्ट इण्ट्रोडक्शन टु द आर्डनरी प्राकृत ऑव द संस्कृत ड्रामाज विद ए लिस्ट ऑव कामन इर्रेगुलर प्राकृत वर्ड्स लन्दन, १८७५
१८. ई. म्युलर : बाइत्रेगेत्सूर ग्रैमेतीक डेस जैन प्राकृत, बर्लिन, १८७६
१९. रिचर्ड पिशेल : हेमचन्द्राज ग्रैमेतिक डेर प्राकृत श्प्राखन (हेमचन्द्र का प्राकृत व्याकरण), २ जिल्दों में, हॉल, १८७७-१८८०
२०. राजेन्द्रलाल मित्र : ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑव संस्कृत मैन्युस्क्रिप्ट्स इन द लायब्रेरी ऑव द एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल, प्रथम भाग, कलकत्ता, १८७७
२१. आर. जी. भण्डारकर : विल्सन फिलोलॉजिकल लेक्चर्स, १८७७
२२. केपेल्लर : येनाएर लिटेराट्रत्साइटुंग, १८७७
२३. डॉ. जी. एच. ब्युह्लर (सं.) : पाइयलच्छीनाममाला (धनपाल), गॉटिंगन, १८७९
२४. हर्मन जेकोबी (सं.) : कल्पसूत्र, लिपजिग, १८७९
२५. फ्रायर : प्रोसीडिंग्स ऑव द एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल, १८७९
२६. एस. गोल्दश्मित्त : रावणवह या सेतुबन्ध (सम्पादित), स्ट्रासबर्ग, १८८०
२७. डॉ. रूडोल्फ हॉर्नले : द प्राकृतलक्षणम् एण्ड चण्डाज ग्रैमर ऑव द एन्शियेण्ट (आर्ष) प्राकृत, कलकत्ता, १८८०
२८. डॉ. रूडोल्फ हॉर्नले : ग्रैमर ऑव हिन्दी कम्पेयर्ड विद द अदर गौडियन लैंग्वेजेज, १८८०
२९. डॉ. रूडोल्फ हॉर्नले : कलेक्शन एण्ड क्लासिफिकेशन, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, जिल्द ६६, भा. १, १८८०
३०. रिचर्ड पिशेल : देशीनाममाला (सम्पादित), कील (जर्मन), १८८०, द इण्डियन एण्टिक्वेरी, अक्तूबर, १८८१
३१. अल्बर्ट वेबर : दस सप्तशतकम् डेस हॉल (गाथा सप्तशती, सम्पादित), लिपजिग, १८८१

३२. अल्बर्ट वेबर : इण्डिश स्टूडियन (INDISCHEN STUDIAN), १८८२
३३. डॉ. हॉर्नले : वेर्नॉन ऑव द नासिक इन्स्क्रिप्शन एण्ड द गाथा डायलेक्ट, द इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द १२, मई, १८८३
३४. ऋषिकेश शास्त्री (संकलयिता) : प्राकृत कल्पलतिका, कलकत्ता, १८८३
३५. जॉर्ज ग्रियर्सन : सेवन ग्रैमर्स ऑव द डायलेक्ट्स एण्ड सबडायलेक्ट्स ऑव द विहारी लैंग्वेज, लिंग्विस्टिक सर्वे ऑव इण्डिया, खण्ड १, कलकत्ता, १८८३
३६. शिवदत्त और परब : प्राकृतपिंगलसूत्राणि (सम्पादित), काव्यमाला सं. ४१, निर्णयसागर प्रेस, बम्बई, १८८४
३७. हर्मन जेकोबी : औसगेवेल्ते एर्सेलुंगेन इन महाराष्ट्री, त्सूर आइनफुहरुंग इन डेस स्टडियम डेस प्राकृत, लिपजिग, १८८६
३८. आर. ओटो फ्रेंके : हेमचन्द्राज लिंगानुशासन विथ द कमेण्ट्री, गॉटिंगन, १८८६
३९. वेबर : वर्जिश्चिनिस डेस संस्कृत उण्ड प्राकृत हेण्ड श्क्रिफ्टन डेर कोनिधिचन विब्लिओथेक त्सूर, बर्लिन, १८८६-१८९२
४०. श्रीधर आर. भण्डारकर : केटलॉग ऑव द कलेक्शन्स ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स डिपाजिटेड इन द डेक्कन कॉलेज, बम्बई, १८८८
४१. दुर्गाप्रसाद और परब (सं.) : गाथा सप्तशती, काव्यमाला सीरीज सं. २१, बम्बई, १८८९
४२. पश्चिम हिन्दुस्ताननी भाषाओ, बुद्धिप्रकाश (गुजराती में), जिल्द ३७, सं. ९, पृ. २१७-२२४, सित. १८९०; जिल्द ३७, सं. १०; जिल्द ३७, सं. ११; जिल्द ३७, सं. १२; क्रमशः पृ. २५५-२६१, अक्टू. १८९०; पृ. २८०-२८२, नव. १८९०; पृ. ३११-३१३, दिस. १८९०
४३. पश्चिम हिन्दुस्ताननी भाषाओ, बुद्धिप्रकाश (गुजराती में), जिल्द ३८, सं. १; ३८, सं. ४; ३८, सं. ५; क्रमशः पृ. २२-२४, जनवरी, १८९१; पृ. ७८-८१, अप्रैल १८९१; पृ. ११०-११२, मई, १८९१
४४. भण्डारकर : लिस्ट्स ऑव संस्कृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन प्रायवेट लाइब्रेरीज इन द बोम्बे प्रेसिडेन्सी, भा. १, बम्बई, १८९३
४५. कील हॉर्न (सं.) : नचरी चेटन वन डेर कोनिग्ल, गेसेलशिफ्ट डेर बिशेनरफ्टन जु, गोटिंगन, १८९३
४६. जेकब वाकरनागल : एल्टइण्डिशे ग्रैमेतीक, १८९६; द्वितीय जिल्द, १९०५; तृतीय जिल्द, १९३०
४७. ई. ल्युमन : ए लिस्ट ऑव द मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द लाइब्रेरी एट स्ट्रासबर्ग वियेना, ओरियण्टल जर्नल, जिल्द ११, पृ. २७९, १८९७
४८. केटलाग ऑव प्रिण्टेड बुक्स एण्ड मेन्युस्क्रिप्ट्स इन संस्कृत बिलोंगिंग ऑव द

एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल, कलकत्ता, १८६६
४६. केटलाग ऑव संस्कृत मैन्युस्क्रिप्ट्स इन द संस्कृत कॉलेज लाइब्रेरी बनारस, इलाहाबाद, १८६६
५०. रिचर्ड पिशेल : ग्रैमेतीक डेर प्राकृत-श्प्राखन, स्ट्रासवर्ग, १६००
५१. कोनो स्टेन : कर्पूरमंजरी, हार्डवर्ड ओरियण्टल सीरीज, जिल्द ४, १६०१
५२. रिचर्ड पिशेल : माटेरिआलिएन् त्सूर केण्टनिस् डेस् अपभ्रंश, वर्लिन, १६०२
५३. चन्द्रमोहन घोष (सं.) : प्राकृतपैंगलम् विब्लिओथिका इण्डिका, १६०२
५४. निकोलस मिरनोव : द धर्मपरीक्षा—ए स्टडी इन द लिटरेचर एण्ड हिस्ट्री ऑव रिलीजन्स, लिपजिग, १६०३
५५. कीथ : द डेवलपमेण्ट ऑव संस्कृत लैंग्वेज, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन, १६०६
५६. ग्युरिनॉट : एसे डि बिब्लियाग्राफि जैन, पेरिस, १६०६
५७. सर जॉर्ज ग्रियर्सन : द पैशाची लैंग्वेजेज ऑव नॉर्थ-वेस्टर्न इण्डिया, एशियाटिक सोसायटी मोनोग्राफ्स, जिल्द ८, १६०६, प्रथम संस्करण, लन्दन, १६०६, द्वितीय संस्करण, फरवरी १६६६, दिल्ली
५८. एल. डी. बर्नेट : ए सप्लीमेण्टरी केटलाग ऑव संस्कृत, पाली एण्ड प्राकृत बुक्स इन द लाइब्रेरी ऑव द ब्रिटिश म्यूजियम एक्वायर्ड ड्यूरिंग द इयर्स १८६२-१६०६, लन्दन, १६०८
५६. ई. हल्टज्श्च (सं.) : सिंहराज का प्राकृत रूपावतार, रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन, १६०६
६०. जेडश्क्रिफ्ट डेट ड्यूशेन मोर्गेनलेण्डिशेन गैशामशन ४२ बीजवेडेन
६१. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : द माडर्न इण्डो-आर्यन पोलाइट इम्पेरेटिव, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, न्यू सीरीज, लन्दन, पृ. १६२-१६३, १६१०
६२. स्टेन कोनो : द होम ऑव पैशाची, पृ. ६५-११८, लिपजिग १६१०, ZDMG.Bd 64
६३. द संस्कृत एण्ड प्राकृत मैन्युस्क्रिप्ट्स इन द आड्यार लाइब्रेरी, मद्रास, १६११
६४. पं. नाथूराम प्रेमी : दिगम्बर जैन ग्रन्थकर्ता और उनके ग्रन्थ, बम्बई, १६११
६५. जी. ए. ग्रियर्सन : पैशाची, पिशाचाज एण्ड 'मॉडर्न पिशाच', पृ. ४६-८६, लिपजिग, १६१२, ZDMG.Bd 66
६६. डॉ. लुइगी सुआली : ऑन एन इण्टेण्डेड प्राकृत डिक्शनरी, पृ. ५४४-५४८, लिपजिग, १६१२, ZDMG.Bd 66
६७. एफ. ई. पार्जिटर : चूलिका पैशाचिक प्राकृत, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, न्यू सीरीज लन्दन, पृ. ७११-७१३, १६१२

६८. जॉर्ज ग्रियर्सन : द डिरिवेशन ऑव पैशाची एण्ड इट्स रिलेशन टु अदर लैंग्वेजेज, जर्नल ऑव द जर्मन ओरियण्टल सोसायटी, १९१२
६९. भट्टनाथ स्वामिन् (सं.) : मार्कण्डेय का प्राकृतसर्वस्व, विजगापट्टम, १९१२
७०. तुकाराम लद्दू : त्रिविक्रम के प्राकृत व्याकरण की भूमिका (शोध प्रबन्ध), हॉल, १९१२
७१. पीटर्सन : वैदिक संस्कृत एण्ड प्राकृत, जर्नल ऑव द अमेरिकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ३२, पृ. ४२३, १९१२
७२. हर्मन जेकोबी : प्राकृत देर जेन्स, उबर आइने नीब सन्धिरीगल इन पाली उण्ड इन, उण्ड उबर द बेटोमिंग इण्डिश्चन श्प्राख़न, केस्टगवे डेलब्रुक स्मृतिग्रन्थ, स्ट्रासवर्ग, पृ. २११-२२१, १९१२-१३ ई.
७३. प्राकृतमंजरी (कात्यायन), निर्णय सागर-प्रेस, बम्बई, १९१३
७४. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : द प्रोननसिएशन ऑव प्राकृत पेलेटल्स, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, न्यू सीरीज, लन्दन, पृ. ३९१-३९५, १९१३
७५. जॉर्ज ग्रियर्सन : अपभ्रंश एकोर्डिंग टु मार्कण्डेय एण्ड ढक्की प्राकृत, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन, पृ. ८७५-८८४, १९१३
७६. डॉ. एल. पी. टेस्सिटोरी : ओरिजिन ऑव द डेटिव एण्ड जेनेटिव एण्ड डेटिव-पोस्ट-पोजीशन इन गुजराती एण्ड मारवाड़ी, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन, १९१३
७७. एम. विण्टरनित्स : गेश्चटे डेर इण्डिश्चन लिटरेचर, २ बण्ड, १९१३, लिपजिग, १९२०, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, पृ. ९९१-१००२
७८. आचार्य विजयराजेन्द्रसूरि : अभिधान राजेन्द्र कोश, ४ भाग, १९१३, पंचम भाग १९२१, षष्ठ-सप्तम भाग १९३४
७९. एल. पी. टेस्सिटोरी : ऑन द ओरिजिन ऑव द परफेक्ट पार्टिसिपल्स इन एल इन द न्यू-इण्डो वर्नाक्युलर्स, पृ. ५७१-५७८, जेड. डी. एम. जी., १९१४
८०. चिमनलाल डाह्याभाई दलाल : पाटणना भण्डारो अने खास करीनो तेमां रहेलुं अपभ्रंश तथा प्राचीन गुजराती साहित्य, लाइब्रेरी मिसेलेनी, सितम्बर, १९१४
८१. हर्मन जेकोबी : विमलसूरि का पउमचरिउ, भावनगर, १९१४
८२. सुदर्शन शास्त्री : अपभ्रंश वर्सेज इन दशरूप, गुजराती प्रिण्टिंग प्रेस, बम्बई, १९१४
८३. डॉ. एल. पी. टेस्सिटरी : नोट्स ऑन द ग्रैमर ऑव द ओल्ड वेस्टर्न राजस्थानी विद स्पेशल रिफ्रेन्स टु अपभ्रंश एण्ड गुजराती एण्ड मारवाड़ी, इण्डियन एण्टिक्वेरी, १९१४-१६
८४. आर. एल. टर्नर : द इण्डो-आर्यन नसल्स इन गुजराती, द जर्नल ऑव द

रॉयल एशियाटिक सोसायटी, न्यू सीरीज, लन्दन, पृ. १७-३४, १९१५
८५. आर. एल. टर्नर : द इण्डो-जर्मेनिक एक्सेण्ट इन मराठी, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, न्यू सीरीज, लन्दन, पृ. २०३-२५१, १९१६
८६. रायबहादुर कमलाशंकर प्राणशंकर त्रिवेदी (सं.) : षड्भाषाचन्द्रिका, बम्बई, १९१६
८७. म. म. हरप्रसाद शास्त्री : बौद्धगान ओ दोहा, वंगीय साहित्य परिषद्, कलकत्ता, १९१६
८८. डब्ल्यू. गाइगर : पालि लिटरेचर उण्ड श्प्राख, स्ट्रासवर्ग, १९१६
८९. पं. नाथूराम प्रेमी : हिन्दी जैन साहित्य का इतिहास, बम्बई, १९१७
९०. बाबू जुगलकिशोर मुख्तार : प्राकृत आदि पुराण, जैन हितैषी, भाग १३, अंक ३, पृ. १०३-१०७, मार्च, १९१७
९१. अमृत के. रो : द द्राविडियन एलीमेण्ट्स इन प्राकृत, इण्डियन एण्टिक्वेरी ४६, पृ. ३३-३६, १९१७
९२. जॉर्ज ग्रियर्सन : द प्राकृत विभाषाज, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, न्यू सीरीज, लन्दन, पृ. ४८९-५१७, १९१८
९३. हर्मन जेकोबी : भविसयत्तकहा सम्पादित, मंचन (जर्मनी), १९१८
९४. पी. डी. गुणे : द संजममंजरी ऑव महेसरसूरि, एनल्स ऑव द भण्डारकर रिसर्च इन्स्टिट्यूट, पूना, जिल्द १, पृ. १५७-१६६, १९१८
९५. मोहनलालजी जैन भण्डार-सूची, प्रकाशक : झवेरचन्द, गोपीपुरा, सूरत, १९१८
९६. जॉर्ज ग्रियर्सन : एन एरेबिक वर्ड केटेड बाय हेमचन्द्र—ए नोट, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन, १९१९
९७. सुपार्श्वदास गुप्त (सं.) : ए केटलॉग ऑव संस्कृत, प्राकृत एण्ड हिन्दी वर्क्स इन द जैन सिद्धान्त भवन, आरा, १९१९
९८. विल्हेम प्रिण्ट्ज : भासाज प्राकृत, फ्रेंकफुर्त, १९१९
९९. जैन ग्रन्थावली, प्रकाशक : श्री जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स, बम्बई, वि. सं. १९६५
१००. मुनि जिनविजय (सं.) : कुमारपालप्रतिबोध, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, सेण्ट्रल लायब्रेरी, बड़ोदा, १९२०
१०१. जूल्स ब्लॉख : ला फार्मेशन डी ला लेंग्वे मराठी, पेरिस, १९२०
१०२. पं. लालचन्द्र भगवान गाँधी : प्राचीन गुर्जरकाव्यसंग्रह, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ोदा, १९२०
१०३. आर. एल. टर्नर : गुजराती फोनोलॉजी, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, न्यू सीरीज, लन्दन, पृ. ३२२-३६५, ५०५-५४४, १९२१

१०४. एन. बी. दिवेतिया : गुजराती लैंग्वेज एण्ड लिटरेचर, पूना, १९२१
१०५. डॉ. बेनीमाधव बरुआ (सं.) : प्राकृत धम्मपद, कलकत्ता, १९२१
१०६. हर्मन जेकोबी (सं.) : सणयकुमारचरिउ, म्यूनिख (जर्मनी), १९२१
१०७. मुनि जिनविजय (सं.) : प्राकृत कथासंग्रह, अहमदाबाद, वि. सं. १९७८
१०८. सर जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : द अपभ्रंश स्तबकाज ऑव रामशर्मन्, द इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द ५१, जनवरी, १९२२
१०९. सर जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : स्पाण्टेनियस नसलाइजेशन इन द इण्डो-आर्यन लैंग्वेजेज, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, पृ. ३८१-३८८, १९२२
११०. पं. पन्नालाल सोनी (सं.) : सिद्धान्तसारादि संग्रह, माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १९२२
१११. अनन्तप्रसाद बनर्जी शास्त्री : इवोल्युशन ऑव मागधी, ऑक्सफोर्ड, १९२२
११२. पं. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी : पुरानी हिन्दी, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भाग २, पृ. ४-५६, १२१-१५८, २४१-२४६, ३७१-४६२, वि. सं. १९७८, प्रकाशित पुस्तक रूप में, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, वि. सं. २००५
११३. बाबू पूर्णचन्द्र नाहर : प्राचीन जैन हिन्दी साहित्य, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, नवीन संस्करण, भा. २, पृ. १७१-१८८, वि. सं. १९७८
११४. हर्मन जेकोबी : जूर फ्राग नाक डेम उरस्प्रंग डेस अपभ्रंश, प्रकाशित (फेस्टगिश्फ्ट जे. वाकरनागल), पृ. १२४-१३१, गॉटिंगन, १९२३
११५. सी. डी. दलाल तथा पी. डी. गुणे (सं.) : भविसयत्तकहा गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ोदा, १९२३
११६. वाल्टेर डेनेक : दिगम्बर टेक्स्टे : आइने दर्शटेलुंग इहरेर श्प्राख, उण्ड इहरेज इन्हाल्ट्स, हम्बर्ग, १९२३, प्र. १९२५
११७. धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी की पूर्ववर्ती आर्यभाषाएँ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ४, अंक ४, पृ. ३७६-३९०, माघ सं. १९८०
११८. दलाल और लालचन्द्र भ. गाँधी (सं.) : केटलॉग ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स इन जेसलमेर भण्डाराज, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज सं. २१, बड़ोदा, १९२३
११९. मुनिश्री रत्नचन्द्र (सं.) : अर्द्धमागधी कोष, भा. १ (१९२३), भा. २, (१९२७), भा. ३ (१९३०), भा. ४ (१९३२), भा. ५ (१९३८)
१२०. पं. नाथूराम प्रेमी : महाकवि पुष्पदन्त और उनका महापुराण, जैन साहित्य संशोधक, खण्ड २, अंक १, पृ. ५७-८०, जुलाई, १९२३
१२१. जॉर्ज ग्रियर्सन : प्राकृत धात्वादेश, मेमोरीज ऑव द एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल, जिल्द ८, सं. २, पृ. ७७-१७०, १९२४

१२२. आर. श्मिदित : एलीमेण्टर बुक डेर शौरसेनी, हनोवर, १६२४
१२३. बाबू सत्यजीवन वर्मा : हिन्दी के कारक-चिह्न, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ५, अंक ४, पृ. ३६५-४३६, माघ सं. १६८१
१२४. लिस्ट्स ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स कलेक्टेड फॉर द गवर्नमेण्ट मेन्युस्क्रिप्ट्स लायब्रेरी, भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, १६२५
१२५. जॉर्ज ग्रियर्सन : द ईस्टर्न स्कूल ऑव प्राकृत ग्रैमेरियन्स एण्ड पैशाची प्राकृत, सर आशुतोष मुकर्जी सिलवर जुबिली, जिल्द ३, भाग २, पृ. ११६-१४१, कलकत्ता, १६२५
१२६. सत्यरंजन बनर्जी : द द्राविडियन एफीनिटीज ऑव द पैशाच लैंग्वेजेज ऑव नॉर्थ-ईस्टर्न इण्डिया, सर आशुतोष मुकर्जी सिलवर जुबिली वाल्यूम ३, भा. २, पृ. ४२७-४३२, कलकत्ता, १६२५
१२७. पं. बेचरदास दोशी : प्राकृत व्याकरण, अहमदाबाद, वि. सं. १६८१
१२८. हीरालाल जैन : अपभ्रंश लिटरेचर, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी स्टडीज, भाग १, पृ. १५७-१८५, १६२५
१२६. डॉ. वी. एस. सुकठंकर : ऑन द प्राकृत ऑव द भास ड्रामाज, जर्नल ऑव द बोम्बे ब्रान्च रॉयल एशियाटिक सोसायटी, १६२५
१३०. ई. हल्टजश्च : इन्शक्रिपशन्स ऑव अशोका, जिल्द १, ऑक्सफोर्ड, १६२५
१३१. रायबहादुर हीरालाल : केटलॉग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द सी. पी. एण्ड बरार, नागपुर, १६२६
१३२. रायबहादुर हीरालाल : हिन्दी के शिला और ताम्र लेख, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ६, अंक १, पृ. १-१२, वैशाख, वि. सं. १६८२
१३३. वाल्टर शुब्रिंग : प्राकृत डिचटुंग उण्ड प्राकृत ग्रैमेतीक (जर्मन), एफ. स्टेग्वे जेकोबी, पृ. ८६-६७, बॉन (जर्मनी) १६२६
१३४. बाबू सत्यजीवन वर्मा : अपभ्रंश भाषा, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ६, अंक १, पृ. ३३-४१, वैशाख, वि. सं. १६८२
१३५. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : द ओरिजिन एण्ड डेवलपमेण्ट ऑव बेंगाली लैंग्वेज, जिल्द १, २, कलकत्ता, १६२६
१३६. पी. एल. वैद्य : आब्जर्वेशन्स ऑन हेमचन्द्राज देशीनाममाला, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, जिल्द ८, भाग १, पृ. ६३-७१, अप्रैल, १६२६-२७
१३७. आर. एल. टर्नर : नोट्स ऑन दर्दिक, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑफ ओरियन्टल आफ्रीकन स्टडीज, जिल्द ४, पृ. ५३३-५४२, १६२६-२८
१३८. मोहनलाल दलीचन्द देसाई : जैन गुर्जर कविओ, भाग १, १६२६, द्वितीय भाग, १६३१

१३६. लालचन्द्र भ. गाँधी : अपभ्रंश-काव्यत्रयी, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ोदा, १६२७
१४०. आर. एल. टर्नर : द फोनेटिक वीकनेस ऑव टर्मिनेशनल एलीमेण्ट्स इन इण्डो-आर्यन, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन, पृ. २२७-२३६, १६२७
१४१. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : लिंग्विस्टिक सर्वे ऑव इण्डिया, जिल्द १, भाग १, १६२७
१४२. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : भाषा एण्ड विभाषा, इण्डियन एण्टिक्वेरी, १६२७-२८
१४३. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : शौरसेनी एण्ड मागधी स्तबकाज, इण्डियन एण्टिक्वेरी, १६२७-२८
१४४. प्राकृत षोडशकारण जयमाला, जैन साहित्य मन्दिर, सागर, वि. सं. १६८३
१४५. ए. सी. वुलनर : इण्ट्रोडक्शन टु प्राकृत, लाहौर, १६१७, द्वि. सं. १६२८, तृ. सं. १६३६, पुनर्मुद्रित दिल्ली, १६७५, १६८६
१४६. ए. सी. वुलनर : प्राकृतिक एण्ड नॉन-आर्यन स्ट्रेटा इन द वोकेबुलरी ऑफ संस्कृत, आशुतोष मेमोरियल वाल्यूम, पटना, १६२८
१४७. डॉ. पी. एल. वैद्य : हेमचन्द्र-प्राकृत व्याकरण, पूना, १६२८
१४८. एल. आल्सडोर्फ : डेर कुमारपाल प्रतिबोध, हम्बर्ग (जर्मनी), १६२८
१४६. एच. डी. वेलणकर : वैराग्यसार ऑव सुप्रभाचार्य, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, जिल्द ६, पृ. २७२-२८०, १६२८
१५०. के. आर पिशरोती : संस्कृत एण्ड प्राकृत इन द आर्य टळुधु—ए नोट, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल अफ्रीकन स्टडीज, जिल्द ५, पृ. ३०७-३१०, १६२८-३०
१५१. काशीप्रसाद जायसवाल : पुरानी हिन्दी का जन्म-काल, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ८, अंक २, पृ. २१६-२२७, श्रावण, वि. सं. १६८४
१५२. एम. शहीदुल्ला : लेस चाण्ट्स मिस्टिक्स डे कण्ह एट डे सरह, पेरिस, १६२८
१५३. पं. हरगोविन्ददास त्रिकमचन्द सेठ : पाइअ-सद्दमहण्णवो, कलकत्ता, १६२८, द्वि. सं. १६६३
१५४. ज्यूल ब्लॉख : सम प्राब्लेम्स ऑव इण्डो-आर्यन फिलोलॉजी, बुलेटिन, ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, जिल्द ५, पृ. ७१६-७५६, १६२८-३०
१५५. स्टेन कोनो : खरोष्ट्री इन्स्क्रिप्शन्स, १६२६
१५६. डॉ. बाबूराम सक्सेना (सं.) : कीर्तिलता, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, १६२६
१५७. सिद्धेश्वर वर्मा : क्रिटिकल स्टडीज इन द फोनेटिक ऑब्जर्वेशन्स ऑव

इण्डियन ग्रैमेरियन्स, प्र. सं. १६२६, भारतीय संस्करण, दिल्ली, १६६१
१५८. जॉर्ज ग्रियर्सन : द प्राकृत धात्वादेश एकार्डिंग टु द वेस्टर्न एण्ड द ईस्टर्न स्कूल्स ऑव प्राकृत ग्रैमेरियन्स, मेमोरिज ऑव द एशियाटिक सोसायटी ऑव बेंगाल, जिल्द ८, सं. २, पृ. ७७-१७०, १६२६
१५६. पी. वी. रामानुजस्वामी : स्व. डॉ. टी. के. लद्दू द्वारा लिखित इण्ट्रोडक्शन टु त्रिविक्रम प्राकृत ग्रैमर का अनुवाद, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द १०, भा. ३-४, पृ. १७७-२१८, अप्रैल, १६२६
१६०. मुनिश्री चतुरविजय (सं.) : लींबडीना जैन ज्ञानभण्डारनी हस्तलिखित सूची, आगमोदय समिति, सूरत, बम्बई, वि. सं. १६८५
१६१. नारायण बापूजी उतगीकर (सं.) : द प्राकृत्स एण्ड द अपभ्रंश कलेक्टेड वर्क्स ऑव सर आर. जी. भण्डारकर, जिल्द ४, पृ. ३१६-३७३, पूना, १६२६
१६२. एम. सी. मोदी : भावनासन्धिप्रकरणम् ऑव जयदेव मुनि (एन अपभ्रंश पोइट्री), एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टूट्यूट, जिल्द ११, भाग १, पृ. १-३१, पूना, १६३०
१६३. केशवप्रसाद मिश्र : डॉ. कीथ ऑन अपभ्रंश, इण्डियन एण्टिक्वेरी, भाग ५६, पृ. १-५, १६३० तथा नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ५६, अंक १, पृ. ३८७-६८
१६४. ज्यूल ब्लॉख : फोरलान लेक्चर्स, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल स्टडीज, ५, ४, लन्दन, १६३०
१६५. ज्यूल ब्लॉख : सम प्रोब्लेम्स ऑव इण्डो-आर्यन फिलालॉजी, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल स्टडीज, लन्दन, १६३०
१६६. एच. डी. वेलणकर : केटलाग ऑव प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स, जिल्द, ३-४, बम्बई, १६३०
१६७. रामलाल चूनीलाल मोदी : पाटणना ग्रन्थकारो, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), जिल्द ७७, सं. २, पृ. ३३-४१, फरवरी, १६३०
१६८. चतुरभाई पुरुषोत्तमदास पटेल : केटलाक नानार्थ शब्दोनी व्युत्पत्ति, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), जिल्द ७८, सं. १०, पृ. ३०१, ३०३, अक्तूबर, १६३१
१६६. प्रो. एम. बी. एमेन्यु : कन्फ्यूजन इन प्राकृत बिटवीन द संस्कृत प्रि-पोजीशन्स प्रति एण्ड परि, जर्नल ऑव अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, ५१, पृ. ३३-३६, १६३१
१७०. सत्यजीवन वर्मा : पैशाची भाषा, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ११, अंक १, पृ. ३५-७४, बैशाख, वि. सं. १६८७
१७१. रायबहादुर हीरालाल : देशभाषा, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भाग ११, अंक

४, पृ. ४३६-४४३, माघ, वि. सं. १६८७
१७२. एच. आर्टेल : प्राकृतिज्म इन छान्दोग्योपनिषद्, गाइगर फेलेशियन वाल्यूम, लिपजिग (जर्मनी), १६३१
१७३. मुरलीधर बनर्जी (सं.) : द देशीनाममाला ऑव हेमचन्द्र, कलकत्ता, १६३१
१७४. डॉ. परशुराम लक्ष्मण वैद्य : जसहरचरिउ, जैन सीरीज जिल्द १, कारंजा, १६३१
१७५. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : जोइन्दु एण्ड हिज अपभ्रंश वर्क्स, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द १२, भाग २, पृ. १३२-६३, १६३१ तथा—कोल्हापुर, १६३१
१७६. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : कनारीज वर्ड्स इन देशी लेक्सिकन्स, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द १२, भाग ३, पृ. २७४-८४, १६३१
१७७. डॉ. आ. ने. उपाध्ये : योगीन्द्रदेव का एक और अपभ्रंश ग्रन्थ, अनेकान्त, १, ८-१०, पृ. ५४४-५४८, वि. सं. १६८७
१७८. एस. स्मिथ : देजीनांस दु तीप अपभ्रंश ओ पाली, बी. एस. एल., ३३, पृ. १६६-७२
१७९. जॉर्ज ए. ग्रियर्सन : ऑन द माडर्न इण्डो-आर्यन वर्नाक्यूलर्स, इण्डियन एण्टिक्वेरी, सप्लीमेण्ट, १६३१-१६३३
१८०. मुनि चतुरविजय (सं.) : जैन स्तोत्र संदोह, प्रथम भाग (पृ. ३४०-३४५ सीमन्धर जिनस्तवन), अहमदाबाद, १६३२
१८१. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : शुभचन्द्र एण्ड हिज प्राकृत ग्रैमर, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द १३, भाग १, पृ. ३७-५८, पूना, १६३२
१८२. हीरालाल जैन (सं.) : सावयधम्मदोहा, जैन सीरीज जिल्द २, कारंजा, १६३२
१८३. चतुरभाई पुरुषोत्तमदास पटेल : केटलाक नानार्थ शब्दोनी व्युत्पत्ति, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), जिल्द ७६, सं. ४, पृ. १०६-१०९, अप्रैल, १६३२, जिल्द ७६, सं. ५-६, पृ. १४७-१४६, मई-जून, १६३२
१८४. मनमोहन घोष : महाराष्ट्री, ए लेटर फेज ऑव शौरसेनी, जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द २३, पृ. १-२४, १६३३
१८५. मधुसूदन चिमनलाल मोदी : जूना गुजराती दूहा, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), पु. ८०, सं. १-३, पृ. ७१-८४, जनवरी-मार्च, १६३३, पुस्तक ८०, सं. ४-६, पृ. १८८-२०५, अप्रैल-जून, १६३३
१८६. हीरालाल जैन (सं.) : मुनि रामसिंह कृत पाहुडदोहा, कारंजा जैन सीरीज, ग्रन्थ ३, १६३३

१८७. हीरालाल जैन (सं.) : णायकुमारचरिउ, कारंजा जैन सीरीज, १६३३, द्वि. सं., भारतीय ज्ञानपीठ, १६७२

१८८. एच. डी. वेलणकर : अपभ्रंश मीटर्स, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बोम्बे, २, नवम्बर, १६३३

१८६. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : सिण्टेक्टिक पोजीशन ऑव प्रि-पोजीशन इन अर्द्धमागधी, इण्डियन हिस्टारिकल क्वार्टरली, ६. ४, पृ. ६८७-८८, १६३३

१६०. मुनि जिनविजय (सं.) : मेरुतुंगाचार्य रचित प्रबन्धचिन्तामणि, शान्तिनिकेतन, वि. सं. १६८६

१६१. एन. बी. दिवेतिया : नागर अपभ्रंश एण्ड नागरी स्क्रिप्ट, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द १४, भाग १-२, पृ. १०३-१२५, १० जनवरी, १६३३

१६२. डॉ. आल्सडोर्फ : जिट्स्क्रिफ्ट फुर इण्डोलॉजिक एण्ड ईरानिस्टिक, लिपजिग (जर्मनी), १६३३

१६३. बी. जे. चोकसी : द विबागसुयम् एण्ड कम्पेरेटिव प्राकृत ग्रैमर, अहमदाबाद, १६३३

१६४. एम. विण्टरनित्स : ए हिस्ट्री ऑव इण्डियन लिटरेचर, जिल्द २, कलकत्ता, १६३३

१६५. एच. डी. वेलणकर : छन्दकोश ऑव रत्नशेखरसूरि, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बोम्बे, २,३, पृ. ५४-६०, नवम्बर, १६३३

१६६. मोहनलाल दलीचन्द देसाई : जैन साहित्यनो संक्षिप्त इतिहास, बम्बई, १६३३

१६७. पी. एल. वैद्य : द अपभ्रंश लैंग्वेज ऑव द टेन्थ सेन्चुरी एण्ड इट्स इन्फ्लुयैन्स ऑन मराठी लैंग्वेज, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बोम्बे, भा. १-६, पृ. २१८-२२३, मई, १६३३

१६८. डॉ. प्रबोधचन्द्र बागची : मेटेरियल्स फॉर ए क्रिटिकल एडीशन ऑव द ओल्ड बेंगाली चर्यापदाज, जर्नल ऑव द डिपार्टमेण्ट्स ऑव लेटर्स, भाग २८, ३०, १६३३

१६६. एम. घोष. : महाराष्ट्री ए लेटर फेज ऑव शौरसेनी, जर्नल ऑव द डिपार्टमेण्ट्स ऑव लेटर्स, वही, १६३३

२००. लुडविग आल्सडोर्फ : अपभ्रंश मटेरेलियन जूर केण्टनिस, डेस, बेमरकुनजन जू पिशेल, एम. विन्टरनित्स स्मृतिग्रन्थ, पृ. २६-३६, लिपजिग, १६३३

२०१. डब्ल्यू. शुब्रिंग : बियटरग जूर इण्डिश्चिन वर्सकुण्डे (छन्दकोश), जेड. डी. एम. जी., जिल्द ७५, पृ. ६७

२०२. आर. एल. टर्नर : लिंग्विस्टिका, शहीदुल्ला की समीक्षा, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल स्टडीज, जिल्द ७, पृ. ३६६, १६३३-३५

२०३. हीरालाल जैन (सं.) : मुनि कनकामर कृत करकण्डचरिउ, कारंजा जैन सीरीज, ग्रन्थ ४, १६३४
२०४. मधुसूदन चिमनलाल मोदी : प्राचीन गुजराती गद्य अने तेनी पूर्व पीठिका, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), पु. ८१, सं. ३, पृ. २५७-२७२, जुलाई-सितम्बर, १६३४
२०५. चतुरभाई पुरुषोत्तमदास पटेल : वर्तमान कालनो 'इये' प्रत्यय, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), पु. ८१, सं. ४, पृ. ४६१-४६७, अक्तूबर-दिसम्बर, १६३४
२०६. एन. बी. दिवेतिया : द वाइड साउण्ड ऑव ए एण्ड ओ इन काठियावाड़ी, जर्नल ऑव द बोम्बे ब्रान्च ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, जिल्द १०, १६३४
२०७. टी. बरो : द लैंग्वेज ऑव द खरोष्ठी डाकुमेण्ट्स, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, १६३४
२०८. ज्यूल ब्लॉख : एल 'ए' इण्डो-आर्यन (भारतीय आर्यभाषा), पेरिस, १६३४, हिन्दी अनुवाद डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, १६६३
२०६. प्रो. देवेन्द्रकुमार बनर्जी : ऑन द ओरिजिन ऑव संस्कृत एण्ड द प्राकृत्स, के. बी. पाठक स्मृतिग्रन्थ, पृ. ३१६-३३२, १६३४
२१०. एन. एन. चौधुरी (सं.) : डाकार्णव, कलकत्ता, १६३५
२११. पं. बेचरदास जीवराज दोशी : प्राकृतमार्गोपदेशिका, अहमदाबाद, द्वि. सं., वि. सं. १६६१
२१२. ए. एम. घाटगे : द शौरसेनी प्राकृत, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बोम्बे, १६३५
२१३. ए. एम. घाटगे : नेरेटिव लिटरेचर इन जैन महाराष्ट्री, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द १६, भाग १-२, १५ अप्रैल, १६३५
२१४. पी. सी. बागची (सं.) : दोहाकोश, जर्नल ऑव द डिपार्टमेण्ट ऑव लेटर्स, जिल्द २८, ६-१८०, १६३५
२१५. एम. सी. मोदी : अपभ्रंश पाठावली (गुजराती में), अहमदाबाद, १६३५
२१६. डॉ. त्र्यम्बकलाल एन. दवे : ए स्टडी ऑव द गुजराती लैंग्वेज इन द सिक्सटीन्थ सेन्चुरी, लन्दन, १६३५
२१७. डब्ल्यू. शुब्रिंग : डी ल्हेर डेर जैनाज इन द ग्रण्ड्रिस बर्लिन उण्ड, लिपजिग (जर्मनी), १६३५, अनुवाद—द डोक्ट्राइन्स ऑव द जैन्स, दिल्ली, १६६२
२१८. के. एम. मुन्शी : गुजराती एण्ड इट्स लिटरेचर (अध्याय ५, अपभ्रंश साहित्य पृ. ४८-६१), १६३५
२१६. वन एल. आल्सडोर्फ : ज़ि नेवे वलेजी ज़ूर 'इण्डिशिचन हर्कुन्फ्ट' वन १००,

नख़्त, पृ. २७५-३१५, जेड. डी. एम. जी., बेण्ड ८६, लिपजिग, १६३५
२२०. हीरालाल जैन : स्वयंभू एण्ड हिज टू पोइम्स इन अपभ्रंश, नागपुर यूनिवर्सिटी जर्नल, अंक १, पृ. ७६-८४, दिसम्बर, १६३५
२२१. हीरालाल जैन : अमरकीर्तिगणि और उनका षट्कर्मोपदेश, जैन सिद्धान्त भास्कर, २, ३, पृ. ८७-६३, दिसम्बर, १६३५
२२२. हीरालाल जैन : सम फ्रेश लाइट ऑन द धाराशिव केव्स एण्ड द ओरिजन ऑव द शिलाहार डायनेस्टी, जिल्द १६, १-२, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियन्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, पृ. १–११, १५ अप्रैल, १६३५
२२३. लुइस एच. ग्रे : ऑब्जर्वेशन्स ऑन मिडिल इण्डियन मार्फोलॉजी, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियन्टल स्टडीज, वाल्यूम ८, पृ. ५६३-७७, १६३५-३७
२२४. मुनि जिनविजय (सं.) : राजशेखरसूरि कृत प्रबन्धकोश, शान्तिनिकेतन, वि. सं. १६६१
२२५. डॉ. भोगीलाल जे. संडेसरा (सं.) : भव्यचरित, फार्बस गुजराती सभा, अहमदाबाद, जिल्द १, सं. २, १६३६
२२६. लुडविग आल्सडोर्फ : हरिवंशपुराण डेस पुष्पदन्त, (सन्धि ८१-६२), हम्बर्ग (जर्मनी), १६३६
२२७. मुनि जिनविजय (सं.) : पुरातन प्रबन्ध संग्रह, कलकत्ता, वि. सं. १६६२
२२८. हीरालाल जैन : अमरकीर्तिगणि और उनका षट्कर्मोपदेश, जैन सिद्धान्त भास्कर, २,४, पृ. १२०-१३१, मार्च, १६३६
२२६. हीरालाल जैन : हिन्दी और अपभ्रंश, जैन सिद्धान्त भास्कर, ३, १, पृ. १५-२२, जून, १६३६
२३०. एच. डी. वेलणकर : स्वयम्भूछन्द, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बोम्बे, जिल्द ५, भा. ३, पृ. ६६-६३, नवम्बर, १६३६
२३१. एम. डी. देसाई : अपभ्रंश काव्य, कुमारपालना समयनु एक जैनाचार्य, श्री आत्मानन्द शताब्दी ग्रन्थ, चतुर्थ विभाग, पृ. २४६-२५६, बम्बई, १६३६
२३२. हीरालाल जैन : जैन मिस्टिसिज्म, आत्मानन्द शताब्दी ग्रन्थ, पृ. ४३-५२, बम्बई १६३६
२३३. डब्ल्यू. शुब्रिंग : जैन रिसर्च, नेसेसिटी ऑव, आत्मानन्द शताब्दी ग्रन्थ, पृ. ३१-३३, बम्बई, १६३६
२३४. ल्युजिआ नित्ति : प्राकृत ग्रैमेरियन्स टर्डिस एट डायलेक्ट्स डु (फ्रेन्च में) बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, सं. ८, पृ. ६८१-६८३, लन्दन, १६३६
२३५. अल्ब्रेख्त होएफर : टू बुक ऑन द प्राकृत-डायलेक्ट, बर्लिन, १६३६
२३६. प्रो. सुनीतिकुमार चटर्जी : नॉन-आर्यन एलीमेण्ट्स इन इण्डो-आर्यन, द जर्नल

ऑव द ग्रेटर इण्डिया सोसायटी, कलकत्ता, जिल्द ३, पृ. ४३-४६, १६३६
२३७. एस. पारिख : उत्तर अपभ्रंशकालीन लोकभाषा, हिन्दुस्तानी, पृ. २७३, १६३६
२३८. डॉ. भो. जे. सण्डेसरा—जिनप्रभाचार्य कृत 'भव्यचरित्र'—तेरमां सैकानुं एक अपभ्रंश रूपक, फार्वस गुजराती सभा का त्रैमासिक, जुलाई-सितम्बर, १६३६
२३६. लुडविग आल्सडोर्फ : द ओरिजिन ऑव द न्यू इण्डो-आर्यन स्पीचेज, लिंग्विस्टिक कान्फ्रेन्स बर्लिन में ८ दिसम्बर, १६३६ का पठित शोधपत्र
२४०. ए. एन. उपाध्ये : मिस्टिक एलीमेण्ट्स इन जैनिज्म, द जैन एण्टिक्वेरी, जिल्द ३, सं. २, पृ. २७-३०, सितम्बर, १६३७
२४१. पं. के. भुजबली शास्त्री : जैन प्राकृत-वाङ्मय, जैन सिद्धान्त भास्कर, ४, २, पृ. ६०-१०१, सितम्बर, १६३७
२४२. लालचन्द्र भगवानदास गाँधी : ए डिस्क्रिप्टिव केटलाग ऑव मैन्युस्क्रिप्ट्स इन द जैन भण्डार एट पाटन, बड़ोदा, १६३७
२४३. एल. आल्सडोर्फ : द वसुदेवहिण्डी, ए स्पेसीमेन ऑव आर्केइक जैन महाराष्ट्री, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, जिल्द ८, पृ. ३१६-३३४, १६३५-१६३७
२४४. टी. बरो : द डायलेक्टिकल पोजीशन ऑव द निय प्राकृत, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियन्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, जिल्द ८, पृ. ४१६-४३६, १६३५-१६३७
२४५. लुडविग आल्सडोर्फ : अपभ्रंश स्टडियन, लिपजिग (जर्मनी), १६३७
२४६. प्रो. एच. आर. कापड़िया : फोलिएशन ऑव जैन मेन्युस्क्रिप्ट्स एण्ड लेटर न्युमेरल्स, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना, जिल्द १८, भाग २, पृ. १७१-१८६, १५ मार्च, १६३७
२४७. डॉ. आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये (सं.) : परमप्पपयासु (परमात्मप्रकाश, योगसार), परमश्रुत प्रभावक मण्डल, बम्बई, १६३७
२४८. राहुल सांस्कृत्यायन : पुरातत्त्व निबन्धावली, किताब महल, इलाहाबाद, १६३७, द्वि. सं. १६५८
२४६. डॉ. उमेश मिश्र : विद्यापति ठाकुर, हिन्दुस्तानी एकेडेमी, इलाहाबाद, १६३७
२५०. पं. बेचरदास जीवराज दोशी : शब्दोनी व्युत्पत्तिओ अने समजुती, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), पु. ८४, सं. ३, पृ. २५२-२६२, जुलाई-सितम्बर, १६३७, पु. ८६, सं. १, पृ. २४-२८, जनवरी-मार्च, १६३६
२५१. डॉ. पी. एल. वैद्य (सं.) : पुष्पदन्त रचित महापुराण, माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, ग्रन्थ १, १६३७, ग्रन्थ २ (१६४०), ग्रन्थ ३ (१६४१)
२५२. एच. आई. पोलेमन (सं.) : ए सेन्सस ऑव इण्डक मैन्युस्क्रिप्ट्स इन द

यूनाइटेड स्टेट्स एण्ड कनाडा, १६३८

२५३. केशरीचन्द्र झवेरी (सं.) : सूरत भण्डार-सूची (ग्रन्थ के मात्र नाम), जैन साहित्य फण्ड, सूरत, १६३८

२५४. पी. सी. बागची (सम्पादित) : दोहाकोश, कलकत्ता, १६३८

२५५. पी. वी. रामानुजस्वामी (सं.) : द देशीनाममाला ऑव हेमचन्द्र बाय आर. पिशेल, विजयानगरम्, १६३८

२५६. ले प्राकृतानुशासन डे पुरुषोत्तम केहिअर्स, डी ला सोसायटी एशियाटिक, पेरिस, सं. ६, १६३८

२५७. श्रीमती लुइगा नित्ति डोलची : लैस ग्रैमेरियन्स प्राकृत्स, पेरिस, १६३८

२५८. एच. डी. वेलणकर : अपभ्रंश एण्ड मराठी मीटर्स, न्यू इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द १, पृ. २१५-२२८, १६३८-४०

२५६. मुनिश्री रत्नचन्द्र (सं.) : अर्द्धमागधी कोष, भा. ५, श्वे. स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स, १६३८

२६०. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : पाहुड दोहा, कारंजा, १६३६

२६१. श्रीमती लुइगा नित्ति डोलची : डु प्राकृतकल्पतरु डेस रामशर्मन् बिब्लियोथिक डि ले आल हेट्स इट्यूड्स, पेरिस, १६३६

२६२. विल्लोरे पिसानी : एन अन नोटिस्ड प्राकृत इडियम, न्यू इण्डियन एण्टिक्वेरी, १,२, जिल्द २, पृ. १६०-१६२, १६३६-१६४०

२६३. एस. एम. कत्रे : नेम्स ऑव प्राकृत लैंग्वेजेज, न्यू इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द २, ५, पृ. २६६-३०१, बम्बई, १६३६

२६४. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : सम इटिमोलॉजीकल नोट्स, न्यू इण्डियन एण्टिक्वेरी, जिल्द २, सं. ७, पृ. ४२१-४२७, अक्तूबर, १६३६

२६५. बनारसीदास (सं.) : पंजाब भण्डार-सूची, पंजाब विश्वविद्यालय, लाहौर, १६३६

२६६. प्रो. हीरालाल जैन : अणुव्रतरत्नप्रदीप, जैन सिद्धान्त भास्कर, ६, ३, पृ. १५५-१७७, दिसम्बर, १६३६

२६७. एस. एम. कत्रे : टु मिडिल इण्डो-आर्यन बर्ड्स, ए वाल्यूम ऑव ईस्टर्न एण्ड इण्डियन स्टडीज, पृ. १४१-१४३, बम्बई, १६३६

२६८. श्रीमती लुइगा नित्ति डोलची : द अपभ्रंश स्तबकाज ऑव रामशर्मन् (फ्रान्सीसी भाषा में अनुवाद), १६३६

२६६. श्रीमती लुइगा नित्ति डोलची : द शौरसेनी एण्ड मागधी स्तबकाज ऑव रामशर्मन्, १६३६

२७०. लुडविग आल्सडोर्फ : जूर अपभ्रंश-यूनिवर्सलजेश्चिटे पुष्पदन्ताज, OLZ42, १६३६

२७१ परशुराम चतुर्वेदी : सिद्ध तेलोपा, हिन्दुस्तानी, १०, १, पृ. ३२५-३३०, जनवरी १९४०
२७२. परशुराम चतुर्वेदी : सिद्ध भुसुकुप्पा, हिन्दुस्तानी, १०, १, पृ. ३७५-३८८, जनवरी १९४०
२७३. ग्रे, एल. एच. : फिफ्टीन प्राकृत इण्डो-युरोपियन इटिमोलॉजीज, जर्नल ऑव द अमेरिकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ६०, सं. ३, पृ. ३६०-३६९, १९४०
२७४. मधुसूदन चिमनलाल मोदी : अपभ्रंशकविओ—चतुर्मुख स्वयम्भू अने त्रिभुवन स्वयम्भू (गुजराती), भारतीय विद्या, वर्ष १, अंक १, पृ. १५७-१७८, मार्च, १९४० तथा १, ३, पृ. २५३-२६४, अगस्त, १९४०
२७५. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी और पं. बबुआ मिश्र (सं.) : ज्योतिरीश्वर कविशेखर कृत वर्णरत्नाकर, रॉयल एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता, १९४०
२७६. हजारीप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी साहित्य की भूमिका, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई, १९४०
२७७. हजारीप्रसाद द्विवेदी : प्रबन्धचिन्तामणि, हिन्दी अनुवाद, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १९४०
२७८. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : पैशाची लैंग्वेज एण्ड लिटरेचर, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओ. रि. इं. पूना, जिल्द २१, भाग १-२, पृ. १-३७, १६ दिसम्बर, १९४०
२७९. ए. एन. घाटगे : कान्कर्ड इन प्राकृत सिण्टेक्स, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओ. रि. इं., पूना, जिल्द २१, भा. १-२, पृ. ७३-९६, दिसम्बर, १९४०
२८०. एम. ए. महेण्डले : टाक्की ऑर ढाक्की, बुलेटिन ऑव द डेक्कन कॉलेज रिसर्च इन्स्टिट्यूट, १९४०
२८१. पं. नाथूराम प्रेमी : महाकवि पुष्पदन्त, अनेकान्त ४, ८, पृ. ४५५-४६१, सितम्बर, १९४१
२८२. पं. नाथूराम प्रेमी : चतुर्मुख और स्वयम्भू—दो भिन्न कवि हैं, भारतीय विद्या, भाग २, अंक १, पृ. ५७-६१, अक्तूबर, १९४१
२८३. महामहोपाध्याय सकलनारायण शर्मा : प्राचीन हिन्दी, प्राचीन भारत पत्रिका, वर्ष १, सं. १, पृ. २८-३१, कलकत्ता, जनवरी, १९४१
२८४. महामहोपाध्याय सकलनारायण शर्मा : प्राचीन हिन्दी, प्राचीन भारत पत्रिका, पृ. १०५-१०९, १९४१
२८५. पं. बेचरदास जीवराज दोशी : देश्य प्राकृत अने तेना शब्दोनां मूल, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), वर्ष ८, पृ. ६५-१०२, १९४१
२८६. मणिलाल पटेल : 'देशीनाममाला अने देश्य शब्दो विशे चर्चा' श्री हैम सारस्वत

सत्र, पृ. ३१६-३२८, बम्बई, १९४१
२८७. अमृतलाल सबचन्द गोपाणी : नाणपंचमी अने भविस्सयत्तकहा, भारतीय विद्या, २, १, पृ. ८१-९७, अक्तूबर, १९४१
२८८. दीपचन्द पाण्ड्या : अपभ्रंश भाषा के दो ग्रन्थ, अनेकान्त, ४, ९, पृ. ५२०-५२४, अक्तूबर, १९४१
२८९. डॉ. पी. एल. वैद्य (सं.) : महापुराण ऑव पुष्पदन्त, माणिकचन्द्र दि. जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १९३७-४१, प्र. भा. १९३७, द्वि. भा. १९४०, तृ. भा. १९४१
२९०. लद्दू और गोरे (सं.) : पउमचरिउ, पूना, १९४१
२९१. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : हरिषेणाज धर्मपरीक्षा इन अपभ्रंश, ग्यारहवीं रिपोर्ट, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, अर्द्धमागधी सेक्शन, १९४१
२९२. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : हरिषेणाज धर्मपरीक्षा इन अपभ्रंश, एनल्स ऑव द भ. ओ. रि. इं., पूना, जिल्द २२, पृ. ५९२-६०८, १९४२
२९३. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : ए प्राकृत ग्रैमर एट्रिब्युटेड टु समन्तभद्र, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, जिल्द १७, पृ. ५११-५१६, १९४२
२९४. पं. लालचन्द्र भगवान गाँधी : भरतबाहुबलिरास (गुजराती), सम्पादित, अहमदाबाद, वि. सं. १९९७
२९५. खम्भात शान्तिनाथ प्राचीन ताड़पत्रीय जैन भण्डार सूचीपत्र, प्रकाशक—शा. प्रा. ता. जैन ज्ञान भण्डार, खम्भात, १९४२
२९६. पं. नाथूराम प्रेमी : जैन साहित्य और इतिहास, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई, १९४२, द्वि. सं. १९५६
२९७. पं. नाथूराम प्रेमी : महाकवि स्वयम्भू और त्रिभुवन स्वयम्भू, अनेकान्त, ५, ८-९, पृ. २९७-३०९, सितम्बर-अक्तूबर, १९४२
२९८. पं. नाथूराम प्रेमी : महाकवि स्वयम्भू और त्रिभुवन स्वयम्भू, भारतीय विद्या, २, ३, पृ. २४१-२६६, अक्तूबर, १९४२
२९९. मुनि कान्तिसागर : जैनियों का अपभ्रंश साहित्य, अनेकान्त, ४, ११-१२, पृ. ५८१-५८३, दिसम्बर-जनवरी, १९४१-४२
३००. अगरचन्द नाहटा : वीर गाथा काल का जैन साहित्य, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ४६, ३, बि. सं. १९९८
३०१. डॉ. हीरालाल जैन : सम रीसेण्ट फाइण्ड्स ऑव अपभ्रंश लिटरेचर, नागपुर यूनिवर्सिटी जर्नल, पृ. ८९-९१, दिसम्बर, १९४२
३०२. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : इण्डो-आर्यन एण्ड हिन्दी, १९४२
३०३. पं. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा का शान्तिनाथचरित्र, अनेकान्त, वर्ष ५, अंक ६-७, पृ. २५३-२५६, १९४२

३०४. पं. परमानन्द शास्त्री : धनपाल नाम के चार विद्वान् कवि, अनेकान्त ६, ७-८, पृ. ८२-८५, १९४३
३०५. एम. ए. मेहेन्दले : हिस्टॉरिकल ग्रैमर ऑव इन्सिक्रप्शनल प्राकृत, पूना, १९४३
३०६. अल्फ्रेड मास्टर : सम टेक्स्ट फ्रेगमेण्ट्स ऑन पैशाची, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, जिल्द ६५, पृ. ३४-३५, तथा पृ. २१७-२३, १९४३
३०७. दिनेशचन्द्र सरकार : ए ग्रैमर ऑव द प्राकृत लैंग्वेज, कलकत्ता, १९४३, द्वि. सं., दिल्ली, १९७०
३०८. ए. एम. घाटगे : प्राकृत्स इन प्रोग्रेस, इण्डिक स्टडीज, पृ. १५३-१७४, १९४३
३०९. नरोत्तमदास स्वामी (सं.) : अपभ्रंश पाठमाला भा. १, इलाहाबाद, वि. सं. १९९९
३१०. पं. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा के प्रसिद्ध कवि पं. रइधू, अनेकान्त ५, १२, पृ. ४०१-४०४, जनवरी, १९४३
३११. रामजी उपाध्याय : सुकौशलचरित, जैनसिद्धान्त भास्कर, भाग १०, किरण २, पृ. ५५-५६, दिसम्बर, १९४३
३१२. ह. चू. भायाणी : प्राकृतव्याकरणकारो (गुजराती), भारतीय विद्या, २, ४, पृ. ४०१-४१६, जुलाई, १९४३
३१३. डोलरराय रं. मांकड : पैशाचवर्गनी बोली ओनी उपयोगिता, भा. विद्या, २, ४, पृ. ३४४-३४८, जुलाई, १९४३
३१४. हीरालाल जैन : संस्कृत में प्राकृत का प्रभाव, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ४७, अंक १, पृ. १४५-१५६, (नवीन संस्करण), वि. सं. १९९९
३१५. डब्ल्यु. ई. क्लर्क : मागधी एण्ड अर्द्धमागधी, जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, १९४४
३१६. मोहनलाल दलीचन्द देसाई : जैन गूर्जर कविओ भाग ३, खण्ड १-२, १९४४
३१७. एस. एम. कत्रे : हिस्टॉरिकल लिंग्विस्टिक्स इन इण्डो-आर्यन, बम्बई विश्वविद्यालय, १९४४
३१८. कालीपाद मित्र : सम न्यू इण्डो-आर्यन वर्ड्स फ्रॉम अपभ्रंश, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टरली, २०, ३, पृ. २५१-२७४, १९४४
३१९. सुनीतिकुमार चटर्जी : सम ईरानियन लोन-वर्ड्स इन इण्डो-आर्यन, इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, जिल्द ६, भा. १, पृ. ७-९, १९४४-४५
३२०. हरि दामोदर वेलणकर : जिनरत्नकोश, पूना, १९४४
३२१. एस. एम. कत्रे : प्राकृत लैंग्वेज एण्ड देयर कण्ट्रिब्युशन टु इण्डिया, बम्बई, १९४५
३२२. राहुल सांकृत्यायन : हिन्दी काव्य-धारा, इण्डियन प्रेस लि. प्रयाग, १९४५

३२३. रामसिंह तोमर : सुदंसणचरिउ, विश्वभारती, खण्ड ४, अक्तूबर-दिसम्बर, १६४५

३२४. मुनि जिनविजय और भायाणी (सं.) : सन्देशरासक, (अब्दुल रहमान), भारतीय विद्या भवन, बम्बई, १६४५

३२५. डॉ. सुकुमार सेन : द यूज ऑव द जेनेटिव इन मिडिल, सिंघी जैन सीरीज २२, १६४५

३२६. इण्डो-आर्यन, इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, जिल्द ६ (१), १६४५

३२७. बटकृष्ण घोष : प्राकृतिक सन्धि इन द ऋक्संहिता, पृ. १०-१६, जिल्द ६, भा. १, १६४५

३२८. ह. चू. भायाणी : एन्डिंगलेस जेनिटिव इन अपभ्रंश, भारतीय विद्या, १६४५

३२६. सिबेन्द्रनाथ घोषाल : वुमन इन सेपरेशन (प्रोषितभर्तृका) इन द अपभ्रंश स्ट्रोफीज ऑव हेमचन्द्र, जैन एण्टिक्केरी, जिल्द ११, सं. १, पृ. २०-२६, जुलाई, १६४५

३३०. एम. विण्टरनित्स : द जैनाज इन द हिस्ट्री ऑव इण्डियन लिटरेचर, अहमदाबाद, १६४६

३३१. मनमोहन घोष : प्राकृतकामधेनु ऑव लंकेश्वर, न्यू इण्डियन एण्टिक्केरी, जिल्द ८, पृ. ३७-३६, १६४६

३३२. डॉ. दशरथ शर्मा और प्रो. मीनाराम रंगा : द ओरिजिनल पृथ्वीराजरास एन अपभ्रंश वर्क, राजस्थान भारती, भा. १, अंक १, पृ. ६४-१००, १६४६

३३३. ह. चू. भायाणी : स्वयम्भू एण्ड द प्राकृतमीटर्स, भारतीय विद्या, सं. ८-६-१०, १६४६

३३४. ह. चू. भायाणी : अपभ्रंश अणे प्राचीन गुजराती, गुजराती साहित्य परिषद-पत्रिका, भा. ३, १६४६

३३५. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : हरिषेण कृत अपभ्रंश-धर्मपरीक्षा, अनेकान्त ८, १, पृ. ४८-५३, जनवरी, १६४६ तथा—अनेकान्त ८, २, पृ. ६०-६६, फरवरी, १६४६

३३६. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : प्राकृत लिटरेचर, सं. जे. टी. शिपले—इन्साइक्लोपीडिया ऑव लिटरेचर, जिल्द १, पृ. ४८१-४६०, न्यूयार्क, १६४६

३३७. हीरालाल जैन : अपभ्रंश भाषा और साहित्य, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ५०, १-२, वि. सं. २००२

३३८. जी. सी. बसु : लंकेश्वर कृत प्राकृतकामधेनु, न्यू इण्डियन एण्टिक्केरी, जिल्द ८, पृ. ३७-३६, १६४६

३३६. ए. एम. घाटगे : द बेसिक टेण्डेन्सी ऑव प्राकृत लैंग्वेज, बी. सी. ला वाल्यूम,

भाग २, पृ. ११८-१२३, १९४६
३४०. हजारीप्रसाद द्विवेदी : जैन साहित्य, प्रेमी-अभिनन्दनग्रन्थ, पृ. ४४८-४५४, टीकमगढ़, १९४६
३४१. ए. एम. घाटगे : एन इण्ट्रोडक्शन टु अर्द्धमागधी, कोल्हापुर, १९४६
३४२. कामताप्रसाद जैन : जैन साहित्य में प्राचीन ऐतिहासिक सामग्री, प्रेमी-अभिनन्दनग्रन्थ, पृ. ४५५-४६३, टीकमगढ़, १९४६
३४३. रामसिंह तोमर : जैन साहित्य की हिन्दी साहित्य को देन, प्रेमी-अभिनन्दनग्रन्थ, पृ. ४६४-४६६, १९४६
३४४. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : श्रीचन्द एण्ड हिज अपभ्रंश कथाकोश, भारतकौमुदी (आर. के. मुकर्जी स्मृतिग्रन्थ), जिल्द २, पृ. १००५-१०१६, इलाहाबाद, १९४७
३४५. अगरचन्द नाहटा : जिनदत्तसूरि जी के ग्रन्थ और राहुल जी, विशाल भारत, अप्रैल, १९४७
३४६. ह. चू. भायाणी : वाग्व्यापार-जुगार, बुद्धिप्रकाश (गुजराती), पु. ९४, सं. १, पृ. ४५-४६, जनवरी-मार्च १९४७
३४७. अगरचन्द नाहटा : महाकवि स्वयम्भू और राहुल सांकृत्यायन, वीर, २३, २०
३४८. अगरचन्द नाहटा : जैन कथा साहित्य, जैन सिद्धान्त भास्कर, भाग १२, किरण १, १९४७
३४९. पं. बेचरदास दोशी : विलासवती, भारतीय विद्या (हिन्दी), वर्ष ५, अंक ४-६, दिसम्बर-फरवरी, १९४७
३५०. कामताप्रसाद जैन : हिन्दी जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास, १९४७
३५१. धनपाल विरचित पाइयलच्छी नाममाला, पाटण, वि. सं. २००३
३५२. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : महाकवि सिंह और प्रद्युम्नचरित, अनेकान्त, वर्ष ८, १०-११, पृ. ३८९-३९४, १९४७
३५३. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : कविवर लक्ष्मण और जिनदत्तचरित, अनेकान्त, ८, १०-११, पृ. ४००-४०१, १९४७
३५४. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : श्रीधर और विबुध श्रीधर नाम के विद्वान्, अनेकान्त, ८, १२, पृ. ४६२-४६५, १९४७
३५५. ह. चू. भायाणी : स्वयम्भू एण्ड हेमचन्द्र, भारतीय विद्या, भाग ८, अंक ८-१०, पृ. २०२-२०६, १९४७
३५६. ह. चू. भायाणी : लैंग्वेज ऑव गुजरात फ्रॉम अर्लिएस्ट टाइम्स टु क्रा. १३०० ई., भारतीय विद्या, ८, १२, पृ. २८९-३१८, दिसम्बर, १९४७
३५७. ह. चू. भायाणी ; द पउमचरिउ एण्ड द भविसयत्तकहा, भारतीय विद्या, ८, १-२, पृ. ४८, ५०, १९४७

३५८. सिबेन्द्रनाथ घोषाल : द पुराणिक एण्ड हिस्टॉरिकल रिफ्रेन्सेज इन द अपभ्रंश स्टेन्जाज ऑव हेमचन्द्र, जैन एण्टिक्वेरी, जिल्द १२, सं. २, जनवरी, १९४७

३५९. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : अपभ्रंश भाषा का काल, जैन सिद्धान्त भास्कर, पृ. ३९-४०, १९४७

३६०. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : भट्टारक यशःकीर्ति, जैन सिद्धान्त भास्कर, पृ. ६४-६६, १९४७

३६१. एच. डी. वेलणकर : अपभ्रंश मीटर्स, भारत कौमुदी (आर. के. मुकर्जी-स्मृतिग्रन्थ), पृ. १०६५-१०६८, इलाहाबाद, १९४७

३६२. ह. चू. भायाणी : अब्दुलरहमान्स सन्देशरासक एण्ड जायसीज पद्मावती, भारतीय विद्या, भाग १०, १९४७ तथा के. एम. मुन्शी स्वर्णमहोत्सव ग्रन्थ, भाग १, पृ. ८१-८६, १९४८

३६३. रामसिंह तोमर : अपभ्रंश का एक शृंगार-वीरकाव्य (वीर कृत जम्बू स्वामीचरित), अनेकान्त, वर्ष ९, अंक १०, पृ. ३९४-४०४, १९४८

३६४. मधुसूदन मोदी तथा भायाणी (सं.) : धाहिल विरचित पउमसिरीचरिउ, सम्पादित, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १९४८

३६५. एम. ए. महेण्डले : हिस्टॉरिकल ग्रैमर ऑव इन्स्क्रिसिनल प्राकृत्स, पूना, १९४८

३६६. गजानन वासुदेव तगारे : हिस्टॉरिकल ग्रैमर ऑव अपभ्रंश पूना, १९४८

३६७. बेचरदास दोशी : देसी सद्दसंगहो, फार्बस गुजराती सभा, सं. १३, १९४८

३६८. आर. एन. वाले : वर्बल कम्पोजीशन इन इण्डो-आर्यन, पूना, १९४८

३६९. ए. एन. उपाध्ये : भृंगारसन्देश : ए प्राकृतकाव्य, करमकर स्मृतिग्रन्थ, पृ. २१७-२२१, पूना, १९४८

३७०. नॉर्मल ब्राउन : जैन महाराष्ट्री प्राकृत, सम लेनीकल मटेरियल इन, के. एम. मुन्शी स्वर्ण महोत्सव ग्रन्थ, नवम विभाग, पृ. २७-३२, १९४८

३७१. गजानन वासुदेव तगारे : अपभ्रंश एण्ड द आभीराज, एनल्स ऑव द भण्डारकर, ओरियण्टल रि. इं., सिलवरजुबिली वाल्यूम, जिल्द २३, पृ. ५५९-५६६

३७२. अगरचन्द नाहटा : अपभ्रंश भाषा के कतिपय अन्य दिगम्बर जैन ग्रन्थ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ५२, अंक १, पृ. १०५-१०८, वि. सं. २००४

३७३. उदयसिंह भटनागर : अपभ्रंश, शोध-पत्रिका, भाग १, वर्ष १, पृ. १४-२४, १९४८

३७४. मुनि जिनविजय (सं.) : कथाकोश-प्रकरण, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १९४९

३७५. कालीपाद मित्र : न्यू इण्डो-आर्यन वर्ड्स फ्रॉम अपभ्रंश सम, समरी ऑव आल

इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, सेशन, १-१२, पूना, १६४६
३७६. डी. जी. बोर्से : अहीरानी डाइलेक्ट, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, सेशन, १०, १, पूना, १६४६
३७७. अगरचन्द नाहटा : आचार्यप्रवर तरुणप्रभसूरि, जर्नल ऑव द यू. पी. हिस्टॉरिकल सोसायटी, वर्ष २२, खण्ड १-२, १६४६
३७८. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : राजस्थानी भाषा, राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर, १६४६
३७६. पं. परमानन्द शास्त्री : महाकवि रइधू, वर्णी अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ. ३६८-४१५, १६४६
३८०. पं. परमानन्द शास्त्री : सोलहवीं शताब्दी के दो अपभ्रंश काव्य, अनेकान्त, वर्ष १०, किरण ४-५, पृ. १६०-१६२, अक्तूबर-नवम्बर, १६४६
३८१. राघवन नम्बियार (सं.) : एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा, जिल्द २, १६५०
३८२. फतेहचन्द बेलानी : जैन ग्रन्थ और ग्रन्थकार, जैन संस्कृति संशोधन मण्डल, बनारस, अक्तूबर, १६५०
३८३. कस्तूरचन्द कासलीवाल : प्रशस्ति संग्रह, महावीर भवन, जयपुर, १६५०
३८४. देवेन्द्रकुमार जैन : अपभ्रंश-प्रकाश, वर्णी जैन ग्रन्थमाला, वाराणसी, १६५०
३८५. बी. राघवन : प्राकृत वर्क्स नोन फ्रॉम भोजाज शृंगारप्रकाश, सिद्धान्त भारती २, होशियारपुर, १६५०
३८६. सुकुमार सेन : प्राकृत एण्ड वर्नाक्युलर वर्सेस इन धर्मदासाज विदग्धमुखमण्डन, सिद्धान्तभारती १, पृ. २५७-२६४, होशियारपुर, १६५०
३८७. हजारीप्रसाद द्विवेदी : जैन अपभ्रंश ग्रन्थ और साहित्य, श्री महावीर स्मृति ग्रन्थ, भाग १, पृ. १७४-१७७, आगरा, १६५०
३८८. अल्फ्रेड मास्टर : ग्लीनिंग्स फ्रॉम कुवलयमालाकहा, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल एण्ड अफ्रीकन स्टडीज, जिल्द १३, भाग ३, ४, १६५०-५१
३८६. एच. डब्ल्यू. बेल्ली : खोतानीज बुद्धिस्ट टेक्सट्स, लन्दन, १६५१
३६०. इण्डो-ईरानियन स्पिरेण्ट्स एण्ड प्रोटो-इण्डो-आर्यन स्पिरेण्टाइजेशन, प्रोसीडिंग्स ऑव द ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, १३वाँ सत्र, भाग ३, पृ. ८१-८६, नागपुर, १६५१
३६१. डॉ. सुकुमार सेन : ए कम्पेरेटिव ग्रैमर ऑव मिडिल इण्डो-आर्यन, पूना, १६४१, द्वि. सं., १६६०
३६२. केशवराम काशीराम शास्त्री : गुजराती साहित्यनु रेखादर्शन, १६५१
३६३. मनोहर शर्मा : प्राचीन राजस्थानी, शोध-पत्रिका, भाग ३, अंक १, पृ.

२१-३८, सितम्बर, १९५१
३९४. प्रो. एच. आर. कापड़िया : द रामायण एण्ड द जैन रायटर्स, जर्नल ऑव द ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द १, पृ. ११५-११८, दिसम्बर १९५१
३९५. वि. श्री वाकणकर : धारा से प्राप्त एक शिलालेख, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ५५, अंक १-२, पृ. ३०६-३०८, वि. सं. २००७
३९६. ज्योतिभूषण श्रीवास्तव : हिन्दी साहित्य में अपभ्रंशकाव्य, साहित्य सन्देश, पृ. ३६०-३६४, मार्च, १९५२
३९७. डॉ. हीरालाल जैन : श्रुतकीर्ति और उनकी धर्मपरीक्षा, अनेकान्त, वर्ष ११, किरण २, पृ. १०५-१०७, अप्रैल, १९५२
३९८. भोलाशंकर व्यास : भारतीय आर्यभाषाएँ तथा अनुनासिक ध्वनियाँ, शोध-पत्रिका, भाग ४, अंक १, पृ. २८-४६, वि. सं. २००९
३९९. डॉ. नामवर सिंह : हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, इलाहाबाद, मार्च, १९५२, द्वि. सं. १९५४, तृ. सं. १९६१, चतुर्थ सं. १९६४
४००. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी-साहित्य, १९५२
४०१. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : हिन्दी-साहित्य का आदिकाल, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, १९५२
४०२. पी. एल. वैद्य : ऑन द यूज ऑव प्राकृत डायलेक्ट्स इन संस्कृत ड्रामाज, बी. ओ. आई. ए., ३३, पृ. १५-२५, १९५२
४०३. डॉ. ए. एस. घाटगे : जेकोबीज इण्ट्रोडक्शन टु आसजेहाल अर्जिथुगन इन महाराष्ट्री, जैन एण्टिक्वेरी, जिल्द १८, सं. ११, दिसम्बर, १९५२
४०४. पं. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा का पासचरिउ और कविवर देवचन्द, अनेकान्त, वर्ष ११, किरण ४-५, पृ. २११-१२, जून-जुलाई, १९५२
४०५. पं. परमानन्द शास्त्री : महाकवि रइधू, अनेकान्त ११, ७-८, पृ. २६५-६८, सितम्बर-अक्तूबर, १९५२
४०६. पं. परमानन्द शास्त्री : महाकवि रइधू, अनेकान्त, ११, ९, पृ. ३१९-३२८, नवम्बर, १९५२
४०७. पं. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा का नेमिनाथचरित्र, अनेकान्त, ११, १२, पृ. ४१४-१५, मई, १९५३
४०८. अगरचन्द नाहटा : सन्देशरासक का रचनाकाल, विकास, २, १,
४०९. अगरचन्द नाहटा : अपभ्रंश भाषा के सन्धिकाल और उनकी परम्परा, राजस्थानी, भाग १, पृ. ५५-६४, राजस्थानी साहित्य परिषद्, कलकत्ता
४१०. अगरचन्द नाहटा : सन्देशरासक-परिचय, राजस्थानी, ३, २
४११. अगरचन्द नाहटा : गयसुकुमालरास, राजस्थान-भारती, ३, २
४१२. अगरचन्द नाहटा : अपभ्रंश भाषा का वर्धमान-पारणक, हिन्दी-अनुशीलन,

३, २

४१३. डॉ. ह. चू. भायाणी (सं.) : पउमचरिउ भा. १-२, सम्पादित, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १९५३

४१४. एस. एन. घोषाल : इण्ट्रोडक्शन टु द भविसयत्तकहा—डॉ. हर्मन जेकोबी का जर्मन से अँगरेजी अनुवाद, जर्नल ऑव द ओ. रि. ई., बड़ोदा, जिल्द २, सं. ३, पृ. २३६-२४२, मार्च, १९५३

४१५. सुनीतिकुमार चटर्जी : उक्तिव्यक्तिप्रकरण ऑव दामोदर, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई, १९५३

४१६. एम. जी. पाँसे : लिंग्विस्टिक पिक्युलरटीज ऑव ज्ञानेश्वरी, अधिनिबन्ध, डेक्कन कॉलेज, पूना, १९५३

४१७. डॉ. रामसिंह तोमर : प्राकृत-अपभ्रंश साहित्य और उसका हिन्दी साहित्य पर प्रभाव, आलोचना, जुलाई, १९५३

४१८. डॉ. सुकुमार सेन : हिस्टॉरिकल सिण्टेक्स ऑव द मिडिल इण्डो-आर्यन, इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, १९५३

४१९. श्रीनिवास गोपालाचार्य (सं.) : प्राकृतमणिदीप ऑव अप्पयदीक्षित, मैसूर विश्वविद्यालय, १९५३

४२०. एस. एन. घोषाल : रिफ्रेन्सेज टु द अदर वर्क्स इन द प्राकृत पैंगल—एन अपभ्रंश टेक्स्ट, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा, जिल्द २, सं. २, पृ. १७४-१७८, १९५३

४२१. प्रो. राजकुमार जैन : अपभ्रंश साहित्य : एक संक्षिप्त परिचय, जैन सिद्धान्त भास्कर, २०, २, पृ. १८-४२, दिसम्बर, १९५३

४२२. डॉ. भो. जे. साण्डेसरा : द स्थूलभद्रफागु (१३३४ ई.) ऑव जिनपद्मसूरि एण्ड द नेमिनाथफागु (१३४९ ई.) ऑव राजशेखरसूरि, जर्नल ऑव द ओ. इं, बड़ोदा, जिल्द २, सं. ३, पृ. २७७-२८६, मार्च, १९५३

४२३. प्रो. एस. एन. घोषाल : डॉ. एच. जेकोबीज इण्ट्रोडक्शन टु द भविसयत्तकहा, जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ोदा जिल्द २, सं. ४, पृ. ३४६-३५८, जून, १९५३, जिल्द ३, सं. १, पृ. ८४-९४, सितम्बर, १९५३, जिल्द ३, सं. २, पृ. १६४-१६८, दिसम्बर, १९५३

४२४. ज्यूल्स ब्लाख : प्राकृत cia लैटिन quidem, लैंग्वेज, जर्नल ऑव द लिंग्विस्टिक सोसायटी ऑव अमरीका, जिल्द २९, सं. २, भाग १-२, अप्रैल-जून, १९५३

४२५. डॉ. के. डी. वीस : अपभ्रंश स्टडीज (१), जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ७४, सं. १, पृ. १-५, जनवरी-मार्च, १९५४

४२६. डब्ल्यू. नॉर्मन ब्राउन : प्राकृत वणदव 'Tree sap, self-control' लैंग्वेज,

जिल्द ३०, सं. १, भाग १, जनवरी-मार्च, १६५४
४२७. डॉ. भो. जे. सण्डेसरा : शब्द अने अर्थ, बम्बई विश्वविद्यालय प्रकाशन, १६५४
४२८. प्रो. एस. एन. घोषाल ; डॉ. एच जेकोबीज इण्ट्रोडक्शन टु द भविसयत्तकहा, जर्नल ऑव द ओ ई., बड़ोदा, जिल्द ३, सं. ३, पृ. २६६-२७६, मार्च, १६५४, जिल्द ३, सं. ४, पृ. ३४५-३५६, जून, १६५४, जिल्द ४, सं. १, पृ. ३७-४५, सितम्बर, १६५४
४२६. के. डी. ब्रीस : ए द्राविडियन टर्म इन अपभ्रंश, द जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी ऑव ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, लन्दन, भा. १, २, १६५४
४३०. एजर्टन : द मिडिल इण्डिक वर्बल सिस्टम, एशियाटिका, १६५४
४३१. डॉ. ह. चू. भायाणी : वाग्व्यापार (गुजराती में), भारतीय विद्याभवन, बम्बई, १६५४
४३२. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : एज ऑव द परमात्मप्रकाश, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द ३४, पृ. १६६-१६७, पूना, १६५४
४३३. ब्रीस, के. अपभ्रंश स्टडीज (२), जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ७४, सं. ३, पृ. १४२-१४६, जुलाई-सितम्बर, १६५४
४३४. प्रबोध बेचरदास पण्डित : प्राकृत भाषा, पार्श्वनाथ विद्याश्रम, वाराणसी, १६५४
४३५. प्रबोध बेचरदास पण्डित : इण्डो-आर्यन सिबिलेण्ट्स इन गुजराती, इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, १६, १६५४
४३६. डॉ. पी. एल. वैद्य (सं.) : प्राकृत ग्रैमर ऑव त्रिविक्रम, सोलापुर, १६५४
४३७. अगरचन्द नाहटा : चौदहवीं शती की कतिपय राजस्थानी जैन गद्य-रचनाएँ, देवनागर, वर्ष १, अंक ३, पृ. ५५-५८, कार्तिक, वि. सं. २०१०
४३८ अगरचन्द नाहटा : अपभ्रंश चित्रकला का पाण्डवचरित्र (१५वीं शती) की सचित्र प्रति, कल्पना, अप्रैल, १६५४
४३६. पं. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा के अप्रकाशित कुछ ग्रन्थ, अनेकान्त, १२, ६, पृ. २६३-६४, फरवरी, १६५४
४४०. पं. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा का जम्बूस्वामीचरिउ और महाकवि वीर, अनेकान्त, १३, ६, पृ. १४६-१५७, दिसम्बर, १६५४
४४१. राहुल सांकृत्यायन : महाकवि स्वयम्भू, ब्र. पं. चन्दाबाई अभिनन्दनग्रन्थ, पृ. ४१०-४१४, प्र.-अ. भा. दि. जैन महिला परिषद्, आरा, १६५४
४४२. जेम्स फुलर भुमहर्ट : केटलॉग ऑव द गुजराती एण्ड राजस्थानी मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, १६५४

४४३. प्रो. ज्योतिप्रसाद : हिन्दी की जननी अपभ्रंश, ब्र. पं. चन्दाबाई अभिनन्दनग्रन्थ, पृ. ४५८-४६१

४४४. हीरालाल रसिकदास कापड़िया : डिस्क्रिपटिव केटलॉग ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द गवर्नमेण्ट मेन्युस्क्रिप्ट्स लाइब्रेरी, भण्डारकर ओ. रि. ई., पूना, १६५४

४४५. कस्तूरचन्द कासलीवाल : राजस्थान के जैन शास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची, भाग २, जयपुर, १६५४

४४६. के. एम. मुन्शी : गुजरात एण्ड इट्स लिटरेचर, १६५४

४४७. मनमोहन घोष (सं.) : रामशर्मन्स प्राकृत-कल्पतरु, द एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता, बिब्लोथिका इण्डिका, सं. २७८, १६५४

४४८. वाकरनागल, जे. : एल्टिण्डिश्चे ग्रैमेतीक, जिल्द २, वेण्डेन्होक एण्ड रूपरेख्त, गॉटिंगन, १६५४

४४६. एस. एन. घोषाल : अपभ्रंश एण्ड पोस्ट-अपभ्रंश फीचर्स द अर्ली प्राकृत्स, इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टर्ली, जिल्द ३०, सं. ३, पृ. २४५-२६३, सितम्बर, १६५४

४५०. दोहाणुपेहा—लक्ष्मीचन्द, अनेकान्त, १२, ६, पृ. ३०२, फरवरी, १६५४

४५१. अक्षयचन्द्र वर्मा : सिरिथूलभद्दफागु—पर्यालोचन, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ५६, १, पृ. १६-३५, वि. सं. २०११

४५२. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : मराठी एलीमेण्ट्स इन ए प्राकृत ड्रामा, इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, भा. १६, पृ. १४७-१५२, १६५५

४५३. डॉ. धर्मवीर भारती : सिद्ध-साहित्य, किताब महल, इलाहाबाद, १६५५

४५४. जगन्नाथ शर्मा : अपभ्रंश-दर्पण, पटना, १६५५

४५५. शिवप्रसाद सिंह : कीर्तिलता और अवहट्ठ, साहित्य भवन लि., इलाहाबाद, १६५५

४५६. वि. श्री वाकणकर : धार के अप्रकाशित शिलालेख, सिन्दिया प्राच्य विद्या निकेतन पत्रिका, पृ. ५७-६१, १६५५

४५७. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा का पार्श्वनाथचरित्र, अनेकान्त, १३, १०, पृ. २५२-२५३, अप्रैल, १६५५

४५८. परमानन्द शास्त्री : भ. श्रुतकीर्ति और उनकी रचनाएँ, अनेकान्त, वर्ष १३, किरण ११-१२, पृ. २७६-२८०, मई-जून, १६५५

४५६. एल. ए. श्वार्जश्चाइल्ड : नोट्स ऑन द हिस्ट्री ऑव द इनफिनिटिव इन मिडिल इण्डो-आर्यन, चटर्जी जुबिली वाल्यूम, पृ. २६-३४, १६५५

४६०. क्रॉनालॉजी ऑव द प्राकृतपैंगल एण्ड द छन्दकोश, जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ोदा, जिल्द ४, सं. ४, १६५५

४६१. प्रो. एस. एन. घोषाल : डॉ. एच. जेकोबीज इण्ट्रोडक्शन टु द भविसयत्तकहा,

जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ोदा, जिल्द ४, सं. २-३, पृ. १७६-१८६, दिसम्बर, १९५४, मार्च, १९५५, जिल्द ४, सं. ४, पृ. ३५८-३७१, जून, १९५५, जिल्द ५, सं. १, पृ. २९-४३, सितम्बर, १९५५, जिल्द ५, सं. २, पृ. १४०-१६८, दिसम्बर, १९५५

४६२. वासुदेवशरण अग्रवाल : नाइत्त इन अपभ्रंश लिटरेचर, जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ोदा, जिल्द ५, सं. १, पृ. १०३-१०४, सितम्बर, १९५५

४६३. डॉ. हरिवंश कोछड़ : अपभ्रंश-साहित्य (शोध-प्रबन्ध), भारती साहित्य मन्दिर, दिल्ली, १९५६

४६४. डॉ. शम्भूनाथ सिंह : हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप-विकास, बनारस, १९५६

४६५. जी. बी. दवाने : नॉमिनल कम्पोजीशन इन मिडिल इण्डो-आर्यन, डेक्कन कॉलेज, पूना, १९५६

४६६. एम. सी. मोदी : गुर्जररासावलि, बड़ोदा, १९५६

४६७. पं. परमानन्द शास्त्री : महाकवि स्वयम्भू और उसका तुलसीदास जी की रामायण पर प्रभाव, अनेकान्त, १४, २, पृ. ५६-६८, १९५६

४६८. डॉ. सुकुमार सेन : 'ब्रजबोली' की कहानी, भारतीय साहित्य, वर्ष १, अंक १, पृ. ७१-८४, जनवरी, १९५६

४६९. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी : हिन्दी का उत्तराधिकार, भारतीय साहित्य, वही, १५-३५, जनवरी, १९५६

४७०. अगरचन्द नाहटा : मंगल काव्य, भारतीय साहित्य, वही, पृ. १३६-१४७, जनवरी १९५६

४७१. डॉ. हॉर्नली : हिन्दी-धातु-संग्रह, व्युत्पत्ति और वर्गीकरण, भारतीय साहित्य, वर्ष १, अंक ३, पृ. १-८५, जुलाई, १९५६

४७२. डॉ. हॉर्नली : हिन्दी-धातु-संग्रह खण्ड २, भारतीय साहित्य, १, ४, पृ. १९-४८, अक्तूबर, १९५६

४७३. डॉ. एच. एल. जैन : पैरेलेलिज्म ऑव टेल्स बिटवीन अपभ्रंश एण्ड वेस्टर्न लिटरेचर, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बिहार, पटना, जिल्द १, मार्च, १९५६

४७४. एल. ए. श्वार्जश्चाइल्ड : सम फॉर्म्स ऑव द एब्सोल्यूटिव इन मिडिल इण्डो-आर्यन, जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ७६, सं. २, पृ. १११-११४, अप्रैल-जून १९५६

४७५. चन्द्रभान रावत : उकारबहुला प्रवृत्ति की परम्परा और ब्रज की बोली, भारतीय साहित्य, वर्ष १, अंक ४, पृ. ६५-७६, अक्तूबर, १९५६

४७६. एस. एन. घोषाल : एन इन्क्वायरी इन टु ईस्टर्न अपभ्रंश, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, जिल्द २२, सं. १, १९५६

४७७. डॉ. ह. चू. भायाणी : प्राकृत एण्ड जेनिस्ट स्टडीज (१९५३-५५), भारतीय विद्या, १९५६
४७८. डॉ. ह. चू. भायाणी : जैन परम्परानुं अपभ्रंश साहित्यमां प्रदान (गुजराती में), आ. विजयवल्लभसूरि स्मृतिग्रन्थ, गुजराती सेक्सन, पृ. ३१-४०, बम्बई, १९५६
४७९. एस. एन. घोषाल : ए नोट ऑन द नसल्स इन काण्टेक्ट विद एस्पिरेट्स इन प्राकृत, जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ोदा, जिल्द ५, सं. ४, पृ. ३६०-३६५, जून, १९५६
४८०. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : द शान्तिनाहचरिउ इन अपभ्रंश, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव पूना, पृ. १४४-१६५, १९५६
४८१. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : प्राकृत लैंग्वेज एण्ड कशमीर शैविज्म, डॉ. एस. के. बेल्वल्कर स्मृतिग्रन्थ, पृ. ५७-६२, पटना, १९५६
४८२. प्रबोधचन्द्र बागची और शान्तिभिक्षु शास्त्री : चर्यागीति-कोश, विश्वभारती, शान्तिनिकेतन, १९५६
४८३. प्रो. के. वी. व्यास : ए हिस्टॉरिकल आउटलाइन ऑव द लैंग्वेजेज ऑव वेस्टर्न इण्डिया, आ. विजयवल्लभसूरि स्मृतिग्रन्थ, पृ. १५७-१६८
४८४. पं. बेचरदास दोशी : प्राकृतपालि भाषानो फालो—भाषाना विकासमां (गुजराती), आ. विजयवल्लभसूरि स्मृतिग्रन्थ, पृ. २०-३०, बम्बई, १९५६
४८५. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : सन्देशरासक के विचारणीय पाठ और अर्थ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ६१, १, पृ. ११३-१३१, वि. सं. २०१३
४८६. एस. एन. घोषाल : नसल्स इन काण्टेक्ट विद म्यूट्स इन द प्राकृतपैंगलम्, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओ. रि. इं., पूना, जिल्द ३६, पृ. २२७-२३०, २० अगस्त, १९५६
४८७. एस. एन. घोषाल : कन्ट्रोवर्सी ओवर द सिग्निफिकेन्स ऑव अपभ्रंश, जर्नल ऑव एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता, जिल्द २२, खण्ड १, १९५६
४८८. डॉ. एल. ए. स्वार्ज्स चाइल्ड : नोट्स ऑन सम मिडिल इण्डो-आर्यन वर्ड्स, जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, ७७, ३, जुलाई-सितम्बर, पृ. २०३-२०७, १९५७
४८९. डॉ. एच. जेकोबी (मूल), अनु. एस. एन. घोषाल : इण्ट्रोडक्शन टु द सनत्कुमारचरितम्, जर्नल ऑव द बड़ोदा ओ. रि. इं. ७, १-२, पृ. ३६-४३, सितम्बर-दिसम्बर, १९५७
४९०. एस. के. चटर्जी एण्ड एस. सेन : ए मिडिल इण्डो-आर्यन रीडर, कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता, १९५७
४९१. एफ. बी. जे. कुइपर : द पैशाची फ्रेगमेण्ट ऑव द कुवलयमाला,

इण्डो-ईरानियन जर्नल, जिल्द १, सं. १, १९५७
४९२. प्रो. डी. बी. डिस्कालकर : संस्कृत एण्ड प्राकृत पोइट्स नोन फ्रॉम इन्स्क्रिपशन्स, जर्नल ऑव द ओ. रि. इं., बड़ोदा, ७, १-२, पृ. ७८-८५, सितम्बर-दिसम्बर, १९५७
४९३. प्रो. देवेन्द्रकुमार : अपभ्रंश-कवि पुष्पदन्त, अनेकान्त, १४, १०, पृ. २९२-९५, १९५७
४९४. देवेन्द्रकुमार जैन (अनु.) : पउमचरिउ भाग १, ज्ञानपीठ प्रकाशन, नवम्बर, १९५७, भा. २-३, १९५८
४९५. राहुल सांकृत्यायन (सं.) : दोहाकोश, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, १९५७
४९६. जुगलकिशोर मुख्तार : पुराने साहित्य की खोज, अनेकान्त, वर्ष १४, किरण ६, पृ. १७३-१७६, जनवरी, १९५७; तथा—वर्ष १४, किरण ७, पृ. २०३-६, फरवरी, १९५७
४९७. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : महार्थमंजरी और उसकी संस्कृत टीका, बेल्वलकर फेलेशियन वाल्यूम, दिल्ली, १९५७
४९८. डॉ. ह. चू. भायाणी : अपभ्रंश एण्ड ओल्ड गुजराती स्टडीज, भारतीय विद्या, जिल्द १७, सं. ३-४, पृ. १२२-१२६, १९५७
४९९. प्रो. न. भो. दिवेटिया (संक्षेपकार के. का. शास्त्री) : गुजराती भाषा अने साहित्य, फोर्ब्स गुजराती सभा, बम्बई, १९५७
५००. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : राजस्थान के जैन शास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची, तृतीय भाग, अगस्त, १९५७
५०१. डॉ. ह. चू. भायाणी : प्रिन्स ऑव वेल्स म्यूजियम स्टोन इन्स्क्रिप्शन फ्रॉम धार, १, २, भारतीय विद्या, १९५७, १९५९
५०२. डॉ. ए. एन. उपाध्ये और पं. फूलचन्द्र सिद्धान्तशास्त्री : ज्ञानपीठ पूजांजलि, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९५७
५०३. डब्ल्यू. शुब्रिंग : कुन्दकुन्द एश्ट एण्ड उनेश्ट, जेडश्रिफ्ट डेट ड्यूशेन, मोगन-लेण्डिशेन गैशामशन, ४२, बीजवेडेन (४० जर्मनी), पृ. ५५७, दिसम्बर १९५७
५०४. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : सन्देशरासक के विचारणीय पाठ और अर्थ (२), नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ६२, १, पृ. १-७, वि. सं. २०१४
५०५. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : सन्देशरासक के विचारणीय पाठ और अर्थ (३), वही, पृ. २५१-२६६
५०६. डॉ. शिवप्रसाद सिंह : ब्रजभाषा का उद्गम शौरसेनी अपभ्रंश, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ६२, १, पृ. ४६-१०४, वि. सं. २०१४
५०७. डॉ. ह. चू. भायाणी : अपभ्रंश एण्ड ओल्ड गुजराती स्टडीज, भारतीय विद्या,

जिल्द १८, सं. ३-४, पृ. ६६-७३, बम्बई, १६५८
५०८. के. आर. नॉर्मन : सम्प्रसारण इन मिडिल इण्डो-आर्यन, जर्नल ऑव द रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लन्दन, भाग १-२, १६५८
५०६. एल. आल्सडोर्फ (सं.) : इत्थीपरिन्ना, १६५८, हेमसागरसूरि (सं.) उपदेशमाला, १६५८
५१०. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : ए नोट ऑन द रिमार्क्स ऑव पिशेल ऑन द इलस्ट्रेटिव गाथाज ऑव हेमचन्द्राज देशीनाममाला, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कॉन्फ्रेन्स, अन्नामलाई नगर, पृ. २७४-२७६, १६५८
५११. डॉ. एस. एन. घोषाल : ए नोट ऑन ए प्राकृत वोकेबल, जर्नल ऑव द ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा, ७, ३, पृ. १६६-२०१, मार्च, १६५८
५१२. देवेन्द्रकुमार जैन, इन्दौर (अनु.) : पउमचरिउ, भाग २, ३, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, जनवरी, १६५८
५१३. डॉ. हरिहरप्रसाद गुप्त : देशीनाममाला में कृषि शब्दावली, हिन्दुस्तानी, भाग १६, अंक ३, पृ. ८१-१०५, जुलाई-सितम्बर, १६५८
५१४. कस्तूरचन्द कासलीवाल : हिन्दी साहित्य के आदिकाल की एक प्राचीन कथा-कृति 'जिनदत्तचउपई', हिन्दुस्तानी, भाग १६, अंक ४, पृ. २०-३१, अक्तूबर-दिसम्बर' १६५८
५१५. जयेन्द्र त्रिवेदी : सौराष्ट्री, हिन्दुस्तानी, १६, ४, पृ. ३-१०, अक्तूबर-दिसम्बर १६५८
५१६. रिचर्ड पिशेल : प्राकृत भाषाओं का व्याकरण (अनुवादक : डॉ. हेमचन्द्र जोशी), बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना, १६५८
५१७. डॉ. ह. चू. भायाणी : चतुर्मुख—वन ऑव द अर्लिएस्ट अपभ्रंश एपिक पोइट्स, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा, ७, ३, पृ. २१४-२२४, मार्च, १६५८
५१८. हरिशंकर शर्मा 'हरीश' : रास परम्परा और भरतेश्वर बाहुबलीरास, हिन्दी अनुशीलन, वर्ष ११, अंक २, पृ. २५-३६, अप्रैल-जून, १६५८
५१६. हरिशंकर शर्मा 'हरीश' : भरतेश्वर बाहुबलीरास अध्ययन, हिन्दी अनुशीलन, ११, अंक ३, पृ. २५-३६, जुलाई-सितम्बर, १६५८
५२०. डॉ. सुमित्र मंगेश कत्रे : व्युत्पत्तिशास्त्र और ऐतिहासिक व्याकरण, भारतीय साहित्य, वर्ष ३, अंक ४, पृ. १-११, अक्तूबर, १६५८
५२१. वि. वि. आर. शर्मा : द्राविड़ भाषाओं के देशीय शब्द, भारतीय साहित्य, ३, ४, पृ. ५६-६४, अक्तूबर, १६५८
५२२. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : सन्देशरासक के विचारणीय पाठ और अर्थ (परिशिष्ट), नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ६३, १, पृ. ८६-६२, वि. सं. २०१५

५२३. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल : हिन्दी भाषा के कोश निर्माण की कुछ समस्याएँ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ६३, १, पृ. ४३-५३, वि. सं. २०१५

५२४. राजबली पाण्डेय (सं.) : हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, प्रथम भाग, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वि. सं. २०१४

५२५. डॉ. के. डी. ब्रीस : अपभ्रंश स्टडीज, (३), जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ७६, सं. १, पृ. ७-१६, जनवरी-मार्च, १९५६

५२६. भो. जे. सण्डेसरा : प्रोग्रेस ऑव प्राकृत एण्ड जैन स्टडीज, जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ोदा, ६, २, पृ. १५२-१८७, दिसम्बर, १९५६

५२७. राजाराम जैन : अभिमानमेरु पुष्पदन्त, जैन सन्देश, शोधांक, पृ. १६३-६६, २२ अक्तूबर, १९५६

५२८. डॉ. अम्बाप्रसाद 'सुमन' : प्राकृत पैंगलम् की शब्दावली और वर्तमान ब्रजलोक शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन, हिन्दुस्तानी, २०, १, पृ. १४-२५, जनवरी-मार्च, १९५९

५२९. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : हेमचन्द्र-सूत्र-विमर्श (संस्कृत में), SSPP जिल्द ४२, सं. ६, अक्तूबर, पृ. ६१-६२, कलकत्ता, १९५९

५३०. हरिशंकर शर्मा : आदिकाल का हिन्दी जैन प्रबन्धकाव्य पंचपाण्डवचरितरासु—एक विश्लेषण, हिन्दुस्तानी, भा. २०, अंक २, पृ. ७३-८९, १९५९

५३१. हरिशंकर शर्मा : नेमिनाथ चउपई : हिन्दी का एक आदिकालीन बारहमासा काव्य, हिन्दुस्तानी, भा. २०, अंक ३, पृ. ४७-५६, जुलाई-सितम्बर, १९५९

५३२. डॉ. भोलाशंकर व्यास (सं.) : प्राकृतपैंगलम्, भा. १, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी, १९५९

५३३. वासुदेवसिंह : आणंदा, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६४, अंक १, पृ. ५७-६३, वि. सं. २०१६

५३४. डॉ. आर. एस. त्रिपाठी : महाभाष्य में प्राकृत, अपभ्रंश सम्बन्धी सामग्री, अभिनव भारती, भा. १, १९५९

५३५. विश्वेश्वरानन्द संस्थानीय हस्तलेखसंग्रह—परितालिका, द्वितीय खण्ड, होशियारपुर, १९५९

५३६. हजारीप्रसाद द्विवेदी तथा वि. त्रिपाठी (सम्पादित व अनु.) : सन्देशरासक, हिन्दी ग्रन्थ-रत्नाकर, बम्बई, १९६०

५३७. चटर्जी, एस. के. : इण्डो-आर्यन एण्ड हिन्दी, कलकत्ता, १९६०

५३८. एस. एन. घोषाल : द इयुफोनिक-ग्लाइड एच इन प्राकृत, जर्नल ऑव द ओरि. इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा, ६, ३, पृ. २५६-२५६, मार्च, १९६०

५३९. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश-काव्य 'सन्देशरासक', हिन्दुस्तानी, २१, ४, पृ.

२३-४१, अक्तूबर-दिसम्बर, १९६०
५४०. डॉ. के. डी. ब्रीस : ए द्राविडियन ईडियम इन अपभ्रंश, प्रो. पी. के. गौड़ कमेमोरेशन वाल्यूम, पृ. १०३-१०५, १९६०
५४१. भोगीलाल जे. सण्डेसरा : प्राचीन फागु-संग्रह, विश्वविद्यालय, बड़ौदा, १९६०
५४२. आर. एल. टर्नर : सम प्राब्लेम्स ऑव साउण्ड चेंज इन इण्डो-आर्यन, पी. डी. गुणे स्मृति-भाषण १, पूना विश्वविद्यालय, १९६०
५४३. ए. एन. उपाध्ये : सम पैरेलल, थाट्स ऑव जैन अनुप्रेक्षाज, जर्नल ऑव द ओरि. इन्स्टीट्यूट, बड़ौदा, ९, ४, पृ. ४१९-४२१, जून, १९६०
५४४. एच. जेकोबी (मूल) अनु. एस. एन. घोषाल : ऑन एक्सेण्ट इन द क्लॉसिकल संस्कृत एण्ड द प्राकृत डायलेक्ट्स, जर्नल ऑव द ओ. इं. बड़ौदा, १०, १, पृ. ३४-५२, सितम्बर, १९६०
५४५. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी : सिद्धहेमगत अपभ्रंश व्याकरण (गुजराती), बम्बई, १९६०, द्वि. सं. १९७१, तृ. सं. १९९३
५४६. एल. आल्सडोर्फ : द ओरिजिन ऑव द न्यू-इण्डो-आर्यन स्पीचेज, जर्नल ऑव द ओरि. इं., बड़ौदा, १०, २, पृ. १२६-१४६, दिसम्बर, १९६०
५४७. एस. एन. घोषाल : सम स्टडीज इन प्राकृत, जर्नल ऑव द डिपार्टमेण्ट ऑव लेटर्स (न्यू सीरीज), जिल्द ३, कलकत्ता विश्वविद्यालय, १९६०
५४८. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : सन्देशरासक और हिन्दी काव्यधारा, सप्तसिन्धु, पृ. १-१०, अप्रैल, १९६०
५४९. डॉ. एस. जी. तुलपुले : एन ओल्ड मराठी रीडर, पूना, १९६०
५५०. डॉ. दशरथ शर्मा : वि. सं. ८३५ में राजस्थान में रचित एक चर्चरीरास, मरुभारती, ८, १, पृ. ३-४, अप्रैल, १९६०
५५१. डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल : कुछ मध्यकालीन अपभ्रंश नाम, हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, बर्ष १३, अंक १-२, पृ. २२५-२२९
५५२. डॉ. माताप्रसाद गुप्त : रोडा कृत 'राउलवेल' (राजकुलविलास)—(ग्यारहवीं शती का एक शिलांकित भाषाकाव्य), हिन्दी अनुशीलन, धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक, वर्ष १३, अंक १-२, (जनवरी-जून, १९६०), पृ. २१-३८
५५३. डॉ. हेमचन्द्र जोशी : हिन्दी पर नयी शोध और हिन्दी कोश, सरस्वती, पृ. ११-१४, जनवरी, १९६१
५५४. एस. एन. घोषाल : ए प्राकृत वर्ड एण्ड सम लिंग्विस्टिक फेनोमेना एट द बेकग्राउण्ड ऑव इट्स ओरिजिन, जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ौदा, १०, ३, मार्च, १९६१
५५५. एच. जेकोबी (अनु. डॉ. एस. एन. घोषाल) : एन अनयूजल डेवलपमेण्ट ऑव 'एप एन' प्राकृत, इण्डियन स्टडीज पास्ट एण्ड प्रजेण्ट, कलकत्ता, जिल्द २,

पृ. ५४३-५४८, अक्तूबर, १९६०, जुलाई, १९६१
५५६. लुडविग आल्सडोर्फ (मूल) अनु. एस. एन. घोषाल : द ओरिजिन ऑव द न्यू इण्डो-आर्यन स्पीचेज, जर्नल ऑव द ओ. इं., बड़ोदा, पृ. १२६-१४६, मार्च, १९६१
५५७. डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया : राउलवेल की भाषा, भारतीय साहित्य, ६, ४, अक्तूबर, १९६१
५५८. जॉर्ज एस. लेन : ऑन द इनफ्लेक्शन ऑव द इण्डो-यूरोपियन डिमान्स्ट्रेटिव लैंग्वेज, जर्नल ऑव द लिंग्विस्टिक सोसायटी, अमरीका, अक्तूबर, १९६१
५५९. राजाराम जैन : अपभ्रंश भाषा के सन्धिकालीन महाकवि रइधू, आचार्य भिक्षुस्मृतिग्रन्थ, पृ. १०१-१५, १९६१
५६०. ह. दा. वेलणकर (सं.) : छन्दोऽनुशासन, भारतीय विद्याभवन, बम्बई, १९६१
५६१. के. डी. ब्रीस : अपभ्रंश स्टडीज (४), जर्नल ऑव द अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ८१, सं. १, पृ. १३-२१, जनवरी-मार्च, १९६१
५६२. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : प्राकृत छन्दकोश, हिन्दुस्तानी, भाग २२, अंक ३-४, पृ. ४०-४६, जुलाई-सितम्बर, १९६१
५६३. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश कथा-काव्य, शोध-पत्रिका, वर्ष १२, अंक ४, पृ. ६-१७, जून, १९६१
५६४. डॉ. एच. सी. भायाणी : अपभ्रंश लिटरेचर, आचार्य भिक्षु स्मृति ग्रन्थ, पृ. ५६-६६, कलकत्ता, १९६१
५६५. डॉ. देवेन्द्रकुमार (इन्दौर) : पुष्पदन्त की रामकथा, आचार्य भिक्षु स्मृतिग्रन्थ, पृ. ९८-१००, १९६१
५६६. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : राजस्थान के जैन शास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची, चतुर्थ भाग, जयपुर, १९६१
५६७. आर. एन. दाण्डेकर : वैदिक बिब्लियोग्राफी, जिल्द २, पूना, १९६१
५६८. ए. एम. घाटगे : हिस्टोरिकल लिंग्विस्टिक्स एण्ड इण्डो-आर्यन लैंग्वेजेज, बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई, १९६१
५६९. एच. डब्ल्यू. बेल्ली : इण्डो-सीथियन स्टडीज, जिल्द ४, केम्ब्रिज, १९६१, जिल्द ५, १९६३
५७०. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश के 'प्पणु' और 'तण' प्रत्यय, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ६५, ४, पृ. २९६-३०५, वि. सं. २०१७
५७१. डॉ. जगदीशचन्द्र जैन : प्राकृत साहित्य का इतिहास, १९६१
५७२. किशोरदास वाजपेयी : 'शौरसेन' अपभ्रंश और हिन्दी आदि भाषाएँ, मध्यप्रदेश सन्देश, २३ दिसम्बर, १९६१
५७३. डॉ. एच. सी. भायाणी : द लेट मिडिल इण्डो-आर्यन सफिक्स—अण,

ब्रह्मविद्या, जिल्द २५, भा. १-४, पृ. ३१३-३२०, १६६१
५७४. डॉ. एच. सी. भायाणी : पउमचरिउ, सम्पादित, भाग ३, सिंघी जैन ग्रन्थमाला, १६६१
५७५. पं. दीपचन्द पाण्ड्या (सं.) : कवि श्री लक्ष्मीचन्द्र विरचित सावयधम्मुदोहा, केकड़ी, वि. सं. २०१७
५७६. डॉ. के ऋषभचन्द्र : ए क्रिटिकल स्टडी ऑव पउमचरियं ऑव विमलसूरि, प्राकृत जैन विद्यापीठ, वैशाली से पी-एच. डी. की उपाधि के लिए १६६२ में स्वीकृत तथा वहीं से १६७१ में प्रकाशित शोधप्रबन्ध।
५७७. डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : अपभ्रंश का रसात्मक साहित्य, हिन्दी विभाग, पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़, १६६१-६२
५७८. हीरालाल रसिकदास कापड़िया : द जैन रिकार्ड्स अबाउट वर्ड्स, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओरियण्टल रि. इं., पूना, पृ. ५६-१०७, जिल्द ६३, १६६२
५७६. डॉ. सुकुमार सेन : थ्री लेक्चर्स ऑन मिडिल इण्डो-आर्यन, जर्नल ऑव द ओरि. इं., बड़ोदा, जिल्द ११, सं. ३, पृ. १६३-२१६, मार्च, १६६२
५८०. अगरचन्द नाहटा : श्वेताम्बर अपभ्रंश साहित्य, महावीर-जयन्ती स्मारिका, जयपुर, १६६२
५८१. डॉ. राजकिशोर सिंह : देशज, हिन्दुस्तानी, भाग २४, अंक ३, पृ. ६१-६६, जुलाई-सितम्बर, १६६२
५८२. डॉ. लुडविग आल्सडोर्फ : अशोकाज एडिक्ट्स ऑव धौली एण्ड जोगड़, १६६२
५८३. डॉ. भोलाशंकर व्यास (सं.) : प्राकृत पैंगलम्, भा. २, प्राकृत टेक्स्ट सीरीज, १६६२
५८४. वीरेन्द्र श्रीवास्तव : कविराज विद्यापति का अपभ्रंश पाण्डित्य, चम्पा पत्रिका, अंक १, भागलपुर विश्वविद्यालय, १६६२
५८५. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश कथाकाव्य और भविसयत्तकहा, हिन्दुस्तानी, भाग २३, अंक १, पृ. २१४-२३४, जनवरी-मार्च, १६६२
५८६. डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया : पुष्पदन्त की भाषा, महावीर जयन्ती स्मारिका, पृ. १६०-१६६, जयपुर, १६६२
५८७. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू द्वारा उल्लिखित खेल्हा ब्रह्मचारी, अनेकान्त, वर्ष १५, किरण १, पृ. १६-२०, १६६२
५८८. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश भाषा का रासा साहित्य, महावीर जयन्ती स्मारिका, पृ. २२४-२२८, जयपुर, १६६२
५८६. परमानन्द शास्त्री : १३वीं शताब्दी का एक अपभ्रंश ग्रन्थ, जैन सन्देश, शोधांक, २५, ४५, पृ. ८७-६०, १५ फरवरी, १६६२

५६०. सलेकचन्द्र जैन : अपभ्रंश कवि स्वयम्भू—एक अध्ययन, जैन सन्देश, वही, पृ. ६१-६८, १५ फरवरी, १९६२
५६१. ह. दा. वेलणकर (सं.) स्वयम्भूछन्द, सम्पादित, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, १९६२
५६२. डॉ. प्रेमसागर जैन : जैन अपभ्रंश का मध्यकालीन हिन्दी के भक्तिकाव्य पर प्रभाव, अनेकान्त, १५, १, अप्रैल, पृ. २५१-५२, १९६२ तथा १५, २, पृ. ५७-६४, जून, १९६२
५६३. अगरचन्द नाहटा : बीकानेर के ज्ञान-भण्डारों में प्राप्त तीन अपभ्रंश दिगम्बर ग्रन्थ, वीरवाणी, ५, १४
५६४. अगरचन्द नाहटा : अपभ्रंश-भाषा के कतिपय अन्य दिगम्बर ग्रन्थ, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ५२, ६
५६५. अगरचन्द नाहटा : जिनप्रभसूरि और उनकी अपभ्रंश-रचनाएँ, हिन्दी-अनुशीलन, ६, १
५६६. अगरचन्द नाहटा : आणंदा का रचनाकाल एवं रचयिता, वीरवाणी, ३, २१
५६७. डॉ. हीरालाल जैन (सं. व अनु.) : हरिदेव विरचित मयणपराजयचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९६२
५६८. के. सी. श्रोत्रिय : खुम्माणरास और उसका अध्ययन, पी-एच. डी. के लिए १९६२ में राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर से स्वीकृत शोधप्रबन्ध
५६९. मुनि पुण्यविजय (सं.) : आख्यानकमणिकोश, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, १९६२
६००. बी. के. खडबडी : कन्नडवर्ड्स इन देशी स्टॉक, जर्नल ऑव द कर्नाटक यूनिवर्सिटी, जिल्द ७, पृ. ८०-८६, १९६२
६०१. आ. हजारीप्रसाद द्विवेदी : अपभ्रंश का रसालक साहित्य, सप्तसिन्धु, ९, ६, पृ. ३-१७, जून, १९६२
६०२. डॉ. हरीश : अपभ्रंश तथा आदिकालीन हिन्दी जैन साहित्य में रसराज, सप्तसिन्धु, ९, ९, पृ. १४-२५, सितम्बर, १९६२
६०३. एम. जे. ड्रेसडन : नोट्स ऑन खोतानीज पोइट्री, इण्डोलॉजीकल स्टडीज इन ऑनर ऑव डब्ल्यू. नॉर्मन ब्राउन, अमरीकन ओरियण्टल सोसायटी, पृ. ४२-५०, १९६२
६०४. डॉ. शशिभूषणदास गुप्त : चर्यापद की सन्ध्या और सन्धा-भाषा, परिषद्-पत्रिका, वर्ष १, अंक ४, पृ. १७-२२, जनवरी, १९६२
६०५. डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री : देशीनाममाला : एक अध्ययन, परिषद्-पत्रिका, वर्ष २, अंक २, पृ. ५५-६६, जुलाई, १९६२
६०६. डॉ. माताप्रसाद गुप्त (सं.) : राउलवेल और उसकी भाषा, मित्र प्रकाशन,

इलाहाबाद, १९६२

६०७. तिश्योशी नारा : शार्टनिंग ऑव द फाइनल वावेल ऑव इन्स्ट. सीग. एन एण्ड फोनोलॉजी ऑव द लैंग्वेज इन सरह दोहा, बुलेटिन ऑव द फिलालॉजीकल सोसायटी ऑव कलकत्ता, ४, १. पृ. १-६, १९६३

६०८. एच. सी. भायाणी : मिडिल इण्डो-आर्यन विड्ढरिल्ल, मुंशी इण्डोलॉजीकल स्मृतिग्रन्थ, भारतीय विद्याभवन प्रकाशन, पृ. २२१-२२४, जनवरी, १९६३

६०९. डॉ. एस. जी. तुलपुले : प्राचीन मराठी कोरीवा लेखा, पूना, १९६३

६१०. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : हिन्दी पर अपभ्रंश का प्रभाव, हिन्दुस्तानी, २३, २, पृ. ५४-६५, अप्रैल-जनवरी, १९६३

६११. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का एक प्रमुख कथाकाव्य—भविसयत्तकहा, भारतीय साहित्य, ८, २, पृ. ११३-२८, १९६३

६१२. डॉ. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी : अपभ्रंश व्याकरण की कुछ समस्याओं पर विचार, भारतीय साहित्य, ८, २, पृ. १-६, आगरा, १९६३

६१३. पी. के. वी. आप्टे : हेमचन्द्र कृत अपभ्रंश व्याकरण, मराठी संशोधन पत्रिका, १०, २, पृ. ७७-९२, बम्बई, जनवरी, १९६३

६१४. सत्यरंजन बनर्जी : ए स्केल्टन ग्रैमर ऑव प्राकृत एट्रिब्युटेड टु जीवगोस्वामी, बुलेटिन ऑव द फिलालॉजिकल सोसायटी, कलकत्ता, ४, १, पृ. १०-३१, १९६३

६१५. डॉ. एच. सी. भायाणी : अपभ्रंश 'उव्विड्ड', 'लास्ट टेस्ट विकेम इन्सिपिड, जर्नल ऑव द ओ. रि. इं., बड़ोदा, १३, १, पृ. १७-२०, सितम्बर, १९६३

६१६. डॉ. एच. सी. भायाणी : स्टडीज इन हेमचन्द्राज देशीनाममाला, भारतीय विद्या, २२, १-४, पृ. ५१-५६, दिसम्बर, १९६३

६१७. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी : शब्दकथा, स्वाति प्रकाशन, बम्बई, १९६३, द्वि. सं., १९८३

६१८. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : जैनग्रन्थ-प्रशस्ति-संग्रह (अपभ्रंश), द्वितीय भाग, दिल्ली, १९६३

६१९. बालचन्द्र जैन : जटाशंकर स्टोन इन्स्क्रिप्सन ऑव विजयसिंह, जर्नल ऑव इण्डियन हिस्ट्री, जिल्द ६१, भाग ३, दिसम्बर, १९६३

६२०. बी. के. खडबडी : कन्नडवर्ड्स इन हेमचन्द्राज देशीनाममाला, जर्नल ऑव द कर्नाटक यूनिवर्सिटी, मैसूर, जिल्द ८, (ह्युमेनिटीज), पृ. २६५-६८, १९६३

६२१. डॉ. राजनारायण पाण्डेय : महाकवि पुष्पदन्त—एन अपभ्रंश पोइट ऑव टेन्थ सेंचुरी, आगरा विश्वविद्यालय से १९६३ में पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत शोधप्रबन्ध

६२२. मुनि जिनविजय (सं.) : ए केटलॉग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स

इन द राजस्थान ओरि. रि. इं. जोधपुर संग्रह, १९६३

६२३. जयन्तकृष्ण हरिकृष्ण दवे : गुजराती साहित्य का इतिहास, हिन्दी-समिति उ. प्र., लखनऊ, १९६३

६२४. गोवर्द्धन शर्मा : अपभ्रंश और आभीरादि जातियाँ, मरुभारती, ११, ३, पृ. १४-१६, अक्तूबर, १९६३

६२५. एन. डी. शर्मा : अपभ्रंश काव्य में छन्दयोजना, आगरा विश्वविद्यालय से १९६३ में पी-एच. डी. के लिए स्वीकृत शोधप्रबन्ध

६२६. डॉ. देवेन्द्रकुमार, इन्दौर : स्वयम्भू युग की अपभ्रंश काव्यधारा, महावीर जयन्ती स्मारिका, पृ. ९-१३, जयपुर, १९६३

६२७. डॉ. हरीश : हिन्दी साहित्य के आदिकाल की विशिष्ट हिन्दी जैनकृति : जम्बूस्वामी कथावस्तु,पृ. २३-२५, महावीर-जयन्ती स्मारिका, जयपुर, १९६३

६२८. डॉ. वासुदेवसिंह : जैन तत्त्वज्ञान के विशिष्ट आख्याता : योगेन्द्र मुनि, पृ. २६-३३, महावीर-जयन्ती स्मारिका, जयपुर, १९६३

६२९. प्रो. राजाराम जैन : महाकवि रइधू : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ. ११८-१२३, महावीर-जयन्ती स्मारिका, जयपुर, १९६३

६३०. डॉ. मुरारीलाल शर्मा 'सुरस' : प्राकृत और अपभ्रंश में कृष्णकाव्य का विकास, सप्तसिन्धु, पृ. २३-२७, दिसम्बर, १९६३

६३१. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : हिन्दी के अज्ञात साहित्य की खोज, सप्तसिन्धु, पृ. २९-४१, फरवरी, १९६३

६३२. आर. एन. दाण्डेकर एण्ड वी. राघवन (सं.) : ओरियण्टल स्टडीज इन इण्डिया, नयी दिल्ली, १९६४

६३३. तिश्योरी नारा : हिस्टॉरीकल स्टडी ऑव अवहट्ट (सं. आर. एन. दाण्डेकर), समरीज ऑव पेपर्स, पृ. १७६-१७८, पूना, १९६४

६३४. डॉ. प्रेमसागर जैन : हिन्दी जैन भक्तकाव्य और कवि, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९६४

६३५. रश्मिकान्त तथा कान्तिलाल : अपभ्रंश साहित्य का इतिहास, सांस्कृतिक प्रकाशन मन्दिर, बम्बई, १९६४

६३६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश कथा-काव्य, गुरुदेव श्रीरत्नमुनि स्मृति-ग्रन्थ, पृ. ३२८-३३८, आगरा, १९६४

६३७. शालिग्राम उपाध्याय : हेमचन्द्राचार्य के व्याकरणोद्धृत अपभ्रंश-दोहों का साहित्यिक मूल्यांकन, जैनसिद्धान्तभास्कर, २४, १, पृ. २८-४१, आरा, दिसम्बर, १९६४

६३८. अगरचन्द नाहटा : चूनड़ी के रचयिता विनयचन्द्र का समय, जैन सन्देश, शोधांक १८, पृ. २७३-२७४, मार्च, १९६४

६३६. डॉ. माताप्रसाद गुप्त : पुरानी खड़ी बोली, भारतीय साहित्य, वर्ष ८, अंक ४, १६६४
६४०. ह. चू. भायाणी : प्रा. विगुत्त, गु. विगूत, विगूयं वगेरे (गुजराती में), स्वाध्याय ओ. इं., बड़ोदा, जिल्द १, पृ. १२-१५, १६६४
६४१. डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया : राउलबेल में प्रयुक्त क्रियाएँ, नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, मालवीयशती अंक, पृ. ४५३-४६१
६४२. हीरालाल रसिकदास कापड़िया : द जैन रिकार्ड्स अबाउट वर्ड्स, एनल्स ऑव द भण्डारकर ओ. रि. इं., पूना, पृ. १०५-१४१, जिल्द ६५, भाग १-४, १६६४
६४३. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : हरिषेण नाम के आठ कवि (अनु. कुन्दलाल जैन), सन्मति-सन्देश, ६, ५, पृ. ६२-६३, मार्च, १६६४
६४४. डॉ. अम्बाप्रसाद 'सुमन' : हेमचन्द्रीय व्याकरण की अपभ्रंश किसकी पुत्री है ? परिषद्-पत्रिका, वर्ष ४, अंक ३, पृ. ५५-६०, अक्तूबर, १६६४
६४५. अगरचन्द नाहटा : अपभ्रंश-भाषा के सन्धि-काव्य, परिषद्-पत्रिका, पृ. ६३-६८, अक्तूबर, १६६४
६४६. एस. एन. घोषाल : द एस्पिरेट एच आफ्टर द अनुस्वार एण्ड इट्स ट्रान्सफार्मेशन इन प्राकृत, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा, जिल्द १३, सं. ३, पृ. २१४-२१६, मार्च, १६६४
६४७. दलसुख मालवणिया : कुवलयमालाकहा अने तेनां सन्ध्या वर्णनो (गुजराती में), स्वाध्याय, ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा, जिल्द १, पृ. ५-११, १६६४
६४८. डॉ. सरनामसिंह 'अरुण' : आर्यभाषा के विकासक्रम में अपभ्रंश, जयपुर, प्रथम संस्करण १६६४, द्वि. सं. १६६६
६४६. डॉ. अल्फ्रेड मास्टर : ए ग्रैमर ऑव ओल्ड मराठी, ऑक्सफोर्ड, १६६४
६५०. विद्यानन्द : भारतीय आर्यभाषा और अर्धमागधी, जैन सिद्धान्त भास्कर, २४, १, पृ. १२-१८, दिसम्बर, १६६४
६५१. पं. परमानन्द शास्त्री : अपभ्रंश का रासा-साहित्य, जैन सिद्धान्त भास्कर, २४, १, पृ. ४८-५२, दिसम्बर, १६६४
६५२. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : अपभ्रंश साहित्य के विकास में पंजाब का योगदान, सप्तसिन्धु, पृ. १-१०, अगस्त, १६६४
६५३. डॉ. वासुदेवसिंह ; महयंदिण मुनि, महावीर-जयन्ती स्मारिका, पृ. ६८-७०, जयपुर १६६४
६५४. उमाकान्त प्रेमानन्द शाह : चाचर-चर्चरी—एक अध्ययन, स्वाध्याय, ओ. इं., बड़ोदा, पृ. २८-४८, १६६४
६५५. मुनिश्री बुधमल : द कण्ट्रीब्यूशन ऑव जैन राइटर्स टु इण्डियन लैंग्वेजेज,

ऑल इं. ओ. कान्फ्रेन्स, पृ. ७६, नयी दिल्ली, १६६४

६५६. डॉ. श्याममनोहर पाण्डेय : विनयचन्दसूरि कृत 'नेमिनाथ चतुष्पदिका', सम्मेलन-पत्रिका, भाग ४७, अंक २, पृ. ३४-४०,चैत्र-ज्येष्ठ, शक १८८३

६५७. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश और हिन्दी-कोश, हिन्दुस्तानी, २५, १-४, जनवरी-दिसम्बर, १६६४

६५८. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश-कथाकाव्य, आलोचना, ३२, ६, पृ. ६२-७४, अक्तूबर, १६६४

६५६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश और सिन्धी, सप्तसिन्धु, वर्ष ११, अंक १०, पृ. ५०-५६, अक्तूबर, १६६४

६६०. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री ; अपभ्रंश का एक प्रेमाख्यानक काव्य : विलासवईकहा, अनेकान्त, १७, ५, पृ. १६६-२०२, दिसम्बर, १६६४

६६१. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश-काव्यों में अस्त्र-शस्त्रों के उल्लेख, त्रिपथगा, पृ. १३७-१४०, अगस्त १६६४

६६२. हीरालाल जैन (सं.) : करकण्डचरिउ, सम्पादित हिन्दी अनुवाद सहित, भारतीय ज्ञानपीठ, १६६४

६६३. के. आर. नॉर्मन ; मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज १, जर्नल ऑव द ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द ६, सं. ३, पृ. २६८-२७३, मार्च, १६६०; (२) जिल्द १०, सं. ४, पृ. ३४८-३५२, जून, १६६१; (३) जिल्द ११, सं. ४, पृ. ३२२-३२७, ४ जून, १६६२; (४) जिल्द १३, सं. ३,पृ. २०८-२१३, मार्च, १६६४

६६४. अगरचन्द नाहटा : नेमिनाहचरिउ, अनेकान्त, १७, ५, पृ. २२६-२२६, १६६४

६६५. अगरचन्द नाहटा : कविवर रइधू विरचित सावयचरिउ, अनेकान्त, १७, १, पृ. १०-१६, १६६४

६६६. पं. परमानन्द शास्त्री : कवि वल्ह या बूचिराज, अनेकान्त, १६, ६, पृ. २५४-२५७, फरवरी, १६६४

६६७. उमाकान्त प्रेमानन्द शाह : गुर्जर अपभ्रंश विशे वाधू, स्वाध्याय, गुजराती पत्रिका, १, २, पृ. १५६-१६८, जनवरी, १६६४

६६८. मुनि बुधमल : भारतीय भाषाओं को जैन साहित्य की देन, शोध-पत्रिका, १५, २, पृ. १०५-१२६, अप्रैल, १६६४

६६६. बी. के. खडवडी : कन्नडवर्ड्स इन देशी स्टॉक, जर्नल ऑव द कर्नाटक यूनिवर्सिटी, मैसूर, जिल्द ७, पृ. २६५-२६८, जिल्द ८, पृ. ८०-८६, १६६४

६७०. एन. रत्नाश्रियन् : सम ओनोमेटोपोइअस फ्रॉम पुष्पदन्ताज महापुराण, भारतीय विद्या, २३, १-४, पृ. ८०-८६, सितम्बर, १६६४

६७१. एच. सी. भायाणी : ए. फ्यू प्रॉब्लेम्स ऑव अपभ्रंश रिकन्सीडर्ड, इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, जिल्द २५, पृ. ७०-७६, १६६४
६७२. एस. एन. घोषाल : द डेवलपमेण्ट ऑव द संस्कृत कंजेक्ट 'क' इन प्राकृत, ओरियण्टल ऑल इं. कान्फ्रेन्स, समरीज ऑव पेपर्स, पृ. १०६-११०, नयी दिल्ली, १६६४
६७३. गोकुलचन्द्र शर्मा : सन्देशरासक के रचयिता का निवास स्थान, नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६७, अंक २, पृ. १६१-१६३
६७४. प्रो. शालिग्राम उपाध्याय : हेमचन्द्र के अपभ्रंश व्याकरणोद्धृत पद्यों का तुलनात्मक अध्ययन, भारतीय जैन साहित्य, सं. प., भा. १, आरा, १६६५
६७५. प्रेम सुमन जैन : अपभ्रंश साहित्य और साहित्यकार, वही, पृ. ७८-८५, आरा, १६६५
६७६. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश में कड़वक छन्द, वही, पृ. ७४-७७, आरा, १६६५
६७७. डॉ. राजाराम जैन : रइधू कृत 'सावयचरिउ' 'समत्तकउमुइ' ही है, अनेकान्त, १७, ६, पृ. २५०-२५२, फरवरी, १६६५
६७८. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का एक प्रमुख कथाकाव्य, अनेकान्त, पृ. २६३-२७४, फरवरी, १६६५
६७६. परममित्र शास्त्री : अपभ्रंश और देशी, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष ६६, अंक १-२, विक्रम सं. २०२१
६८०. डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन : 'कवि सहणपाल' जैन सन्देश, शोधांक २१, पृ. २२-२४, मई, १६६५
६८१. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश जैन साहित्य, मुनिश्री हजारीमल स्मृति-ग्रन्थ, पृ. ८०४-८, ब्यावर, १६६५
६८२. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्य, समरीज ऑव पेपर्स, ऑल इण्डिया ओ. कान्फ्रेन्स, २२वाँ सेशन, गौहाटी, जनवरी, १६६५
६८३. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : फ्रेग्मेण्ट्स ऑव द अर्लिएस्ट ईस्टर्न प्राकृत ग्रैमेरियन्स, वही, पृ. १४५, गौहाटी, जनवरी, १६६५
६८४. डॉ. एच. सी. भायाणी : फोर देश्य वर्ड्स, वही, पृ. १४५, गौहाटी, जनवरी, १६६५
६८५. श्रीमती काजल घोष : अपभ्रंश वर्सेज इन द विक्रमोर्वशीय, वही, पृ. १४५, जनवरी, १६६५
६८६. राजाराम जैन : रइधू साहित्य की प्रशस्तियों में ऐतिहासिक व सांस्कृतिक सामग्री, मुनिश्री हजारीमल स्मृति-ग्रन्थ, पृ. ६५४-६६५, ब्यावर, १६६५
६८७. डॉ. ह. चू. भायाणी : तीन अर्धमागधी शब्दों की कथा, वही, पृ. ७७१-७२

६८८. डॉ. गोवर्धन शर्मा : अपभ्रंश का विकास, वही, पृ. ६००-६१६, ब्यावर, १९६५
६८९. डॉ. गोवर्धन शर्मा : प्राकृत और अपभ्रंश का डिंगल-साहित्य पर प्रभाव, कानपुर, १९६५
६९०. डॉ. हरिशंकर शर्मा 'हरीश' : आदिकाल का हिन्दी गद्य साहित्य (सं. १०००-१५००), रामा प्रकाशन, लखनऊ, १९६५
६९१. डॉ. माताप्रसाद गुप्त : 'सन्देशरासक' के पाठ और अर्थ में संशोधन के कुछ सुझाव, परिषद्-पत्रिका, ३, २, पृ. ७५-७८, जुलाई, १९६५
६९२. डॉ. ई. वी. कॉवेल (मूल) अनु. नटवरलाल अम्बालाल व्यास : प्राकृत-व्याकरण-संक्षिप्त परिचय, भारतीय साहित्य, १०, ३-४, जुलाई-अक्तूबर, १९६५
६९३. प्रफुल्लकुमार मोदी (सं.) : पद्मकीर्ति कृत पासणाहचरिउ, हिन्दी अनुवाद सहित, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी, १९६५
६९४. ज्यूल ब्लॉख (अनु. अल्फ्रेड मास्टर) : इण्डो-आर्यन, पेरिस, १९६५
६९५. एस. एन. घोषाल : द संस्कृत कन्जंक्ट्स ऑव मोर देन टू कान्सोनेन्ट्स एण्ड एन ऑस्पेक्ट ऑव देअर डेवलपमेण्ट इन प्राकृत, ऑल इं. ओ. कान्फ्रेन्स गौहाटी, जनवरी, १९६५
६९६. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (इन्दौर) : अपभ्रंश-भाषा और साहित्य, भारतीय ज्ञानपीठ, प्रकाशन, १९६५
६९७. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश-कथाकाव्य, शोध-भारती, खण्ड १, अंक १-२, लखनऊ, पृ. ८६-९५, दिसम्बर, १९६५
६९८. मुनि पुण्यविजय : जैन आगमधर और प्राकृत वाङ्मय, मुनिश्री हजारीमल स्मृतिग्रन्थ, पृ. ७१५-७४४, ब्यावर, १९६५
६९९. डॉ. एल. आल्सडोर्फ : लेस स्टडियन जैना, एटेट प्रजेण्ट एट टीचेज फ्यूचर्स, पेरिस, १९६५
७००. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश के कथाकाव्य और चरितकाव्य, हिन्दुस्तानी, २६, ३-४, पृ. ६०-७१, जुलाई-दिसम्बर, १९६५
७०१. परिक्षित हजारिका : द कामरूपी अपभ्रंश, ऑल इण्डिया ओ. कान्फ्रेन्स, गौहाटी, जनवरी, १९६५
७०२. डॉ. एच. सी. भायाणी : पोस्ट-पोजीशनल इनवरसन इन ओल्ड गुजराती, वही, जनवरी, १९६५
७०३. डॉ. उमाकान्त प्रेमानन्द शाह : सम प्राकृत स्टेन्जाज ऑव कश्मीर शैव राइट्स, वही, जनवरी, १९६५
७०४. डॉ. बी. जी. सण्डेसरा : द हम्मीर प्रबन्ध (१५१८ ई.) ऑव

अमृतकलश—एन अन-नोटिस्ड ओल्ड गुजराती पोयम इयुलोजिसिंग द एक्सप्लाइट्स ऑव हम्मीर, द रूलर ऑव रणथम्भौर, ऑल इण्डिया ओ. का., गौहाटी, जनवरी, १९६५

७०५. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : लैंग्वेज एण्ड डायलेक्ट्स यूज्ड इन द कुवलयमाला, जर्नल ऑव द ओरियण्टल ई., बड़ोदा, जिल्द १४, सं. ३-४, पृ. ३१७-३२५, मार्च-जून, १९६५

७०६. डॉ. सुभद्र झा (अनु.) : कम्पेरेटिव ग्रैमर ऑव द प्राकृत लैंग्वेजेज, वाय आर. पिशेल, द्वि. सं., दिल्ली, १९६५

७०७. वीरेन्द्र श्रीवास्तव : अपभ्रंश-भाषा का अध्ययन, पटना विश्वविद्यालय से डी. लिट्. के लिए स्वीकृत शोध-प्रबन्ध, दिल्ली, १९६५

७०८. राजाराम जैन : सावयचरिउ, सार्द्धशताब्दी स्मृतिग्रन्थ, पृ. सं. ९८-१०२, भारतीय साहित्य मन्दिर, कलकत्ता, १९६५

७०९. पी. आर. देशमुख : प्रकृति-प्राकृत, नवभारत, १८, १०, पृ. ३४-४३, जुलाई, १९६५

७१०. वी. के. खडवडी : कन्नड एलीमेण्ट इन धात्वादेशाज, जर्नल ऑव द कर्नाटक यूनिवर्सिटी (ह्युमैनिटीज), मैसूर, जिल्द १९, ११८-२८, १९६५

७११. तिश्योशी नारा : अपभ्रंश एण्ड अवहट्ठ—प्रोटो न्यू इण्डो-आर्यन स्टेजेज, गैंगो केन्क्यु, जर्नल ऑव द लिंग्विस्टिक सोसायटी ऑव जापान, टोकियो, जिल्द ४२, पृ. ४७-५८, १९६५

७१२. एन. रत्नाश्रियन् : सम फॉरन लोन-वर्ड्स इन पुष्पदन्ताज अपभ्रंश, भारतीय विद्या, २५, १-२, पृ. २७-३७

७१३. पं. परमानन्द शास्त्री : ब्रह्मनेमिदत्त और उनकी रचनाएँ, अनेकान्त, १८, २, पृ. ८२-८४, जून, १९६५

७१४. जगदीशप्रसाद कौशिक : अपभ्रंश भाषा के क्षेत्रीय भेद : समस्या और समाधान, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ७०, २, पृ. १२३, वि. सं. २०२०

७१५. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : डॉ. हर्मन जेकोबी और जैन साहित्य, श्री तनसुखराय जैन स्मृतिग्रन्थ, दिल्ली, पृ. ३६३-३६८

७१६. एस. एम. कत्रे : सम प्रॉबलेम्स ऑव हिस्टॉरिकल लिंग्विस्टिक्स इन इण्डो-आर्यन, डेक्कन कॉलेज, पूना, १९६५

७१७. डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री : हरिभद्र के प्राकृत कथा-साहित्य का आलोचनात्मक अध्ययन, वैशाली, १९६५

७१८. डॉ. एच. सी. भायाणी : द नॉमिनल सफिक्स ओट इन संस्कृत, एच. डी. वेलणकर कमोमेरेशन वाल्यूम, पृ. ४-१०, बम्बई, १९६५

७१९. डॉ. श्रीमती रत्ना एन. श्रियन् : स्टडी ऑव द देश्य एण्ड रेयर वर्ड्स फ्रॉम

पुष्पदन्त्स महापुराण, बेलणकर कमोमेरेशन वाल्यूम, पृ. १५४-६०, बम्बई, १६६५

७२०. डॉ. जी. के. भट : एन आब्सक्योर अपभ्रंश वर्स कोटेड इन द दशरूप, वही, पृ. १६७-२०२ तथा बेलणकर स्मृतिग्रन्थ, बम्बई, अक्तूबर, १६६५

७२१. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश की दो लघु रासो रचनाएँ, सम्मेलन-पत्रिका, भाग ४६, सं. ३-४, पृ. २०६-२१६, आषाढ़-मार्गशीर्ष, शक १८८५

७२२. डॉ. अम्बाप्रसाद 'सुमन' : हिन्दी-भाषा (अतीत और वर्तमान), आगरा १६६५

७२३. डॉ. वासुदेवसिंह : अपभ्रंश और हिन्दी में जैन रहस्यवाद, वि. सं. २०२२

७२४. डॉ. ह. चू. भायाणी : प्राकृतनां सादृश्यमूलक आख्यातिक कर्मणि अंगो (गुजराती में), विद्या, ८, २, १६६५

७२५. डॉ. ह. चू. भायाणी : अनुशीलनी (गुजराती में), पाप्युलर पब्लिशिंग हाउस, सूरत, १६६५

७२६. डॉ. ह. चू. भायाणी : शोध अने स्वाध्याय (गुजराती में), आर. आर. सठ, बम्बई, १६६५

७२७. के. आर. नॉर्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज (५), जिल्द १५, सं. २, पृ. ११३-११७, दिसम्बर, १६६५; (६) जिल्द १६, सं. २, पृ.११३-११६, दिसम्बर, १६६६

७२८. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : जसहरचरिउ की एक कलात्मक सचित्र पाण्डुलिपि, अनेकान्त, पृ. ५१-५३, अप्रैल-जून, १६६६

७२६. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू कृत सावयचरिउ, अनेकान्त, १८, १-२, पृ. १०१-१०४, जून, १६६६

७३०. डॉ. ह. चू. भायाणी : स्टडीज इन हेमचन्द्राज देशीनाममाला, पार्श्वनाथविद्याश्रम, वाराणसी, १६६६

७३१. डॉ. ह. चू. भायाणी : श्री जिष्णी फार्मेटिव सफिक्सेज, विद्या, ६, १, पृ. २०-२५, जनवरी, १६६६

७३२. पी. वी. पण्डित : इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, १६६४, बुलेटिन ऑव द डेक्कन कॉलेज रि. इं., पूना, सिलवर जुबिली वाल्यूम, पृ. १-१०, १६६६

७३३. डॉ. गोविन्द रजनीश : फागु का छन्द विधान, भारतीय साहित्य, वर्ष ११, अंक १-२, पृ. १७१-७७, अप्रैल, १६६६

७३४. एस. एम. कत्रे : प्रॉब्लेम्स ऑव मॉडर्न इण्डियन लिंग्विस्टिक्स, प्रोग्रेस ऑव ट्वेण्टी-सिक्स्थ कॉंग्रेस ऑव ओरियन्टलिस्ट्स, पृ. ११४, नयी दिल्ली, १६६६

७३५. काजल पलीत : कालिदासाज प्राकृत एण्ड द वासिम कापर प्लेट्स इन्स्क्रिप्सन, प्रोग्रेस ऑव ट्वेण्टी-सिक्स्थ कॉंग्रेस ऑव ओरियण्टलिस्ट्स, पृ. ११५, नयी दिल्ली, १६६६

७३६. पी. बी. पण्डित : द फोनोलॉजी एण्ड द साउण्ड चेन्ज ऑव गुजराती लैंग्वेज, गुजरात यूनिवर्सिटी, अहमदाबाद, १९६६
७३७. के. सी. आचार्य (सं.) : प्राकृतसर्वस्व ऑव मार्कण्डेय, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, वाराणसी, १९६६
७३८. डॉ. हीरालाल जैन (सं. व अनु.) : सुगन्धदशमीकथा, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९६६
७३९. डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री : प्राकृत भाषा और साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास, वाराणसी, १९६६
७४०. डॉ. भोलानाथ तिवारी : हिन्दी भाषा, किताब महल, इलाहाबाद, १९६६
७४१. डॉ. माताप्रसाद गुप्त : वसन्तविलास और उसकी भाषा, आगरा, विश्वविद्यालय, १९६६
७४२. डॉ. माताप्रसाद गुप्त : कीर्तिलता के पाठ तथा अर्थसंशोधन के कुछ सुझाव, भारतीय साहित्य ११, ३-४, पृ. १-२५, जुलाई-अक्तूबर, १९६६
७४३. शम्भुनाथ द्विवेदी : पुरानी हिन्दी के सर्वनाम, विश्वम्भरा, वर्ष ३, अंक ३, पृ. १३-२२, १९६६
७४४. विश्वजीत : पृथ्वीराजरासउ की भाषा, भारतीय साहित्य, पृ. २७-३६, जुलाई-अक्तूबर, १९६६
७४५. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : चण्डीदेवाज प्राकृत-दीपिका, ए कमेण्टरी ऑव क्रमदीश्वराज प्राकृत ग्रैमर-आइडेण्टीकल विद द वृत्ति ऑव जुमरनन्दि, १९६६
७४६. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : प्राकृत वैयाकरणों की पाश्चात्य शाखा का विहंगमावलोकन, अनेकान्त, १९, १-२, पृ. १७५-८०, अप्रैल-जून, १९६६
७४७. एच. सी. भायाणी : मिडिल इण्डो-आर्यन मिस्सेलनी, विद्या पत्रिका, ९, २, पृ. १-५, अगस्त, १९६६
७४८. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश-साहित्य के चरितकाव्य, परिषद्-पत्रिका, वर्ष ६, अंक २, पृ. ५०-६६, जुलाई, १९६६
७४९. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : प्राकृत का एक प्रेमाख्यानकाव्य तरंगवतीकथा, भारतीय साहित्य, वर्ष ११, अंक १-२, पृ. ३१-३७, जनवरी-अप्रैल, १९६६
७५०. डॉ. कैलाशचन्द्र अग्रवाल : प्रद्युम्नचरित की भाषा, भारतीय साहित्य ११, १-२, पृ. १२२-१४२, जनवरी-अप्रैल, १९६६
७५१. डॉ. अम्बाप्रसाद 'सुमन' : अपभ्रंश और ब्रजभाषा, सम्मेलन-पत्रिका, भाग ५०, सं. २-३, पृ. ५२-६३, चैत्र-भाद्रपद, शक १८८६
७५२. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : हिन्दी की प्राचीन अज्ञात कृतियाँ, सम्मेलन-पत्रिका, वही, पृ. ११२-१२४, शक १८८६

७५३. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का एक प्रेमाख्यानकाव्य 'विलासवईकहा', सम्मेलन-पत्रिका, ५०, २-३, पृ. १७०-७४, शक १८८६

७५४. एमेन्यु : द डायलेक्ट्स ऑव ओल्ड इण्डो-आर्यन (सं. बिर्नबम पुहवेल : एन्शियेण्ट इण्डो-यूरोपियन डायलेक्ट्स), १९६६

७५५. आर. एल. टर्नर : ए कम्पेरेटिव डिक्शनरी ऑव द इण्डो-आर्यन लैंग्वेजेज, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन, १९६६

७५६. श्यामनारायणसिंह यादव : वैयाकरण कवि मार्कण्डेय तथा उनका काल, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ७१, ३-४, पृ. ३०७-३२०, वि. सं. २०२३

७५७. अजित शुकदेव : वज्जिका-भाषा और साहित्य, नागरी-प्रचारिणी पत्रिका, ७१, ३-४, पृ. ४२५-२८, वि. सं. २०२३

७५८. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू कृत सावयचरिउ, अनेकान्त, १९, १-२, अप्रैल-जून, १९६६

७५९. एस. एन. घोषाल : द अपभ्रंश एलीमेण्ट्स इन द मृच्छकटिक जर्नल ऑव द ओरियण्टल इ. बड़ौदा, जिल्द १६, सं. २, पृ. १२४-१३०, दिसम्बर, १९६६

७६०. द्विजराम यादव : वज्रयानी सिद्ध सरहपाद, विश्वभारती, ७, १, पृ. ६२-७०, चैत्र-ज्येष्ठ, वि. सं. २०२३

७६१. द्विजराम यादव : वज्रयानी सिद्ध कण्हपा की रचनाओं की सूची, विश्वभारती, खण्ड ७, अंक ३, पृ. २८९-२९८, आश्विन-मार्गशीर्ष, वि. सं. २०२३

७६२. रामसिंह तोमर : महाराज भोजराज और अपभ्रंश, विश्वभारती, ७, १, पृ. ८६-९१, चैत्र-ज्येष्ठ, वि. सं. २०२३

७६३. डॉ. माताप्रसाद गुप्त तथा डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल (सं. व अनु.) : रल्ह कृत जिणदत्तचरित, जयपुर, १९६६

७६४. बलवीरप्रकाश गुप्त : द प्रॉब्लेम ऑव जेण्डर एज कान्कर्ड केटेगरी इन हिन्दी लेख, सुकुमार सेन स्मारक ग्रन्थ, पृ. ४६-६५, पूना, १९६६

७६५. मधुसूदन मल्लिक : मेटाथीसिस इन पालि, वही, पृ. ६३-६५, पूना, १९६६

७६६. डॉ. हरीश : आदिकालीन हिन्दी जैन साहित्य की दो बेजोड़ गद्यकाव्य कृतियाँ, जैनदर्शन संस्कृति परिषद्, शोधांक, पृ. ६६-७६, कलकत्ता, १९६६

७६७. एस. एन. घोषाल : ऑन द इटिमोलॉजी ऑव द प्राकृत वोकेबल पोर, विश्वेश्वरानन्द इण्डोलॉजिकल जर्नल, होशियारपुर, ५, १, पृ. ३८-४१, मार्च, १९६७

७६८. एस. एन. घोषाल : द नसल्स इन्फ्लुएन्स अपॉन द नेबरिंग सिलेबस, बाबू छोटेलाल जैन स्मृति ग्रन्थ, पृ. २५१-२५६, कलकत्ता, १९६७

७६९. अगरचन्द नाहटा : राजस्थानी साहित्य की गौरवपूर्ण परम्परा, कलकत्ता विश्वविद्यालय, १९६७

७७०. परममित्र शास्त्री : सूत्रशैली और अपभ्रंश-व्याकरण, नागरी-प्रचारिणी सभा, वाराणसी, वि. सं. २०२४
७७१. डॉ. हीरालाल माहेश्वरी : अपभ्रंश-साहित्य और मणिधारी श्रीजिनचन्द्र सूरि कृत 'व्यवस्था-शिक्षाकुलम्', बा. छोटेलाल जैन स्मृति ग्रन्थ, पृ. ३५५-६२, १६६७
७७२. अतीन्द्र मजूमदार : द चर्यापदाज, कलकत्ता, १६६७
७७३. प्रो. गदाधरसिंह : हिन्दी का जैन रास-साहित्य, जैन सिद्धान्त भास्कर, भा. २५, किरण १, पृ. ४७-६४, जुलाई, १६६७
७७४. श्याम वर्मा : हिन्दी आदिकाल के जैन प्रबन्धकाव्य, बा. छोटेलाल जैन स्मृति ग्रन्थ, पृ. ८३-८६
७७५. डॉ. देवेन्द्रकुमार (इन्दौर) : पुष्पदन्त का कृष्णकाव्य, श्रमण, १६, १-२, पृ. ३-१३, नवम्बर-दिसम्बर, १६६७
७७६. प्रेमचन्द जैन : अपभ्रंश कथाकाव्यों का हिन्दी-प्रेमाख्यानकों के शिल्प पर प्रभाव, श्रमण, १६, १-२, पृ. ४३-५३, नवम्बर-दिसम्बर, १६६७
७७७. कीर्तिचन्द रावका : कविवर राजसिंह (रल्ह) का जिणदत्तचरित, स्मारिका, पृ. ४७-४८, राजस्थान जैन साहित्य परिषद्, जयपुर, १६६७-६८
७७८. जगदीशप्रसाद कौशिक : 'पउमसिरीचरिउ का भाषा वैज्ञानिक महत्त्व', नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ७२, १-४, पृ. ७३-८७, वि. सं. २०२४
७७६. डॉ. एस. एन. घोषाल : द संस्कृत-कन्जन्क्ट्स ऑव टु डिसिमिलर क्लॉस-नसल्स एण्ड देयर ट्रान्सफॉर्मेशन इन प्राकृत, गोपीनाथ कविराज अभिनन्दनग्रन्थ, पृ. २६६-२७०, लखनऊ, १६६७
७८०. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : भविसयत्तकहा तथा उसका रचना-काल, परिषद्-पत्रिका, वर्ष ७, अंक १, पृ. २६-३४, अप्रैल, १६६७
७८१. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : धनपाल विरचित भविसयत्तकहा और उसकी रचना-तिथि, अनेकान्त, वर्ष २०, किरण १, पृ. ३३-३६, अप्रैल, १६६७
७८२. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : जैन ग्रन्थ भण्डाराज इन राजस्थान, जयपुर, १६६७
७८३. एस. एन. घोषाल : द जेनेटिव इन द रोल ऑव द नॉन-जेनेटिव, जर्नल ओ. इं., बड़ोदा, जिल्द १६, सं. ४, पृ. २६६-३१४, जून, १६६७
७८४. आर. एल. टर्नर : जेमिनेट्स आफ्टर लांग वोवेल इन इण्डो-आर्यन, बुलेटिन ऑव द स्कूल ऑव ओरियण्टल एण्ड अफ्रिकन स्टडीज, ३०, १, १६६७
७८५. गोकुलचन्द्र जैन : कुवलयमालाकहा : एक महत्त्वपूर्ण प्राकृत चम्पू, विश्वज्योति, १५, २, पृ. २६-३३, जनवरी, १६६७
७८६. बाबू रामबालक प्रसाद : अपभ्रंश दोहा साहित्य : एक दृष्टि, गुरु गोपालदास

वर्रैया स्मृतिग्रन्थ, सागर, पृ. ४६२-५००, १६६७

७८७. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू कृत अणथमिउकहा, वही, पृ. ५१६-५२१

७८८. भरतराम मेहता : स्वयम्भू कृत अपभ्रंश रामायण (गुजराती में), बुद्धिप्रकाश, ११४, ७, पृ. २१०-२१४, जुलाई, १६६७

७८६. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : राजस्थान के जैन ग्रन्थागारों में संगृहीत सचित्र एवं कलात्मक पाण्डुलिपियाँ, वही, पृ. ५३६-५४३, १६६७

७६०. पं. परमानन्द शास्त्री : धारा और उसके जैन सारस्वत, वही, पृ. ५४३-५५२

७६१. एम. झा : मागधी एण्ड इट्स फार्मेशन, संस्कृत कॉलेज, कलकत्ता, १६६७

७६२. ग्रैहम विल्सन (सं.) : ए लिंग्विस्टिक्स रीडर, न्यूयार्क, १६६७

७६३. पं. परमानन्द शास्त्री : रासा-साहित्य : एक अध्ययन, जैन सिद्धान्त भास्कर, ३३, २५, पृ. १४-३३, जुलाई, १६६७

७६४. जगदीशप्रसाद : पउमसिरीचरिउ की भाषा का ध्वन्यात्मक अध्ययन, राजस्थान भारती, भाग १०, अंक ३, पृ. ३७-४६, दिसम्बर, १६६७

७६५. एन. ए. देशपाण्डे : क्रॉनालॉजी ऑव अपभ्रंश वर्क्स, भारतीय विद्या, भाग २७, सं. १-४, १६६७

७६६. डॉ. विपिन बिहारी त्रिवेदी : अपभ्रंश-प्रवेश, पारुल प्रकाशन, लखनऊ, १६६७

७६७. डॉ. छोटेलाल शर्मा : प्राकृत रामकाव्य की छन्दोयोजना, राजस्थान यूनिवर्सिटी स्टडीज इन संस्कृत एण्ड हिन्दी, सं. २, पृ. ६६-१२८, जुलाई, १६६७

७६८. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : भट्टारक विनयचन्द के समय पर विचार, जैन सिद्धान्त भास्कर, २०, १, पृ. ३०-३२, अप्रैल, १६६७

७६६. एच. डी. साँकलिया : इण्डियाज लैंग्वेज ई. पू. ३००-१६६० ई., बुलेटिन ऑव द डेक्कन कॉलेज रि. इं., पूना, पृ. १२-१६, दिसम्बर, १६६८

८००. डॉ. के. सी. आचार्य (सं.) : प्राकृत-सर्वस्व, अहमदाबाद, १६६८

८०१. डॉ. ह. चू. भायाणी : अपभ्रंश साहित्यमां कृष्णकाव्य, विश्वमानव, गुजराती पत्रिका, अप्रैल, १६६८

८०२. मुनिश्री मृगेन्द्र (सं.) : पंचशती प्रबोध सम्बन्ध, भूमिका डॉ. भायाणी द्वारा लिखित, सूरत, १६६८

८०३. गौरीशंकर मिश्र 'द्विजेन्द्र' : विद्यापति की छन्द-योजना, विश्वभारती, खण्ड ६, अंक २, पृ. २४०-२६०, जुलाई-सितम्बर, १६६८

८०४. डॉ. सनत्कुमार रंगाटिया : जैन रास-साहित्य में स्वप्नवर्णन, जैनसिद्धान्तभास्कर २५, २, पृ. १४-२२, दिसम्बर, १६६८

८०५. डॉ. राजाराम जैन : यशोधर कथा का विकास एवं महाकवि रइधू कृत जसहरचरिउ : एक अध्ययन, जैनसिद्धान्तभास्कर २५, २, पृ. ६२-६६,

दिसम्बर, १६६८

८०६. गाइगर (अँगरेजी अनुवाद बी. के. घोष) : पालि लिटरेचर एण्ड लैंग्वेज, दिल्ली, १६६८

८०७. डॉ. राजाराम जैन : यशोधर कथा का विकास एवं महाकवि रइधू कृत जसहरचरिउ : एक अध्ययन, ऑल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेन्स में १६६८ में पठित

८०८. डॉ. सत्यपाल गुप्त : नानकवाणी की भाषा, अपभ्रंश तथा प्राचीन ब्रजभाषा, राजस्थान यूनिवर्सिटी स्टडीज इन संस्कृत एण्ड हिन्दी, सं. ३, पृ. ५३-६०, जयपुर, १६६८-६६

८०६. डॉ. नीलरत्नसेन : प्राचीन बंगला छन्द : चर्यापद, श्रीकृष्णकीर्तन, विद्यापतिपदावली; १६६८ में दिल्ली विश्वविद्यालय में प्रदत्त व्याख्यान

८१०. प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमिनार ऑव स्कॉलर्स इन प्राकृत स्टडीज, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर, १६६८

८११. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : चण्डीदेवाज प्राकृतदीपिका, ए कण्टेररी ऑव क्रमदीश्वर प्राकृत ग्रैमर आइडेण्टीकल विद द बृत्ति ऑव जुनरनन्दी, आल इं. ओरियण्टल कान्फ्रेन्स, पृ. ५७-५८, १६६८

८१२. डॉ. राजाराम जैन : ग्वालियर दुर्ग के कुछ जैन मूर्ति-निर्माता एवं महाकवि रइधू, श्री महावीर जैन विद्यालय सुवर्णमहोत्सव-ग्रन्थ, भाग १, पृ. ४३-४८, १६६८

८१३. मुनि पुण्यविजय : केटलॉग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मेन्युस्क्रिप्ट्स, आ. देवसूरीज कलेक्शन एण्ड आ. शान्तिसूरीज कलेक्शन, चतुर्थ भाग, ला. द. शोध संस्थान, अहमदाबाद, १६६८

८१४. रमणीकविजय (सं.) : आनन्दश्रावक सन्धि, श्री महावीर जैन विद्यालय सुवर्ण महोत्सव ग्रन्थ, भा. १, पृ. १६६-१७२, बम्बई १६६८

८१५. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश-साहित्य, वही पृ. ६५-७०, १६६८

८१६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश-साहित्य : एक शोध-सर्वेक्षण, परिषद्-पत्रिका, वर्ष ८, अंक ३-४, पृ. ८७-११६, अक्तूबर १६६८, जनवरी, १६६६

८१७. डॉ. हरिशंकर शर्मा 'हरीश' : राउलवेल की भाषा : एक दृष्टि, अन्वेषणा, वर्ष १, अंक १, पृ. २५-३६, जनवरी-मार्च, १६६८

८१८. डॉ. देवेन्द्रकुमार, इन्दौर : सन्देशरासक : शिल्प-सन्दर्भ, विशिष्ट पाठ और अर्थ, परिषद्-पत्रिका, वर्ष ८, अंक १, पृ. १०७-११४, अप्रैल, १६६८

८१६. डॉ. माताप्रसाद गुप्त : 'वसन्तविलास' के कतिपय शब्दों की अर्थविचारणा, हिन्दुस्तानी, भाग २६, अंक १-४, पृ. १४२-१५१, जनवरी-दिसम्बर, १६६८

८२०. डॉ. रामअवध पाण्डेय तथा रावनाथ मिश्र : पालि-प्राकृत-अपभ्रंश-संग्रह, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, १९६८

८२१. डॉ. सत्यनारायण पाण्डेय : महाकवि पुष्पदन्त, चिन्मय प्रकाशन, जयपुर, १९६८

८२२. एस. एन. घोषाल : द प्लूरल फॉर्म एज द बेसिस ऑव द स्टेम्स, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इं., बड़ोदा, जिल्द १७, सं. ३, पृ. २४०-२४६, मार्च, १९६८

८२३. डॉ. विमलप्रकाश जैन (सं. व अनु.) : वीर कृत जम्बूसामिचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १९६८

८२४. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : प्राकृत तथा अपभ्रंश के प्रेमाख्यानक काव्य, महावीरजयन्ती-स्मारिका, पृ. १४५-५४, जयपुर, अप्रैल, १९६८

८२५. पवनकुमार जैन : आदिकालीन जैन काव्य में वीररस, वही, पृ. ४५-४८, अप्रैल, १९६८

८२६. डॉ. के. ऋषभचन्द्र : जैन पुराण साहित्य, श्री महावीर जैनविद्यालय सुवर्णमहोत्सवग्रन्थ, भा. १, पृ. ७०-७१

८२७. डॉ. एस. एन. घोषाल : द नन इन्फ्लेक्टेड जेनेटिव इन अपभ्रंश, वही, भा. १, पृ. १८७-२०३

८२८. प्रो. एल. ए. श्चवरजश्चाल्ड : सम इण्ट्रोगेटिव पार्टिकल्स इन प्राकृत, वही, भा. १, पृ. २०४-२०६

८२९. डॉ. प्रबोध बी. पण्डित : हेमचन्द्र एण्ड द लिंग्विस्टिक ट्रेडिशन, भा. १, वही, पृ. २१०-२१२

८३०. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : फ्रेगमेन्ट्स ऑव द अर्लिएस्ट ईस्टर्न प्राकृत ग्रेमेरियन्स (शाकल्य, माण्डव्य, कोहल एण्ड कपिल), भा. १, वही, पृ. २७०-२७४

८३१. पं. बेचरदास दोशी : भारतीय वाङ्मय में प्राकृतभाषा का महत्त्व, श्रमण पत्रिका, वर्ष १६, अंक १०, पृ. ६-१६, अगस्त, १९६८

८३२. डॉ. फतहसिंह (सं.) : ठाकुर संग्रामसिंह विरचित बालशिक्षा, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, १९६८

८३३. केशवराम काशीराम शास्त्री (अनु.) : आदिम गुजराती, आदिम राजस्थानी, राजस्थान भारती, भाग ११, अंक २, पृ. ७७-८६

८३४. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश की जैनेतर कृतियों का काव्यशिल्प, राजस्थान भारती, ११, ४, पृ. १६३-६६, १९६९

८३५. एच. सी. भायाणी : अबाउट द लैंग्वेज ऑव द शूद्रककथा, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इं., बड़ोदा, जिल्द १८, सं. ४, पृ. ३१६-३१८, १९६९

८३६. एस. एन. घोषाल : द आर्ष प्राकृत एज हेमचन्द्र वियूड इट, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इं., बड़ोदा, जिल्द १८, सं. ४, पृ. ३०४-३१४, जून, १९६९

८३७. आचार्य परशुराम चतुर्वेदी : बौद्ध सिद्धों के चर्यापद, वाराणसी, १६६६

८३८. मूलचन्द प्राणेश : जिणदत्तचरित के कतिपय सन्दिग्ध अर्थ, शोध पत्रिका, वर्ष २०, अंक १, पृ. ५५-६४, जनवरी-मार्च, १६६६

८३६. मूलचन्द प्राणेश : प्रद्युम्न चरित के कुछ सन्दिग्ध अर्थ, वरदा पत्रिका, ५२-५८, पृ. १२, ३, जुलाई, १६६६

८४०. डॉ. मदन केवलिया : सन्देशरासक-आदिकालीन महत्त्वपूर्ण खण्डकाव्य, विश्वम्भरा, ६, १, पृ. ७१-७६, १६६६

८४१. प्रेम सुमन जैन : राजस्थान का प्राकृत साहित्य को योगदान, विश्वम्भरा, ६, १, पृ. ७१-७६, १६६६

८४२. कलानाथ शास्त्री : संस्कृतेतर छन्दों में संस्कृत कविता, विश्वम्भरा, ५, ४, पृ. ५१-५६, १६६६

८४३. डॉ. रामगोपाल गोयल : राजस्थान के प्रेमाख्यान : परम्परा और प्रगति, राजस्थान प्रकाशन, जयपुर, १६६९

८४४. पं. परमानन्द शास्त्री : धनपाल की भविष्यदत्त कथा के रचना-काल पर विचार, अनेकान्त, २२, १, पृ. २-६, अप्रैल, १६६६

८४५. डॉ. राजाराम जैन : गोपाचल दुर्ग के एक मूर्तिलेख का अध्ययन, अनेकान्त २२, १, पृ. २५-२६, अप्रैल, १६६६

८४६. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : मुनि श्रीचन्द्र कृत कहकोसु, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, १६६६

८४७. थॉमस ए. सेवाक (सं.) : करेण्ट ट्रेण्ड्स इन लिंग्विस्टिक्स ५, लिंग्विस्टिक्स इन साउथ एशिया, १६६६

८४८. एच. डब्ल्यू. बेल्ले : खोतानीज टेक्स्ट्स, १-३, कैम्ब्रिज, १६६६

८४६. एफ. बियेसिंगर : ग्रामर इण्डोलॉजी पास्ट एण्ड प्रजेण्ट, बम्बई १६६६

८५०. श्रीमती (डॉ.) रत्नाश्रियन् : ए क्रिटिकल स्टडी ऑव महापुराण ऑव पुष्पदन्त, श्री ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद-६, १६६६

८५१. परमानन्द शास्त्री : ग्वालियर के कुछ काष्ठासंघी भट्टारक, अनेकान्त, २२, २, पृ. ६४-७०, जून, १६६६

८५२. प्रेम सुमन जैन : जैन विद्या का अध्ययन-अनुशीलन : प्रगति के पथ पर, अनेकान्त, २२, ३-४, पृ. १८७-१६१, अगस्त-अक्तूबर, १६६६

८५३. डॉ. ह. चू. भायाणी : ऑन द उपरूपकाज काल्ड डोम्बिका एण्ड सिडगक, विद्या, वर्ष १२, सं. १, पृ. १-१४, जनवरी, १६६६

८५४. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : शुभचन्द्र का प्राकृत व्याकरण, अनेकान्त, २२, १, पृ. ३२, अप्रैल १६६६

८५५. के. आर. नार्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज (७), जर्नल ऑव द

ओरियण्टल इं., बड़ोदा, जिल्द १८, सं. ३, पृ. २२५-२३१, मार्च, १९६९
८५६. डॉ. सुकुमार सेन, अनु. महावीर प्रसाद लखेड़ा : तुलनात्मक पालिप्राकृत-अपभ्रंश व्याकरण, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९६९
८५७. बी. एच. कापड़िया : पुष्पदन्तनी अपभ्रंश कृति 'जसहरचरिउ' मा देश्य शब्दो (गुजराती), बुलेटिन ऑव द चूनीलाल गाँधी विद्याभवन, सूरत, सं. १४, अगस्त १९६९
८५८. थॉमस ए. सेबाक (सं.) : करेण्ट ट्रेण्ड्स इन लिंग्विस्टिक्स ५, लिंग्विस्टिक्स इन साउथ एशिया, १९६९
८५९. जगदीशचन्द्र जैन : द इम्पोर्टेन्स ऑव प्राकृत लिटरेचर विद रिफ्रेन्स टु द स्प्रेड ऑव जैन रिलीजन इन इट्स अर्लिअर स्टेज ड्युरिंग द अर्ली सेन्चुरीज, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑब बोम्बे, जिल्द ३८, सं. ७४, अक्तूबर, १९६९
८६०. अगरचन्द नाहटा : आणंदा का रचयिता—समय एवं पाठ पर विचार, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, ७४, ४, पृ. ७३-७६, वि. सं. २०२६
८६१. के. आर. चन्द्र : प्राकृत टर्मिनेशन 'य', जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, २०, २, पृ. १२१-१३६, दिसम्बर, १९७०
८६२. पी. एम. उपाध्ये : कुवलयमाला : ए कल्चरल स्टडी, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट बड़ोदा, २०, २, पृ. १४८-१५४, दिसम्बर, १९७०
८६३. पी. एम. उपाध्ये : ओनोमेटोपोइटिक वर्ड्स इन प्राकृत, जर्नल ऑव द ओरियन्टल रिसर्च इं. बड़ोदा, जिल्द १९, सं. ४, पृ. ३५१-३५४, जून, १९७०
८६४. पं. हीरालाल : रइधू विरचित महावीरचरित, महावीर-जयन्ती स्मारिका, द्वितीय खण्ड, पृ. ५७-६२, जयपुर, १९७०
८६५. डॉ. प्रेमसागर जैन : जैन शोध और समीक्षा, जयपुर जनवरी, १९७०
८६६. श्रीरंजन सूरिदेव : प्राकृत के विकास में बिहार की देन, श्रमण, वर्ष २१, अंक १०, पृ. २०-२६, अगस्त, १९७०
८६७. डॉ. राजाराम जैन : रइधू कृत 'पुण्णासवकहा' एक परिचय, परिषद्-पत्रिका, वर्ष ९, अंक ४, पृ. १६-२६, जनवरी, १९७०
८६८. एस. डी. लद्दू : प्राकृत स्टडीज आउटसाइड इण्डिया (१९२०-६६), प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमिनार इन प्राकृत स्टडीज, पूना विश्वविद्यालय, पृ. २०७-२२७, १९७०
८६९. वी. एम. कुलकर्णी : द साहित्य-मीमांसा-प्राकृत टेक्स्ट रेस्टोर्ड, बुलेटिन ऑव द चूनीलाल गाँधी, विद्याभवन, सूरत, सं. १५, अगस्त, १९७०
८७०. डॉ. बालमुकुन्द : हिन्दी क्रिया : स्वरूप और विश्लेषण, आनन्द पुस्तक भवन, वाराणसी, १९७०

८७१. प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमिनार इन प्राकृत स्टडीज, पूना विश्वविद्यालय, पूना, १९७०
८७२. डॉ. राजवंश सहाय 'हीरा' : अपभ्रंश-साहित्य-परम्परा और प्रवृत्तियाँ, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, १९७०
८७३. डॉ. कोमलचन्द्र जैन : बुन्देलखण्डी भाषा में प्राकृत के देशी शब्द, श्रमण, २१, ७, पृ. २०-२२, मई, १९७०
८७४. डॉ. हीरालाल जैन (सं.) : सुदंसणचरिउ, सम्पादित हिन्दी अनुवाद सहित, प्राकृत जैन विद्यापीठ, वैशाली, १९७०
८७५. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश कोश : एक परिचय हिन्दुस्तानी, भाग ३१, अंक १-२, पृ. १९-३६, जनवरी-जून, १९७०
८७६. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश के कडवक छन्द का स्वरूप-विकास, हिन्दुस्तानी, वही, पृ. ११६-११६
८७७. डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर' : ब्रह्म साधारण की पहली कृति कोइलपंचमीकहा, अनेकान्त, २३, १, पृ. २५, जनवरी, १९७०
८७८. रामवल्लभ सोनाणी : जम्बूसामिचरिउ में वर्णित गुर्जरता प्रदेश, अनेकान्त, २३, १, जनवरी, १९७०
८७९. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : द विलासवई ऑव साधारण, जर्नल ऑव द शिवाजी-यूनिवर्सिटी, सं. २, पृ. १-२६, १९७०
८८०. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : द विलासवईकहा : एक परिचयात्मक अध्ययन, अनेकान्त, २३, ४, अक्तूबर, १९७०
८८१. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : भविसयत्तकहा तथा अपभ्रंश-कथाकाव्य, भारतीय ज्ञानपीठ, १९७०
८८२. डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय : अपभ्रंश के आख्यानक काव्य और उनका हिन्दी के आख्यानक काव्यों (१७०० ई. तक) पर प्रभाव, हिन्दी अनुशीलन, वर्ष २३, अंक १-४, पृ. ७५-८४, जून-दिसम्बर, १९७०
८८३. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : अमरकीर्ति नाम के आठ विद्वान्, अनेकान्त, २२, ६, पृ. २८६-२६०, फरवरी, १९७०
८८४. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (इन्दौर) : अपभ्रंश काव्यधारा, कल्याणमल एण्ड सन्स, जयपुर, १९७०
८८५. डॉ. ह. चू. भायाणी : 'हालरडुं', 'पारणुं' (अपभ्रंश साहित्यमां), संस्कृति, गुजराती पत्रिका, जुलाई, १९७०
८८६. एन. दाण्डेकर एण्ड घाटगे (सं.) : प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमीनार इन प्राकृत स्टडीज, पूना, १९७०
८८७. डॉ. एम. एल. मेहता, डॉ. के. आर. चन्द्र : प्राकृत प्रापरनेम्स डिक्शनरी, भा.

१, २, अहमदाबाद, १६७०, १६७२

८८८. ह. चू. भायाणी : ध्वन्यालोक (उद्योत ३, ४) ना प्राकृत उदाहरणोनी पाठचर्चा (गुजराती), विद्या, गुजरात विश्वविद्यालय, अहमदाबाद, जिल्द १४, सं. १, जनवरी, १६७१

८८६. देवेन्द्रमुनि शास्त्री : प्राकृत जैन कथा-साहित्य, श्रमण वर्ष २२, अंक ५, पृ. ३-१०, मार्च, १६७१

८६०. डॉ. एच. सी. भायाणी और मधुसूदन मोदी (सं.) : हरिभद्रसूरि कृत नेमिनाहचरिय, जिल्द १, २, अहमदाबाद, १६७०-७१

८६१. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश शब्दों का अर्थ-विचार, अनेकान्त, वर्ष २३, किरण ५-६, पृ. २१२-२२०, फरवरी, १६७१

८६२. प्रेम सुमन जैन : राजस्थान का अपभ्रंश साहित्य को योगदान, वरदा, १६७१

८६३. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, इन्दौर : पउमचरिउ (हिन्दी अनुवाद), भाग ४, ५, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १६७१

८६४. श्रीरंजन सूरिदेव : प्राकृत और उसका विकास-स्रोत, श्रमण २२, ६, पृ. ३-६, अप्रैल, १६७१

८६५. डॉ. पुरुषोत्तमलाल मेनारिया : राजस्थानी भाषा : उद्भव और विकास, अणिमा, राजस्थान साहित्य संस्कृति कला विशेषांक, पृ. ८६-६६, मई, १६७१

८६६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंशकाव्यत्रयी : एक अनुशीलन, मणिधारी श्रीजिनचन्द्रसूरि अष्टम शताब्दी स्मृति-ग्रन्थ, दिल्ली, पृ. १७४-१७६, १६७१

८६७. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का एक अचर्चित चरितकाव्य, अनेकान्त, वर्ष २४, किरण २, पृ. ५३-५७, जून, १६७१, हिन्दुस्तानी भाग ३२, अंक ४, पृ. ७४-८३, अक्तूबर-दिसम्बर १६७१

८६८. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन, इन्दौर : सिरिपालचरिउ : एक मूल्यांकन, श्रमण, वर्ष २२, अंक ८, पृ. ३-७, जून, १६७१

८६६. रमेश जैन : सन्देशरासक री भासा, राजस्थान भारती, भाग १३, अंक ३, पृ. ५२-५३, जून, १६७१

६००. के. आर. नॉर्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज ८, जर्नल ऑव द ओरि. इं. म. शि. विश्वविद्यालय, बड़ोदा, जिल्द २०, सं. ४, पृ. ३२६-३३६, जून, १६७१

६०१. एच. सी. भायाणी : जम्बुसामिचरिय ऑव वीर (समीक्षा), वही, पृ. ३४७-३५६

६०२. मधुसूदन मल्लिक : पालि एण्ड लेटर प्राकृत्स, वही, पृ. ३५७-३६२

६०३. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का जयमाला-साहित्य, अनेकान्त, वर्ष २४, किरण ३, पृ. १२८-१२६, जुलाई-अगस्त, १६७१

६०४. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : हिन्दी साहित्य का आदिकाल, स्मृति अने संस्कृति (स्मृति ग्रन्थ), पोरबन्दर (गुजरात), द्वितीय खण्ड, पृ. १०५०-१०५५, १६७१

६०५. शारदा श्रीनिवासन : द्राविडियन वर्ड्स इन देशीनाममाला, जर्नल ऑव द ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २१, सं. १-२, पृ. ११४-१३४, सितम्बर-दिसम्बर, १६७१

६०६. डॉ. भागचन्द्र जैन : ब्रह्म साधारण कृत दुद्धारसि कथा, अनेकान्त, वर्ष २४, किरण ४, पृ. १४४-१४६, सितम्बर-अक्तूबर, १६७१

६०७. डॉ. बालकृष्ण अकिंचन : अपभ्रंश भाषा के कवियों का नीतिवर्णन, वही, पृ. १४७-१४६

६०८. डॉ. बालकृष्ण अकिंचन : अपभ्रंश भाषा के कवियों का नीतिवर्णन, अनेकान्त, वर्ष २४, किरण ५, पृ. २०१-२०४, नवम्बर-दिसम्बर, १६७१

६०६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश की एक अज्ञात जयमाला, वही, पृ. २२६-२३१

६१०. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश भाषा (संस्कृत में), सागरिका, संस्कृत-परिषद्, सागर विश्वविद्यालय, वर्ष १०, अंक ४, पृ. ४६६-५०६, जून-मार्च, १६७१-७२

६११. नर्मदेश्वर चतुर्वेदी : अपभ्रंश के काव्यरूप और छन्दबन्ध, हिन्दुस्तानी, भाग-३२, अंक-१, जन.-मार्च, पृ. ६५-१०४, १६७१

६१२. डॉ. रामसिंह तोमर : अपभ्रंश वैयाकरणों तथा प्राचीन हिन्दी कवियों के भाषाविषयक उल्लेख, हलवासिया स्मृति-ग्रन्थ, कलकत्ता, १६७१

६१३. छोटेलाल शर्मा : भारतीय साहित्य में राम के चरित्र का स्वरूप और विकास, विश्वभारती, खण्ड १२, अंक-३, पृ. २१५, २२०, अक्तू.-दिस., १६७१

६१४. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : अपभ्रंश कथाकाव्यों की भारतीय संस्कृति को देन, प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमिनार ऑव स्कॉलर्स इन प्राकृत एण्ड पालि स्टडीज, मगध वि. वि. आरा, पृ. ८०, १६७१

६१५. डॉ. आर. पी. पोद्दार : प्राकृत इलस्ट्रेशन्स इनवर्क्स ऑन पोयटिक्स, वही, पृ. ३३-३६

६१६. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश काव्यों में सामाजिक चित्रण, वही, पृ. ८३-८४

६१७. डॉ. कोमलचन्द्र शास्त्री : बुन्देलखण्डी भाषा में प्राकृत के देशी शब्द, वही, पृ. ६१

६१८. डॉ. हरिवल्लभ चूनीलाल भायाणी : स्वयंभू कृत रिट्ठणेमिचरिउ मांथी पच्चीस देश्य शब्दो, मुनि जिनविजय अभिनन्दन ग्रन्थ, जयपुर, पृ. २३३-२३६ १६७१,

६१९. के. आर. चन्द्र : प्लेस ऑव प्राकृत इन संस्कृत ड्रामाज, विद्या, गुजरात विश्वविद्यालय पत्रिका, अहमदाबाद, जिल्द १४, सं. १, जन., १९७१

६२०. बी. एम. कुलकर्णी : प्राकृत वर्सेस इन वर्क्स ऑव संस्कृत पोयटिक्स, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बोम्बे, जिल्द ४०, सं. ७६, अक्तू., १९७१

६२१. एल. ए. श्वार्जश्चाइल्ड : सम 'अनयूजल' साउण्ड चेन्जेज इन प्राकृत, जर्नल ऑव द अमेरिकन ओरियण्टल सोसायटी, जिल्द ९२, सं. १, जन.-मार्च, १९७१

६२२. एच. सी. भायाणी : द अपभ्रंश पेसेज फ्रॉम अभिनवगुप्ताज तन्त्रसार एण्ड परात्रिंशिकावृत्ति, विद्या, जर्नल ऑव द गुजरात यूनिवर्सिटी, जिल्द १४, सं. २, पृ. १-१८, अगस्त, १९७१

६२३. रामसिंह तोमर : प्राकृत जैन कथा साहित्य, विश्वभारती, जिल्द १२, सं. २, वि. सं. २०२८

६२४. पी. बनर्जी : अर्ली हिस्ट्री ऑव जैनिज्म, इण्डो-एशियन कल्चरल, जिल्द १९, सं. १, इण्डियन काउन्सिल फॉर कल्चरल रिलेशन्स, आजाद भवन, इन्द्रप्रस्थ स्टेट, नयी दिल्ली, जन., १९७१

६२५. डॉ. जगदीशचन्द्र जैन : प्राकृत जैन कथा साहित्य, एल. डी. इन्स्टीट्यूट, अहमदाबाद, १९७१

६२६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : हिन्दी की शब्द-संरचना, हिन्दुस्तानी, भाग २३, अंक ४, पृ. २७-४०, अक्तू.-दिस., १९७२

६२७. डॉ. छविनाथ त्रिपाठी : मध्यकालीन कवियों के काव्य-सिद्धान्त, दिल्ली, १९७२

६२८. डॉ. हीरालाल जैन (सम्पादन, अनुवाद) : जसहरचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, १९७२

६२९. डॉ. हीरालाल जैन (सम्पादन, अनुवाद) : णायकुमारचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, १९७२

६३०. एस. एम. कत्रे (अनुवाद : डॉ. रमाशंकर जैतली) : प्राकृत भाषाएँ और भारतीय संस्कृति में उनका अवदान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, १९७२

६३१. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश की एक अज्ञात कथा-रचना, अनेकान्त, वर्ष २५, किरण १, पृ. ४७-४८, मार्च-अप्रैल, १९७२

६३२. यू. नित्ति डोलची (अनुवादक : प्रभाकर झा) : द प्राकृत ग्रैमेरियन्स, दिल्ली, १९७२

६३३. डॉ. चन्द्रप्रकाश त्यागी : देशी शब्दों का भाषावैज्ञानिक अध्ययन, लिपि प्रकाशन, दिल्ली, १९७२

६३४. डॉ. चन्द्रप्रकाश त्यागी : हिन्दी देशी शब्दकोश, वही, १९७२
६३५. रामकिशोर : अपभ्रंश मुक्तक काव्य का स्वरूप, विश्वभारती, खण्ड १३, अंक २, पृ. १९९-१९४, जुलाई-सित., १९७२
६३६. मीना भारती : अपभ्रंश का विकास-क्रम तथा जैन साहित्यकारों की देन, श्रमण, वर्ष २३, अंक ८, पृ. २९-३४, जून, १९७२
६३७. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : भाषा और बोली, भाषा त्रैमासिक, पृ. १११-११७, सित., १९७२
६३८. के. आर. नॉर्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज (९), जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द, २१, सं. ४, पृ. ३३१-३३५, जून, १९७२
६३९. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल (सं.) : राजस्थान के जैन शास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची, पंचम भाग, जयपुर, १९७२
६४०. अगरचन्द नाहटा (सं.) : प्राचीन गुर्जर काव्यसंचय, १९७२
६४१. अगरचन्द नाहटा (सं.) : मरु-गुर्जर जैन कवि और उनकी रचनाएँ, १९७२
६४२. मधुसूदन चिमनलाल मोदी (सं.) : अमरकीर्ति विरचित षट्कर्मोपदेश (छक्कम्मोवएस), गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, बड़ौदा, १९७२
६४३. असीमकुमार चटर्जी : विमलसूरीज पउमचरिय, जर्नल ऑव एन्शियेण्ट इण्डियन हिस्ट्री, कलकत्ता विश्वविद्यालय, जिल्द ६, भाग-१, २, १९७२-७३
६४४. वी. एम. चिन्तामणि : सायण्टिफिक एण्ड टेक्नालॉजिकल थाट्स इन प्राकृत वर्क्स, जर्नल ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २२, सं. ३, पृ. ३२७-३३४, मार्च, १९७३
६४५. Mette, Adelheid : Beschreiburg des schonen Korpens in Sanskrit and Prakrit, wiener zeitschrift fur die Kunde Sudasiem and ostasiens, Vol. XVII, 1973, इण्डोलॉजी इन्स्टीट्यूट विएना यूनिवर्सिटी, आस्ट्रिया
६४६. प्रेमचन्द जैन : अपभ्रंश कथा-काव्यों का हिन्दी प्रेम-काव्यों के शिल्प पर प्रभाव, अमृतसर, १९७३
६४७. बी. के. खडबडी : भगवती आराधना, कमेण्ट्रीज ऑन इट, कथाकोश एसोशियेटेड विथ इट एण्ड ओल्ड कन्नड लिटरेचर, जर्नल ऑव द ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २२, सं. ४, पृ. ५२५-५३०, जून, १९७३
६४८. योगेन्द्रनाथ शर्मा : प्राकृत-अपभ्रंश इतिहास दर्शन, १९७३
६४९. एम. ए. अवधानी : प्राकृत रीडर, हैदराबाद, १९७३
६५०. अगरचन्द नाहटा : 'परमात्मप्रकाश टीका का कर्ता ब्र. जीवराव नहीं, श्वे. धर्मसी उपाध्याय हैं', अनेकान्त, वर्ष २६, किरण १, पृ. २०-२१,

अप्रैल, १९७३

६५१. अगरचन्द नाहटा : 'विलास' संज्ञक रचनाओं की परम्परा, परिषद्-पत्रिका, १३, ३, पृ. ९०-१०१, अक्तू. १९७३

६५२. पं. परमानन्द जैन शास्त्री : कवि धनपाल, अनेकान्त, वर्ष २६, किरण ३, पृ. ४०-४४, जुलाई-अगस्त, १९७३

६५३. डॉ. आ. ने. उपाध्ये (सम्पादन), अनु. डॉ. जगदीशचन्द्र जैन : परमात्मप्रकाश और योगसार, आगास, तृतीय संस्करण, १९७३

६५४. के. आर. नार्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज (१०), जर्नल ऑव द ओ. ई. बड़ोदा, जिल्द २३, सं. १-३, पृ. ६४-७१, सित.-दिस., १९७३

६५५. डॉ. छोटेलाल शर्मा : प्राकृत और अपभ्रंश की रामकाव्य परम्परा का भुवन कोश, अध्ययन-अनुसन्धान, अंक १, पृ. ४६-५२, अप्रैल, १९७३

६५६. डॉ. सिद्धनाथ पाण्डेय : संस्कृत भाषा के विकास में प्राकृत का योग, हिन्दुस्तानी, भाग ३४, अंक ३, पृ. १६-३७, १९७३

६५७. अगरचन्द नाहटा : १४वीं शताब्दी के महावीर जन्माभिषेक और वीर जिनकलश, महावीर जयन्ती स्मारिका, पृ. ३५-३९, १९७३

६५८. अगरचन्द नाहटा : प्राकृत साहित्य की विविधता और विशालता, हिन्दुस्तानी, पृ. ९५-१०१, जुला.-सित., १९७३

६५९. डॉ. वीरेन्द्र श्रीवास्तव : एक लुप्त अवहट्ठ पाठांश, परिषद्-पत्रिका, वर्ष १३, अंक ३, पृ. ९-१२, अक्तूबर, १९७३

६६०. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का जयमाला-साहित्य, वही, पृ. ३५-४९

६६१. डॉ. मंगलबिहारी शरण सिन्हा : सिद्धों की सन्धा भाषा, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, १९७३

६६२. डॉ. एच. सी. भायाणी : सुदयचरिय, ए लास्ट रोमाण्टिक टेल इन अपभ्रंश, प्रोसीडिंग्स ऑव द सेमिनार ऑन प्राकृत स्टडीज, पृ. २४-७, १९७३, अहमदाबाद, १९७८

६६३. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश कवि विबुध श्रीधर और उनका वड्ढमाणचरिउ, वही, पृ. ४६-५२

६६४. पी. बी. बाडीगर : द स्टडी ऑव प्राकृत ग्रैमर फार अण्डरस्टेण्डिंग द तद्भव वर्ड्स इन कन्नड़, वही, पृ. ५३-५७

६६५. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : प्राकृत तथा अपभ्रंश का ऐतिहासिक विकास, वही, पृ. ७०-८८

६६६. डॉ. एस. डी. लद्दू : प्राकृतिक इन्फ्लुएन्स रिवील्ड इन द वर्क्स ऑव पाणिनि, कात्यायन एण्ड पतंजलि, वही, पृ. ८९-१००

६६७. डॉ. टी. एन. दवे : रोल ऑव प्राकृत डायलेक्ट्स इन संस्कृत ड्रामाज, वही,

पृ. १०१-१०८

६६८. डॉ. एन. ए. देशपाण्डे : एप्लीकेबिलिटी ऑव द रूल्स ऑव प्राकृत ग्रैमर टु द फार्मेशन ऑव मराठी वर्ड्स, वही, पृ. १०६-१२

६६६. डॉ. वी. एम. कुलकर्णी : भोजाज श्रृंगार प्रकाश, वही, पृ. १३७-१५८

६७०. डॉ. आर. एम. शाह : सन्धिकाव्य-उद्भव और विकास, वही, पृ. १७५-७८

६७१. डॉ. मुरारीलाल शर्मा 'सुरस' : प्राकृत में कृष्णकाव्य, सम्भावना, वर्ष १, अंक २, पृ. ७०-८१, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय, १६७३

६७२. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : मालवा में प्राकृत तथा अपभ्रंश का विकास, हिन्दुस्तानी, भाग-३४, अंक २, पृ. ६८-१०५, अप्रैल-जून, १६७३

६७३. रामकिशोर : सरहपाद और कबीर के रहस्यवाद की तुलनात्मक विवेचना, हिन्दुस्तानी, भाग-३४, अंक ४, पृ. १३-२१, अक्तू.-दिस., १६७३

६७४. डॉ. राजाराम जैन : रइधू साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन, वैशाली, १६७४

६७५. डॉ. जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल : अपभ्रंश-दीपिका, आगरा, १६७४

६७६. डॉ. जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल : अपभ्रंश साहित्य और व्याकरण, आगरा, १६७४

६७७. डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन : अपभ्रंश के सुलोचनाचरित्र के कर्ता देवसेन, 'जैन सन्देश' शोधांक ३३, पृ. ३६२-६४, सित., १६७४

६७८. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : ऑन द पोस्टपोजीशन लग्न इन सम जैन टेक्स्ट्स, जर्नल ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २४, सं. १-२, पृ. १४८, सित.-दिस., १६७४

६७६. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (सम्पादन, अनुवाद) : कवि नरसेनदेव रचित 'सिरिवालचरिउ', भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, १६७४

६८०. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन : पउमचरिउ में नारी, श्रमण, जिल्द २५, सं. ६, अप्रैल, १६७४

६८१. डॉ. हीरालाल जैन (सम्पादन, अनुवाद) : वीरजिणिंदचरिउ (महाकवि पुष्पदन्त), भारतीय ज्ञानपीठ, १६७४

६८२. डॉ. जगदीश प्रसाद कौशिक : राजस्थानी भाषा के संज्ञा-पदों के विकास में अपभ्रंश का अवदान, अनुसन्धान पत्रिका, अंक ५, पृ. ७-२६, जन.-मार्च, १६७४

६८३. जे. एम. शुक्ला : ग्रैमेटिकल परिभाषाज ऑव द जैन ग्रैमेरियन्स, जर्नल ओ. इं., जिल्द २४, सं. १-२, पृ. १२८-१३८, सित.-दिस., १६७४

६८४. रंजन सूरिदेव : रामचरितमानस और और पउमचरिउ, तुलसी मानस सन्दर्भ, पृ. ५६४-५७६, १६७४

६८५. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : भगवान् महावीर की मूल वाणी का भाषावैज्ञानिक

महत्त्व, द विक्रम जर्नल ऑव विक्रम यूनिवर्सिटी, उज्जैन, जिल्द १८, सं. २-४, पृ. १४५-१६०, मई-नव., १६७४

९८६. डॉ. प्रेम सुमन जैन : भगवान् महावीर की परम्परा का जन-भाषा के विकास में योगदान, वही, पृ. १६१-१६८

९८७. डॉ. नागेन्द्र प्रसाद : सिद्ध-साहित्य का मूल स्रोत, वैशाली इन्स्टिट्यूट रिसर्च बुलेटिन नं. २, पृ. १२४-१५७, १६७४

९८८. डॉ. देवनारायण शर्मा : जैन रामायण 'पउमचरिउ' में चरित्र-चित्रण के मानदण्ड, वैशाली इन्स्टिट्यूट रिसर्च बुलेटिन, नं. २, पृ. १५८-१६०, १६७४

९८९. एच. सी. भायाणी : प्राकृत धुडुंकिय—'सल्की एण्ड सायलेण्ट,' जर्नल ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २४, सं. १-२, पृ. १४६-१५१, १६७४

९९०. डॉ. रा. प्र. पोद्दार : सन्देशरासक की हिन्दी की टीका पर कुछ टिप्पणियाँ, वही, पृ. १६१-१६४

९९१. प्रो. एच. सी. भायाणी, प्रो. एम. सी. मोदी (सं.) : सनत्कुमारचरिय, एल. डी. सीरीज ४३, १६७४

९९२. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : प्राकृत तथा अपभ्रंश का ऐतिहासिक विकास, वैशाली इं. रि. बुलेटिन सं. २, पृ. १७१-१८१, १६७४

९९३. डॉ. राजाराम जैन : सन्तकवि रइधू और उनका साहित्य, वही, पृ. १८२-१८७

९९४. अगरचन्द नाहटा : महाराजा भोज के समय का एक अपभ्रंश काव्य : सुदंसणचरिउ, वही, पृ. २०४-२०६

९९५. डॉ. राजदेवसिंह : सन्त साहित्य की भूमिका, नयी दिल्ली, १६७४

९९६. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश का एक अद्यावधि अप्रकाशित दुर्लभ ग्रन्थ तिसट्ठिसलाका महापुराण, जैन सिद्धान्त भास्कर, भाग २७, किरण १, १६७४

९९७. इंगेबोर्ग हॉफमन : डेर कथाकोश, सम्पादित, म्युनिख, १६७४

९९८. के. आर. नॉर्मन, केम्ब्रिज (इंग्लैण्ड) : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज (११), जर्नल ऑव द ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २४, सं. १-२, पृ. १३६-१४४, सित.-दिस., १६७४

९९९. रमणीकलाल एम. शाह : महावीरचरित, एन अपभ्रंश वर्क ऑफ जिनप्रभसूरि, जर्नल ऑव द ओ. इ. बड़ोदा, जिल्द २४, सं. १-२, पृ. ५-१०, सित.दिस., १६७४

१०००. मुनि बुधमल : भारतीय भाषाओं को जैन साहित्यकारों की देन, साहित्य निकेतन, नया बाजार, दिल्ली, १६७५

१००१. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश काव्यों में लोकजीवन, परिषद्-पत्रिका, १५, १, पृ. ३७-५३, अप्रैल, १६७५

१००२. डॉ. राजाराम जैन (सम्पादन, अनुवाद) : रइधू-ग्रन्थावली, प्रथम भाग,

जीवराज जैन ग्रन्थमाला, सोलापुर, १६७५
१००३. डॉ. राजाराम जैन (सम्पादन, अनुवाद) : विबुह श्रीधर कृत वड्ढमाणचरिउ, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, १६७५
१००४. सत्यरंजन वन्द्योपाध्याय (सम्पादन) : वररुचि कृत प्राकृत प्रकाश, संस्कृत पुस्तक भण्डार, कलकत्ता, १६७५
१००५. मुनि नगराज : संक्रान्तिकाल की प्राकृतें, तुलसी-प्रज्ञा, पृ. ३४-४१, अप्रैल-जून, १६७५
१००६. डॉ. चन्द्रभाल त्रिपाठी : स्ट्रासवर्ग की जैन पाण्डुलिपियों की सूची, बर्लिन विश्वविद्यालय, १६७५
१००७. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : भोज एण्ड प्राकृत लिटरेचर : हिज कूर्मशतक, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द २५, सं. १, पृ. ६३-६६, सित., १६७५
१००८. डॉ. प्रेम सुमन जैन : राजस्थानी भाषा में प्राकृत-अपभ्रंश के प्रयोग, तुलसीप्रज्ञा, लाडनूं, १६७५
१००६. डॉ. प्रेम सुमन जैन : अपभ्रंश के प्रबन्ध काव्य, श्रमण, वाराणसी, १६७५
१०१०. डॉ. प्रेम सुमन जैन : कर्नाटक के अपभ्रंश मनीषी; उनका योगदान, अनुसन्धान पत्रिका, जयपुर
१०११. डॉ. प्रेम सुमन जैन : राजस्थान का अपभ्रंश साहित्य, जिनवाणी विशेषांक
१०१२. के. ओकूद : आइने दिगम्बर-डोगमेटिक, विएसवडेन, १६७५
१०१३. डॉ. ए. एन. उपाध्ये : प्राकृत लैंग्वेजेज एण्ड लिटरेचर, पूना विश्वविद्यालय, पूना, १६७५
१०१४. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी : व्युत्पत्तिविचार, १६७५
१०१५. योगेन्द्रनाथ शर्मा : स्वयम्भू और तुलसी के नारी पात्र, १६७६
१०१६. डॉ. कोले कैले : मुनि रामसिंह रचित 'पाहुडदोहा' का अँग्रेजी अनुवाद, एल. डी. इन्स्टिट्यूट, अहमदाबाद से प्रकाशित 'सम्बोधि' पत्रिका, जुलाई, १६७६ में प्रकाशित
१०१७. चन्द्रभाल त्रिपाठी और बंशीधर भट्ट (सम्पादक) : वारसाणुवेक्खा ऑव कुन्दकुन्द, बर्लिन, १६७६
१०१८. उलरिख श्वनीडर, फ्रीवर्ग, बर्लिन : ऑन द सेवन्थ रॉक एडिक्ट ऑव अशोक, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द २५, सं. ३-४, पृ. २३६-२४०, मार्च-जून, १६७६
१०१६. के. आर. नॉमन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज, (१२), जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द २५, सं. ३-४, पृ. ३२८-३४२, मार्च-जून, १६७६

१०२०. एस. एन. घोषाल : द जेनेटिव फॉर्म एज द बेसिस ऑव सम प्रोनॉमिनल बेसेज इन प्राकृत, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द २५, सं. ३-४, पृ. ३४३-३४८, मार्च-जून, १९७६

१०२१. एच. सी. भायाणी : द अपभ्रंश पैसेजेज फ्रॉम भोजाज श्रृंगार प्रकाश १-८, जर्नल ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २५, सं. ३-४, पृ. ३५४-३६३, मार्च-जून, १९७६

१०२२. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का उपलब्ध साहित्य, पं. सुमेरुचन्द्र दिवाकर अभिनन्दन-ग्रन्थ, पृ. ३४-४२, जबलपुर, १९७६

१०२३. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन : पुष्पदन्त और सूरदास का कृष्ण-लीला चित्रण : एक तुलनात्मक अध्ययन, पण्डित चैनसुखदास न्यायतीर्थ स्मृति-ग्रन्थ, पृ. १८९-१९४, जयपुर, १९७६

१०२४. डॉ. त्रिलोक पाण्डेय : अपभ्रंश के जैन-प्रेमाख्यान काव्य, वही, पृ. २०९-२१७, जयपुर, १९७६

१०२५. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू कृत एक नवीन उपलब्ध सचित्र रचना संतिणाहचरिउ, वही, पृ. २५८-२६८

१०२६. डॉ. प्रेम सुमन जैन : मेवाड़ का अपभ्रंश साहित्य, अम्बा मुनि अभिनन्दन ग्रन्थ, १९७६

१०२७. के. ओइतजेन्स : शिवार्यजि मूलाराधना, हम्बर्ग, १९७६

१०२८. आर. एम. शाह (सं.) : साधारण कवि रचित 'विलासवईकहा', अहमदाबाद, १९७७

१०२९. महावीर प्रसाद शर्मा : मेवाती का उद्भव और विकास, १९७७

१०३०. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का एक अचर्चित चरित काव्य, अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन ग्रन्थ, द्वितीय भाग, पृ. १६०-१६६, बीकानेर, १९७७

१०३१. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : अपभ्रंश कथाकाव्यों की भारतीय संस्कृति को देन, अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन ग्रन्थ, द्वितीय भाग, पृ. १५५-१५९

१०३२. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू की एक अप्रकाशित सचित्र कृति 'पासणाहचरिउ', अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ. १८२-१८७

१०३३. डॉ. प्रेम सुमन जैन, डॉ. के. के. शर्मा : अपभ्रंश काव्यधारा, सरस्वती पुस्तक भण्डार, अहमदाबाद, १९७७

१०३४. मुनि नथमल : आर्ष प्राकृत : स्वरूप एवं विश्लेषण, आ. श्री कालूगणि स्मृतिग्रन्थ, पृ. २२७-२३८, छापर, १९७७

१०३५. डॉ. महावीर सरन जैन : प्राकृत एवं अपभ्रंश का आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं पर प्रभाव, वही, पृ. २८७-३०२, छापर, १९७७

१०३६. डॉ. कृष्णकुमार शर्मा : प्राकृत-अपभ्रंश का राजस्थानी भाषा पर प्रभाव,

वही, पृ. ३०२-३४२, छापर, १९७७
१०३७. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश की आनुपूर्वी में कोश-साहित्य, वही, पृ. ३४३-३८६, छापर, १९७७
१०३८. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : डायलेक्ट एण्ड सब-डायलेक्ट्स ऑव प्राकृत, वही, पृ. ३३-६८, छापर, १९७७
१०३९. डॉ. एच. सी. भायाणी : इम्पोर्टेन्स ऑब जैन लिटरेचर फार द स्टडी ऑव देश्य प्राकृत, वही, पृ. ८३-१०७, छापर, १९७७
१०४०. डॉ. चन्द्रभाल त्रिपाठी : केटेलोगीजी रुंग्स ट्रेडीशन डेर जैनाज, निबन्ध प्रकाशित, १९७७
१०४१. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : ईस्टर्न स्कूल ऑव प्राकृत ग्रैमेरियन्स, कलकत्ता, १९७७
१०४२. वी. एम. कुलकर्णी : द सोर्स ऑफ प्राकृत लैंग्वेजेज, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑव बोम्बे, जिल्द ४१, सं. ७७, अक्तू., १९७७
१०४३. पी. एम. उपाध्ये : देश्य वर्ड्स इन प्राकृत, जर्नल ऑव द यूनिवर्सिटी ऑब बोम्बे, जिल्द ४१, सं. ७७, अक्तू. १९७७
१०४४. डॉ. एच. सी. भायाणी : द फाइव अपभ्रंश वर्सेस कम्पोज्ड बाय मुंज, द परमार किंग ऑव मालवा, अगरचन्द नाहटा अभिनन्दन-ग्रन्थ, द्वितीय भाग, पृ. ९०-९३, बीकानेर, १९७७
१०४५. डॉ. वसन्त गजानन राहूरकर : प्राकृत के कुछ शब्दों की व्युत्पत्ति, वही, पृ. १५३-१५४, बीकानेर, १९७७
१०४६. कस्तूरचन्द कासलीवाल : अपभ्रंश कथाकाव्यों की भारतीय संस्कृति को देन, वही, पृ. १५५-१५९, बीकानेर, १९७७
१०४७. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश का एक अचर्चित चरितकाव्य, वही, पृ. १६०-१६६, बीकानेर, १९७७
१०४८. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू की एक अप्रकाशित सचित्र कृति 'पासणाहचरिउ', वही, पृ. १८२-१८७, बीकानेर, १९७७
१०४९. आदित्य प्रचण्डिया दीति : अपभ्रंश वाङ्मय में व्यवहृत पारिभाषिक शब्दावलि, महावीर प्रकाशन, अलीगंज (एटा, उ. प्र.), १९७७
१०५०. पं. बेचरदास दोशी : प्राकृत व्याकरण, यूनिवर्सिटी ग्रन्थनिर्माण बोर्ड, अहमदाबाद, १९७८
१०५१. डॉ. प्रेम सुमन जैन : महाकवि स्वयम्भू और तुलसीदास, अनेकान्त, वर्ष ३१, किरण १, पृ. १३-१८, जन.-मार्च, १९७८
१०५२. डॉ. राजाराम जैन : सन्तकवि रइधू और उनका साहित्य, अनेकान्त, वर्ष ३१, किरण २, पृ. ५९-७२, अप्रैल-जून, १९७८

१०५३ प्रो. रंजनसूरि देव : सूर के काव्य पर अपभ्रंश कृष्णकाव्य का प्रभाव, महावीर जयन्ती स्मारिका, पृ. ६-१५, जयपुर, १९७८

१०५४. के. आर. नॉर्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज (१३), जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द २७, सं. ३-४, पृ. ७८-८५, मार्च-जून, १९७८

१०५५. डॉ. राममूर्ति त्रिपाठी : सन्त साहित्य और जैन अपभ्रंश काव्य, अनेकान्त, वर्ष ३२, किरण १-२, पृ. २-६, जन.-जून, १९७९

१०५६. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (अनुवाद) : महाकवि पुष्पदन्त कृत महापुराण, भाग-१, २, सन् १९७९; भाग-३, १९८१; भाग-४, १९८३

१०५७. शम्भुनाथ पाण्डेय : अपभ्रंश और अवहट्ट : एक अन्तर्यात्रा, चौखम्बा ओरियण्टालिया, दिल्ली, १९७९

१०५८. डॉ. महावीर सरन जैन : प्राकृत एवं अपभ्रंश का आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं पर प्रभाव, पुष्कर मुनि अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ. ५८७-५९५, उदयपुर, १९७९

१०५९. डॉ. के. आर. चन्द्र : भारतीय भाषाओं के विकास और साहित्य की समृद्धि में श्रमणों का महत्त्वपूर्ण योगदान, अहमदाबाद, १९७९

१०६०. डॉ. राजाराम जैन : सिरिवालकहा में वर्णित हंसद्वीप, शोध पत्रिका सं. १, पृ. ४६-६७, नागरी प्रचारिणी सभा, आरा

१०६१. वी. एम. कुलकर्णी : भोजाज श्रृंगार प्रकाश, प्राकृत टेक्स्ट रेस्टोर्ड, जर्नल ऑव द ओ. इं. बड़ोदा, जिल्द २९, सं. १-२, पृ. २७-३६, सित.-दिस., १९७९

१०६२. के. आर. नॉर्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज (१४-१५), वही, पृ. ३७-४६, बड़ोदा, १९७९

१०६३. डॉ. सुदर्शन मिश्र : महाकवि पुष्पदन्त और उनका महापुराण, बिहार वि. वि. से १९७९ में स्वीकृत, शोधप्रबन्ध, अप्रकाशित

१०६४. कान्तिलाल बलदेवराम व्यास : अपभ्रंश ऑव हेमचन्द्र, १९८०

१०६५. डॉ. राजाराम जैन : विबुधश्रीधर एवं उनका 'पासणाहचरिउ', पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ. २२७-२३७, रीवा, १९८०

१०६६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : प्राकृत तथा अपभ्रंश-शोध-कार्य की दिशाएँ, पं. कैलाशचन्द्र शास्त्री अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ. ४९१-४९७, रीवा, १९८०

१०६७. डॉ. हरीन्द्रभूषण जैन : विदेशों में प्राकृत और जैन विद्याओं का अध्ययन, वही, पृ. ५१६-५१९

१०६८. डॉ. सत्यरंजन बनर्जी : प्राकृताध्याय ऑव क्रमदीश्वर, प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी, अहमदाबाद, १९८०

१०६९. आर. एम. शाह (सं.) : सन्धिकाव्य—समुच्चय, एल. डी. सीरीज, ग्रन्थांक ७२, अहमदाबाद, १९८०
१०७०. डॉ. देवनारायण शर्मा : पउमचरिउ तथा रामचरितमानस—एक सांस्कृतिक अध्ययन, प्राकृत जैन शास्त्र एवं अहिंसा शोध-संस्थान, वैशाली, १९८१
१०७१. कुन्दनलाल जैन (सं.) : दिल्ली जिन-ग्रन्थ-रत्नावली, भारतीय ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली, १९८१
१०७२. डॉ. प्रेमचन्द्र जैन (सं.) : ए डिस्क्रिप्टिव केटलॉग ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार नागौर, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर, १९८१
१०७३. जोजेफ डेल्यु : ए नोट ऑन द जैन प्रबन्धाज, क्लास ब्रुन द्वारा सम्पादित 'स्टडियन जुम जैनिस्मस एण्ड बुद्धिस्मस' में प्रकाशित, पृ. ६१-७३, १९८१ Studien Zum Jainismus and Buddhismus-Gedenkschrift fuer Ludwig Alsdorf, Wiesbaden, 1981
१०७४. डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' : अपभ्रंश भाषा का व्याकरण और साहित्य, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, १९८२
१०७५. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन : 'राम का वन गमन', अनेकान्त, अनेकान्त वर्ष ३५, किरण १, पृ. ६-९, जन.-मार्च, १९८२
१०७६. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश काव्यों में सामाजिक चित्रण, अनेकान्त, वर्ष ३५, किरण २, पृ. १०-१४, अप्रैल-जून, १९८२
१०७७. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश काव्यों में सामाजिक चित्रण, अनेकान्त, वर्ष ३५, किरण ४, पृ. ८-१०, १९८२
१०७८. डॉ. राजाराम जैन : प्राचीन जैन शिलालेखों एवं जैन ग्रन्थ प्रशस्तियों (अपभ्रंश) में उल्लिखित उच्च श्रावक-श्राविकाएँ, वैशाली इन्स्टिट्यूट, क्र. सं. ३, पृ. १४२-१५३, वैशाली, १९८२
१०७९. वी. कान्तिलाल व्यास : अपभ्रंश ऑव हेमचन्द्र, १९८२
१०८०. डॉ. के. आर. चन्द्र : प्राकृत-भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण, अहमदाबाद, १९८२
१०८१. डब्ल्यु. बी. बोल्ले : नोट्स ऑन मिडिल इण्डो-आर्यन वोकेबुलरी (१), जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३१, सं. ३, पृ. २४४-२५४, मार्च, १९८२
१०८२. मुनि वज्रसेन विजय (सं.) : प्राकृत व्याकरणम्, श्री जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर, १९८२
१०८३. डॉ. राजाराम जैन : महाकवि रइधू कृत रिट्ठणेमिचरिउ में सोनागिर की भट्टारकीय गद्दी का उल्लेख, अनेकान्त, वर्ष ३६, किरण १, पृ. ५-६, जन.-मार्च, १९८३

१०८४. डॉ. राजाराम जैन : अपभ्रंश-साहित्य में उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्री, शोध पत्रिका सं. ३, पृ. ४६-६५, आरा नागरी प्रचारिणी सभा, पृ. ४६-६५

१०८५. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन : स्वयम्भू की भाषा और देशीतत्त्व, अनेकान्त वर्ष ३६, किरण २, पृ. १३-१५, अप्रैल-जून, १९८३

१०८६. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन : अपभ्रंश और हिन्दी, राजस्थान प्राकृत भारती संस्थान, जयपुर, १९८३

१०८७. डॉ. सागरमल जैन : डॉक्टरल डिजर्टेशन इन जैन एण्ड बुद्धिस्ट स्टडीज, पार्श्वनाथ विद्याश्रम, बाराणसी, १९८३

१०८८. क्लास ब्रुन : रिपीटीशन इन जैना नेरेटिव लिटरेचर, इण्डोलॉजिका टोरिनेशिया, ११, पृ. २७-७७, १९८३

१०८९. कोलिन मेयरहोफर : ट्रेडीशन एण्ड इननोवेशन इन जैन नेरेटिव्स : ए स्टडी ऑव दू अपभ्रंश वर्सन्स ऑव द स्टोरी ऑव चारुदत्त, इण्डोलॉजिका, टोरिनेशिया, ११, पृ. १६३-१७५, १९८३

१०९०. डॉ. विद्यावती जैन : पज्जुण्णचरिउ : एक मूल्यांकन, शोध, अंक ३, पृ. ८५-९५ १९८३, आरा नागरी प्रचारिणी सभा,

१०९१. के. आर. नार्मन : मिडिल इण्डो-आर्यन स्टडीज १६, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३२, सं. ३-४, पृ. २७५-२७६, मार्च-जून, १९८३

१०९२. डब्लु. बी. बोल्ले : नोट्स ऑन मिडिल इण्डो-आर्यन वोकेबुलरी II, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३३, सं. १-२, पृ. १०८-१२२ सित.-दिस. १९८३

१०९३. रूपेन्द्रकुमार पगारिया (सं.) : बर्द्धमानसूरि कृत मणोरमाकहा, एल. डी. सीरीज ९३, अहमदाबाद, १९८३

१०९४. डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन : महाकवि स्वयम्भू विषयक शोध-खोज, अनेकान्त, वर्ष ३७, किरण १, पृ. २-४, जन.-मार्च, १९८४

१०९५. भँवरलाल पोल्याका (सम्पादन, अनुवाद) : मुनि विनयचन्द्र कृत चूनड़िया, जैन विद्या संस्थान, जयपुर, १९८४

१०९६. युवाचार्य महाप्रज्ञ : निरुक्त कोश, जैन विश्वभारती, लाडनूँ, १९८४

१०९७. डॉ. उदयनारायण तिवारी : आधुनिक आर्य भाषाओं का व्युत्पत्तिमूलक अध्ययन, परिषद्-पत्रिका, बर्ष २३, अंक ४, पृ. २८-६३, जनवरी, १९८४

१०९८. प्रो. विनीता जैन : हेमचन्द्र के अपभ्रंश-मुक्तकों का लाक्षणिक वैभव, वही, पृ. ६६-७४, जनवरी, १९८४

१०९९. डॉ. गजानन नरसिंह साठे : पउमचरिउ में प्रतिबिम्बित महाकवि स्वयम्भू देव का व्यक्तित्व, जैन विद्या, पृ. ९-१६, अप्रैल, १९८४

११००. डॉ. विद्याधर जोहरापुरकर : स्वयम्भू का प्रदेश, वही, पृ. १७-१८, अप्रैल, १९८४

११०१. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : अपभ्रंश साहित्य में महाकवि स्वयम्भू, वही, पृ. १९-२१, अप्रैल, १९८४

११०२. पं. विष्णुकान्त शुक्ल : स्वयम्भूकालीन साहित्यिक परिस्थितियाँ वही, पृ. २३-२७, अप्रैल, १९८४

११०३. डॉ. प्रेमचन्द रांवका : स्वयम्भू की काव्यकला, वही, पृ. २९-३६, अप्रैल, १९८४

११०४. डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा : 'अरुण' : स्वयम्भू में प्रयुक्त अलंकार, वही, पृ. ४१-४८, अप्रैल, १९८४

११०५. नेमीचन्द पटोरिया : पउमचरिउ के व्याकरण उपमान, वही, पृ. ४९-५३

११०६. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन : महाकवि स्वयम्भू की भाषा में देशी तत्त्व, वही, पृ. ५५-६०, अप्रैल, १९८४

११०७. श्रीरंजन सूरिदेव : अपभ्रंश रामायण पउमचरिउ के हनुमान, वही, पृ. ६१-६५

११०८. डॉ. विमलप्रकाश जैन : स्वयम्भू देव कृत पउमचरिउ में सीता का चरित्र, वही, पृ. ६७-७८

११०९. डॉ. विद्यावती जैन : स्वयम्भू कृत पउमचरिउ के कुछ प्रमुख नारी पात्र, वही, पृ. ७९-९०

१११०. भँवरलाल पोल्याका : पउमचरिउ की सूक्तियाँ, वही, पृ. ९१-९६

११११. श्रीयांसकुमार सिंघई : पउमचरिउ में भरत बाहुबलि प्रसंग, वही, पृ. ९७-१०४

१११२. डॉ. कस्तूरचन्द 'सुमन' : स्वयम्भूछन्द : एक समीक्षात्मक अध्ययन, वही, पृ. १०५-११२

१११३. डॉ. राजाराम जैन : स्वयम्भू साहित्य की प्रशस्तियों में उल्लिखित कुछ प्रमुख साहित्यकार, वही, पृ. ११३-१२०

१११४. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश वाङ्मय में व्यवहृत पारिभाषिक शब्दावलि और उसका अर्थ-अभिप्राय, परामर्श, वर्ष, अंक १, दर्शनविभाग, पूना विश्वविद्यालय

१११५. भारती मोदी : 'एच' इन एन्शियेण्ट फोनेटिक ट्रिटाइजेज एण्ड फोनेटिक्स ऑव मुरमुर, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट वड़ोदा, जिल्द ३३, सं. ३-४, पृ. २७३-२८३, मार्च-जून, १९८४

१११६. भोगीलाल जे. सण्डेसरा : सम इम्पार्टेण्ट वोकेवल्स फ्राम द दोधकवृत्ति, ए संस्कृत ग्लास ऑन द अपभ्रंश कोटेशन्स इन द प्राकृत ग्रैमर ऑव हेमचन्द्र,

जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३४, सं. १-२, पृ. ६१-६६, सित.-दिस., १९८४

१११७. सत्यप्रकाश (सम्पादक) : जैनिज्म : ए सेलेक्ट बिब्लियोग्राफी इण्डिया डाक्युमेन्टेशन सर्विस, गुड़गाँव, १९८४

१११८. हर्मन टिएकन : प्राकृत दुजरिअल्ल, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ौदा, जिल्द, ३४, सं. ३-४, पृ. २१७-२३९

१११९. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री (सम्पादन, अनुवाद) : महानन्दिदेव कृत आणंदा, जैन विद्या संस्थान, जयपुर, १९८५

११२०. भँवरलाल पोल्याका (सम्पादन, अनुवाद) : कनककीर्ति कवि नण्हु कृत णेमिसुर-पाण्डे जयमाल, जयपुर, १९८५

११२१. डॉ. प्रेमचन्द जैन : ए डिस्क्रिप्टिव केटलाग ऑव मेन्युस्क्रिप्ट्स इन द भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार नागोर, भाग-३, जयपुर, १९८५

११२२. डॉ. देवेन्द्रकुमार जैन (सम्पादन, अनुवाद) : स्वयम्भूदेव कृत रिट्ठणेमिचरिउ, यादव काण्ड, भारतीय ज्ञानपीठ, १९८५

११२३. डॉ. भागचन्द्र जैन 'भास्कर' (सम्पादन) : संबोहपंचासिया और वयकहा, जैन अनुशीलन केन्द्र, जयपुर, १९८५

११२४. डॉ. नरेशकुमार : हिन्दी व्युत्पत्ति-कोश, इण्डो विजन प्रा. लि., गाजियाबाद, १९८५

११२५. डॉ. गजानन नरसिंह साठे : णायकुमारचरिउ : एक आद्यन्त जैनकाव्य, जैन विद्या, पृ. ९-१६, नवम्बर, १९८५

११२६. डॉ. कमलचन्द सोगाणी : णायकुमारचरिउ में प्रतिपादित जीवनमूल्य, वही, पृ. १७-२३

११२७. डॉ. कस्तूरचन्द 'सुमन' : णायकुमारचरिउ की सूक्तियाँ और उनका अध्ययन, वही, पृ. ३५-३२

११२८. जवाहिरलाल जैन : जसहरचरिउ का काव्य-वैभव, वही, पृ. ३९-४६

११२९. श्रीयांसकुमार सिंघई : जसहरचरिउ में आत्मा सम्बन्धी विचार, वही, पृ. ४७-५५

११३०. डॉ. प्रेमचन्द रांवका : महाकवि पुष्पदन्त और उनकी रसाभिव्यक्ति, वही, पृ. ६३-६७

११३१. डॉ. पुष्पलता जैन : महाकवि पुष्पदन्त की विचारदृष्टि एवं उपमान सृष्टि, वही, पृ. ६९-७६

११३२. डॉ. वृद्धिचन्द जैन : महाकवि पुष्पदन्त की काव्यप्रतिभा, वही, पृ. ७७-८२

११३३. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : महाकवि पुष्पदन्त : व्यक्तित्व और कर्तृत्व, जैन विद्या, पृ. ९-१५, अप्रैल, १९८५

११३४. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : पुष्पदन्त काव्य में प्रयुक्त 'लक्ष्मी', जैन विद्या, नवम्बर, १९८५
११३५. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : अपभ्रंश के संवेदनशील महाकवि पुष्पदन्त, वही, पृ. १७-२४
११३६. डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण' : महाकवि पुष्पदन्त और उनका काव्य, वही, पृ. २५-३२
११३७. डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया : पुष्पदन्त की भाषा, वही, पृ. ३३-४२
११३८. श्रीरंजनसूरिदेव : महापुराण की काव्यभाषा, वही, पृ. ४३-४९
११३९. डॉ. छोटेलाल शर्मा : महापुराणु के रामायण खण्ड की बिम्ब-योजना, वही, पृ. ५१-६३
११४०. डॉ. गदाधर सिंह : महाकवि पुष्पदन्त द्वारा रचित महापुराण की बिम्ब-योजना, वही, पृ. ६५-७२
११४१. डॉ. प्रेमसागर जैन : पुष्पदन्त और सूरदास (वात्सल्य), वही, पृ. ७३-७८
११४२. प्रीति जैन : जैन रामकथाओं के परिप्रेक्ष्य में पुष्पदन्त का दार्शनिक ऊहापोह, वही, पृ. ७९-८९
११४३. डॉ. भागचन्द 'भास्कर' : महाकवि पुष्पदन्त का दार्शनिक ऊहापोह, वही, पृ. ९१-९६
११४४. डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल : महाकवि पुष्पदन्त के आदिपुराण की एक सचित्र पाण्डुलिपि, वही, पृ. ९७-१००
११४५. पं. अनूपचन्द 'न्यायतीर्थ' : महाकवि पुष्पदन्त की रचनाओं की राजस्थान में लोकप्रियता, वही, पृ. १०१-१०६
११४६. भँवरलाल पोल्याका (सम्पादन, अनुवाद) : मुनि चारित्रसेन कृत समाधि जयपुर, १९८६
११४७. डॉ. भागचन्द जैन 'भास्कर' (सम्पादन) : महाकवि यशःकीर्ति कृत चन्दप्पहचरिउ, वीरसेवामन्दिर ट्रस्ट, वाराणसी, १९८६
११४८. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश कवियों की 'आत्मलघुता' का मध्ययुगीन हिन्दी काव्यधारा पर प्रभाव, महावीर जयन्ती स्मारिका, पृ. ४३-४४, जयपुर, १९८६
११४९. डॉ. जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल : महाकवि धनपाल : व्यक्तित्व एवं कृतित्व, जैन विद्या, पृ. ९-१४, अप्रैल १९८६
११५०. डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा 'अरुण' : महाकवि धनपाल की काव्य प्रतिभा, वही, पृ. २१-२७
११५१. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : भविसयत्तकहा का साहित्यिक महत्त्व, वही, पृ. २९-३९

११५२. डॉ. कपूरचन्द जैन : भविष्यदत्तकथा विषयक साहित्य : एक अनुशीलन, वही, पृ. ४१-५०
११५३. डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव : अपभ्रंश का शिखर महाकाव्य : भविसयत्तकहा, वही, पृ. ५१-५६
११५४. डॉ. छोटेलाल शर्मा : भविसयत्तकहा का भाव-बोध, वही, पृ. ५७-७२
११५५. डॉ. गदाधर सिंह : भविसयत्तकहा का कथारूप, वही, पृ. ७३-७८
११५६. श्रीयांस सिंघई : भविसयत्तकहा का धार्मिक परिवेश, पृ. ७६-८६
११५७. डॉ. गंगाराम गर्ग : भविसयत्तकहा में नीतितत्त्व, वही, पृ. ८७-६२
११५८. डॉ. रामगोपाल शर्मा 'दिनेश' : भविसयत्तकहा में युग और समाज के सन्दर्भ, वही, पृ. ६३-६७
११५६. डॉ. गजानन नरसिंह साठे : भवितयत्तकहा में जीवन का प्रतिबिम्ब, वही, पृ. ६६-१०६
११६०. डॉ. कस्तूरचन्द 'सुमन' (सम्पादन) : अमरसेनचरिउ, १६८६
११६१. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश कविश्री जोइन्दु का साहित्यिक अवदान, अनेकान्त, अप्रैल-जून, १६८६
११६२. आई. साईबाबा : लैंग्वेज ऑव द दसमुहवहो-सेतुबन्ध, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३५, सं. ३-४, पृ. ३०६-३१०, मार्च-जून, १६८६
११६३. क्वएर्ने : पर. १६७७ एन एथनालॉजी ऑव बुद्धिस्ट तान्त्रिक सांग्स, चर्यागीतियों का अध्ययन, १६८६, आस्लो (नार्वे), द्वि. सं. बैंकाक
११६४. एच. सी. भायाणी : अर्ली लिटररी रिफ्रेन्शेज टु द रावणहस्त, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३६, सं. १-४, पृ. १११-११४, सित. १६८६, जून १६८७
११६५. प्रो. विट बुवेनिक : पेसिवाइज्ड काजेटिव्स इन संस्कृत एण्ड प्राकृत्स, लिंग्विस्टिक्स २५, पृ. ६८७-७०४, १६८७,
११६६. के. आर. चन्द्र (सं.) : प्राकृत-हिन्दी कोश, अहमदाबाद, १६८७
११६७. पं. भँवरलाल पोल्याका (सम्पादन, अनुवाद) : कवि नेमिप्रसाद कृत बुद्धिरसायण ओणमचरित्तु, जयपुर, १६८७
११६८. रूपेन्द्रकुमार पगारिया (सं.) : जुगाइ-जिणिंद-चरिय, एल. डी. सीरीज १०४, अहमदाबाद, १६८७
११६६. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : भारतीय आर्य भाषाओं के विकास में प्राकृत-अपभ्रंश का योगदान, जैन विद्या स्मारिका, पृ. १० (सारांश), १६८७
११७०. कमलकुमार जैन शास्त्री : श्रीचन्द कृत दर्शनकथा-रत्नकरण्ड अपभ्रंश

पाण्डुलिपि, जैनविद्या स्मारिका, पृ. ८-६ (सारांश), १६८७
११७१. डॉ. कस्तूरचन्द 'सुमन' : एक अप्रकाशित कृति अमरसेनचरिउ, अनेकान्त, वर्ष ४०, किरण ३, पृ. १५-१८, जुला.-सित., १६८७,
११७२. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : सुदंसणचरिउ का साहित्यिक मूल्यांकन, जैन विद्या, पृ. १-११, अक्तू., १६८७
११७३. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : सुदंसणचरिउ का काव्यात्मक वैभव, वही, पृ. १३-१६
११७४. डॉ. गंगाराम गर्ग : सुदंसणचरिउ में अलंकार-योजना, वही, पृ. १७-२८
११७५. श्रीरंजन सूरिदेव : सुदंसणचरिउ का छान्दसवैशिष्ट्य, वही, पृ. २६-३४
११७६. डॉ. गदाधर सिंह : सुदंसणचरिउ : उदात्त की दृष्टि से, वही, पृ. ६१-७१
११७७. डॉ. जयकुमार जैन : भारतीय भाषाओं में सुदर्शनचरित विषयक साहित्य, वही, पृ. ७३-७६
११७८. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश वाङ्मय में पार्श्वनाथ, तुलसीप्रज्ञा, खण्ड १२, अंक २, पृ. ४३-४५, सित., १६८७
११७६. डॉ. महेन्द्रसागर प्रचण्डिया : जम्बूसामिचरिउ के यशस्वी महाकवि वीर का व्यक्तित्व, जैन विद्या, पृ. ६-१३, अप्रैल, १६८७
११८०. डॉ. जयकिशनप्रसाद खण्डेलवाल : महाकवि वीर और उनका जम्बूसामिचरिउ, वही, पृ. १५-२१
११८१. डॉ. छोटेलाल शर्मा : महाकवि वीर का समीक्षा सिद्धान्त, वही, पृ. २३-३२
११८२. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : जम्बूसामिचरिउ का साहित्यिक मूल्यांकन, वही, पृ. ३३-४०
११८३. डॉ. गंगाराम गर्ग : जम्बूसामिचरिउ में रसयोजना, वही, पृ. ५१-५८
११८४. अलका प्रचण्डिया 'दीति' : जम्बूसामिचरिउ में छन्दयोजना, वही, पृ. ५६-६४
११८५. डॉ. भागचन्द जैन 'भास्कर' : महाकवि वीर की दार्शनिक दृष्टि, वही, पृ. ६५-७१
११८६. डॉ. पुष्पलता जैन : जम्बूसामिचरिउ की कथानकरूढ़ि और हिन्दी काव्य-परम्परा, वही, पृ. ७३-८३
११८७. श्रीयांसकुमार सिंघई : जम्बूस्वामीचरिउ के नारी पात्र, वही, पृ. ८५-६५
११८८. डॉ. कपूरचन्द जैन : जम्बूस्वामीचरित विषयक जैन साहित्य, वही, पृ. ११७-१२८
११८६. डॉ. कमलचन्द सोगाणी : जम्बूसामिचरिउ के मंगल प्रसंग : एक व्याकरणिक विश्लेषण, वही, पृ. १०५-११६
११६०. डॉ. नरेशकुमार (सम्पादन) : अपभ्रंश-हिन्दी-कोश, प्रथम, द्वितीय भाग,

इण्डो विजन, प्रा. लि., गाजियाबाद, १९८७

११९१. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश के आद्यकवि स्वयम्भू और उनका परवर्ती काव्यकारों पर प्रभाव, जैन सिद्धान्त भास्कर, आरा, दिस. १९८७

११९२. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया : स्वयम्भू के राम : मानस संगम, कानपुर, दिस., १९८७

११९३. डॉ. उदयचन्द्र जैन : शौरसेनी प्राकृत व्याकरण, प्राकृत अध्ययन प्रसार केन्द्र, उदयपुर, १९८८

११९४. एच. सी. भायाणी : स्टडीज इन देश्य प्राकृत अध्ययन प्रसार केन्द्र, उदयपुर, १९८८

११९५. श्रीमती उषा कटारा : जोइन्दु द्वारा प्रतिपादित आत्म-दर्शन, प्राकृत विद्या, वर्ष १, प्रवेशांक, पृ. ४४-४५, जुलाई, १९८८

११९६. युवाचार्य महाप्रज्ञ : देशी शब्दकोश, जैन विश्वभारती, लाडनूँ, १९८८

११९७. डॉ. राधेश्याम मिश्र : अपभ्रंश कवियों की शृंगार भावना और वीर कवि कृत 'जम्बूसामिचरिउ', शोध पत्रिका, नागरी प्रचारिणी सभा, आरा, पृ. ४५-५०, १९८७-८८

११९८. डॉ. प्रेम सुमन जैन : पार्श्वनाथ विषयक प्राकृत-अपभ्रंश रचनाएँ, अनेकान्त, वर्ष ४१, किरण १, पृ. ४-७, जन.-मार्च, १९८८

११९९. जिनेन्द्रकुमार जैन : दसवीं शताब्दी के अपभ्रंश काव्यों में दार्शनिक समीक्षा, अनेकान्त, वर्ष ४१, किरण २, पृ. २५-२९, अप्रैल-जून, १९८८

१२००. डॉ. राजाराम जैन (सम्पादन) : रइधू-ग्रन्थावली, द्वितीय भाग, जीवराज जैन ग्रन्थमाला, सोलापुर, १९८८

१२०१. डॉ. अलका प्रचण्डिया : मुनि कनकामर : व्यक्तित्व, जैन विद्या, पृ. १-७, मार्च, १९८८

१२०२. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : भरतेश्वर बाहुबलीरास की भाषा, तुलसी प्रज्ञा, सित., १९८८

१२०३. डॉ. छोटेलाल शर्मा : करकण्डचरिउ की कथा में लोकतात्त्विक जड़ाव-जुड़ाव, जैन विद्या, पृ. ६-२३, मार्च, १९८८

१२०४. डॉ. महेन्द्रसागर प्रचण्डिया : करकण्डचरिउ का काव्यशास्त्रीय मूल्यांकन, वही, पृ. २५-३४

१२०५. डॉ. महेन्द्रसागर प्रचण्डिया : कविमनीषी योगीन्दु का काव्यशास्त्रीय मूल्यांकन, वही, पृ. ४१-४७, नव. १९८८

१२०६. डॉ. कपूरचन्द जैन : करकण्डुचरित विषयक जैन साहित्य, वही, पृ. ३५-४२

१२०७. डॉ. भागचन्द भास्कर : करकण्डचरिउ में प्रतिपादित इतिहास व संस्कृति, वही, पृ. ४३-४८

१२०८. डॉ. पुष्पलता जैन : करकण्डचरिउ और पद्मावत का शिल्प-विधान, वही, पृ. ४६-५६
१२०९. डॉ. सूर्यनारायण द्विवेदी : करकण्डचरिउ की अध्यात्म-चेतना, वही, पृ. ६१-६९
१२१०. डॉ. कमलचन्द सोगाणी : हेमचन्द्र-अपभ्रंश-व्याकरण सूत्र-विवेचन, वही, पृ. ७१-९३
१२११. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : कविश्री जोइन्दु—व्यक्तित्व और कृतित्व, जैन विद्या, पृ. १-६, नवम्बर, १९८८
१२१२. राजीव प्रचण्डिया : जोइन्दु की परमात्मा विषयक धारणा, वही, पृ. ७-१२
१२१३. श्रीरंजन सूरिदेव : कविमनीषी जोइन्दु का आध्यात्मिक शिखरकाव्य परमात्मप्रकाश, वही, पृ. १३-१८
१२१४. श्रीयांसकुमार सिंघई : 'परमप्पपयासु' में बन्ध-मोक्ष सम्बन्धी विचार, वही, पृ. १९-२६
१२१५. डॉ. गदाधर सिंह : परमात्मप्रकाश : एक विश्लेषण, वही, पृ. २७-३५
१२१६. पं. भँवरलाल पोल्याका : योगसार का योग, वही, पृ. ३७-४०
१२१७. डॉ. भागचन्द जैन 'भास्कर' : योगीन्दुदेव और हिन्दी सन्त-परम्परा, वही, पृ. ४९-६०
१२१८. डॉ. पुष्पलता जैन : अध्यात्मसाधक योगीन्दु और कबीर, वही, पृ. ६१-७३
१२१९. सुदीपकुमार जैन : जोइन्दु और अमृताशीति, वही, पृ. ७५-८०
१२२०. डॉ. प्रेमसुमन जैन : जनभाषा प्राकृत, प्राकृत विद्या, पृ. १२-१४, जुलाई, १९८८
१२२१. डॉ. उदयचन्द जैन : प्राकृत और वैदिक भाषा, वही, पृ. १५-१७
१२२२. डॉ. प्रेमसुमन जैन : अर्धमागधी प्राकृत, प्राकृत विद्या, पृ. १८-२१, अक्तू. १९८८
१२२३. ऋषभचन्द्र जैन फौजदार : प्राकृत भाषाओं का वर्ण-विधान, जैन सिद्धान्त भास्कर, भाग ४१, किरण १, पृ. ३२-३५, जून १९८८
१२२४. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : हिन्दी साहित्य पर अपभ्रंश का प्रभाव, तुलसी प्रज्ञा, खण्ड १४, अंक ३, पृ. २१-३५, दिस., १९८८
१२२५. डॉ. एच. सी. भायाणी : धवलाज इन द प्राकृत अपभ्रंश एण्ड पोस्ट-अपभ्रंश ट्रेडीशन्स, बुलेटिन डेटयूडेस इन्डेनेस, सं. ६, पृ. ६३-१०३, पेरिस, १९८८
१२२६. एच. सी. भायाणी : स्टडीज इन देश्य प्राकृत, अहमदाबाद, १९८८
१२२७. डॉ. प्रेमसागर जैन : अपभ्रंश और हिन्दी का निर्गुणकाव्य, बड़ोत, १९८९
१२२८. डॉ. कपूरचन्द जैन : 'परमात्मप्रकाश एवं गीता में आत्मतत्त्व', अनेकान्त, वर्ष ४२, किरण २, पृ. १९-२२, अप्रैल-जून, १९८९

१२२९. के. आर. नॉर्मन : कॉमन टर्मिनालॉजी इन अर्ली बुद्धिस्ट एण्ड जैन टेक्स्ट्स, पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री साधुवाद ग्रन्थ, पृ. ३६३-३६७, रीवा, १९८९

१२३०. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया : अपभ्रंश के खण्ड और मुक्तक काव्यों की विशेषताएँ, पं. जगन्मोहनलाल शास्त्री साधुवाद ग्रन्थ, पृ. ४२७-४३०, रीवा, १९८९

१२३१. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : 'करकण्डुचरिउ' की कथा : परम्परा और विवेचना, महावीर जयन्ती स्मारिका, राजस्थान जैन सभा, पृ. २२-३०, जयपुर, १९८९

१२३२. डॉ. अलका प्रचण्डिया 'दीति' : जोइन्दु की मोक्ष विषयक अवधारणा, वही, पृ. ९-१४

१२३३. डॉ. लक्ष्मीनारायण दुबे : जैन रामायण 'पउमचरिउ' और हिन्दी रामायण 'मानस', वही, पृ. ४६-५६

१२३४. डॉ. योगेन्द्रनाथ शर्मा : क्रान्तिदर्शी अपभ्रंश कवि स्वयम्भूदेव, प्राकृत विद्या, पृ. ५२-५६, जुला.-सित., १९८९

१२३५. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश वाङ्मय का ऐतिहासिक महत्त्व, तुलसी प्रज्ञा, खण्ड १५, अंक १, पृ. ३०-३४, जून १९८९

१२३६. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश के 'महापुराण' में स्वप्न-दर्शन, जैन सिद्धान्त भास्कर, भाग ४२, किरण १, पृ. १७-२२, जून, १९८९

१२३७. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी : गुजराती भाषानुं ऐतिहासिक व्याकरण, गुजराती साहित्य अकादमी, गाँधीनगर, १९८९

१२३८. के. आर. चन्द्रा : अनयूजल नोमीनल फार्म्स विथ प्राकृत सफिक्सेज इन द ओल्डेस्ट पालि लिटरेचर, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३८, सं. ३-४, पृ. २४५-२४८, मार्च-जून, १९८९

१२३९. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी : अपभ्रंश लैंग्वेज एण्ड लिटरेचर, १९८९

१२४०. भगवान परिदा : द नाट्यशास्त्र एण्ड द ओड्रज प्राकृत, जर्नल ऑव द ओरियण्टल इन्स्टिट्यूट बड़ोदा, जिल्द ३९, सं. ३-४, पृ. १८१-१८३, मार्च-जून, १९९०

१२४१. जगतराम भट्टाचार्य : सम प्रोब्लेम्स ऑव मागधी डायलेक्ट, तुलसी प्रज्ञा, खण्ड १५, अंक ४, पृ. ५४-६८, मार्च, १९९०

१२४२ जगतराम भट्टाचार्य : (२) वही, खण्ड १६, अंक १, पृ. ६०-६८, जून, १९९०

१२४३. जगतराम भट्टाचार्य : (३) वही, खण्ड १६, अंक २, पृ. ६६-७४, सित., १९९०

१२४४. जगतराम भट्टाचार्य : (४) वही, खण्ड १६, अंक ३, पृ. ६२-७०,.

दिस., १६६०

१२४५. डॉ. फिलिस ग्रेनॉफ : रीसेण्ट स्टडीज ऑन प्राकृत, नैरेटिव्स इन द वेस्ट, प्राकृत विद्या, पृ. ५७-६२, जुला.-दिस., १६६०

१२४६. डॉ. भागचन्द जैन 'भास्कर' (सम्पादन, अनुवाद) : धम्मपरिक्खा, नागपुर, १६६०

१२४७. डॉ. देवेन्द्रकुनार शास्त्री : भारतीय भाषाओं के विकास में प्राकृत-अपभ्रंश का योगदान, प्राकृत विद्या, वर्ष २, पृ. १-१०, जुला.-दिस., १६६०

१२४८. डॉ. देवेन्द्रकुमार शास्त्री : प्राकृत भाषा का उद्भव और विकास, प्राकृत भारती, १, नेशनल प्राकृत कान्फ्रेन्स, पृ. १७-२५, बेंगलोर, १६६०

१२४६. डॉ. राजाराम जैन : मध्यकालीन जैन साहित्य का ऐतिहासिक मूल्यांकन, वैशाली इन्स्टिट्यूट रिसर्च बुलेटिन सं. ७, पृ. १५३-१६७, १६६०

१२५०. डॉ. प्रेम सुमन जैन : प्राकृत-अपभ्रंश एवं राजस्थानी भाषा, प्राकृत भारती १, पृ. २६-३२

१२५१. क्लॉस ब्रुहन, मागडेलिन डकविल्ज, अल्ब्रेख्त वेज्लर (सम्पादक) : लुडविग आल्सडोर्फ एण्ड इण्डियन स्टडीज, दिल्ली, १६६०

१२५२. डॉ. जगदीशचन्द्र जैन : प्राकृत इन द बेकग्राउण्ड ऑव हिन्दी, वही, पृ. ३३-४१

१२५३. के. आर चन्द्र : प्राकृत भाषा में उद्वृत्त स्वर के स्थान पर 'य' श्रुति की यथार्थता, सम्बोधि, जिल्द १७, पृ. ८५-८६, १६६०-६१

१२५४. डॉ. उदयचन्द जैन : अष्टपाहुड का भाषात्मक अध्ययन, जैन विद्या, पृ. १५५-१६२, अप्रैल, १६६०

१२५५. डॉ. त्रिलोकीनाथ प्रेमी : अपभ्रंश के आदि कवि स्वयम्भू, अपभ्रंश भारती, शोध-पत्रिका, जयपुर, पृ. १-७, जन., १६६०

१२५६. डॉ. कैलाशनाथ टण्डन : महाकवि स्वयम्भूदेव की भाषा में प्रयुक्त स्वर-ध्वनियों का विवेचन, वही, पृ. ६-१६

१२५७. प्रीति जैन : 'पउमचरिउ' पर आधारित सन्धि-विधान, वही, पृ. २७-३२

१२५८. डॉ. छोटेलाल शर्मा : स्वयम्भू और पक्ष-विचार, वही, पृ. ३३-४६

१२५६. डॉ. कमलचन्द सोगाणी : पउमचरिउ का एक प्रसंग : व्याकरणिक विश्लेषण, पृ. ५१-६०

१२६०. डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया : स्वयम्भू-भाषा-शब्द-सम्पदा, वही, पृ. ६१-६३

१२६१. डॉ. सुषमा शर्मा : पउमचरिउ के काव्यचित्र, वही, पृ. ६५-७५

१२६२. डॉ. जे. एस. कुसुमगीता : पउमचरिउ में बिम्ब, वही, पृ. ७६-६१

१२६३. डॉ. कमलचन्द सोगाणी : अपभ्रंश रचना सौरभ, वही, पृ. ६३-११३

१२६४. डॉ. के. आर. चन्द्र : प्राचीन अर्धमागधी की खोज में, अहमदाबाद, १६६१

१२६५. डॉ. कपूरचन्द जैन : प्राकृत एवं जैन विद्या शोध-सन्दर्भ, खतौली, १९९१

१२६६. डॉ. प्रेम सुमन जैन : सम ऑस्पेक्ट्स ऑव प्राकृत लैंग्वेज, जिनमंजरी (अँगरेजी पत्रिका), अमेरिका, पृ. ७५-८२, अप्रैल, १९९१

१२६७. द इण्डो : आर्यन लैंग्वेज (सं. कोहिन पी. मासिका), केम्ब्रिज विश्वविद्यालय प्रेस, न्यूयार्क, १९९१

१२६८. रीता बिश्नोई : अपभ्रंश के जैन पुराण और पुराणकार, श्रमण, वर्ष ४२, अंक ७-१२, पृ. ६५-६६, मार्च, १९९१

१२६९. जगतराम भट्टाचार्य : सम प्रोब्लेम्स ऑव मागधी डायलेक्ट, तुलसी प्रज्ञा, खण्ड १६, अंक ४, पृ. ६५-६६, मार्च, १९९१

१२७०. डॉ. कमलचन्द सोगाणी : अपभ्रंश रचना सौरभ, अपभ्रंश साहित्य अकादमी, जयपुर, १९९१

१२७१. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश भाषा का पारिभाषिक कोश, अपभ्रंश भारती, श्री महावीर जी, १९९२

१२७२. डॉ. राजाराम जैन : गोपाचल दुर्ग के जैन मूर्ति-निर्माता (रइधू-ग्रन्थ प्रशस्तियों से), अर्हत् प्रवचन, गोपाचल विशेषांक, इन्दौर

१२७३. पं. बेचरदास दोशी : प्राकृत भाषा का महत्त्व, प्राकृत विद्या, पृ. १२-१३, जन.-मार्च, १९९२

१२७४. जिनमती जैन : अपभ्रंश भाषा के प्रमुख जैन साहित्यकार, अनेकान्त, वर्ष ४५, किरण १, पृ. ८-१४, जन.-मार्च, १९९२

१२७५. डॉ. एच. सी. भायाणी : सम आस्पेक्ट्स ऑव देश्य प्राकृत, १९९२

१२७६. डॉ. शम्भूनाथ पाण्डेय : अपभ्रंश की विशिष्ट विधा दोहा में लोक सम्पृक्ति, अपभ्रंश, शोध-पत्रिका २, पृ. १-९, जुलाई १९९२

१२७७. डॉ. इन्द्रबहादुर सिंह : अपभ्रंश साहित्य में प्रकृति-वर्णन, अपभ्रंश भारती २, पृ. ११-२४, १९९२

१२७८. डॉ. महेन्द्रसागर प्रचण्डिया : अपभ्रंश के कतिपय काव्यरूप और उनका हिन्दी पर प्रभाव, अपभ्रंश भारती २, पृ. २५-२९, १९९२

१२७९. डॉ. सियाराम तिवारी : अपभ्रंश के कुछ प्राङ्मध्यकालीन खण्डकाव्य, अपभ्रंश भारती २, पृ. ३१-३५, १९९२

१२८०. डॉ. आदित्य प्रचण्डिया 'दीति' : अपभ्रंश वाङ्मय में व्यवहृत पारिभाषिक शब्दावली और उनका अर्थ-अभिप्राय, अपभ्रंश भारती २, पृ. ३७-४२, १९९२

१२८१. डॉ. कान्तिकुमार जैन : अपभ्रंश के अवसान के दो कवि, अपभ्रंश भारती २, पृ. ४३-४८, १९९२

१२८२. डॉ. विनीता जोशी : अपभ्रंश काव्य का छन्दोविवेचन, अपभ्रंश भारती २,

पृ. ४६-६४, १६६२
१२८३. डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव : पउमचरिउ-स्वयम्भू का बिम्बविधान, अपभ्रंश भारती २, पृ. ६५-६६, १६६२
१२८४. डॉ. गदाधर सिंह : स्वयम्भूछन्द : एक विश्लेषण, अपभ्रंश भारती २, पृ. ७१-८१, १६६२
१२८५. डॉ. रामबरन पाठक : णायकुमारचरिउ के छन्द, अपभ्रंश भारती २, पृ. ८३-६५, १६६२
१२८६. डॉ. वासुदेवसिंह : योगीन्दु मुनि, अपभ्रंश भारती २, जयपुर, पृ. ६७-१०५, १६६२
१२८७. डॉ. त्रिलोकीनाथ 'प्रेमी' : सन्देशरासक-काव्यविधा और विश्लेषण, अपभ्रंश भारती, २, पृ. १०७-११०, १६६२
१२८८. डॉ. वी. डी. हेगड़े : कीर्तिलता में युयुत्सा का वर्णन, अपभ्रंश भारती २, पृ. ११७-१२२, १६६२
१२८६. डॉ. कमलचन्द सोगाणी : अपभ्रंश कथा सौरभ, अपभ्रंश भारती २, पृ. १२३-१३०, १६६२
१२६०. डॉ. एच. सी. भायाणी : इण्डोलॉजिकल स्टडीज, भाग १, १६६३
१२६१. डॉ. एच. सी. भायाणी : 'सिद्धहेम शब्दानुशासन' प्राकृत अध्यायनां उदाहरणोना मूल स्रोत, पत्रिका 'अनुसन्धान', भाग २, पृ. २५-४६, अहमदाबाद, १६६३
१२६२. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी (सं.) : राउलवेल, १६६४
१२६३. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी : गुजराती भाषानो लघु व्युत्पत्तिकोश, अहमदाबाद, १६६४
१२६४. बिन्दु भट्ट (अनु.) : सिद्धहेमगत अपभ्रंश व्याकरण (गुजराती से हिन्दी), अहमदाबाद, १६६४
१२६५. मुनि जिनविजय (सं.) : श्री सोमप्रभाचार्य कृत कुमारपाल प्रतिबोध, द्वितीय संस्करण, अहमदाबाद, १६६४
१२६६. एन. एन. भट्टाचार्य (सं.) : जैनिज्म एण्ड प्राकृत, मनोहर पब्लिशर्स, नयी दिल्ली, १६६४
१२६७. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी : अपभ्रंश छन्द भूवक्रणक, झंवडक गीत, पत्रिका 'अनुसन्धान', अहमदाबाद, भाग ४, पृ. २३-२४, १६६५
१२६८. डॉ. हरिवल्लभ भायाणी : शब्दप्रयोगोनी पगदण्डी, वही, पृ. ३६-४७
१२६६. आचार्य महाप्रज्ञ : आर्य भाषा : स्वरूप एवं विश्लेषण, तुलसी प्रज्ञा, जिल्द २२, सं. १, पृ. १-१२, अप्रैल-जून, १६६६
१३००. प्रबोध बे. पण्डित : प्राकृत के प्राचीन बोली विभाग, वही, पृ. ४३-६०

तृतीय अध्याय

अपभ्रंश के हस्तलिखित ग्रन्थ

विभिन्न भण्डारों में प्राप्त अपभ्रंश के हस्तलिखित ग्रन्थों का विवरण

भारतवर्ष में अनेक जैन शास्त्र-भण्डार हैं। उनकी संख्या लगभग दो सौ से ऊपर है; किन्तु अपभ्रंश के ग्रन्थ बहुत कम भण्डारों में मिलते हैं। उन सभी भण्डारों की खोज-खबर लेना बहुत कठिन काम है। जिन भण्डारों की ग्रन्थ-सूचियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं, उनसे पर्याप्त सहायता लेकर निम्नलिखित विवरण संकलित किया जा रहा है। इनके अतिरिक्त लेखक ने स्वयं आगरा, दिल्ली, जयपुर, भरतपुर, अजमेर, ब्यावर, झालरापाटन, कारंजा, अंजनगाँव, रानपुरा, भानपुरा एवं प्रतापगढ़ आदि के शास्त्रभण्डारों का अवलोकन कर लगभग एक सहस्र से भी अधिक हस्तलिखित ग्रन्थों का विवरण प्रस्तुत किया है। विस्तार के भय से इस सूची में विदेशों में स्थित हस्तलिखित ग्रन्थों का विवरण नहीं दिया जा सका है। उन ग्रन्थों के अंश अवश्य जैन भण्डारों से आकलित किये गये हैं जो पंचम अध्याय में अपभ्रंश के अज्ञात एवं अप्रकाशित ग्रन्थों के अंश रूप में प्रारम्भ में ही दिये गये हैं। विवरण-क्रम में प्रथम संख्या क्रमसंख्या और दूसरी संख्या शास्त्र-भण्डार में स्थित ग्रन्थानुक्रम के अनुसार है। ग्रन्थानुक्रम को देखकर हम वहाँ के शास्त्र-भण्डार से उस ग्रन्थ को सरलता से मँगवाकर प्राप्त कर सकते हैं।

[अ]

१. **अंजनाचरित्र**—×। पत्र १७, १८, २३, २४, २५, २६, ३०, ३१। अतिजीर्ण, अपूर्ण। निजी संग्रह में।

२. **अंतरंगसंधि**—रत्नप्रभ। अनु. ६११८ (स)। पत्र सं. ६-१७।

३. **अंतरंगरास**—जिनप्रभ। अनु. १२ (३३)। पत्र सं. १६०-१६४। पाटन-भण्डार।

४. **अंतरंगविवाह**—जिनप्रभ। अनु. १२ (४१)। पत्र सं. २२०-२२१। पाटन-भण्डार।

५. **अकृत्रिमचैत्यालय जयमाल**—गुटका सं. ६३। ६.२५ × ५.५। २० कड़वक। श्री दि. जैन सरस्वती भण्डार, नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

६. **अजितनाथपुराण**—विजयसिंह। अनु. १८३६। पत्र सं. १२६। ६.५ × ४। र. का. सं. १५०५, कार्तिक शु. १५। ले. का. सं. १५८०, चैत्र शु. ५। पूर्ण। वे. सं. २२८। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।
७. **अजितनाथपुराण**—विजयसिंह। अपूर्ण। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, मौजमाबाद (जयपुर)।
८. **अध्यात्मदोहा**—अपूर्ण। अनु. ६११७। पत्र सं. ६। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर ईडर (गुजरात)।
९. **अणंत की जयमाल**—×। पत्र सं. ४३-५२। निजी संग्रह में।
१०. **अणत्थमीकहा**—रइधू। पत्र सं. ६७-६८। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
११. **अणत्थमीकहा**—रइधू। अनु. १४। पत्र सं. १६६-१६९। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
१२. **अणथमीरास**—रइधू। अनु. ८३८। पत्र सं. ३। ९.२५ × ४.७५। पूर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।
१३. **अणथमियसन्धि**—हरिचन्द अग्रवाल। अनु. अ १५। पत्र सं. ३३-४१। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
१४. **अणथमियसन्धि**—हरिचन्द अग्रवाल। अनु. ५६०२। पत्र सं. १७-२४। दि. जैन मन्दिर, पाटोदी, जयपुर।
१५. **अणथमियसन्धि**—हरिचन्द अग्रवाल। अनु. २६८३। पत्र सं. ६३-६६। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।
१६. **अणथमियसन्धि**—हरिचन्द अग्रवाल। अनु. २४०। गुटका सं. ५। पत्र सं. १७७-१८२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
१७. **अणथमियसन्धि**—हरिचन्द अग्रवाल। गुटके में। पूर्ण। श्री ऋषभ दि. जैन मन्दिर, प्रतापगढ़।
१८. **अणथमियसन्धि**—हरिचन्द अग्रवाल। गुटका सं. १२। १६ कडवक। पत्र सं. ४३-४६। वे. सं. २५०। आमेर शास्त्रभण्डार, जयपुर।
१९. **अणथमियसन्धि**—हरिचन्द अग्रवाल। अ १४। पत्र सं. १५५-१६६। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।
२०. **अणथमियसन्धि**—अज्ञात। गुटका सं. २२। पत्र सं. १६१-१७६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
२१. **अणथमियसन्धि**—×। पत्र सं. ११६-१२५। निजी संग्रह में।
२२. **अणुव्रतकथा**—मुनि महीचन्द्र। अनु. व ५५८। पत्र सं. ७। ९.५ × ४.५। ले. का. सं. १८६०, आसौज कृ. १, शुक्रवार। सरस्वती भवन, नागोर।
२३. **अणुव्रतरत्नप्रदीप**—साहल। अनु. १६६६। पत्र सं. १२४। ११.५ × ४.७५। लिपि सं. १५६६, भाद्रपद कृ. ६ शनिवार। भट्टारकीय भण्डार

नागोर।

२४. **अनन्तव्रतकथा**—नेमिचन्द। अ १४। पत्र सं. ११८-१२७। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

२५. **अनन्तव्रतकथा**—नेमिचन्द। अ १५। पत्र सं. १३-२६। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

२६. **अनन्तविधानकथा**—×। पत्र सं. २। १०.५ × ४.५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

२७. **अनन्तविधानकथा**—श्रुतकीर्ति। अनु. ७००। पत्र सं. १०३-१०६। पूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर चौबीसी, चन्देरी।

२८. **अनस्तमितसन्धि**—हरिश्चन्द। गुटका नं. ६१। पत्र सं. १२१-१२७। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

२६. **अनस्तमितसन्धि**—हरिश्चन्द। गुटका सं. ५। पत्र सं. १७७-१८२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३०. **अनाथिसन्धि**—जिनप्रभसूरि। अनु. १२ (२८)। पत्र सं. १७३-१७६। पाटन-भण्डार।

३१. **अनुप्रेक्षा**—ईश्वरचन्द। गुटका सं. ५४। पत्र सं. २३४-२३६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३२. **अनुप्रेक्षा**—पं. जगसी। गुटका सं. ६। पत्र सं. ३६-४१। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३३. **अनुप्रेक्षा**—जल्हिग। गुटका सं. ३८। पत्र सं. १५४-१६५। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

३४. **अनुप्रेक्षा**—जल्हिग। गुटका सं. ३८। पत्र सं. ५६। श्री दि. जैन मन्दिर, बड़ोत।

३५. **अनुप्रेक्षा**—जल्हिग। गुटका सं. ५४। पत्र सं. २३३-२३४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३६. **अनुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। गुटका सं. ५४। पत्र सं. २३६-२३७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३७. **अनुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। गुटका सं. ३८। पत्र सं. १५१-१५४। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

३८. **अनुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। गुटका सं. २८। पत्र सं. १५१-१५४। श्री दि. जैन मन्दिर, शिवपुरी (म. प्र.)

३८. **अनुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। गुटका सं. २५। पत्र सं. २२वाँ मात्र। ८ × ६। अपूर्ण। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

३८. **अनुप्रेक्षा**—पं. साधारण। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

४०. **अपभ्रंश के दोहे**—दंगड। पत्र सं. ११७-११८। पाटन-भण्डार।

४१. **अभयकुमार जयमाल**—×। अनु. ३४८४। गुटका सं. ६३७। पत्र सं. ३५२। ५.५ × ४.५। पूर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

४२. **अमरसेनचरित्र**—माणिकराज। पत्र सं. ६६। वे. सं. ४०। ले. का. सं. १५५७। जीर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४३. **अमरसेनचरित्र**—माणिकराज। ले. का. सं. १२७७। महेन्द्रकीर्ति भण्डार, आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४४. **अष्टाह्निका पूजा**—×। गुटका सं. २६। ७.५ × ६.२५। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४५. **अहंकार अक्षर की पूजा**—×। उ ६१ क ख। ६.५ × ५। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

[आ]

४६. **आकाशपंचमीकथा**—×। अ १३। पत्र सं. ३८-४३। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४७. **आकाशपंचमीकथा**—गुणभद्रमुनि। अ १३-१४। ५.५ × ५.५। ले. सं. १६०२, श्रावण शु. ११। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

४८. **आगम के अष्ट पद**—सोहल। ८ कडवक। गुटका में। निजी संग्रह में।

५६. **आणंदातिलय**—×। गुटका। पत्र सं. २१७-२२०। निजी संग्रह में।

५०. **आत्मसम्बोधन काव्य**—अज्ञात। पत्र सं. ३२। वे. सं. ६६। ले. का. सं. १५३४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५१. **आत्मसम्बोधन काव्य**—अज्ञात। पत्र सं. ४०। वे. सं. ६६। ले. का. सं. १६०७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५२. **आत्मसम्बोधन काव्य**—अज्ञात। पत्र सं. २६। वे. सं. ६७। ले. का. सं. १४४८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५३. **आत्मसम्बोधन काव्य**—रइधू। अनु. १८। पत्र सं. २४। ११ × ५। लिपि सं. १६१२, मार्गशीर्ष कृ २ बुधवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

५४. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—पं. रइधू। पत्र सं. २४। ११ × ५। जीर्ण व पूर्ण। लिपि सं. १६१२, मार्गशीर्ष कृ. २ बुधवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

५५. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—पं.रइधू। पत्र सं. १। ६.५ × ४.५। जीर्ण। वही, नागोर।

५६. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—अज्ञात। पत्र सं. २७। वे. सं. ६८। २२ से २६ तक

पत्र नहीं हैं। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५७. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—अज्ञात। पत्र सं. ३२। वे. सं. ६६. ले. का. सं. १५३४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५८. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—अज्ञात। पत्र सं. १८। वे. सं. ७०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५६. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—अज्ञात। पत्र सं. ७६-१२२। गुटके में। पूर्ण। निजी संग्रह में।

६०. **आत्मसम्बोधनकाव्य**।—अज्ञात। गुटका सं. ५४।पत्र सं. ३२१-३३३। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६१. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—अज्ञात। पत्र सं. ६-२६। ११ × ४। ले. का. सं. १५२३। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६२. **आत्मसम्बोधन**—रइधू। पत्र सं. २१। ले. का. सं. १६१०। पूर्ण। श्री दि. जैन पंचयाती मन्दिर, भरतपुर।

६३. **आत्मसम्बोधन**—अज्ञात। पत्र सं. ६-२६। ११ × ४। ले. का. सं. १५५३। पूर्ण। श्री दि. जैन आदिनाथ मन्दिर, बूँदी।

६४. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—×। ऊ २। पत्र सं. २४। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

६५. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—×। ऊ २। (ख)। पत्र सं. २८। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

६६. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—अनुक्रमांक १२७२। पत्र सं. २७। १० × ४.५। पूर्ण। वे. सं. १८५४। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

६७. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—पत्र सं. ३१। वे. सं. ५२। दि. जैन संघीजी मन्दिर, जयपुर।

६८. **आत्मसम्बोधनकाव्य**—रइधू। पत्र सं. २८। ११ × ४.५। ले. का. सं. १६१६, द्वितीय श्रावण कृ. ६। पूर्ण। वे. सं. २४। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६६. **आत्मसम्बोधकुलक**—जिनप्रभ। अनुक्रमांक १२ (६)। पत्र सं. ६६-६६। पाटन-भण्डार।

७०. **आदिनाथ की आरती**—×। गुटका सं. ५। ६.२५ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

७१. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। ३७ सन्धि। पत्र सं. २४६। अपूर्ण। दि. जैन मन्दिर, शाहगढ़।

७२. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ५४५४। गुटका सं. ७३। पत्र सं. १०२-१३१। अपूर्ण। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

७३. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २६६। पत्र सं. ४-२७६। १२ × ५.५। ले. का. सं. १५४३, आसोज शु. ६। पूर्ण। वे. सं. १६४। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

७४. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। सचित्र। अनुक्रमांक अ ४। पत्र सं. १४३। जीर्ण व खण्डित। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

७५. (२) **दूसरी प्रति**—पत्र सं. १८६। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

७६. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २१०। १४ × ८.५। ले. का. सं. १६२५, फागुन सुदी १०, बुधवार। ७३०० श्लोकप्रमाण। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

७७. **आदिपुराण सटिप्पण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक १८५३। पत्र सं. ३२५। १०.५ × ५। ले. का. सं. १६३०, भाद्रपद शु. १०। पूर्ण। वे. सं. ५३। श्री दि. जैन तेरापंथी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

७८. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक १८५४। पत्र सं. २६६। वे. सं. २। अपूर्ण। बीच के कई पत्र नहीं हैं। गोधों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

७९. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक १८५५। पत्र सं. १०३। अपूर्ण। वे. सं. ५४। श्री दि. जैन तेरापंथी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

८०. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। टब्बा युक्त। अनु. १८५६। पत्र सं.२६५। ले. का. सं. १७१६। वे. सं. २६३। श्रीपार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८१. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. १५१-२७६। १२ × ४.७५। अपूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

८२. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. ७६। पत्र सं. २५७। ले. का. वि. सं. १४६१। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८३. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. ७७। पत्र सं. ३०७। ले. का. वि. सं. १६६३। वही, जयपुर।

८४. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. ७८। पत्र सं. २१७। ले. का. वि. सं. १६६२। वही, जयपुर।

८५. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. ३७६। पत्र सं. ३७६। अधिकांश पत्र नहीं हैं। वही, जयपुर।

८६. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८०। पत्र सं २१८। वही, जयपुर।

८७. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८२। पत्र सं. ६१। अपूर्ण। वही, जयपुर।

८८. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. ३०७। पत्र सं. २८६। आकार १२ × ५। अपूर्ण। दि. जैन अभिनन्दननाथ मन्दिर, बूँदी।

८९. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। वे. सं. १३१। पत्र सं. २३४। आकार १२ × ५। ले. का. सं. १६३१, भाद्रपद शु. १२। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर,

अजमेर।

९०. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ७। अपूर्ण। भ. यशःकीर्तिधर्मार्थ ट्रस्ट, ऋषभदेव (उदयपुर)।

९१. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। अनु. १२५। पत्र सं. २६१। पूर्ण। श्री दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

९२. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २१७। ले. का. वि. सं. १५३७। पूर्ण। श्री महावीरजी।

९३. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ४३। जीर्ण व खण्डित। दि. जैन पटोदी मन्दिर, जयपुर।

९४. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ३७५। ऐलक पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भण्डार, झालरापाटन।

९५. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. १९६। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

९६. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। अनु. २६५। पत्र सं. ३७५। सरस्वती भवन, ब्यावर।

९७. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २६६। आकार १२ × ५.७५। ले. का. वि. सं. १६१६। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, श्री महावीरजी।

९८. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २८७। ११.५ × ४.५। ले. का. वि. सं. १५८५। श्री महावीरजी।

९९. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २६६। ११.५ × ५। ले. का. वि. सं. १५३७। श्री महावीरजी।

१००. **आदिपुराण**—पुष्पदन्त। अनु. १७५४। पत्र सं. ४१८। १२ × ५.७५ ले. का. वि. सं. १६०८ माघ कृष्ण ११, गुरुवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१०१. **आदित्यवारकथा**—पं. साधारण। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

१०२. **आदित्यवारकथा**—भ. यशः कीर्ति। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

१०३. **आदित्यवारकथा**—भ. यशःकीर्ति। पत्र सं. ३७५। सरस्वती भवन, ब्यावर।

१०४. **आदित्यवारकथा**—अर्जुन। पत्र सं. ४। ६ × ४.७५। दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

१०५. **आदीश्वर स्तवन**—×। अनु. ३५०१। गुटका सं. ६५४। पत्र सं. ६०। ६ × ५.५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१०६. **आध्यात्मिक गाथा**—भ. लक्ष्मीचन्द। अनुक्रमांक १३१४। पत्र सं. ६। १० × ४। वे. सं. १२४। श्रीपार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

१०७. आनन्दसन्धि—विनयचन्द्रसूरि। सं. १०२०। ५७। ले. का. वि. सं.

१६५०। ला. द. भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर, अहमदाबाद-६।

१०८. **आनन्दतिलक (आनन्दा)**—महानन्द। पत्र सं. १३८-१४१। पंचायती दि. जैन मन्दिर, देहली।

१०६. **आनन्दतिलक (आनन्दा)**—महानन्द। वे. सं. ६६। पत्र सं. ४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११०. **आनन्दतिलक (आनन्दा)**—महानन्द। ४३ पत्र। ६.५ × ४.५। दि. जैन नया मन्दिर, देहली।

१११. **आराधनासार**—देवसेन। सं. ७७३ ब। पत्र सं. १०। पूर्ण जीर्ण प्रति। सरस्वती भवन, नागोर।

११२. **आराधनासार**—देवसेन। अनुक्रमांक ५४४०। गुटका सं. ५६। ७.५ × ६। र. का. सं. १०८६। श्री दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

११३. **आराधनासार**—देवसेन। सं. ८३५ ब। पत्र सं. ११। आकार १० × ४। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

११४. **आराधनासार**—वीर। गुटका सं. ५४। २० कडवक। पत्र सं. ३३३-३३६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११५. **आराधनाप्रतिबोधसार**—विमलकीर्ति। सं. २७४, क्र. सं. २४। पत्र सं. ८। आकार ६ × ५.५। अपूर्ण। १-२ पत्र नहीं हैं। सरस्वतीभवन, नागौर।

११६. **आर्द्रकुमारविवाहलु**—देपाल कवि। सं. १२८६। वि. सं. १४८६। ३१ गाथाएँ। मुनिपुण्यविजय संग्रह ला. द. भा. वि., अहमदाबाद।

[इ]

११७. **इष्टोपदेश**—अमरकीर्ति। अनु. ८३६। पत्र सं. ११६। ६.२५ × ३.७५। र. का. १२७४, भाद्रपद १४ गुरुवार। लिपि वि. सं. १४६८, ज्येष्ठ कृ. ५ शुक्रवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

[ई]

११८. **ईसर शिक्षा**—×। अनु. ३५०१। गुटका सं. ६५४। पत्र सं. ६०। ६×५.२५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर

[उ]

११६. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक १०६। वे. सं. ११६। पत्र सं. ४७३। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१२०. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ४७६। पत्र सं. ३२४ से ८३८। १२ × ५.५। ले. का. सं. १५५७, कार्तिक शु. १५। पूर्ण। वे. सं. ११७। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

१२१. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ३३६। ११.५ × ५। पूर्ण। ले. का. सं. १५३७। श्री महावीरजी।

१२२. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६८२। पत्र सं. ४६३। १०.५ × ५। ले. का. सं. १६४१, चैत्र कृ. ११। पूर्ण। वे. सं. १५७। श्री दि. जैन तेरापन्थी वड़ा मन्दिर, जयपुर।

१२३. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६८३। पत्र सं. ६-६३। १० × ४.५। अपूर्ण। वे. सं. १५८। वही। जयपुर।

१२४. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। (सटीक प्रभाचन्द्राचार्य) अनु. ११०। पत्र सं. ५७। ले. का. सं. १५७७। वे. सं. १२०। वही, जयपुर।

१२५. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६८४। पत्र सं. ४२३। १२.५ × ५। ले. का. सं. १६१५। पूर्ण। वे. सं. १३७६। श्री दि. जैन तेरापन्थी वड़ा मन्दिर, जयपुर।

१२६. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६८५। पत्र सं. ५३। ११ × ५। अपूर्ण एवं जीर्ण। वे. सं. (आ. प्रभाचन्द्र रचित संस्कृतटिप्पणयुक्त) १५६। तेरापन्थी वड़ा मन्दिर, जयपुर।

१२७. **उत्तरपुराण**—पुष्पदन्त। (टिप्पणयुक्त)। सरस्वती भवन, बम्बई।

१२८. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक १६४४। पत्र सं. ५१४। ६.५ × ४.५। अपूर्ण व जीर्ण। बे. सं. १०१। श्री दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

१२९. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. ११४२। पत्र सं. २६३। १२.५ × ५.२५। लिपि सं. १४८२। भट्टारकीय भण्डार, नागोर

१३०. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. ११४३। प्रभाचन्द्राचार्य कृत टीका युक्त। पत्र सं. ३०। ११.७५ × ५। लिपि सं. १६५८, कार्तिक कृ. १५ शनिवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

१३१. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २८६। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, जावद (म. प्र.)।

१३२. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। (सटिप्पण) अनु. ३८८। पत्र सं. १०६। पत्र सं. १ नहीं है। ११ × ६। श्री दि. जैन वड़ा मन्दिर, चन्देरी।

१३३. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २०१। ११.५ × ५.५। अपूर्ण व प्राचीन जीर्ण-शीर्ण। तेरापन्थी दि. जैन मन्दिर, दौसा।

१३४. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। (संस्कृत टिप्पण सहित)। वे. सं. ११२।६५। पत्र सं. ३३५। १२.५ × ४.५। ले. का. सं. १५३८। कार्तिक शु. १३, रविवार, पूर्ण। श्री दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, दौसा।

१३५. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८३। पत्र सं. २५७। ११.५ ×

४.५। पूर्ण। दि. जैन अग्रवाल बड़ा मन्दिर, फतेहपुर, शेखावाटी।

१३६. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ३४६। १०.५ × ५.५। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

१३७. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। (सटिप्पण) अनु. ४३६। पत्र सं. २२६। पत्र सं. १-१० नहीं हैं। ७ × १३। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

१३८. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ३५७। ११ × ४.५। वे. सं. ४३७। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

१३६. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. १२८-३००। दि. जैन मन्दिर सम्भवनाथ जी, उदयपुर।

१४०. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ८४६१। ले. का. सं. १२५५। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

१४१. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २८३। ले. का. सं. १५८५। बस्ता सं. ११। श्री महावीरजी।

१४२. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ३३६। ले. का. सं. १५३७। पूर्ण। बस्ता सं. ११। श्री महावीरजी।

१४३. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २७६। ले. का. सं. १६१६। पूर्ण। बस्ता सं. ७२। श्री महावीरजी।

१४४. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। (सटिप्पण) पत्र सं. २७। अ. नं. ५८। अपूर्ण। दूसरी प्रति पत्र सं. ८७५। दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

१४५. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ८७५। १०.५ × ५.५। अ. नं. ५६। दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

१४६. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ३७६। वे. सं. ६७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१४७. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ४४६। श्री दि. जैन भाईजी का मन्दिर, प्रतापगढ़।

१४८. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ११०। अपूर्ण। वही।

१४६. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. ११६। पत्र सं. २६३। पूर्ण। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

१५०. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. ७। पत्र सं. ३०२। पूर्ण। सुपार्श्वनाथ दि. जैन सरस्वती भवन, अजमेर

१५१. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. १७५६। पत्र सं. २३४। १२.५ × ६.५। र. का. ६१८। लिपि सं. १५६१। आश्विन शु. ७ रविवार। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

१५२. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ८६१। पत्र सं. ४१३।

आदिपुराण मात्र। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१५३. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ८६२। पत्र सं. १०७-२७८। बीच में कुछ पत्र नहीं हैं। १०.५ × ५। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१५४. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ८६३ पत्र सं. २७१। १०.५ × ५.५। ले. का. सं. १५६४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१५५. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त अनुक्रमांक ८६४। पत्र सं. २८६। १० × ४.५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१५६. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ८६५। पत्र सं. ३९८। १२ × ४। ले. का. सं. १३६१। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१५७. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ८६६। पत्र सं. ३५०। १३ × ६। अपूर्ण। ३५० के आगे पत्र नहीं हैं। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१५८. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। (संस्कृत टिप्पण सहित) वे. सं. ८७१। पत्र सं. १०६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१५९. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २६७। अपूर्ण। जैन साहित्य शोधसंस्थान, आगरा।

१६०. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। (संस्कृत टिप्पण सहित) पत्र सं. १५०। अपूर्ण व जीर्ण। जैन साहित्य शोधसंस्थान, आगरा।

१६१. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. १०२। ले. सं. १३५२। जैन साहित्य शोधसंस्थान, आगारा।

१६२. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ३४३ ब। पत्र सं. ४०३। १२.२५ × ५। ले. का. सं. १६०४, कार्तिक कृ. ११। सरस्वती भवन, नागोर।

१६३. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ४९८ ब। पत्र सं. ३४६। १२ × ५। ले. का. सं. १६१०, कार्तिक शु. १२, रविवार। सरस्वती भवन, नागोर।

१६४. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ५३६ ब। पत्र सं. ३४३। १२ × ६। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

१६५. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ९७१ ब। पत्र सं. ५७०। ११.५ × ५.५। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

१६६. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. १७६२। पत्र सं. २८०। १० × ४.५। पूर्ण। श्री दि. जैन भ. ग्रन्थ भण्डार, नागोर

१६७. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. १७६३। पत्र सं. ४४७। १२.५ × ५। लिपि सं. १५६१। आश्विन शु. ६, बुधवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय

ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१६८. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. १७६४। पत्र सं. २६४। १३.५×५। लिपि सं. १५७६। वैशाख शु. १। नागोर।

१६६. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पुष्पदन्त। अनु. १७६५, ६६। ११ × ५। पत्र सं. २४०, ३२७। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१७०. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पं रइधू। अनु. ३। श्री स्याद्वादमन्दिर, उदासीन आश्रम, इन्दौर।

१७१. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पं रइधू। अनु. ७३। पत्र सं. १६४। बड़ा जैन मन्दिर, चन्देरी।

१७२. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पं रइधू। अनु. १६८। पत्र सं. ६७०। अपूर्ण। ले. सं. १६३१। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

१७३. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पं रइधू। अनु. ४१६। पत्र सं. ७३। अपूर्ण। चन्देरी।

१७४. **उत्तरपुराण (महापुराण)**—पं रइधू। अनु. ५००। पत्र सं. ४६६। अपूर्ण। चन्देरी।

१७५. **उपदेशकुलक**—जिनदत्तसूरि। अनुक्रमांक २८० (३)। पत्र सं. ३। ४० पद्य। जेसलमेर भण्डार।

१७६. **उपदेशकुलक**—जिनदत्तसूरि। अनु. १२१७० (द)। पत्र सं. ७। फोटो कापी, ओ. इं. वड़ोदा।

१७७. **उपदेशकुलक**—देवसूरि। अनु. ३०२, [illegible] गाथा। ८वाँ पत्र मात्र। जैन ज्ञान भण्डार, लींबड़ी।

१७८. **उपदेशरत्नमाला**—रइधू। पत्र सं. ६। १६१ गाथा। ले. का. सं. १६६०। श्री ऐलक पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भवन, ब्यावर।

१७६. **उपदेशरसायनरास**—जिनदत्तसूरि। अनु. ७१७ (ब)। पत्र सं. ८-१५। ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, वड़ोदा।

१८०. **उपासकाचारदोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। अनुक्रमांक १५५। पत्र सं. २७। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १८२१, वैशाख कृ. १२। २२४ दोहे। पूर्ण। वे. सं. १७८। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

१८१. **उपासकाचारदोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। अनुक्रमांक ६५३। पत्र सं. २७। ११ × ५। ले. का. सं. १५५५, कार्तिक शु. १५। पूर्ण। वे. सं. २२३। दि. जैन मन्दिर पाटोदी, जयपुर।

१८२. **उपासकाचारदोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। अनुक्रमांक ६५४। पत्र सं. १४। वे. सं. २४८। दि. जैन मन्दिर पाटोदी, जयपुर।

१८३. **उपासकाचारदोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। अनुक्रमांक ६५५। पत्र सं. ११। वे. सं. १७।

दि. जैन मन्दिर पाटोदी, जयपुर।

१८४. **उपासकाचारदोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। अनुक्रमांक ६५६। पत्र सं. १५। वे. सं. २६४। दि. जैन मन्दिर पाटोदी, जयपुर।

१८५. **उपासकाचारदोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। अनुक्रमांक ६५७। पत्र सं. ७७। वे. सं. ६६५। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

[ऋ]

१८६. **ऋषभचरितस्तवन**—जिनप्रभ। अनुक्रमांक १२ (३०), पत्र सं. १७१-१८२। पाटन-भण्डार।

१८७. **ऋषभनाथचरित्र**—पुष्पदन्त। अनु. १०६०। पत्र सं. ३६५। १२.२५ × ५। लिपि वि. सं. १६१६। कार्तिक शु. ५ शनिवार।

[क]

१८८. **कण्हजयमाला**—×। पत्र सं. ४०-४३। निजी संग्रह में।

१८९. **कथाकोष**—हरिषेण। अनु. ४६२४। दि. जैन. ऐ. प. स. भवन, ब्यावर।

१९०. **कथाकोश**—श्रीचन्द। अनु. २४६५। दि. जैन. ऐ. प. स. भवन, ब्यावर।

१९१. **कथाकोष**—मुनि श्रीचन्द्र। १४.५ × ६। पत्र सं. १७३। र. का. ग्यारहवीं शताब्दी। लिपि सं. १७८३, भाद्रपद शु. ५ शुक्रवार। सेनगणभण्डार, कारंजा।

१९२. **कथाकोष**—मुनि श्रीचन्द्र। अनु. ७६। पत्र सं. १७३। ले. सं. १७८७। श्री मूलसंघ चन्द्रनाथस्वामी दि. जैन मन्दिर, कारंजा।

१९३. **कथासंग्रह**—×। अनु. ७२७। पत्र सं. ७४। ६.७५×४.५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१९४. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। पत्र सं. १४-६६। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

१९५. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। वे. सं.१८८। पत्र सं. ६८। ले. का. सं. १५६३। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१९६. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। वे. सं. १८९। पत्र सं. ६२। ले. का. सं. १५८१। आमेर शास्त्र-भण्डार,जयपुर।

१९७. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। वे. सं. १९०। पत्र सं. ६१। ले. का. सं. १६१६। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१९८. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। वे। सं. १९१। पत्र सं. ८३। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१९९. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। पत्र सं. ३-७७। १२ × ५। दि. जैन

अभिनन्दननाथ मन्दिर, बूँदी।

२००. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. ज २६। पत्र सं. १४-६६। अपूर्ण व जीर्ण। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

२०१. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. ४२६ ब। पत्र सं. ७६। १०.५ × ४। ले. का. सं. १५९३, मार्गशीर्ष शु. २। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

२०२. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. १६। श्री दि. जैन पार्श्वनाथ सेनगण मन्दिर, कारंजा।

२०३. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. ४३० ब। पत्र सं. ६२। ६.७५ × ४.५। अपूर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

२०४. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. ५३२ ब। पत्र सं. ६४। ११ × ५। ले. का. सं. १५२५, फाल्गुन शु. ५, रविवार, नागोर।

२०५. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. ३१० ब। पत्र सं. ७५। ११ × ४। ले. का. सं. १६०६, मार्गशीर्ष कृ. १। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

२०६. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. ४६३३। दि.जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

२०७. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। अनु. २००७। पत्र सं. ६१। १०.५ × ५। ले. का. सं. १५६५, फाल्गुन कृ. १२। बे. सं. १०२। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

२०८. **करकंडुचरिउ**—मुनि कनकामर। पत्र सं. २१८। १०.५ × ४.७५। श्री दि. जैन मन्दिर, भानपुरा (म. प्र.)।

२०९. **कल्याणकवर्णन**—मनसुख। अनुक्रमांक ७६६। गुटका सं. ७९। वे. सं. १०८५। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

२१०. **कल्याणकविधि**—मुनि विनयचन्द। अनुक्रमांक ५६०२। पत्र सं. ७-१३। गुटका सं. २२०। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

२११. **कषायपाखडी**—अज्ञात। पत्र सं. ३५८-३५६। गुटका सं. ५४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर

२१२. कालस्वरूपकुलक—जिनदत्तसूरि। अनु. ७१७ (स)। पत्र सं. १५-१८। ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा।

२१३. **कुमारपालदेवरास**—सामतिलक। अनु. २८४१।३६। वि. सं. १४७३। ला. द. भा. वि. अहमदाबाद।

२१४. **कुमारपालप्रबन्ध**—अज्ञात। पत्र सं. ८६। अनु. १६। पाटन-भण्डार।

२१५. **कुमारपालप्रबन्ध**—अज्ञात। पत्र सं. ७। अनु. ५१। ले. सं. १४८८। पूर्ण।

विश्वेश्वरानन्द वै. रि. इं. होशियारपुर।

२१६. **केशीगौतमसन्धी**—रत्नशेखरसूरि। अनु. १२८६।५। वि. सं. १४८६। ला. द. भा. वि. अहमदाबाद।

२१७. **केशीगौतमसन्धि**—अज्ञात। अनु. ६०।६४४। पत्र सं. ४। ले. का. सोलहवीं शती। रा. प्रा. वि.प्र., चित्तोड़गढ़।

२१८. **कोकिलापंचमीकथा**—साधारण। पं. परमानन्द जैन शास्त्री के संग्रह में।

[क्ष]

२१९. **क्षमावाणी अर्घ**—गुटका सं. ६३। ६.२५ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

२२०. **क्षमावाणी पूजा**—नरेन्द्रसेन (शिष्य ब्रह्मसेन)। गु. सं. ३१। पत्र ६८वाँ मात्र। ५.५ × ३.७५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

[ग]

२२१. **गणधर जयमाल**—×। अनु. ३८००। गुटका सं. ६४६। पत्र सं. ७२। १० × ५.५। पूर्ण व जीर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

२२२. **गुरुपादुका जयमाला**—भट्टारक महीचन्द्र। भ. सुरेन्द्रकीर्ति शास्त्र-भण्डार, श्री दि. जैन मन्दिर, सोजित्रा (गुजरात)।

२२३. **गौतमस्वामीरास**—विनयप्रभ उपाध्याय। अनु. ५६११। पत्र सं. ३३-३५। ४४ गाथा। २६. ६-११. २। ले. सं. १४७३। मुनिपुण्यविजयजी का संग्रह, ला. द. भा. वि., अहमदाबाद।

[च]

२२४. **चउरंगसन्धि**—×। ६११८। (अ)। पत्र सं. ५। गाथा ६०। ओरियण्टल रि. इं. बड़ोदा।

२२५. **चच्चरि-सोलण**—×। अनुक्रमांक ५६ (७)। गाथा ३८। पत्र सं. १००-१०३। पाटन-भण्डार।

२२६. **चन्द्रप्रभचरित्र**—भ. यशःकीर्ति। अनुक्रमांक २०५०। पत्र सं. १०६। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १६४१, पौष शु. ११। पूर्ण। वे. सं. ६६। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

२२७. **चन्द्रप्रभचरित्र**—भ. यशःकीर्ति। अनुक्रमांक ३१६।४७३४। पत्र सं. २६-६६। १६-११. ६। ले. का. १८वीं शती। राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, चित्तोड़गढ़।

२२८. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। ले. का. सं. १५३०। पं. परमानन्द जी

शास्त्री के निजी संग्रह में।

२२६. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। अनुक्रमांक २३६ ब। पत्र सं. १०२। १२ × ५। ले. का. सं. १५६६, माघ कृ. ११। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

२३०. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। वे. सं. ३१६। पत्र सं. ११७। ले. का. सं. १५८३, आषाढ़ शु. ३। पूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२३१. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। अनु. १०८१। पत्र सं. ६३। १३ × ४.७५। लिपि वि. सं. १५८१, माघ कृ. ११, गुरुवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

२३२. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। अनु. ७२६, पत्र सं. ११७। १० × ४.७५। लिपि सं. १६०१, माघ शु. ५। नागोर।

२३३. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। अनु. ७२७। पत्र सं. ३५। १० × ५। लिपि सं. १८५४, पौष कृ. १०। नागोर।

२३४. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति।वे. सं. ३२०। पत्र सं. १०८। ले. का. सं. १६११, चैत्र कृ. ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२३५. **चन्दप्पहचरिउ**—भ.यशःकीर्ति। वे. सं. ३२१। पत्र सं. १२०। ले. का. सं. १६०३, श्रावण शु. १०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२३६. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। वे. सं. ३२२। पत्र सं. १०१। अपूर्ण। आनेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२३७. **चन्दप्पहचरिउ**—भ. यशःकीर्ति। वे. सं. ३२३। पत्र सं. ७८। अपूर्ण। कई पत्र नहीं हैं। आनेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२३८. **चन्दप्पहचरिउ**—कवि दामोदर। अनुक्रमांक ३१२, ३६७०। २ प्रतियाँ। ऐ. प. दि. जैन सरस्वती भवन, ब्यावर।

२३६. **चन्दप्पहचरिउ**—कवि दानोदर। अनु. ३०७३। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

२४०. **चन्दप्पचरिउ**—श्रीचन्द। वे. सं. ८६। पत्र सं. १२६। ले. का. सं. १७६३। कोटड़ियों का दि. जैन मन्दिर, डूंगरपुर।

२४१. **चन्दनषष्ठीकथा**—गुणभद्रमुनि। अ १३-१४। ५.५ × ५.७५। ले. सं. १६०२। श्रावण शु. ११। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

२४२. **चन्दनषष्ठीव्रतकथा**—लाखू। पत्र सं. ८१-८५। अ १५। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

२४३. **चन्दनषष्ठीव्रतकथा**—अमरकीर्ति। अनुक्रमांक २६८८ (व्रतकथासंग्रह)। वे. सं. ११०। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

२४४. **चन्दनषष्ठीव्रतकथा**—लाखू। व्रतकथाकोश में संकलित। दि. जैन मन्दिर, धूलियागंज, आगरा।

२४५. **चन्दायणकहा**—गुणभद्रमुनि। अ १३-१४। ५.५ × ५.५। पत्र सं. ४३-४६। ले. सं. १६०२, श्रावण शु. ११। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

२४६. **चतुर्गतिचतुष्पदिका**—वस्तिग। अनुक्रमांक २८४१।३०। वि. सं. १४७३। ला. द. भा. वि. अहमदाबाद।

२४७. **चतुर्विंशतिजिनपूजा**—कनककीर्ति। पत्र सं. ११। सरस्वती भवन, झालरा पाटन।

२४८. **चारकषायवर्ण**—अज्ञात। गुटका सं. ४६। पृ. ३६-४१। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२४९. **चूनड़ी**—यति विनयचन्द्र। अनुक्रमांक ५६०२। गुटका सं. २२०। पत्र सं. १३-१७। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

२५०. **चूनड़ीरास**—रइधू। अनु. ३५०७। गु. सं. ६६०। पत्र सं. १६। ६.५ × ५। अति जीर्ण व पूर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

२५१. **चूनड़ीरास**—भ. विनयचन्द। गुटका सं. ६१। पत्र सं. १२७-१३१। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

२५२. **चूनड़ीरास**—भ. विनयचन्द। पत्र सं. ७७-८४। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

२५३. **चूनड़ीरास**—भगवतीदास। गुटका सं. २६१। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

२५४. **चैत्यपरिपाटी**—जिनप्रभ। अनुक्रमांक १२(३८)। पत्र सं. २१२-२१४। पाटन-भण्डार।

२५५. **चौरासी जातिमाला**—अज्ञात। गुटका सं. ३८। पत्र सं. ६१-६८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

[छ]

२५६. **छन्दःकोश**—अज्ञात। पत्र सं. ६। सरस्वती भवन, झालरापाटन।

२५७. **छन्दःकोश**—अल्हु। पत्र सं. १३। वे. सं. ५२१।दि.जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

२५८. **छन्दःकोश**—अल्हु। पत्र सं. ८। १० × १५। प्रारम्भिक २ पत्र नहीं हैं। अपूर्ण। श्री भ. यशःकीर्ति सरस्वती भण्डार, ऋषभदेव।

२५९. अल्हु। वे. सं. १८६२। ले. का. सं. १७६२, श्रावण शु. ११। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

२६०. **छन्दःकोश**—रत्नशेखरसूरि। पत्र सं. ३१। वे. सं. १६५। दि. जैन मन्दिर संघी जी, जयपुर।

२६१. **छन्दःकोश**—रत्नशेखरसूरि। पत्र सं. २-२५। अपूर्ण। वे. सं. ६७। दि. जैन मन्दिर छोटे दीवान जी, जयपुर।

२६२. **छन्दःकोश**—रत्नशेखरसूरि। जोधपुर कलेक्शन, भाग १, पृ. १२६।

२६३. **छक्कम्मोवएस (षट्कर्मोपदेश)**—अमरकीर्ति। अनु. १३०७४। पत्र सं. १३४। र. का. सं. १२४७। ले. का. सं. १६२२ ई.। ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा।

२६४. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. १०४। १० × ५। ले. का. सं. १६७२। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

२६५. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। अनुक्रमांक ५२३। पत्र सं. ८६। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १५५६। पूर्ण। वे. सं. १५८। श्री दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

२६६. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. ८-२३। १२ × ४। अपूर्ण। वे सं. ६६०। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

२६७. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. ८१। १२.५ × ६। र. का. सं. १२४७। ले. का. सं. १६००। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

२६८. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। अनु. ३१४। पत्र सं. ५४। पूर्ण। श्री दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

२६९. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। अनु. ४८७। पत्र सं. ८०। ले. सं. १५५८। पूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

२७०. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. ८६। पूर्ण। जीर्ण प्रति। सरस्वती भवन, ब्यावर।

२७१. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। अनुक्रमांक ८५। १४ सन्धि। पत्र सं. १२०। ११ × ५। र. का. सं. १२४७, भाद्रपद शु. १०। ले. का. सं. १६४५, आसोज शु. २। पूर्ण। वे. सं. ३६८। प्रति में लेखक के परिचय का भी उल्लेख है। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

२७२. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. ७६। ११× ५। ले. का. सं. १५८६, फाल्गुन कृ. ६। दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

२७३. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. १०२। ११.५ × ५। ले. सं. १८८४। दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

२७४. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. १०५। दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

२७५. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। अनु. २८६१। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

२७६. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। अनु. ३६१। पत्र सं. ३-७, ६-१८, २१, २४-२७, ३०-१११, ११८-११६। ८.५ × ३। दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ

भण्डार, नागोर।

२७७. **छक्कम्मोवएस**—अमरकीर्ति। पत्र सं. १-३१। अपूर्ण। ११ × ५। चियामण्डी दि. जैन मन्दिर, मथुरा।

[ज]

२७८. **जन्माभिषेकविधि**—अज्ञात। अनुक्रमांक ४०३३। ५०६। पत्र सं. ३। ले. का. १६वीं शती। राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, चित्तोड़गढ़।

२७६. **जम्बूसामिचरिउ**—देवदत्त। अनुक्रमांक २४८ ब। पत्र सं. ८८। ११.५× ४.५। ले. का. सं. १६२७। सरस्वती भवन, नागोर।

२८०. **जम्बूसामिचरिउ**—वीर। वे. सं. ३५३। पत्र सं. ७६। र. का. सं. १०७६, माघ शु. १०। ले. का. सं. १५१६, मार्गशीर्ष शु. १३। ६२वाँ पत्र नहीं है। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२८१. **जम्बूसामिचरिउ**—वीर। गुटका सं. ५४। पत्र सं. १७०-१७३। केवल एक सन्धि। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२८२. **जम्बूसामिचरिउ**—वीर। पत्र सं. ६६। १० × ४.५। पूर्ण। अति प्राचीन। दि. जैन मन्दिर, कामा (भरतपुर)।

२८३. **जम्बूस्वामीचरित्र**—वीर। अनुक्रमांक ४८५। पत्र सं. ११४। १२ × ४.५। र. का. सं. १०७६, माघ शु. १०। ले. का. सं. १६०१, आषाढ़ शु. १३। पूर्ण। वे. सं. २२६। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

२८४. **जयमाल संग्रह**—×। अनु. ३५५८। गुटका सं. ७११। पत्र सं. २७५। ७×६। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

२८५. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २१२ ब। पत्र सं. ५६। १० × ४.५। ले. का. सं. १५२३, आषाढ़ कृ. ६, भौमवार। सरस्वती भवन, नागोर।

२८६. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. ५। पत्र सं. ६३। १० × ४.५। दि. जैन मन्दिर, दबलाना (बूँदी)।

२८७. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. २७१। पत्र सं. ६१। १०.५ × ४। अपूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

२८८. **जसहरचरिउ**—रइधू। ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

२८६. **जसहरचरिउ (सचित्र)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ७६। ले. का. सं. १७६६। ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

२६०. **जसहरचरिउ (सचित्र)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक १३१ ब। पत्र सं. ७६। ११×४.५। ले. का. सं. १६७०, माघ कृ. ३, रविवार। सरस्वती भवन, नागोर।

२६१. **जसहरचरिउ (सटिप्पण)**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६२०। वे. सं. ८५०। पत्र सं. ६१। ६.५× ५। ले. का. सं. १५८०, श्रावण कृ. ५। आमेर

शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६२. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६२१। वे. सं. ८५२। पत्र सं. ८६। ६.५ × ५। ले. का. सं. १५७५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६३. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६२२। वे। सं. ८५३। पत्र सं. ७३। पूर्ण। ११× ५.५। ले. का. सं. १६१०, भाद्रपद शु. ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६४. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. ६२३। पत्र सं. ६५। वे. सं. ८५१। ११×५.५। ले. का. सं. १६१२, आसोज कृ. १२, गुरुवार। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६५. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८५४। पत्र सं. ६४। १० × ५। ले. का. सं. १५८०, आसोज शु. १०, शनिवार। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६६. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८५५। पत्र सं. ८२। ११ × ५। ले. का. सं. १६५७, आसोज शु. ११, बुधवार। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६७. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८५६। पत्र सं. ६१। ११ × ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६८. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८५७। पत्र सं. ५९। ११.५ × ५.५। ले. का. सं. १७१५, पौष शु. १४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६६. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। वे. सं. ८५८। पत्र सं. ४३। १२ × ५। जीर्ण-शीर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३००. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. १४३। ले. का. सं. १६७८। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

३०१. **जसहरचरिउ (सटिप्पण)**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २-१६। १०.२५ × ४.७५। अपूर्ण। ले. सं. १५६६, मार्गशीर्ष कृ. १०, बुधवार। वही।

३०२. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २-५२। ले. का. सं. १५६४। अपूर्ण। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

३०३. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ५८६। पत्र सं. १६१। ले. का. सं. १६०२। पूर्ण। श्री सुपार्श्वनात दि. जैन सरस्वती भवन, अजमेर।

३०४. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ११७०। पत्र सं. ६३। १२.५ × ६। लिपि वि. सं. १६०३, फागुन सुदि १५, भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

३०५. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ११७१। पत्र सं. ७२। ११ × ४.७५। लिपि वि. सं. १५६८, आषाढ़ सुदि ६, शुक्रवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

३०६. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ७६। अपूर्ण व जीर्ण। अनु. २६५, ५८। विश्वेश्वरानन्द वैदिक रिसर्च इन्स्टीट्यूट, होशियारपुर।

३०७. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. २-६०। खण्डित प्रति। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

३०८. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ५४५४। गुटका सं. ७३। पत्र सं. १३२-१४६। ७ × ६। अपूर्ण। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

३०९. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ८। श्री दि. जैन पार्श्वनाथ सेनगण मन्दिर, कारंजा।

३१०. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ६६। श्री दि. जैन पार्श्वनाथ सेनगण मन्दिर, कारंजा।

३११. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ८८। ले. का. सं. १६३३। सरस्वती भवन, नागोर।

३१२. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ७२। ११ × ५.५। वे. सं. १२५५। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

३१३. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २५७ ब। पत्र सं. ५५। १२ × ५। ले. का. सं. १५६०, कार्तिक कृ. २, रविवार। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

३१४. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। १०८ पत्र। पूर्ण। (२) दूसरी प्रति ७४ पत्र। पूर्ण। (३) तीसरी प्रति सटिप्पण। ११५ पत्र। पूर्ण। श्री महावीर जी।

३१५. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. १४३। ले. का. सं. १६०४। (२) दूसरी प्रति ८३ पत्र। लेए. का. सं. १८८६। सरस्वती भवन, ब्यावर।

३१६. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ५६४। पत्र सं. १०१। ले. सं. १६१२। श्री चन्द्रनाथ स्वामी दि. जैन मन्दिर, कारंजा।

३१७. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ६७० ब। पत्र सं. ५७। १०.५ × ४.२५। ले. का। सं. १५८८, चैत्र शु. २, सोमवार। सरस्वती भवन, नागोर।

३१८. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २१२ ब। पत्र सं. ५६। १०.२५ × ४.७५। ले. का. सं. १५२३, आषाढ़ कृ. ६, भौमवार। सरस्वती भवन, नागोर।

३१९. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ८६। ११ × ५.५। जीर्ण व पूर्ण। ले. का. सं. १५६१, भाद्रपद शु. ५। श्री चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, भानपुरा (मध्य प्रदेश)।

३२०. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ३३। पत्र सं. ३६। १० × ४.५। ले. का. सं. १६८८। वही, उदयपुर।

३२१. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. १६२। पत्र सं. ५६। प्रारम्भ के १२ पृष्ठ नहीं हैं। ले. सं. १५४३। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर चौबीसी, चन्देरी।

३२२. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ७१८। अपूर्ण। ले. सं. १६७७। श्री दि. जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

३२३. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ११७०। पत्र सं. ६३। ले. सं. १६०३। फाल्गुन शु. १५। नागोर।

३२४. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ११७१। पत्र सं. ७२। ले. सं. १५६८। आषाढ़ शु. ६, शुक्रवार। नागोर।

३२५. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ३४। पत्र सं. ८६। प्रारम्भ के ४ पत्र नहीं हैं। ले. का. सं. १५६४। पूर्ण। दि. जैन सम्भवनाथ मन्दिर, उदयपुर।

३२६. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ४६४। पत्र सं. ६६। पूर्ण। चन्देरी।

३२७. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २२८०। पत्र सं. ८२। १० × ४। ले. का. सं. १४०७, आसोज शु. १०। पूर्ण। वे. सं. २५। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

३२८. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २२८१। पत्र सं. १४५। ले. का. सं. १६३६। वे. सं. ५६८। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

३२९. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ६४८। श्री दि. जैन उदासीनाश्रम, इन्दौर।

३३०. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २२८२। पत्र सं. ६०-६८। ले. का. सं. १६३०। अपूर्ण। वे. सं. २८८। छोटे दीवान जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

३३१. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक ११६२। कठवाडे संग्रह। भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना।

३३२. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २२८३। पत्र सं. ६३। ले. का. सं. १८९७। वे. सं. २८६। छोटे दीवान जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

३३३. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २२८४। पत्र सं. ८६। ले. का. सं. १६७२, मंगसिर शु. १०। वे. सं. २८६। वहीं, जयपुर।

३३४. **जसहरचरिउ**—पुष्पदन्त। अनुक्रमांक २२८५। पत्र सं. ८६। वे. सं. २१२६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३३५. **जसहरचरिउ**—रइधू। अनु. ३३८१। पत्र सं. ७६। ले. का. सं. १७६६। सरस्वती भवन, ब्यावर।

३३६. **जसोधर की जयमाल**—अज्ञात। पत्र सं. ४। ११ × ४.५। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

३३७. **जिणयत्तकहा**—लाखू। अनु. ३५०। वे. सं. ३६४। पत्र सं. १५७।१०×४। ले. का. सं. १६११, चैत्र कृ. ११, सोमवार। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३३८. **जिणयत्तकहा**—लाखू। अनु. २१६ ब। पत्र सं. २६४। १०.७५ × ४.७५। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

३३६. **जिणयत्तकहा**—लाखू। पत्र सं. १८०। ११.५ × ५.५। ले. का. सं. १६०६, मार्गशीर्ष शु. ५। पूर्ण। वे. सं. २२१। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

३४०. **जिणयत्तकहा**—लाखू। अनु. ३०६ ब। पत्र सं. २६१। १०.७५ × ४.७५। ले. का. सं. १६०७, आषाढ़ शु. ७, शुक्रवार। सरस्वती भवन, नागोर।

३४१. **जिणयत्तकहा**—लाखू।अनु. ७३८। पत्र सं. २५। १३ × ४.५। भट्टारक भण्डार, नागोर।

३४२. **जिणयत्तकहा**—लाखू।अनु. ७३७। पत्र सं. १५८। १०.५ × ४.७५। लिपि सं. १५६८, ज्येष्ठ कृ. ६, बुधवार। नागोर।

३४३. **जिणयत्तकहा**—लाखू। अनु. ३५१। पत्र सं. १५०। र. का. सं. १२७५, पौष शु. १२। वे. सं. ३६५। अपूर्ण व जीर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३४४. **जिणयत्तकहा**—लाखू। पत्र सं. १६४। ११ × ५.५। अपूर्ण व जीर्ण। दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, दौसा।

३४५. **जिणयत्तकहा**—लाखू। पत्र सं. १००-१५६। १०.५ × ५। अपूर्ण व जीर्ण। दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, दौसा।

३४६. **जिनचन्द्रसूरिविवाहलु**—सहजज्ञान। अनु. ४४८८।७। पत्र सं. ३४४-३४६। ४ गाथा से ३५ गाथाएँ। ले. का. सं. १३५०। ला. द. शोध संस्थान, (मुनिपुण्यविजय-संग्रह) अहमदाबाद।

३४७. **जिनजन्ममहोत्सवस्तवन**—जिनप्रभ। अनुक्रमांक १२(४८)। पत्र सं. २३६-२३६। पाटन-भण्डार।

३४८. **जिनपूजापुरन्दरविधान**—अमरकीर्ति। अनु.१२८०। पत्र सं. ८। ११ × ४.७५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

३४६. **जिनमहिमा**—जिनप्रभ। अनुक्रमांक ३११ (१२)। पत्र सं. ६६-१०६। पाटन-भण्डार।

३५०. **जिनवल्लभसूरिगीतानि**—पत्र सं. ४। २६.५ × ११.५। ले. का. १८वीं शती। राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, चित्तौड़गढ़।

३५१. **जिनस्नात्रमहोत्सवस्तोत्र**—×। अनु. १३८१। १० गाथाएँ। वि. सं. १३५०। ला. द. शोध-प्रबन्ध (मुनिपुण्यविजय-संग्रह) अहमदाबाद।

३५२. **जिनागमवचन**—जिनप्रभ। पत्र सं. १०६-१०८। संघवी पाडा, पाटन-भण्डार।

३५४. **जिनालयंमननजयमाल**—कनककीर्ति। २३ पद्य। पत्र ३७वाँ मात्र। दि. जैन

नया मन्दिर, दिल्ली।

३५४. **जिनरात्रिकथा**—यशःकीर्ति। अ १४। पत्र सं. ५६-७७। ५.५ × ५.५। ले. सं. १६०२, श्रावण शु. ११। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

३५५. **जिनरात्रिकथा**—नरसेन। अनुक्रमांक ७४४। पत्र सं. १६। १० × ४। ले. का. सं. १५७२, फाल्गुन शु. १, गुरुवार, भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

३५६. **जिनरात्रिकथा**—नरसेन। अनु. ७४३। पत्र सं. १५। १० × ४.५। ले. का. सं. १६००। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

३५७. **जिनरात्रिकथा**—पं. नरसेन। अनु. ७४३। पत्र सं. १५। १० × ४.७५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

३५८. **जिनरात्रिकथा**—पं. नरसेन। अनु. ७४४। पत्र सं. १६। १० × ४। लिपि वि. सं. १४३७। फाल्गुन शु. १, गुरुवार। भ. भण्डार, नागौर।

३५९. **जिनरात्रिकथा**—नरसेन। भ. महेन्द्रकीर्ति भण्डार, आमेर, (जयपुर)।

३६०. **जिनरात्रिकथा**—नरसेन। अनु. ५४३६। गुटका सं. ५८। पत्र सं. १३-२०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३६१. **जिनरात्रिविधानकथा**—अमरकीर्ति। जयपुर। दूसरी प्रति गुटका में। दिल्ली।

३६२. **जिनरात्रिविधानकथा**—मुनि गुणभद्र। पत्र सं. २६-२६। जयपुर।

३६३. **जिणवरदंसणथुइ**—पण्डित पद्मनन्दि। पत्र सं. १४१-१४२। निजी संग्रह में।

३६४. **जीवन्धरचरित्र**—रइधू। अनु. १७००। पत्र सं. १८५। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १६५८, भाद्रपद कृ. ७। दि. जैन अग्रवाल बड़ा मन्दिर, फतेपुर, शेखावटी।

३६५. **जीवन्धरचरित्र**—रइधू। अनु. १३१। पत्र सं. ११४। ले. का. सं. १६५८। पूर्ण। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

२६६. **जीवन्धरचरित्र**—रइधू। ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

३६७. **जीवाणुसट्ठिसन्धि**—जिनप्रभ। अनुक्रमांक १४८ (२)। पत्र सं. ८५-६२। पाटन-भण्डार।

३६८. **जीवाणुसट्ठिसन्धि**—जिनप्रभ। पत्र सं. १७६-१७६। पाटन-भण्डार।

३६९. **जोगठरास**—अज्ञात। गुटका सं. २६१। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

[ज्ञ]

३७०. **ज्ञानप्रकाश कुलक**—जिनप्रभ। अनु. ३११ (१६)। पत्र सं. १३७-१४३। पाटन-भण्डार।

[ढ]

३७१. **ढाढसी गाथा**—×। पत्र सं. ५८-६२। ६.२५ × ६। ३८ गाथा। गुटका सं. १६६। श्री दि. जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

[ण]

३७२. **णरयउतारीविधि**—मुनि बालचन्द्र। पचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

३७३. **णरयउतारीदुद्धारसकथा**—गुणभद्र (मलयकीर्तिशिष्य)। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

३७४. **णवकारपायडी**—×। पत्र सं. ४१-४४। गुटका सं. ६। वे. सं. २४४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३७५. **णवकारपायडी**—×। पत्र सं. ७-६। गुटका सं. १२। वे. सं. २५०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३७६. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ४६०। पत्र सं. ६६। ८.५ × ४.५। ले. का. सं. १५१७, वैशाख शु. ५। पूर्ण। वे सं. २१२। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

३७७. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ४६१। पत्र सं. ६०। १०.५ × ५। ले. का. सं. १५२८, श्रावण कृष्ण १। पूर्ण। वे. सं. २३४। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

३७८. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. १६४०। ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

३७६. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ४७०। पत्र सं. १५१। पूर्ण। श्री दि.जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

३८०. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ४७७, ५६२, ५७६। पत्र सं. ३०, ६८, १५०। पूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

३८१. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ७२ ब। पत्र सं. ५३। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १४६८, कार्तिक शु. १, सोमबार। सरस्वती भवन, नागोर।

३८२. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ७५०। पत्र सं. ७०। ११ × ४.७५। लिपि सं. १६३६। नागोर।

३८३. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ७५१। पत्र सं. ६७। १२ × ५। लिपि सं. १५३८, मंगसिर शु. ५, सोमवार। नागोर।

३८४. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ११९४। पत्र सं. ७३। ११ × ४.२५। लिपि वि. सं. १५५७, वैशाख शु. ५। नागोर।

३८५. **णायकुमारचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. ११९५। पत्र सं. ५६। १०.५ × ४.५। लिपि वि. सं. १५३४, कार्तिक शु. ८, बुधवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

३८६. **णिरदुहसत्तमीकहा**—गुणभद्र (भ. मलयकीर्ति शिष्य) पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

३८७. **णिरदुहसत्तमीकहा**—पं. साधारण। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

३८८. **णिव्वेयणाममाला**—श्रीचन्द। पत्र सं. ५। गाथा सं. ६०। श्री दि. जैन मन्दिर, कामा।

[त]

३८९. **तपःसन्धि**—सोमसुन्दर शिष्य विशालराज सूरि। ले. का. सं. १५०५। पाटन-भण्डार।

३९०. **तीन चउवीसी कथा**—पं. साधारण। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

३९१. **त्रिकाल चौबीसी पूजा**—१४७१, क्र. १७ क। पत्र सं. १२। १०.५ × ६.२५। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

३९२. **त्रिकाल चौबीसी पूजा**—१४७१, क्र १७ ख। पत्र सं. ७। १२ × ५.२५। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

३९३. **त्रिकाल चौबीसी पूजा**—१४७१, क्र १७ ग। पत्र सं. ६। ६.५ × ५.२५। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

३९४. **त्रिकाल चौबीसी पूजा**—१४७१, क्र १७ घ। पत्र सं. ६। १०.२५ × ४.२५। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

३९५. **त्रिंशत जिण चउवीसी**—महणसिंह। अनु. ५६०२। पत्र सं. १-७०। पाटोदी दि. जैन शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

[द]

३९६. **दंगड**—×। अनु. ६११६ (अ)। पत्र सं. २। लिपि सन् १६१६। सेण्ट्रल लायब्रेरी, बड़ोदा।

३९७. **दशरथ जयमाल**—×। अनु. १६५४। पत्र सं. ३। ११ × ४.५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

३९८. **दशरथ राजा जयमाल**—×। गुटका सं. ३८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

३९९. **दशराय राजा की पावड़ी**—×। अनु. ३४८४। गुटका सं. ६३७। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

४००. **दशलक्षण कथा**—हरिचन्द। अनु. १४६। पत्र सं. १०। ११ × ४.७५। ले. का. सं. १५२४, पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, कामा (भरतपुर)।

४०१. **दशलक्षण कथा**—हरिचन्द। पत्र सं. १०। ले. का. सं. १५२४। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

४०२. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। अनु. २६८३। पत्र सं. ५६-५९। दि. जैन पार्श्वनाथ, मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४०३. **दशलक्षणधर्म कथा**—रइधू। अनु. २१७०। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

४०४. **दशलक्षण कथा**—श्रुतकीर्ति। अनु. ७००। पत्र सं. १००-१०२। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

४०५. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। ६, १२ पत्र। ले. का. सं. १८२२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४०६. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र सं. १४। ११ × ५। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, दौसा (जयपुर)।

४०७. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र सं. ८। ६.५ × ५। पूर्ण। वे. सं. ७। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

४०८. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र ६१वाँ मात्र। गुटका सं. २७ (१६)। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

४०९. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र १६वाँ मात्र। गुटका सं. १०। ६ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

४१०. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। अनु. ६१३८। वे. सं. २०७। पत्र सं. ५७-६३। गुटका सं. ४०। ६.५ × ५। श्री दि. जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

४११. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र सं. ६। ११ × ५.५। दि. जैन मन्दिर, दबलाना (बूँदी)।

४१२. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। अनु. ६३६। पत्र सं. ४३। लिपि सं. १६४१। श्री सिद्धकूट चैत्यालय, सरस्वती भण्डार, अजमेर।

४१३. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र सं. ५। ६.५ × ५। दि. जैन मन्दिर, दबलाना (बूँदी)।

४१४. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र सं. ४-११। १० × ४.५। अपूर्ण। दूनी (टोंक)।

४१५. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। अनु. ३६२०। ४२६७। पत्र सं. १०। दो प्रतियाँ। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

४१६. **दशलक्षण जयमाल**—अज्ञात। अ २६६। पत्र सं. १८। १०.७५ × ८। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

४१७. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। ऋ क। पत्र सं.। १०.५ × ६। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

४१८. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पं. क्र. सं. १७८६। पत्र सं. १०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४१९. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। क्र. सं. १७६१। पत्र सं. ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४२०. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। क्रम सं. १७६४। पत्र सं. ७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४२१. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। क्र. सं. २१६७। पत्र सं. ७२-७८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४२२. **दशलक्षण जयमाल**—रइधू। पत्र सं. १२। ११ × ५। संस्कृत टब्बा युक्त। दि. जैन मन्दिर, अभिनन्दन स्वामी, बूँदी।

४२३. दशलक्षण जयमाल—रइधू। पत्र सं. ५०। पत्र सं. २१८। २ प्रतियाँ। तेरापन्थी दि. जैन मन्दिर, बसवा।

४२४. **दशलक्षण जयमाल**—कवि भाऊ। पत्र सं. २-८। ११ × ५। अपूर्ण। लिपि सं. १७४७, श्रावण शु. ७, गुरुवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

४२५. **दशलाक्षणिक जयमाल**—पं. भावशर्मा। पत्र सं. ३८। दि. जैन मन्दिर, शाहगढ़।

४२६. **दशलाक्षणिक जयमाल**—अनु. ३२२५। पत्र सं. २०६। गुटका सं. ३७८। ७ × ६.५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

४२७. **दशलाक्षणिक जयमाल**—पं भावशर्मा। स्ट्रासबर्ग (जर्मन) पुस्तकालय (उल्लिखित)।

४२८. **दशलक्षणपूजा**—रइधू। गुटका सं. ६३। ६.२५ × ५.५। कडवक १०। श्री दि. जैन सरस्वती भण्डार, नया मन्दिर, दिल्ली।

४२९. **दशलक्षण व्रतोद्यापन पूजा**—रइधू। पत्र सं. २६। १० प्रतियाँ। ले. का. सं. १६५२। दि. जैन खण्डेलवाल पंचायती मन्दिर, अलवर।

४३०. **दशलक्षण व्रतोद्यापन पूजा**—रइधू। पत्र सं. २६। ८.५ × ६.५। ले. का. सं. १६५२। अग्रवाल पंचायती दि. मन्दिर, अलवर।

४३१. **दानशील भावना**—मुनि असगि। पत्र सं. ६। १० × ४। पूर्ण। बीसपन्थी दि. जैन मन्दिर, दौसा (जयपुर)।

४३२. **दीतवार कथा**—गुटका सं. ५९। पत्र सं. ७०-७८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४३३. **दुधारसविधानकथा**—मुनि विनयचन्द। अनु. २६९८। १२.२५ × ४.५। ले. का. सं. १५१६। वे. सं. ११०। पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

४३४. **दुधारसविधानकथा**—मुनि विनयचन्द। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४३५. **दुधारसविधानकथा**—पं. साधारण। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

४३६. **दोहा पाहुडं (बारक्खरी दोहा)**—महीचन्द। वेष्टन सं. ४६६। पत्र सं. १६। ले. का. सं. १६०२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४३७. **दोहा पाहुड**—रामसिंह। अनु. ७६७। पत्र सं. २०। ११ × ४। र. का. दसवीं शताब्दी। अपूर्ण। ६-१६ पत्र नहीं हैं। वे. सं. २०६२। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

४३८. **दोहा पाहुड**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २७६-८७। गुटका सं. ५४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४३९. **दोहा पाहुड**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १३-२२। गुटका सं. ६७। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४४०. **दोहा पाहुड**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. ६८। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४४१. **दोहा मातृका**—×। ५८ पद्य। पाटन-भण्डार।

४४२. **दोहा शतक**—योगीन्द्रदेव। अनु. ११६। वे. सं. १२०। पत्र सं. ६। ६.५ × ४। ले. का. सं. १८२७, कार्तिक कृष्ण १३। पूर्ण। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

४४३. **द्वादशानुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। पत्र सं. ६३-६६। गु. सं. ५८। आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर।

४४४. **द्वादशानुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। पत्र सं. ६६-१०२। निजी संग्रह में।

४४५. **द्वादशानुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। पत्र सं. १६-१८। गु. सं. ५। वे. सं. २४३। आनेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४४६. **द्वादशानुप्रेक्षा**—लक्ष्मीचन्द। पत्र सं. ६७-७०। गु. सं. १२। वे. सं. २५०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४४७. **द्वादशानुप्रेक्षा**—योगदेव। पत्र सं. १५५-१५६। गु. सं. ३८। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

[ध]

४४८. **धन्यकुमारचरित**—×। अनु. ३३६ ब। पत्र सं. २१। १०.२५ × ४.२५। पूर्ण। जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

४४९. **धन्यकुमारचरित**—रइधू। अनु. ११११। पत्र सं. ३५। ११.२५ × ५। लिपि वि. सं. १६६०। आश्विन कृ. ५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

४५०. **धन्यकुमारचरित**—रइधू। अनु. १११२। पत्र सं. ४२। ११.२५ × ५। लिपि वि. सं. १६६०, पौष शु. ४, सोमवार। श्री दि.जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

४५१. **धन्यकुमारचरित**—रइधू। पत्र सं. ५१। ले. का. सं. १६३६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४५२. **धर्मरसायन**—पद्मनन्दि। पत्र सं. ६। ले. का. सं. १६००। सरस्वती भवन, ब्यावर।

४५३. **धम्मरसायण**—पद्मनन्दि मुनि। अनु. ८२६ ब। प्राकृत। पत्र सं. १०। ११.२५ × ५। पूर्ण। जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

४५४. **धर्मरसायण**—पद्मनन्दि। पत्र सं. १५ व ११। सरस्वती भण्डार, झालरा पाटन।

४५५. **धम्मरसायण**—पद्मनन्दि मुनि। अनु. ५०१ ब। प्राकृत। पत्र सं. १५। १०.५ × ४। पूर्ण। जीर्ण। सरस्वती भण्डार, नागोर।

४५६. **धम्मरसायण**—पद्मनन्दि मुनि। अनु. १२१ ब। प्राकृत। पत्र सं. १३। ११ × ४.७५। ले. का. सं. चैत्र शुक्ल २, १६५६. पूर्ण। सरस्वती भण्डार, नागोर।

४५७. **धर्मपरीक्षा**—श्रुतकीर्ति। र. का. सं. १५५३। अपूर्ण। डॉ. हीरालाल जी जैन के संग्रह में।

४५८. **धर्मपरीक्षा**—श्रुतकीर्ति। पत्र सं. १००। ८ परिच्छेद। ले. सं. १६६२, वैशाख कृ. २, मंगलवार। भट्टारकीय ग्रन्थभण्डार, नागोर।

४५९. **धर्मपरीक्षा**—श्रुतकीर्ति। अनु. ७००। पत्र सं. १०४। ले. सं. १६६२। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

४६०. **धर्मपरीक्षा**—हरिषेण। क्र. सं. ५७। वेष्टन सं. १७१। पत्र सं. २-७६। ११.५ × ४.७५। र. का. वि. सं. १०४४। अपूर्ण। प्रथम पत्र नहीं है। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

४६१. **धर्मपरीक्षा**—हरिषेण। अनु. ८७८। पत्र सं. ११७। ८.७५ × ३.७५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थभण्डार, नागोर।

४६२. **धर्मपरीक्षा**—हरिषेण। अनु. ५६३। ११२। ८.७५ × ३.७५। श्री दि. जैन भट्टारीय ग्रन्थकार, नागोर।

४६३. **धर्म परीक्षा**—हरिषेण। वे. सं. ५२५। पत्र सं. ७६। आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर।

४६४. **धर्म परीक्षा**—हरिषेण। सं. १००६। भण्डारकर ओ. रि. इ., पूना।

४६५. **धर्म परीक्षा**—हरिषेण। पत्र सं. २१-२८, ६६-७७, १०१-११३ त्रुटित। ११ × ४। श्री दि. जैन मन्दिर, घियामण्डी, मथुरा।

४६६. **धर्म रहस्य**—नेमितिलक। अनु. १२८२। काव्य १६। ले. का. सं. १२९८। पत्र सं. १५६-६०। जैन ज्ञान भण्डार, लींबड़ी।

४६७. **धर्म पंचविंशतिका**—ब्रह्मचारी जिनदास। पत्र सं. ३। ११ × ५.७५। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

४६८. **धर्माधर्म विचारकुलक**—जिनप्रभसूरि। अनु. १२ (५)। पत्र सं. ६४-६६। पाटन-भण्डार, पाटन।

४६९. **धर्माधर्म विचारकुलक**—जिनप्रभसूरि। ६११६ (ब) पत्र सं. २। गा. २०। ले. का. १६१६ ई.। ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा।

४७०. **धर्मोपदेश**—अमरकीर्ति। अनु. २७२ (ब) पत्र सं. ७०। ११.५ × ५.७५।

ले. का. सं. १५६६, पौष कृष्ण ६, सोमवार। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

[न]

४७१. **नन्दीय छन्द**—नन्दिताढ्य। पत्र सं. ८। ले. का. सं. १५३८। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

४७२. **नन्दीश्वर जयमाल**—×। अनु. २३१। पत्र सं. २। १०.५ × ४.२५। अति जीर्ण, पूर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

४७३. **नन्दीश्वर पूजाजयमाल**—चन्द्रकीर्ति। अनु. ८११। गुटका सं. १५। लिपि वि. सं. १८०५।

४७४. **नन्दीश्वर पूजाजयमाल**—चन्द्रकीर्ति। अनु. ८१३, ८१४, ८१५। गुटका सं. २३, ३९, ३१। लिपि वि. सं. १८४२, १६५४। दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४७५. **नन्दीश्वर जयमाल**—×। क्र. सं. १७७६। पत्र सं. २। ले. का. सं. १७७६। पूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४७६. **नन्दीश्वर पूजा**।—×। गुटका सं. २३ (२)। पत्र ७०वाँ मात्र। ७.७५ × ६। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

४७७. **नन्दीश्वरदीप पूजा**—कनककीर्ति। पत्र सं. ७। वेष्टन सं. ५४६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४७८. **नन्दीश्वर भक्ति**—×। पत्र सं. १०५। गुटका संख्या १६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४७६. **नन्दीश्वर भक्ति**—×। क्र. सं. २५३। वेष्टन संख्या २५७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४८०. **नन्दीसुररासु**—×। वे. सं. १७६। ६ × ५। गुटका सं. ४४। पत्र सं. ३३-३७। श्री दि. जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

४८१. **नन्दीश्वर चतुर्दिगाश्रितपूजा**—×। पत्र सं. ६। ले. का. सं. १८३६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४८२. **नवकार पायडी**—पत्र सं. ३७१-७२। गुटका संख्या ५४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४८३. **नर्मदासुन्दरी सन्धि**—जिनप्रभ। अनु. ३११ (१०)। र. का. सं. १३२८। पत्र सं. ६६-१०६। पाटन-भण्डार, पाटन।

४८४. **नागकुमारचरित्र**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ३-४८। १०.५ × ४.५। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

४८५. **नागकुमारचरित्र**—पुष्पदन्त। वे. सं. ३२। पत्र सं. ६६। १० × ५। ले. का. फाल्गुन कृ. १२, सं. १५६३। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

४८६. **नागकुमारचरित्र**—पुष्पदन्त। वे. सं. ५१७। पत्र सं. ७१। १०.५ × ४.५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४८७. **नागकुमारचरित्र**—पुष्पदन्त। वे. सं. ५१८। पत्र सं. ७०। १०.५ × ५.५। लेखन का. ज्येष्ठ शु. ५, शनिवार, सं. १६१२, आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४८८. **नागकुमारचरित्र**—पुष्पदन्त। पत्र सं. ५३। क्र. सं. ७२ ब। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १३६४, कार्तिक शुक्ल १, सोमवार। सरस्वती भवन, नागोर।

४८९. **नागकुमारचरित्र**—माणिकराज। पत्र सं. १२४। १० × ४.५। ले. का. सं. १५६२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४९०. **नागकुमारचरित्र**—माणिकराज। र. का. सं. १५७८। भ. महेन्द्रकीर्ति भण्डार, आमेर।

४९१. **नारिकेरकथा**—हरिचन्द। वे. सं. २७६। पत्र सं. १६। ११ × ४.५। श्री दि. जैन मन्दिर दीवानजी, कामा।

४९२. **नारिकेरकथा**—हरिचन्द। वे. सं. २७६। पत्र सं. १०। ११ × ४.५। श्री दि. जैन मन्दिर दीवानजी, कामा।

४९३. **निर्झरपंचमीविधान**—भ. विनयचन्द। गुटका सं. ६१। पत्र सं. ११६-१२१। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४९४. **निर्झरपंचमीविधानकथा**—भ. विनयचन्द। दि. जैन पार्श्वनाथ शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

४९५. **निर्झरपंचमीविधानकथा**—भ. विनयचन्द। वे. सं. ८७-६५। पत्र सं. ३। ११ × ५.५। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)

४९६. **निर्झरपंचमीविधानकथा**—पं. साधारण। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

४९७. **निर्झरपंचमीकथा**—भ. विनयचन्द। अ १३-१४। ५.५ × ५.५। ले. का. सं. १६०२, श्रावण शु. ११। दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

४९८. **निरदुखसप्तमीकथा**—मुनि बालचन्द्र। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

४९९. **निर्वाणपूजा**—उदयकीर्ति। गुटका सं. ६३। ६.२५ × २.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

५००. **निर्वाणपूजा आरती**—×। गुटका सं. ७५। पत्र सं. १४-१६। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

५०१. **नीलांजस जयमाल**—×। अनु. ३४१७। गुटका सं. ५७०। पत्र सं. ३६६। ६ × ५.५। पूर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

५०२. **नीलंजसा पाथडी**—×। पत्र सं. १५७-१५८। गुटके में। निजी संग्रह में।

५०३. **नेमिजिनवर प्रबन्ध**—लावण्य समय। पत्र सं. १७। ७ × ५। र. का. सं.

१५४६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५०४. **नेमिनाथ कुमार राजीमतीचरित**—माणिक्य सुन्दर। अनु. ७७५०। ले. का. सं. १७५६। लाल जी भाई दलपत भाई शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

५०५. **नेमिनाथचरित्र**—लक्ष्मणदेव। अनु. ४६३ अ। क्रम सं. १६६। पत्र सं. ५८। १०.५ × ४.७५। ले. का. सं. १५२६, श्रावण कृष्ण ११। सरस्वती भवन, नागौर।

५०६. **नेमिनाथचरित**—अमरकीर्ति। र. का. सं. १२४४। भट्टारकीय भण्डार, सोनागिरि।

५०७. **नेमिनाथचरित**—पत्र सं. १०६। १० × ५। अपूर्ण वेष्टन सं. १५। दि. जैन मन्दिर, दबलाना (बूँदी)।

५०८. **नेमिनाथचरित**—कवि दामोदर। अनु. १११६। पत्र सं. ६१। त्रुटित। ११ × ४.७५। दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

५०९. **नेमिनाथचरित**—कवि दामोदर। अनु. ७५८। पत्र सं. ८६। ११.५ × ५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

५१०. **नेमिनाथचरित**—कवि दामोदर। अनु. ७५९। पत्र सं. ८६। १०.७५ × ५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

५११. **नेमिनाथचरित**—कवि दामोदर। अनु. ७६०। पत्र सं. ७८। ११ × ५.५। लिपि सं. १८२१, श्रावण शु. ५, मंगलवार। नागौर। ३ प्रतियाँ अन्य हैं।

५१२. नेमिनाथचरित्र—लखमदेव। अ ११। १०.२५ × ४.५। पत्र सं. ५२। ले. का. सं. १५६७, अगहन सुदी १०, भौमवार। ४५वाँ पत्र नहीं है। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

५१३. **नेमिनाथचरिउ**—×। अनु. ३२ ब। पत्र सं. ५१। १०.७५ × ४.५। ले. का. सं. १५७४, पौष कृष्ण ३। सरस्वती भवन, नागौर।

५१४. **नेमिनाथचरित्र**—पं. लक्ष्मणदेव। अनु. ४६४, अ. क्र. सं. १६५। पत्र सं. ६५। ९ × ४.५। ले. का. सं. १५१६, वैशाख कृष्ण १३, रविवार। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

५१५. **नेमिनाथचरित्र**—लक्ष्मणदेव। वे. सं. ६३९। पत्र सं. २०-३४। ९.५ × ४.२५। अपूर्ण। ईडर।

५१६. **नेमिनाथचरिउ**—लक्ष्मणसेन। अनु. ५३३ ब। पत्र सं. ३८। ११ × ४.५। पूर्ण। जीर्ण। ले. का. सं. १४६८। सरस्वती भवन, नागौर।

५१७. **नेमिनाथचरिउ**—लक्ष्मण। अनु. ३१०। पत्र सं. २६। पूर्ण। श्री दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

५१८. **नेमिनाथचरिउ**—लक्ष्मणसेन। अनु. १११७। पत्र सं. ५४। १०.७५ × ४.७५। नागौर।

५१९. **नेमिनाथचरिउ**—लक्ष्मण। अनु. १११८। पत्र सं. ५८। १०.५ × ४.७५। लिपि सं. १५५६, श्रावण कृ. ११। नागोर।

५२०. **नेमिनाथचरिउ**—लक्ष्मण। अनु. १११९। पत्र सं. ६५। ९ × ४.५। लिपि सं. १५१९, वैशाख कृ. १३, रविवार। नागोर।

५२१. **नेमिनाथचरित्र**—हरिभद्रसूरि। क्रम सं. १०६४। १००२२। २६.९ × १६.५। ले. का. सं. १६५०। आचार्य विजयदेव और शान्तिसूरि संग्रह, लाल जी भाई दलपत भाई भारतीय विद्या संस्कृति मन्दिर शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

५२२. **नेमिरास**—जिनप्रभ। अनु. १२। (३१)। पत्र सं. १८२-१८७। पाटन-भण्डार, पाटन।

५२३. **नेमीश्वर जयमाल**—भण्डारी नेमचन्द। पत्र सं. १५। गुटका सं. २५। क्र. सं. ७१४। श्री दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

५२४. **पंचकल्याणकपूजा**—सुमतिसागर। श्री दि. जैन शास्त्र-भण्डार, अंजनगाँव (महाराष्ट्र)।

५२५. **पंचपरमेष्ठि जयमाल**—×। अनु. ६१८१। पत्र सं. २१। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, ईडर (गुजरात)।

५२६. **पंचमीकहा**—धनपाल। पत्र सं. १२२। ११.५ × ३.५। र. का. सं. १३९३। ले. का. सं. १४८०। पूर्ण। अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, मोतीकटरा, आगरा।

५२७. **पंचमेरुजयमाल**—×। गुटका सं. २५। पत्र १३२वाँ मात्र। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

५२८. **पंचमेरुजयमाला**—सकलकीर्ति। पत्र सं. ७६-७८। गुटका सं. ४०। ६.५ × ५.२५। श्री दि. जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

५२९. **पंचविंशति क्रियावचूरि**—अज्ञात। पत्र सं. ७। ८.५ × ३.७५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५३०. **पउमचरिउ**—स्वयम्भू। पत्र सं. २२६। ११.५ × ४.५। अपूर्ण। १९, २४, ३४, १६४-१७२, १८९-१९२ पत्र नहीं हैं। ले. का. सं. १५२१। भण्डारकर ओरि. रि. इं., पूना।

५३१. **पउमचरिउ**—स्वयम्भू। पत्र सं. ३५८। १२ × ५.५। अपूर्ण। १४६, १५०वाँ पत्र नहीं है। ले. का. सं. १७७५। दि. जैन मन्दिर गोदीका, सांगानेर, जयपुर।

५३२. **पउमचरिउ**—स्वयम्भू। पत्र सं. ३५७। ११.७५ × ४.२५। पूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५३३. **पउमचरिउ**—रइधू। ले. का. सं. १६५५। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर,

जयपुर।

५३४. **पउमसिरीचरिय**—धाहिल। अनु. ३०७ (४)। पत्र सं.१५३। पाटन-भण्डार, पाटन।

५३५. **पज्जुण्णचरिय**—सिंहकवि। ले. का. सं. १५७७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५३६. **पज्जुण्णचरिय**—सिंहकवि। ले. का. सं. १५१७। फर्रुखनगर।

५३७. **पज्जुण्णकहा**—सिंहकवि। पत्र सं. ६४। १३ × ४। वे. सं. १२। अपूर्ण। श्री दि. जैन नेमिनाथ मन्दिर, बूँदी।

५३८. **पज्जुण्णकहा**—रइधू। अनु. ७६३। पत्र सं. ११६। १०.७५ × ५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

५३९. **पज्जुण्णकहा**—×। अनु. ३६६। पत्र सं. २१। अपूर्ण। बड़ा जैन मन्दिर, चन्देरी।

५४०. **पज्जुण्णकहा**—सिंहकवि। पत्र सं. १३६। १० × ४.५। ले. का. सं. १५४८। वे. सं. ७८। दि. जैन मन्दिर लश्कर का, जयपुर।

५४१. **पज्जुण्णकहा**—सिंहकवि। पत्र सं. १६०। ११ × ५.५। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

५४२. **पद्मपुराण**—पं. रइधू। पत्र सं. ६०। १०.५० × ५। ले. का. सं. १५५१। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५४३. **पद्मावती चउपई**—जिनप्रभसूरि। अनु. ८६०१।३०। ले. का. सं. १५५०। लाल जी भाई द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

५४४. **परमहंसबोधचरिउ**—अज्ञात। पत्र सं. २६। १०.५ × ४.५।पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, बोरसली (कोटा)।

५४५. **परमात्मप्रकाश**—जोइन्दुदेव। पत्र सं. २०। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, शाहगढ़ (सागर)।

५४६. **परमात्मप्रकाश**—जोइन्दुदेव। अनु. ६३०। ६६६६। संस्कृत टीका ब्रह्मदेव सहित। २७.७ × ११.२। अच्छी दशा। ले. का. सं. १६५०। १६३; ११; ३४। आ. विजयदेवसूरि और शान्तिसूरि संग्रह, ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

५४७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५।१८१ पत्र। ६ × ५.७५। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

५४८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १२३। १० × ४.५। लेखन का. सं. १५२८। अपूर्ण दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

५४९. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं.। १०७६। १२.५ × ५.५। अपूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)। अन्य २ अपूर्ण प्रतियाँ हैं।

५५०. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। वे. सं. ६६। पत्र सं. १७५। ८.५ × ५। गुटके में। श्री दि. जैन मन्दिर, कामा।

५५१. **परमात्मप्रकाश सटिप्पण**—योगीन्द्रदेव। टीकाकार : अगरचन्द दीवान। पत्र सं. ८८। ले. का. सं. १९९५। धर्मपुरा दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

५५२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १६४। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, जावद मन्दसौर, (मध्य प्रदेश)।

५५३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १८। ले. का. सं. १९००। धर्मपुरा दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

५५४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १६। धर्मपुरा दि. जैन नया मन्दिर, शास्त्र-भण्डार, दिल्ली।

५५५. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ५६६७। गुटका सं. २७८। पत्र सं. १-८०। ६ × ४। अपूर्ण। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

५५६. **परमात्मप्रकाश**—जोइन्दुदेव। अनु. १६५। पत्र सं. २४। पूर्ण। ले. सं. १७६६। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर चौबीसी, चन्देरी।

५५७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. १६०। पत्र सं. २७। श्री आदिनाथ दि. जैन मन्दिर, बासोदा (मध्य प्रदेश)।

५५८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. ३३३। पत्र सं. २४। श्री आदिनाथ दि. जैन मन्दिर, बासोदा (मध्य प्रदेश)।

५५९. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. १०१। पत्र सं. १३७। ले. सं. १६६६। दि. जैन मन्दिर, बासोदा (मध्य प्रदेश)।

५६०. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १६। ले. का. सं. १९६५। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

५६१. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २०। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

५६२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. ३२। ले. का. सं. १७४५। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

५६३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १५। ११.५ × ५.५। दि. जैन मन्दिर आदिनाथ, बूँदी।

५६४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २०। कूचा सेठ दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

५६५. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ५६५७। गुटका सं. १०। पत्र सं. १-१६। ८ × ७। अपूर्ण। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

५६६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. १०७३। पत्र सं. ६५। ले. का. सं. १९६१। दि. जैन सरस्वती भण्डार, झालरापाटन।

५६७. **परमात्मप्रकाश**—ब्रह्मदेव। पत्र सं. १५। ले. का. सं. १७७३। सरस्वती भवन, ब्यावर।

५६८. **परमात्मप्रकाश**—ब्रह्मदेव। पत्र सं. १८१। ले. का. सं. १७३७। (४२०० श्लोक प्रमाण), दि. जैन सरस्वती भवन, ब्यावर।

५६९. **परमात्मप्रकाश**—ब्रह्मदेव। पत्र सं. २३। ६.२५ × ४.५। ले. का. सं. १८२८। वे. सं. २२। दि. जैन लश्कर मन्दिर, जयपुर।

५७०. **परमात्मप्रकाश**—ब्रह्मदेव। पत्र सं. २३। ६.७५ × ४.७५। ले. का. सं. १८२८। दि. जैन शास्त्र-भण्डार लश्कर, बोरड़ी का रास्ता, जयपुर।

५७१. **परमेष्ठिप्रकाशसार**—श्रुतकीर्ति। पत्र सं. १८८। ६.५ × ४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५७२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. २६५। वेष्टन सं. ७६५। पत्र सं. २५१। १०.५ × ४.५। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द, जयपुर।

५७३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. २६६। वेष्टन सं. ७६६। पत्र सं. २४०। ११ × ५। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द, जयपुर।

५७४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. २६७। वेष्टन सं. ७६७। पत्र सं. २१६। १०.५ × ५। ले. का. सं. १८६२। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द, जयपुर।

५७५. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. २६७। वेष्टन सं. २०३। पत्र सं. १७६। ११.५ × ५.५। पूर्ण। संस्कृत युक्त। ४ प्रतियाँ और भी हैं। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द, जयपुर।

५७६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४३। पत्र सं. २०१। १०.७५ × ४.७५। लिपि सं. १४६०। कार्तिक शु. १३, शुक्रवार। नागोर।

५७७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४४। पत्र सं. १४५। १२ × ५.५। लिपि सं. १७६४, ज्येष्ठ कृ. ५, रविवार। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, नागोर।

५७८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४५। पत्र सं. ६५। १० × ४.२५। लिपि सं. १४३१, फाल्गुन शु. ५, शुक्रवार। नागोर।

५७९. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४६। पत्र सं. १३२। १० × ४.२५। लिपि सं. १४४०, आश्विन कृ. ७, बुधवार। नागोर।

५८०. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. ३४५ ब। पत्र सं. २००। १२ × ५। ले. का. सं. १६७०, ज्येष्ठ शुक्ला ९, शुक्रवार। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, नागोर।

५८१. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। टीकाकार पाण्डवराम। अनु. ब २। पत्र सं. १६८। १२ × ५.५। संस्कृत टीका युक्त। ले. का. सं. १५७६। सरस्वती भवन, नागोर।

५८२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २०। ११ × ४.२५। वे. सं. ६५। दि. जैन मन्दिर अभिनन्दनस्वामी, बूँदी।

५८३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. १६६ ब। पत्र सं. २६२। ११ × ३.७५। संस्कृत टीका सहित। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

५८४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २१। श्री दि. जैन मन्दिर, भानपुरा (म. प्र.)।

५८५. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २६६-२७६। गुटका सं. ५४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५८६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। टीकाकार ब्र. रायमल्ल। १२४-१४६। गुटका सं. १६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

५८७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ७४१। बधीचन्द दिगम्बर जैन मन्दिर, जयपुर।

५८८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ८७०। पत्र सं. ५ से १४। ११.५ × ५। ले. का. सं. १५६७, चैत्रकृष्ण १०। अपूर्ण। वे. सं. ११६६। दि. जैन बधीचन्द मन्दिर, जयपुर।

५८९. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ७०६। गुटका सं. १७। ६ × ६। वे. सं. ६३६। दि. जैन बधीचन्द मन्दिर, जयपुर।

५९०. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. ३२१२।१५१। पत्र सं. २-७। अपूर्ण। ले. का. सं. १७६०। छठा पत्र नहीं है। दूसरा फटा हुआ है। राजस्थान प्रा. वि. प्र., चित्तोड़गढ़।

५९१. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. ४४३। ताड़पत्रीय प्रति। पत्र सं. १०। जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

५९२. **परमात्मप्रकाश (वृत्ति सहित)**—योगीन्द्रदेव। अनु. ४४४। ताड़पत्रीय प्रति। पत्र सं. २६। जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

५९३. **परमात्मप्रकाश (वृत्ति सहित)**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २०६। १०.२५ × ४.५। घियामण्डी दि. जैन मन्दिर, मथुरा।

५९४. **परमात्मप्रकाश (वृत्ति सहित)**—योगीन्द्रदेव। अनु. ४४५। पत्र सं. १६। ताड़पत्रीय प्रति। जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

५९५. **परमात्मप्रकाश (वृत्ति सहित)**—योगीन्द्रदेव। अनु. १७०। हस्तलिखित कागज प्रति। पत्र सं. ३०। ले. का. सं. १८२६। जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

५९६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. १८४। पत्र सं. २१। ११ × ४.७५। अपूर्ण। नागोर।

५९७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. १८५। पत्र सं. १०६। १० × ४.७५। लिपि सं. १८८५ ज्येष्ठ शु. ६, मंगलवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

५९८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. ६१२०। पत्र सं. १६। ३८० गाथा। ओरियन्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ोदा।

५९९. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। ई १२ क। पत्र सं. ८८। ११.५ × ५.२५। ले. का. सं. १८८४, द्वि. आषाढ़ कृ. १०, सोनवार। दि. जैन नया मन्दिर दिल्ली।

६००. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। १६०। पत्र। ११ × ४.५। त्रुटित। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

६०१. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १७। १० × ४.७५। अपूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

६०२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. ४३। १२.७५ × ६.५। ले. का. सं. १८२६, आषाढ़ शु. ६, रविवार। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

६०३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २७७-२८०। पत्र सं. १०, २१, १०६, १४५। चार प्रतियाँ। जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

६०४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २४२। ६.२५ × ८। पूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

६०५. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २८। अपूर्ण। श्री दि. जैन मन्दिर, नाई की मण्डी, आगरा।

६०६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १७६। दि. जैन भाई जी का मन्दिर, प्रतापगढ़।

६०७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २१६। दि. जैन भाई जी का मन्दिर, प्रतापगढ़।

६०८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। सटीक। पत्र सं. २२३। दि. जैन भाई जी का मन्दिर, प्रतापगढ़।

६०९. **परमात्मप्रकाश सटीक**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४३। क्र. सं. २१६। पत्र सं. २०१। १०.७५ × ४.७५। ले. का. सं. १४६४, कार्तिक शु. १३, शुक्रवार। सरस्वती भवन, नागौर।

६१०. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. एच २५। हस्तलिखित। नागर लिपि। ओरियण्टल लाइब्रेरी, एशियाटिक सोसायटी बंगाल, कलकत्ता।

६११. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ५७२६। पत्र सं. १-१०६। गुटका सं. २। वे. सं. १४१। ६ × ६.२५। पाटोदी दि. जैन मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६१२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ११८। पत्र सं. २०। ११.५ × ५.२५। ले. का. सं. १७७४, फाल्गुन कृ. ११। पूर्ण। वे. सं. २५०। टोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६१३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४४। पत्र सं. १४५। १२ × ५.५। ले. सं. १७६४, ज्येष्ठ कृ. ५, रबिवार।

६१४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४५। पत्र सं. ६५। १० × ४। ले. सं. १४३६, फाल्गुन शु. ५, शुक्रवार।

६१५. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. २४६। पत्र सं. १३२। १० × ४। ले. सं. १४४०, आश्विन कृ. ७, बुधवार।

६१६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १२३। ११ × ४.५। ले. का. सं. १४८६, पौष कृ. ६। पूर्ण। वे. सं. २४६। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६१७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २०७। ले. का. सं. १६००। सरस्वती भवन, ब्यावर।

६१८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २०५। ले. का. सं. १६००। सरस्वती भवन, ब्यावर।

६१९. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १७४। ले. का. सं. १७५६। सरस्वती भवन, ब्यावर।

६२०. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। वे. सं. १२४। पत्र सं. ४। १३.५ × ६। अपूर्ण। दि. जैन मन्दिर लश्कर का, जयपुर।

६२१. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४१७। पत्र सं. १३-१४४। १० × ५.५। ले. का. सं. १७६६, आसोज सुदि २। अपूर्ण। वे. सं. २०८३। दि. जैन पाटोदी मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६२२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४१८। पत्र सं. ६७। ले. का. सं. १६३५। वे. सं.४४५। बाबा दुलीचन्द का शास्त्र-भण्डार, दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

६२३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४१९। पत्र सं. ७६। संस्कृत टीका सहित। ले. का. सं. १६०४, श्रावण कृ. १३। वे. सं. ५७। दि. जैन मन्दिर वैराठियों का, जयपुर।

६२४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४२०। वे. सं. ४३४। पत्र सं. १५। अपूर्ण। संघी जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६२५. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४२१। वे. सं. ४३५। पत्र सं. २-१५। अपूर्ण। संघी जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६२६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४२२ (६)। वे. सं. २०६। पत्र सं. २५। संस्कृत टब्बा सहित। छोटे दीवान जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६२७. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४२३ (७)। वे. सं. २१०। पत्र सं. १६। अपूर्ण। छोटे दीवान जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६२८. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १४२४ (८)। वे. सं. ८२। पत्र सं. २४। ले. का. सं. १८३०। पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६२६. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. ५०३। पत्र सं. ६४। पूर्ण। श्री सि. सरस्वती भण्डार, अजमेर।

६३०. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. १४६, १७१। अपूर्ण। सुपार्श्वनाथ दि. जैन सरस्वती भवन, अजमेर।

६३१. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ६७ ब। पत्र सं. १८१। १२ × ५। संस्कृत-टीका सहित। ले. का. सं. १६६१, आश्विन शु. ६, सरस्वती भवन, नागोर।

६३२. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. २१७, २ अ। पत्र सं. १३२। १० × ४.२५। ले. का. सं. १४४०, आश्विन कृ. ७, बुधबार। सरस्वती भवन, नागोर।

६३३. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। अनु. ८१। श्री दि. जैन सरस्वती भण्डार, चौक, भोपाल।

६३४. **परमात्मप्रकाश**—योगीन्द्रदेव। संस्कृत टीका पाण्डवराम सहित। पत्र सं. १६८। १२ × ५.५। ले. का. सं. १५७६, माघ कृ. ५, सोमवार। अति जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

६३५. **परमात्मप्रकाशविवरणम्**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २२८। क्र. सं. ८१२। कठवाटे का संग्रह। भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना।

६३६. **पासवैकथा**—गुणभद्र मुनि। अ १३-१४। ५.५ × ५.५। पत्र सं. ३८ तक। ले. का. सं. १६०२, श्रावण शु. ११। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६३७. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। पत्र सं. ४७५। १० × ४.५। ले. का. सं. १६०२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६३८. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। क्र. सं. १६१०। वे. सं. ६६। पत्र सं. ३४०। १० × ४.५। अपूर्ण। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६३६. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। पत्र सं. ४७१। ११ × ५। ले. का. सं. १६१६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६४०. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। क्र. सं. २६७५। वे. सं. २६। पत्र सं. २०-११०, २०५-२४६। १२ × ५। अपूर्ण। दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, दौसा।

६४१. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। र. का. सं. १४६७। ले. का. सं. १६१२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६४२. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। पत्र सं. २४७। अ ३ ख। १२.२५ ×

५.५। ले. का. सं. १५६४, मार्गशीर्ष कृ. १४, गुरुवार। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६४३. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। अ ३ क। पत्र सं. ३२२। ले. का. सं. १६६१। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६४४. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। अनु. ४२११। पत्र सं. १६६। ले. का. सं. १६६३। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

६४५. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। अनु.। १८६२। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

६४६. **पाण्डवपुराण**—भ. यशःकीर्ति। पत्र सं. ३३२। १२ × ५.५। अनु. अ ३ क। अन्तिम पृष्ठ नहीं है। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६४७. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। पत्र सं. १०८। १० × ४.५। वे. सं. १७७। ले. का. सं. १५७४। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा।

६४८. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। अनु. ४०३। पत्र सं. ६४। ले. सं. १४७३। श्री मूल संघ चन्द्रनाथ दि. जैन मन्दिर, कारंजा।

६४९. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। क्र. सं. २४७ ब। पत्र सं. ११२। ११ × ५.५। ले. का. सं. १६५१, आषाढ़ कृ. १२। सरस्वती भवन, नागौर।

६५०. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। पत्र सं. १०८। १० × ४। ले. का. सं. १४६४। आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर।

६५१. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। पत्र सं. ६६। १०.२५ × ४.५। ले. सं. १५५८, श्रावण शु. १२, भौमवार। श्री दि. जैन मन्दिर, ईडर।

६५२. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। १०.५ × ५। ले. का. सं. १६१०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६५३. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। अनु. ६२३। १८ सन्धि पूर्ण। ले. सं. १४७३, फाल्गुन शु. ५, रविवार।

६५४. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। अनु. २६१४। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

६५५. **पार्श्वपुराण**—पद्मकीर्ति। अनु. ११५८। पत्र सं. ७६। ११ × ४.२५। लिपि सं. १५००। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

६५६. **पार्श्वपुराण**—रइधू। अनु. ३००७। वे. सं. २८७। पत्र सं. ८१। ११.७५ × ५। ले. का. सं. १७४३, माघ कृ. ३। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, बोरसली, कोटा।

६५७. **पार्श्वपुराण**—रइधू। अनु. २३४४। ऐ. पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भवन, ब्यावर।

६५८. **पार्श्वपुराण**—रइधू। अनु. ३५१०। पत्र सं. ३०। ले. का. सं. १६६२।

सरस्वती भवन, ब्यावर।

६५९. **पार्श्वपुराण**—रइधू। क्र. सं. २१८६। वे. सं. २१२७। पत्र सं. ८-७६। अपूर्ण। १०.५ × ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६६०. **पार्श्वपुराण**—रइधू। पत्र सं. १-६। ६.५ × ५.५। त्रुटित व अपूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

६६१. **पार्श्वनाथपुराण**—रइधू। अनु. ११५६। पत्र सं. ८६। ११ × ४.७५। लिपि सं. १६४६, माघ शु. ६, बुधवार। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

६६२. **पार्श्वनाथचरित्र**—तेजपाल। वे. सं. ३५४। पत्र सं. १०१। १० × ५। र. का. सं. १५१६। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

६६३. **पार्श्वनाथचरित्र**—तेजपाल। क्र. सं. २१७६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६६४. **पार्श्वनाथचरित्र**—विबुध श्रीधर। पत्र सं. ६६। ६.५ × ४। र. का. सं. ११८६। ले. का. सं. १५७७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६६५. **पार्श्वनाथचरित्र**—विबुध श्रीधर। पत्र सं. ६८। ६.५ × ४। पूर्ण। त्रुटित। ६२वाँ पत्र नहीं है। अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, मोतीकटरा, आगरा।

६६६. **पार्श्वनाथचरित्र**—बुह असवाल। ११ × ५.५ पत्र सं. १५०। अपूर्ण। पत्र सं. ६१-६७ तक नहीं है। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, मोतीकटरा, आगरा।

६६७. **पार्श्वनाथचरित्र**—बुह असवाल। अनु. २११। पत्र सं. १२०। पूर्ण। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

६६८. **पासणाहचरिउ (सचित्र)**—रइधू। पत्र सं. ७७। ले. सं. १४९८, माघवदि २, सोमवार। श्वेताम्बर जैन मन्दिर, शक्तिनगर, दिल्ली।

६६९. **पासणाहचरिउ**—कवि देवचन्द। ले. का. सं. १५४६। पं. परमानन्द जी जैन शास्त्री के निजी संग्रह में।

६७०. **पासपुराण**—कवि देवचन्द। अनु. ३२६ ब। पत्र सं. ६७। १२.५ × ५.७५। ले. का. सं. १५२०, चैत्र शु. १२। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

६७१. **पाहुडदोहा**—मुनि रामसिंह। पत्र सं. ८। ८.५ × ४.५। पूर्ण। वे. सं. ६। दि. जैन बीसपन्थी मन्दिर, दौसा।

६७२. **पाहुडदोहा**—मुनि रामसिंह। पत्र सं. १२५-१३६। लेखन काल माघ कृ. ४, सोमवार, वि. सं. १६५७। निजी संग्रह में।

६७३. **पाहुडदोहा**—मुनि रामसिंह। अनु. २६६२। गुटका सं. ११५। पत्र सं. १३६। लिपि सं. १५६१। नागौर।

६७४. **पिंगलशास्त्र**—नागराज। प्राकृत। पत्र सं. ११। १०.५ × ४.५। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर अभिनन्दनस्वामी, बूँदी।

६७५. **पुष्पांजलिविधान**—पत्र सं. ८। दि. जैन सरस्वती भवन, झालरापाटन

(राजस्थान)।

६७६. **पुष्पांजलिकथा**—साधारण। पं. परमानन्द जैन शास्त्री के संग्रह में।

६७७. **पुष्पांजलिविधानकथा**—पं. हरिचन्द। क्र. सं. २६६९। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६७८. **पुष्पांजलिविधानजयमाल**—×। वे. सं. १७६। पत्र सं. ४२-४७। गुटका सं. ४४। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

६७९. **पुण्णासवकहाकोसु**—रइधू। अनु. २८७३। २ प्रतियाँ हैं। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

६८०. **पुण्णासवसत्थ**—पं. रइधू। पत्र सं. ३-८१। १०.५ × ५। अपूर्ण। जीर्ण। दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, दौसा।

६८१. **पुरन्दरविधानकथा**—अ ११-१४। ५.५ × ५.५। ले. का. सं. १६०२, श्रावण शु. ११। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६८२. **पोसहरास**—गुटका सं. ४८। सं. ६२-६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८३. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। क्रम सं. २६१। वे. सं. १८१। पत्र सं. १४३। ११ × ४.५। ले. का. सं. १५६८, चैत्र शु. ३। पूर्ण। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६८४. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। पत्र सं. १५। ११ × ४.५। ले. का. सं. १५१८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८५. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। क्र. सं. २२१३। वे. सं. २००४। पत्र सं. ४-८६। १०.७५ × ४.५। अपूर्ण। पाटोदी दि. जैन मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८६. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। पत्र सं. १०७। १०.५ × ५। ले. का. सं. १५४१। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८७. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। पत्र सं. १०५। १० × ४। ले. का. सं. १६७३। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८८. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। पत्र सं. १०२। १० × ६। ले. का. सं. १५५३। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८९. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। अनु. ७६५। पत्र सं. ११८। १०.७५ × ४.२५। लिपि सं. १६८०, भाद्रपद शु. १४ गुरुवार। भट्टारकीय भण्डार, नागौर।

६९०. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। पत्र सं. १३४। ११ × ४.५। ले. का. सं. १५६८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६९१. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। पत्र सं. १७१। ११ × ४.५। ले. का. सं. १५८०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६६२. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। क्र. सं. २४१ ब। पत्र सं. १५४। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १५७६, वैशाख कृ. १, शुक्रवार। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

६६३. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। क्र. सं. २४२ ब। पत्र सं. १२७। ११ × ५। पूर्ण। जीर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

६६४. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। क्र. सं. ४७७ ब। पत्र सं. ६७। १०.५ × ५.७५। ले. का. सं. १५६६, फाल्गुन शु. १०, मंगलवार। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

६६५. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। क्र. सं. ५०२ ब। पत्र सं. १३२। १०.२५ × ४.५। ले. का. सं. १६३८, फाल्गुन कृ. २, शुक्रवार, सरस्वती भवन, नागौर।

६६६. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। पत्र सं. १२४। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६६७. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। अनु. ११६। पत्र सं. ११६। आदिनाथ दि. जैन मन्दिर, गंजबासौदा।

६६८. **प्रद्युम्नचरित्र**—कवि सिंह। अनु. ३५१। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

६६९. **प्रबोधसार**—यशःकीर्ति। अनु. १४६७। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

७००. **प्रबोधसार**—सिंह कवि। पत्र सं. १२४। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

७०१. **प्राकृतछन्दकोष**—×। पत्र सं. ११। १०.२५ × ४.५। ले. का. सं. १६५४, माघ कृ. ३। पत्र १ नहीं है। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

७०२. **प्राकृतछन्दकोष**—×। पत्र सं. ७। १०.२५ × ४.५। ले. का. सं. १६७१, फाल्गुन शु. १०, बुधवार। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

७०३. **प्राकृतदीपिका**—×। पत्र सं. १४-३०। १०.५ × ४.२५। अपूर्ण। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

७०४. **प्राकृतव्याकरण**—समन्तभद्र। १२०० श्लोकप्रमाण। रॉयल एशियाटिक सोसायटी रिपोर्ट, कलकत्ता, बंगाल।

७०५. **प्राकृतव्याकरण**—×। १०.५ × ४.७५। पत्र सं. १३। अपूर्ण। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

७०६. **प्राकृतव्याकरण**—भट्टारक शुभचन्द्र। अनु. २२१। पत्र सं. ५०। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

७०७. **प्राकृतव्याकरण**—भट्टारक शुभचन्द्र। अनु. ६४५। दि. जैन सरस्वती भवन, ब्यावर।

[ब]

७०८. **बाहुबलिदेवचरिउ**—कवि धनपाल। क्रम सं. ५००। वे. सं. २५२। पत्र सं. २६७। ११.५ × ४.५। र. का. वि. सं. १४५४। ले. का. सं. १६०२, आषाढ़ शु. ५। पूर्ण। श्री दि. जैन बधीचन्द जी का मन्दिर, जयपुर।

७०९. **बाहुबलिदेवचरिउ**—कवि धनपाल। ले. का. सं. १५८६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७१०. **बाहुबलिदेवचरिउ**—कवि धनपाल। पत्र सं. २-१५६। ले. का. सं. १५८२। प्रथम पत्र नहीं है। सरस्वती भवन, झालरापाटन।

७११. **बाहुबलिदेवचरिउ**—कवि धनपाल। पत्र सं. २३०। ले. का. सं. १४८६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७१२. **बाहुबलिदेवचरिउ**—कवि धनपाल। पत्र सं. २३७। १३७वाँ पत्र नहीं है। ले. का. सं. १५८४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७१३. **बाहुबलिदेवचरिउ**—कवि धनपाल। पत्र सं. १६५। ले. का. सं. १५८२। सरस्वती भवन, ब्यावर।

७१४. **बाहुबलिदेवचरिउ**—कवि धनपाल। पत्र सं. ५७। ११.५ × ५.५। अपूर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

७१५. **बाहुबलिपाथडी**—अज्ञात। अनु. ३४१७। गुटका सं. ५७०। पत्र सं. ३६६। ६ × ५.५। पूर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

७१६. **बाहुबलिपाथडी**—×। अनु. ४३७। पत्र सं. ३। ११ × ४.७५। लिपि सं. १६९७, आश्विन शु. ११। भट्टारकीय भण्डार, नागौर।

७१७. **बाहुबलिपाथडी**—×। पत्र सं. ३९-४०। निजी संग्रह में।

७१८. **बलभद्रपुराण**—रइधू। क्र. सं. ७५६। वे. सं. ७४०। पत्र सं. १७२। ७ × ४। ले. का. सं. १६५६, मंगसिर कृ. ११। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७१९. **बलभद्रपुराण**—रइधू। क्र. सं. ३०६। वे. सं. १६६। पत्र सं. १५५। १२ × ४.५। ले. का. सं. १७३२, फाल्गुन कृ. १४। पूर्ण। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

७२०. **बलभद्रपुराण**—रइधू। पत्र सं. १६-१६१। ले. का. सं. १५४६। अपूर्ण। धर्मपुरा दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

७२१. **बाहुबलिचरित्र**—धनपाल। क्र. सं. ७६५। वे. सं. ७८२। पत्र सं. २७०। ले. का. सं. १५८६, बैशाख शुक्ल ७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७२२. **बाहुबलिचरित्र**—धनपाल। क्र. सं. ७६६। वे. सं. ७८३। पत्र सं. १३८-२३७। ले. का. सं. १५८४, आसोज कृ. ६। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७२३. **बाहुबलिचरित्र**—धनपाल। र. का. सं. १४५४। ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

७२४. **बाहुबलिचरित्र**—धनपाल। अनु. ११४३। पत्र सं. ५७। ११.५ × ५.५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

७२५. **बीसतीर्थंकरपूजा**—×। गु. सं. १६ (१७)। पत्र ४६वाँ मात्र। ७.७५ × ६। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

७२६. **बुद्धिरास**—शालिभद्रसूरि। अनु. २८४१।४२। ले. का. सं. १४७३। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद-६।

७२७. **बुद्धिरसायणु**—पं. महीराज। अनु. १३५ ब। पत्र सं. ३०। १०.२५ × ४.७५। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

७२८. **बुद्धिरसायणु**—पं. महीराज। अनु. १३०। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

७२९. **बुद्धिरसायणु**—पं. महीराज। अनु. ५३६। ५२ दोहे। पत्र सं. ३०। पूर्ण। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

७३०. **बुद्धिरसायणु**—पं. महीराज। अनु. ५६०। पत्र सं. ४७। ६.७५ × ४.७५। लिपि सं. १७३३। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

[भ]

७३१. **भरतचक्रवर्ती पावडी**—×। गुटका सं. ५४। पत्र सं. ३७२वाँ मात्र। वे. सं. २६२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७३२. **भरतबाहुबलि**—×। गुटका सं. ५८। पत्र सं. १०-१३। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७३३. **भरतबाहुबलि**—×। वे. सं. २६३०। पत्र सं. ७०-८१। ५ कडवक। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

७३४. **भरतेश्वर जयमाल**—×। गुटका सं. ५४। पत्र सं. २६८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७३५. **भरतजयमाल**—×। अनु. ३४१०। गुटका सं. ५६३। पत्र सं. १००। ६ × ६। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

७३६. **भरतेश्वरवैराग्य**—×। क्र. सं. ७१४। गुटका सं. २५। पत्र सं. २४१-४२। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

७३७. **भववैराग्यशतक**—×। क्र. सं. १२५। वे. सं. १७३। पत्र सं. ११। १०.७५ × ५। हिन्दी छाया सहित। पूर्ण। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

७३८. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। वे. सं. ६५७। पत्र सं. २-८८। ११ × ५। अपूर्ण। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

७३६. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। वे. सं. ७७२। पत्र सं. १४२। ८ × ७। ले. का. सं. १६४३। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

७४०. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ५०३। पत्र सं. १३१। ११-४। पूर्ण। वे. सं. २१७। ३ प्रतियाँ और हैं। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

७४१. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. २७०। वे. सं. १६५। पत्र सं. ११२। ११ × ५.५। ले. का. सं. १६६२, माघ शु. १२। पूर्ण। १ प्रति अपूर्ण है। टोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

७४२. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. १२४ ब। पत्र सं. १५०। ११ × ५। ले. का. सं. चैत्र शु. ११, मंगलवार। सरस्वती भवन, नागौर।

७४३. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ११४६। पत्र सं. ११६। ११.७५ × ४.५। लिपि वि. सं. १६२८, श्रावण शु. ५। भट्टारकीय भण्डार, नागौर।

७४४. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ११५०। पत्र सं. १६३। ६.७५ × ४। लिपि वि. सं. १६४३, श्रावण कृ. ३, गुरुवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

७४५. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। पत्र सं. १४८। ले. का. सं. १५५६। ऐलक पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भवन, झालरापाटन।

७४६. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ६६६। ले. का. सं. १६५१। ला. द. साहित्य शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

७४७. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। वे. सं. १५०१। पत्र सं. १४४। पूर्ण। दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, दौसा।

७४८. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। पत्र सं. १३८। ११ × ४.५। त्रुटित व खण्डित। २७वाँ पत्र नहीं है। दि. जैन आदिनाथ मन्दिर, बूँदी।

७४६. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। पत्र सं. ५५। ६ × ८। अपूर्ण। दि. जैन आदिनाथ मन्दिर, बूँदी।

७५०. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ५५। पत्र सं. १४५। दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

७५१. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. १२४ ब। पत्र सं. १५०। ११ × ५.५। ले. का. सं. १६००, चैत्र शु. ११, मंगलवार। सरस्वती भवन, नागौर।

७५२. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। २३२ ब। पत्र सं. ६६। १० × ४.७५। ले. का. सं. १५७७, भाद्रपद शु. २, बुधवार। सरस्वती भवन, नागौर।

७५३. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ११४६। क्र. सं. २७३। पत्र सं. ११६। ११.७५ × ४.५। ले. का. सं. १६२८, श्रावण शु. ५। सरस्वती भवन, नागौर।

७५४. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ११५०। पत्र सं. १६३। ६.५ × ४। ले.

का. सं. १६४३, श्रावण कृ. ३, गुरुवार। सरस्वती भवन, नागोर।

७५५. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. अ १२। पत्र सं. २-१४७। त्रुटित व जीर्ण। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

७५६. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ७६६। वे. सं. ७४८। पत्र सं. १०७। १०.५ × ४। ले. का. सं. १५६४, फाल्गुन शु. ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७५७. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ७६७। वे. सं. ७४६। पत्र सं. ६४। १०.५ × ४। अपूर्ण। आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर।

७५८. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ७६६। वे. सं. ७५१। पत्र सं. ६७। ११.५ × ५.५। वे. सं. ८१६। पूर्ण व जीर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७५६. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ७८८। पत्र सं. १०४। १०.५ × ४.७५। लिपि सं. १८६२, वैशाख शु. ५, गुरुवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

७६०. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ७८६। पत्र सं. १४५। १०.५ × ४.७५। लिपि सं. १५६७। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

७६१. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ७६०। पत्र सं. ११६। ११ × ४.२५। लिपि सं. १५६५, फाल्गुन शु. ५ रविवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

७६२. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८००। वे. सं. ७५२। पत्र सं. १०८। ११ × ५.२५। ले. का. सं. १५८६, श्रावण शु. १५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर

७६३. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८०१। वे. सं. ७५३। पत्र सं. १६७। ११ × ५। ले. का. १५६५, माघ शुक्ल १५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७६४. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८०२। वे. सं. ७५४। पत्र सं. १७१। ११ × ५.५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७६५. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८०३। वे. सं. ७५५। पत्र सं. ११५। १२ × ५। ले. का. सं. १५४०, आसोज कृ. १२, शनि। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७६६. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८०४। वे. सं. ७५६। पत्र सं. १४६। १० × ५। ले. का. सं. १५८६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७६७. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८०५। वे. सं. ७५७। पत्र सं. १७०। ६.५ × ४.७५। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७६८. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८०६। वे. सं. ७५८। पत्र सं. १४०। ११ × ५.५। ले. का. सं. १५८२, श्रावण शु. १०। आमेर शास्त्र-भण्डार,

जयपुर।

७६९. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८२१। पत्र सं. ११५। १२ × ५। ले. का. सं. १५४०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७७०. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८२२। पत्र सं. १४६। १० × ५। ले. का. सं. १५८६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७७१. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८२३। पत्र सं. ७०। ६.५ × ५.५। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर

७७२. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। क्र. सं. ८२४। पत्र सं. १४०। १० × ५। ले. का. सं. १५८२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७७३. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ५६०८। ६६६। पत्र सं. ११२। २८.४ × १२.५। ले. का. सं. १६५१। मुनि पुण्यविजय-संग्रह। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद-६।

७७४. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। पत्र सं. १५५। ले. का. सं. १६२६। पूर्ण। जैन साहित्य शोध-संस्थान, आगरा।

७७५. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। पत्र सं. १२२। पूर्ण। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, मोती कटरा, आगरा।

७७६. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। पत्र सं. ६५। ११ × ४। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, मोती कटरा, आगरा।

७७७. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। भण्डार ६, सं. १३०५। भण्डारकर ओ. रि. इं., पूना।

७७८. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। अनु. ३०६४। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

७७९. **भविसयत्तकहा**—धनपाल। पत्र सं. १-६८। पूर्ण। ६.५ × ४.७५। ले. सं. १६११। दि. जैन मन्दिर घियामण्डी, मथुरा।

७८०. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ७६१। वे. सं. ८०६। पत्र सं. ६८। १०.५ × ५.५। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७८१. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ७६२। वे. सं. ८१०। पत्र सं. ६४। ११.५ × ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७८२. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ७६८। वे. सं. ८१७। पत्र सं. ६७। ११ × ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७८३. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। र. का. सं. १२३०। ले. का. सं. १५३०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७८४. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। पत्र सं. १६१। ले. का. सं. १७३७। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, उदयपुर।

७८५. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। पत्र सं. २६६ ब। पत्र सं. ६५। ११.५ × ४.७५। ले. का. सं. १६१२, पौष शु. ५। सरस्वती भवन, नागोर।

७८६. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। अनु. ४६६ ब। पत्र सं. ५०। ११.७५ × ५.५। ले. का. सं. १८६५, आषाढ़ कृ. ५, मंगलवार। सरस्वती भवन, नागोर।

७८७. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। अनु. ५४३ ब। पत्र सं. ४६। ११.५ × ४.५। ले. का. सं. १५०३, आषाढ़ कृ. ६, भृगुवार। सरस्वती भवन, नागोर।

७८८. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। अनु. ४६५ ब। पत्र सं. ७६। १० × ४.५। ले. का. सं. १६५३, कार्तिक कृ. ६, मंगलवार। सरस्वती भवन, नागोर।

७८९. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। अनु. २२० ब। पत्र सं. ७१। ११ × ४.७५। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

७९०. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। अनु. २१६ ब। पत्र सं. ७२। ११ × ४.७५। ले. का. सं. १६०८, वैशाख शु. ५, गुरुवार। सरस्वती भवन, नागोर।

७९१. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८०६। पत्र सं. ६८। १०.५ × ५.५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९२. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८१०। पत्र सं. ६४। ११.५ × ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९३. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८१४। पत्र सं. १०७। १०.५ × ५.५। ले. का. सं. १५६४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९४. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८१५। पत्र सं. ६४। ११ × ५.५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९५. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८१६। पत्र सं. ६७। ११ × ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९६. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८१७। पत्र सं. ६७। १०.५ × ५.५। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९७. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८१८। पत्र सं. १०८। १० × ५.५। ले. का. सं. १५८८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९८. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८१९। पत्र सं. १६७। ११ × ५। ले. का. सं. १५६५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

७९९. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। क्र. सं. ८२०। पत्र सं. १७१। ११ × ५। अपूर्ण व अति प्राचीन। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८००. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। पत्र सं. ७५। ले. का. सं. १६१०। पंचायती दि. जैन बड़ा मन्दिर, डीग (भरतपुर)।

८०१. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। पत्र सं. ८७। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

८०२. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। पत्र सं. ५७। ले. का. सं. १४८२। पूर्ण।

पंचायती दि. जैन मन्दिर, बसवा।

८०३. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। पत्र सं. ८८। ले. का. सं. १५५६। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दूनी (टोंक)।

८०४. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। पत्र सं. ६३। १२ × ५.५। ले. का. सं. १६३६। दि. जैन मन्दिर, भादवा (राजस्थान)।

८०५. **भविसयत्तकहा**—श्रीधर। अनु. १७०३। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

८०६. **भावनाकुलक**—जिनप्रभ। अनु. १२ (३२)। पत्र सं. १८७-१६०। पाटन-भण्डार।

८०७. **भावनाकुलक**—जिनेश्वरसूरि। अनु. २५। पत्र सं. ११६-१७। पाटन-भण्डार।

८०८. **भावना सन्धि**—जयदेव मुनि। अनु. ४४१८। ले. का. सं. १६५०। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

८०९. **भावना सन्धि**—जयदेवमुनि। अनु. ६११८ (ब)। पत्र सं. ५-६। ओरियण्टल इन्टीट्यूट, बड़ोदा।

८१०. **भाव संग्रह**—श्रुतमुनि। अनु. ८३१। पत्र सं. ६। १० × ४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८११. **भव्य कुटुम्बचरित्र**—जिनप्रभ सूरि। अनु. १२। (२०)। पत्र सं. १४३-४७। पाटन-भण्डार, पाटन।

८१२. **भव्यचरित्र**—जिनप्रभ। अनु. १२ (१६)। पत्र सं. १३७-१४२। पाटन-भण्डार, पाटन।

[म]

८१३. **मउडसत्तमीकहा**—पं. साधारण। पं. परमानन्द शास्त्री के निजी संग्रह में।

८१४. **मदनयुद्ध**—बूचराज। गु. सं. १६। रचनाकाल सं. १५८६। दि. जैन मन्दिर लश्कर का, जयपुर।

८१५. **मदनयुद्धकथा**—बूचराज। गु. सं. ४६। पत्र सं. ४-२४। ले. का. सं. १५८६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८१६. **मदनयुद्ध**—बूचराज। क्र. सं. ६२६। गु. गु. १२५। ले. का. सं. १७१२, ज्येष्ठ शुक्ल २। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८१७. **मदनपराजय**—हरिदेव। क्र. सं. ८३२। पत्र सं. ८-२३। ले. का. सं. १५७६, कार्तिक शुक्ल १३। ६.५ × ४.५। बे. सं. ८५१। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८१८. **मदनपराजय**—हरिदेव। क्र. सं. ८५१। पत्र सं. १३। ६.५ × ४.५। ले. का. सं. १५७६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८१९. **मदनपराजय**—अनु. ५६७। पत्र सं. २४। ११.५ × ४.७५। लिपि सं. १५७४, आश्विन शु. १० गुरुवार। दि. जैन भण्डार, भरतपुर।

८२०. **मदनपराजय**—हरिदेव। अनु. ११५७। पत्र सं. २२। अपूर्ण। १०.७५ × ४.५। लिपि वि. सं. १५८७, ज्येष्ठ शु. ६। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

८२१. **मणिपतिचरित्र**—हरिभद्र सूरि। पत्र सं. १८। पूर्ण। दि. जैन पंचायती मन्दिर, भरतपुर।

८२२. **मणकरहा जयमाल**—×। अनु. ३४१०। गुटका सं. ५६३। पत्र सं. १००। ६ × ६। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

८२३. **मणकरहा जयमाल**—पाहल। गुटका सं. २६१। पत्र सं. ४७-५१। निजी संग्रह में।

८२४. **मनकरहा रास**—पाहल। गुटके में। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

८२५. **मणुयसन्धि**—पाहल। वे. सं. २५०। पत्र सं. ४६-५३। गु. सं. १२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८२६. **मल्लिनाथचरित्र**—जयमित्रहल। क्र. सं. ८३८। वे. सं. ८५६। अपूर्ण। पत्र सं. ४-१२१। १० × ४। आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर।

८२७. **मल्लिनाथ चरित्र**—जयमित्रहल। क्र. सं. ८५६। पत्र सं. १२१। १० × ४। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८२८. **मल्लिनाथ चरित्र**—जिनप्रभु। अनु. १२ (३४)। पत्र सं. १६४-२०२। पाटन-भण्डार, जयपुर।

८२९. **महापुराण**—पुष्पदन्त। अनु. ५६०७।८४६१। २६.८ × १०.६। पत्र सं. २३५। ले. का. सं. १५५५, आसोज सुदी २। मुनिराज श्री पुण्यविजय जी हस्तलिखित संग्रह। ला. द शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

८३०. **महावीरचरित्र**—रइधू। पत्र सं. ८०। ७२वाँ तथा अन्तिम पत्र नहीं है। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली-६।

८३१. **महावीरचरित्र**—रइधू। अनु. ४२०५। ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

८३२. **महावीर स्तोत्र**—गाथा ३०। अनु. १२६। अपभ्रंश। खम्भात भण्डार में स्थित नगीनदास के संग्रह में।

८३३. **महावीर स्वामी चरित्र**—जिनेश्वरसूरि। अपभ्रंश। नगीनदास के संग्रह में। जैन ग्रन्थावली, पृ. सं. २८७।

८३४. **महावीर पुराण**—पं. रइधू। अनु. ६६। कूंचा सेठा का दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

८३५. **मालारोहण**—माघनन्दी। पत्र सं. ४६-४८। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

८३६. **मालारोहण**—×। गुटका सं. २६। १७ कडवक। पत्र सं. १३१-१३२। १२ × १२। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

८३७. **मालारोहण**—×। क्र. सं. ५३६७। गुटका सं. १७। पत्र सं. १५-१८। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८३८. **मुक्तावलीविधान कथा**—×। अनु. ७८७। पत्र सं. १५-१६। अपूर्ण। १०.५ × १६। लिपि वि. सं. १५६६, आषाढ़ शु. १५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

८३९. **मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा**—पं. योगदेव। क्र. सं. ७१४। गुटका सं. २५। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

८४०. **मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा**—पं. योगदेव। क्र. सं. ७४१। गु. सं. ५२। ले. का. सं. १५८५, वैशाख कृष्ण १३। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द जी, जयपुर।

८४१. **मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा**—पं. योगदेव। अनु. ५११४। पत्र सं. ४। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, ईडर।

८४२. **मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा**—पं. योगदेव। वे. सं. २४४। पत्र सं. ३०-३२। गुटका सं. ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८४३. **मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा**—पं. योगदेव। गुटका सं. १०। दि. जैन मन्दिर लश्कर का, जयपुर।

८४४. **मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा**—पं. योगदेव। अनु. ६११८। बे. सं. २०७। पत्र सं. ७। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, ईडर।

८४५. **मृगांकचरित्र**—पं. भगवतीदास। क्र. सं. ८६८। पत्र सं. ७४। ११ × ६। ले. का. सं. १७००। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८४६. **मेघमालावयकहा**—कवि ठकुरसी। र. का. सं. १५८०। भ. हर्षकीर्ति भण्डार, अजमेर।

८४७. **मेघेश्वरचरित्र**—रइधू। अनु. २६०८। दि. जैन ऐ. पन्न सरस्वती भवन, ब्यावर।

८४८. **मेघेश्वरचरित्र**—रइधू। अनु. ३५११। पत्र सं. ६८। ले. का. सं. १६६२। सरस्वती भवन, ब्यावर।

८४९. **मेघेश्वरचरित्र**—रइधू। अनु. ३०६। पत्र सं. ४१। पूर्ण। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

८५०. **मेरुपूजा**—भट्टारक सोमसेन। पत्र सं. ५३-५४। दि. जैन मन्दिर, अंजनगाँव (महाराष्ट्र)।

८५१. **मोहराज विजय**—जिनप्रभ। अनु. १२ (३६)। पत्र सं. २१५-१६। पाटन भण्डार, पाटन।

[य]

८५२. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०२। वेष्टन सं. ८२। पत्र सं. १२। ६ × ४। ले. का. सं. १८०४। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८५३. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०३। वे. सं. ६०६। पत्र सं. १७। ले. का. सं. १६३४। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

८५४. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०४। वे. सं. ६०७। पत्र सं. १५। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

८५५. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०५। वे. सं. ६१६। पत्र सं. १२। ले. का. सं. १८१३। संघी जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८५६. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०६। वेष्टन सं. ३१०। पत्र सं. २६। संघी जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८५७. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०७। पत्र सं. ११। ले. का. सं. १८८२। वे. सं. २८२। छोटे दीवान जी का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८५८. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०८। वे. सं. ३३६। पत्र सं. १०। ले. का. सं. १८०४, आसोज कृ. ३। दि. जैन पार्श्वनाथ मन्दिर, जयपुर।

८५९. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५०९। वे. सं. ५१६। पत्र सं. ५। पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८६०. **योगसार सटिप्पण**—मुनि योगीन्द्र। अनु. (२) ७।१०६६। पत्र सं. ११। अपूर्ण। ले. का. सं. १८६४। राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, चित्तोड़गढ़।

८६१. **योगसार सटिप्पण**—योगीन्द्राचार्य। पत्र सं. ३०। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

८६२. **योगसार सटिप्पण**—योगीन्द्राचार्य। पत्र सं. ६८७४। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

८६३. **योगसार सटिप्पण**—योगीन्द्राचार्य। पत्र सं. १६। धर्मपुरा दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

८६४. **योगसारदोहा**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ७४१। गुटका सं. ५२। ले. का. सं. १५७०। दि. जैन मन्दिर बधीचन्द, जयपुर।

८६५. **योगसारदोहा**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १०। अपूर्ण। ले. का. सं. १६०५। जैन साहित्य शोध-संस्थान, आगरा।

८६६. **योगसारदोहा**—मुनि योगीन्द्रदेव। अनु. ७४८ त. ५४२। पत्र सं. २३। २५ × १२ × ६ × ३। ले. सं. १७४०। जिनभद्रसूरि ज्ञानभण्डार, जेसलमेर।

८६७. **योगसारदोहा**—मुनि योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ५६६६। गुटका सं. ४६। पत्र सं. १०४-११। ७ × ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८६८. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. २७४। वेष्टन सं. ५६। पत्र सं. १३।

११×५.२५। ले. का. सं. १६२१, ज्येष्ठ शुक्ल २। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, बधीचन्द जी, जयपुर।

८६६. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. २८५। पत्र सं. १०। १०.५ × ७.५। पूर्ण। वेष्टन सं. ६१। चार प्रतियाँ और हैं। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८७०. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १५० क। पत्र सं. ५। सरस्वती भवन, झालरापाटन।

८७१. **योगसार**—जोगचन्द मुनि। गुटका सं. ५५। पत्र सं. ३७८-३९६। ७.५ × ६.७५। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

८७२. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। हिन्दी टिप्पण सहित। पत्र सं. १४। १२.२५ × ५.२५। दि.जैन मन्दिर, भानपुरा (म. प्र.)।

८७३. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। गुटका सं. ५४। पत्र सं. ३३६-३४२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८७४. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. २४। १०.५ × ५.५। ले. का. सं. १८२६। वेष्टन सं. ७२। दि. जैन मन्दिर आदिनाथ, बूँदी।

८७५. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. ७। १२ × ५.५। ले. का. सं. १८२१। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

८७६. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। वेष्टन सं. ३६६। दि. जैन मन्दिर अभिनन्दननाथ, बूँदी।

८७७. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ५४। पत्र सं. ५८। १० × ६। पूर्ण। श्री चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, भानपुरा (म. प्र.)।

८७८. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १५०-५७। गुटका सं. २२। आमेर शास्त्र-भण्डार जयपुर।

८७९. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। गुटका सं. ३८। पत्र सं. ११३-२६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८८०. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्रम सं. २५६। गु. सं. २२। पत्र सं. १५०-१५७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८८१. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। पत्र सं. १५३। ६ × ५। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, रामपुरा (म. प्र.)।

८८२. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ७१३। वेष्टन सं. ६७०। गुटका सं. २४। ६.५ × ८.५। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८८३. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ६३३। पत्र सं. ९। ११ × ४.५। ले. का. सं. १६१६। आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर।

८८४. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ६३४। पत्र सं. ७। १०.५ × ४.५। आमेर

शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८८५. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. ६३५। पत्र सं. २०। ११ × ५.५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८८६. **योगसार**—योगीन्द्रदेव। क्र. सं. १२८। पत्र सं. ६। ११.५ × ५.५। ले. का. सं. १८७२, मंगसिर सुदी ८। पूर्ण। वेष्टन सं. ३२६। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

८८७. **योगसार**—जोगचन्द। गुटका सं. ५४। पत्र सं. ३३६-३४२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८८८. **योगीरासो**—योगीन्द्र। क्र. सं. ५६५७। गुटका सं. १०। पत्र सं. ३२-३३। ८ × ७। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

[र]

८८९. **रत्नकरण्ड श्रावकाचार**—श्रीचन्द। अनु. २४६ ब। पत्र सं. १६६। १२ × ५। ले. का. सं. १६०७, मंगसिर शुक्ल २, सोमवार। सरस्वती भवन, नागौर।

८९०. **रत्नकरण्ड श्रावकाचार**—श्रीचन्द। अनु. २४३ ब। पत्र सं. १११। १४ × ५.२। ले. का. सं. १५७६, चैत्र शुक्ल ३, शुक्रवार। सरस्वती भवन, नागौर।

८९१. **रत्नकरण्ड श्रावकाचार**—श्रीचन्द। अनु. ७८८। पत्र सं. ६७। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

८९२. **रत्नकरण्ड श्रावकाचार**—श्रीचन्द। क्र. सं. ६४८। पत्र सं. १५६। ६.५ × ४.५। ले. का. सं. १५८२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८९३. **रत्नकरण्ड श्रावकाचार**—श्रीचन्द। क्र. सं. ६४६। पत्र सं. १२३। ११ × ५.५। ले. का. सं. १५८६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८९४. **रत्नकरण्ड श्रावकाचार**—श्रीचन्द। क्र. सं. ६५०। पत्र सं. १५७। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १५६५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८९५. **रत्नकरण्ड श्रावकाचार**—श्रीचन्द। पत्र सं. १११। ले. का. सं. १५१६। चाँदनगाँव दि. जैन मन्दिर, श्री महावीर जी।

८९६. **रत्नत्रयविधानकथा**—गुणभद्र। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

८९७. **रत्नत्रयपूजा जयमाल**—ऋषभदास। क्र. सं. ६५६। वेष्टन सं. ६५६। पत्र सं. २३। ११.५ × ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८९८. **रत्नत्रयपूजा जयमाल**—ऋषभदास। क्र. सं. ६४८। वे. सं. ६५८। पत्र सं. ४। हिन्दी छाया सहित। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

८९९. **रयणकहाणी**—मुनि सोमकीर्ति। गुटका सं. १६६। पत्र सं. १६५-१६७।

६.२५ × ६। श्री दि. जैन शास्त्र-भण्डार, ईडर।

६००. **रत्नत्रयपूजा जयमाल**—ऋषभदास। अ. २८६। पत्र सं. ६। ले. का. सं. १८६२। ज्येष्ठ कृ. २। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

६०१. **रत्नत्रयपूजा जयमाल**—×। पत्र सं. १६०-१६२। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६०२. **रविवारकथा**—रइधू। पत्र सं. ४। १० × ४। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा, भरतपुर।

६०३. **रविवारकथा**—मधु। पत्र सं. ४। वे. सं. ८७-६५। ५ कडवक। १० × ४.५। श्री दि. जैन मन्दिर दीवानजी, कामा।

६०४. **रविवारकथा**—नेमचन्द। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६०५. **रविवारकथा**—×। अनु. ३४२२। गुटका सं. ५७५। पत्र सं. ६६। लिपि सं. १६४१, श्रावण शु. ८। ६.५ × ५.५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

६०६. **राजहंसकुमार चरित्र चौपाई**—दयारल। अनु. ८४६०।३१। ले. का. सं. १५८३। ला. दा. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

६०७. **रिट्ठणेमि चरिउ**—स्वयंभू। क्र. सं. ५४५४। गुटका सं. ७३। ६७-६८ सन्धि। पत्र सं. ७७-८६। अपूर्ण। पाटोदी दि. जैन मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६०८. **रिसहणाहचरिउ**—पुष्पदन्त। अनु. १०६०। पत्र सं. ३६५। ले. का. सं. १६१६, कार्तिक शु. ५, शनिवार। श्री भट्टारकीय शास्त्र-भण्डार, नागोर।

६०९. **रुक्मिणी विधानकथा**—छत्रसेन। क्र. सं. २६८८। पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६१०. **रोषवर्णन गोयम**—×। २४२ पद्य। क्र. सं. ७१४। वे. सं. ६७१। गुटका सं. २५। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६११. **रोहिणीचरित्र विधानकथा**—देवनन्दी। क्र. सं. २६८३। पत्र सं. ७६-८१। पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६१२. **रोहिणीचरित्र विधानकथा**—देवनन्दी। भ. महेन्द्रकीर्ति भण्डार, आमेर, जयपुर।

६१३. **रोहिणी विधानकथा**—देवनन्दी। अनु. ७४० ब। पत्र सं. १६। ६ × ४.५। ले. का. सं. १५१६, मंगसिर बदी ३, रविवार। सरस्वती भवन, नागोर।

६१४. **रोहिणीव्रतकथा**—देवनन्दी मुनि। क्र. सं. ६७२। वेष्टन सं. ६७२। पत्र सं. १२। १० × ४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६१५. **रोहिणी (श्रवण) द्वादशीकथा**—गुणभद्र मुनि। अ १३-१४। ५.५ × ५.५। पत्र सं. २६-३१। ले. का. सं. १६०२, श्रावण शु. ११। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६१६. **रोहिणीरास**—अज्ञात। गुटका सं. २६१। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

६१७. **रोहिणी जयमाल**—×। अनु. ३२२४। पत्र सं. २२०। ७ × ५.५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

[ल]

६१८. **लब्धिविधानव्रतकथा**—गुणभद्र (मलयकीर्तिशिष्य)। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

६१६. **लक्ष्मीवल्लभ**—×। अजैन ३८२। ले. का. सं. १७५२। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

६२०. **लोह जयमाल**—×। अनु. ३५४७। गुटका सं. ७००। पत्र सं. ८४। ५.५ × ५.५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

[व]

६२१. **वज्रस्वामीचरित्र**—जिप्रभसूरि। अनु. ३११ (१७)। पत्र सं. १२४-१२६। पाटन-भण्डार, पाटन।

६२२. **वज्रस्वामीरास**—जयसागर। अनु. ३४२०।३४। ले. का. सं. १५५०। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

६२३. **वड्ढमाणकहा**—नरसेन। क्र. सं. ५१८। वे. सं. २६१। पत्र सं. २७। ६ × ४। ले. का. सं. १५८४। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६२४. **वड्ढमाणकहा**—जयमित्रहल। क्र. सं. ५१६। पत्र सं. २-५६। ६.५ × ४। ले. का. सं. १५५०, वैशाख शुक्ल ३। अपूर्ण। वे. सं. १३८। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६२५. **वड्ढमाणकव्व**—कवि हरिइंद। ले. का. सं. १६००। जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

६२६. **वड्ढमाणकव्व**—हरिचन्द। ११ सन्धि। पत्र सं. ४६। ११ × ५। श्री दि. जैन मन्दिर दीवनाजी, कामा।

६२७. **वयरसामिचरिउ**—जिनप्रभ। अनु. ३११ (१७)। पत्र सं. १२४ से १२६। पाटन-भण्डार, पाटन।

६२८. **वरांगचरिउ**—तेजपाल। र. का. सं. १५०७। ले. का. सं. १६०७। भट्टारक हर्षकीर्ति शास्त्र-भण्डार, अजमेर।

६२६. **वरांगचरित**—तेजपाल। पत्र सं. ५६। ११ × ४.५। पंचायती दि. जैन मन्दिर, करौली (सवाई माधोपुर)।

६३०. **वरांगचरित**—तेजपाल। क्र. सं. ११८२। पत्र सं. ५६। ११.५ × ४.५।

ले. का. सं. १६०७, ज्येष्ठ शुक्ल ३, सोमवार। पूर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

६३१. **वरांगचरित**—तेजपाल। क्रम सं. ४६२ अ। पत्र सं. ६८। ११.२५ × ४.७५। ले. का. सं. १६०७, कार्तिक शुक्ल ५, गुरुवार। सरस्वती भवन, नागौर।

६३२. **वरांगचरित**—तेजपाल। अनु. ८२६। पत्र सं. ५५। ११.५ × ४.२५। लिपि सं. १६२१, भाद्रपद शु. ५, शुक्रवार। सरस्वती भवन, नागौर।

६३३. **वरांगचरित**—पं. तेजपाल। अनु. ११८१। पत्र सं. ६९। ११.२५ × ४.७५। र. का. १६०७, वैशाख कृ. ७। लिपि सं. १६०७, कार्तिक शु. ५, गुरुवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय भण्डार, नागौर।

६३४. **वरांगचरित**—पं. तेजपाल। अनु. ११८२। पत्र सं. ५६। ११.५ × ४.५। र. का. १६०७। लिपि वि. सं. १६०७, ज्येष्ठ शु. ३, सोमवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

६३५. **वर्द्धमानकथा (जिणरत्तिविहाणकहा)**—नरसेन। क्र. सं. ६७६। वेष्टन संख्या ६८६। पत्र सं. १७। १०.५ × ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६३६. **वर्द्धमानकथा (जिणरत्तिविहाणकथा)**—नरसेन। क्र. सं.११७०। वेष्टन सं. १६७७। पत्र सं. २३। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

६३७. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। क्र. सं. ६७६। वेष्टन संख्या ६८६। पत्र सं. ५६। ले. का. सं. १६२७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६३८. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। क्र. सं. ६८०। वे. सं. ६६०। पत्र सं. ५६। ले. का. सं. १६०८, भाद्रपद शुक्ल ४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६३९. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। क्र. सं. ६८१। वेष्टन संख्या ६६१। पत्र सं. ६२। ले. का. सं. १६३१, माघ कृष्ण ११। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६४०. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। क्र. सं. ६८२। वेष्टन सं. ६६२। पत्र सं. ५४। ले. का. सं. १५६३, ज्येष्ठ शुक्ल ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६४१. **वर्द्धमानकथा**—जय[illegible]हल। क्र. सं. २३५१। वे. सं. १५३। पत्र सं. ७३। ६.५ × ५.५। ले. का. सं. १६६५, वैशाख शु. ३। पूर्ण। पाटोदी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६४२. **वर्द्धमानकथा**—जयमित्रहल। क्र. सं. २३५२ (२)। वे. सं. १६५३। पत्र सं. ५२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६४३. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। क्र. सं. २६०। पत्र सं. ४६। ११ × ५। ले. का. सं. १५४६। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा, (भरतपुर)।

६४४. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। पत्र सं. ५५। १० × ४.७५। अपूर्ण (पंचम परिच्छेद तक)। तेरापन्थी दि. जैन मन्दिर, दौसा (जयपुर)।

६४५. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ३६६६। पत्र सं. ४५। ले. का. सं. १६८८। सरस्वती भवन, ब्यावर।

६४६. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. २८२६। सरस्वती भवन, ब्यावर।

६४७. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। क्र. सं. ८८६। पत्र सं. ५२। ६.५ × ५। ले. का. सं. १६२७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६४८. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ४३१ ब। पत्र सं. ६३। ११.५ × ४.५। ले. का. सं. १५३५, ज्येष्ठ शु. ७, शुक्रवार। सरस्वती भवन, नागोर।

६४९. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ४३२ अ। पत्र सं. ५७। १०.५ × ४.७५। सरस्वती भवन, नागोर।

६५०. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ४३३ अ। पत्र सं. ५६। १०.५ × ४.७५। ले. का. सं. १६४७। ज्येष्ठ कृ. ११, बुधवार। सरस्वती भवन, नागोर।

६५१. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ६५५। पत्र सं. १००। ११ × ४.७५। त्रुटित। लिपि वि.सं. १५६२, आषाढ़ कृ. ६, बुधवार। सरस्वती भवन, नागोर।

६५२. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ६५६। पत्र सं. ५७। १०.५ × ४.७५। लिपि वि. सं. १५६६, ज्येष्ठ कृ. १, सोमवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

६५३. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ६५७। पत्र सं. ५६। १०.५ × ४.५। लिपि सं. १६४७, ज्येष्ठ कृ. ११, बुधवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

६५४. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ६५८। पत्र सं. ६३। १०.७५ × ४.२५। लिपि सं. १५६६, ज्येष्ठ शु. ५। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

६५५. **वर्द्धमानकाव्य**—जयमित्रहल। अनु. ६५९। पत्र सं. ७०। ११ × ४.५। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

६५६. **वर्द्धमानचरित्र**—श्रीधर। पत्र सं. ७८। ११.५ × ४.५। अपूर्ण। ९ परिच्छेद तक तथा १०वें का कुछ अंश। दि. जैन मन्दिर, दूनी (टोंक)।

६५७. **वर्द्धमानचरित्र**—हरिश्चन्द। अनु. २६३ क। पत्र सं. ४२। ले. का. सं. १५१८। सरस्वती भवन, झालरापाटन।

६५८. **वर्द्धमानकाव्य**—हरिचन्द। अनु. २०२। पत्र सं. ४८। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

६५९. **विजयचंदचरिय**—×। वे. सं. २६५। पत्र सं. ८। १० × ४। प्राकृत। अति प्राचीन। दि. जैन मन्दिर अभिनन्दन स्वामी, बूँदी।

६६०. **विज्झुचर अणुपेहा**—×। क्र. सं. ७१४। पत्र सं. २४०-२४१। गुटका सं. २५। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६६१. **विज्झुचर अणुपेहा**—×। पत्र सं. ८-१२। अंजनगाँव (अमरावती)।

६६२. **वित्तसार (वृत्तसार)**—रइधू। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

६६३. **वित्तसार (वृत्तसार)**—रइधू। अनु. ४५०। पत्र सं. ८५। श्री सि. चै. सरस्वती भण्डार, अजमेर।

६६४. **विद्युच्चोरकथा**—×। गुटका सं. ५६। पत्र सं. ८४-६०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६६५. **विधानसंग्रह**—×। अनु. २५८०। पत्र २६४। त्रुटित। १०.५ × ४.५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

६६६. **विलासवईकहा**—साधारण सिद्धसेन। क्र. सं. ६६६५। फोटो स्टेट कॉपी। ८६ × २। ५१-५४ पाना नहीं हैं। ले. का. सं. १६१५। सेण्ट्रल लाइब्रेरी, बड़ौदा।

६६७. **वीरजिणिंदपारणक**—वर्धमानसूरि। अनु. ५ (२२)। पाटन-भण्डार, पाटन।

६६८. **वैराग्यगीत**—×। गुटका सं. ४८। पत्र सं. ३१०-३१२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६६९. **वैराग्यसार**—सुप्रभाचार्य। अनु. ११३। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

[श]

६७०. **शान्तिनाथचरित**—महिन्दु (महेन्द्र)। अनु. ४३३०। पत्र सं. १०४। ३७०० श्लोकप्रमाण। सरस्वती भवन, ब्यावर।

६७१. **शान्तिनाथचरित**—महिन्दु (महेन्द्र)। पत्र सं. १५३। र. का. सं. १५८७। ले. का. सं. १५८८। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

६७२. **शान्तिनाथदेवरास**—उपाध्याय लक्ष्मीतिलक। ६० पद्य। सम्मेलन पत्रिका, वर्ष ४७, अंक ४, पृ. ३७-४५ प्रकाशित।

६७३. **शान्तिनाथपुराण**—ठाकुर। पत्र सं. ७४। ११.५ × ५.५। र. का. सं. १६५२। पूर्ण। वे. स. १६०५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६७४. **शान्तिनाथबोली**—×। अनु. ५६६४-८४६४-८। २०.६ × ७.६। पत्र सं. १८। ४ गाथा। ले. का. सं. १६५०। जीर्ण। मुनिपुण्यविजय जी का संग्रह, ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

६७५. **शान्तिनाथबोली**—×। ५६६५।३६०८-२। २४.६-११। ले. का. सं. १६५०। मुनिपुण्यविजय जी का संग्रह, ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

६७६. **शिवकुमार की जयमाल**—×। पत्र सं. ५४-५८। ६ कडवक। गुटका सं. १२। वे. सं. २५०। आमेर-शास्त्र भण्डार, जयपुर।

६७७. **शालिभद्रचरित**—पउम। अनु. ५३ (२)। ६६ गाथा। पत्र सं. ६। पाटन-भण्डार, पाटन।

६७८. **शालिभद्रफागु**—पोमा कवि। अनु. २८४१।३२। ले. का. सं. १४७३। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

६७९. **शीलसन्धि**—रत्नशेखरसूरि। अनु. १२९६।३। ले. का. सं. १४८६। ला. दे. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

६८०. **श्रावकधर्म**—×। पत्र सं. १२८-३३। गुटका सं. ३८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८१. **श्रावकविधि**—जिनप्रभ। क्र. सं. ११ (१६)। पत्र सं. १८०-१८४। पाटन-भण्डार, पाटन।

६८२. **श्रावकविधिरास**—मेरुनन्दन। अनु. २८४१।४२। ले. का. सं. १४७३। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

६८३. **श्रावकाचार दोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। पत्र सं. १४। ले. का. सं. १७१४। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, शाहगढ़।

६८४. **श्रावकाचार दोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। पत्र सं. २८७-६४। गुटका सं. ५४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८५. **श्रावकाचार दोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। अनु. ४२६१। पत्र सं. ४०। सरस्वती भवन, ब्यावर।

६८६. **श्रावकाचार दोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। पत्र सं. ११०-१३२। दि. जैन मन्दिर, सम्भवनाथ, उदयपुर।

६८७. **श्रावकाचार दोहा**—लक्ष्मीचन्द्र। वे. सं. १७३। पत्र सं. १४। ११.५ × ५.२५। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६८८. **श्रावकाचार दोहा**—रामसिंह। अनु. ५६५७। पत्र सं. ५३-६३। गुटका सं. १०। ८ × ७। दि. जैन मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

६८९. **श्रावकाचार दोहा**—रामसिंह। अनु. ५४५४।पत्र सं. ४५-४६। गुटका सं. ७३। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

६९०. **श्रावकाचार दोहा**—योगीन्द्रदेव। अनु. १३०८। कठवाडे संग्रह। भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना।

६९१. **श्रीपालचरित**—कवि दामोदर। अनु. ५२६। वे. सं. २२४। पत्र सं. ५७। ११ × ४.५। ले. का. सं. १६०८, श्रावण कृ. ६। पूर्ण। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

६९२. **श्रीपालचरित**—जयमित्रहल। पत्र सं. ६०। ११ × ४.७५। ले. का. सं. १६२३। पूर्ण। दि. जैन दीवान जी का मन्दिर, कामा (भरतपुर)।

६९३. **श्रीपालचरित्र**—नरसेनदेव। अनु. ४२८ ब। पत्र सं. ३३। १०.५ × ५। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागौर।

६९४. **श्रीपालचरित्र**—पं. नरसेन। अनु. १२४३। पत्र सं. ३६। १० × ४। लिपि

सं. १५७१, माघ कृ. ११। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

९९५. **श्रीपालचरित्र**—नरसेनदेव। वे. सं. १११। पत्र सं. ४६। १० × ४। ले. का. सं. १५८६। पूर्ण। दि. जैन दीवान जी का मन्दिर, कामा (भरतपुर)।

९९६. **श्रीपालचरित्र**—नरसेनदेव। पत्र सं. ३७। ११ × ५। ३ सन्धि। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

९९७. **श्रीपालचरित्र**—नरसेनदेव। वे. सं. ३०२। पत्र सं. ६०। ११ × ४.७५। ले. का. सं. १६२३। पूर्ण। दि. जैन दीवान जी का मन्दिर, कामा (भरतपुर)।

९९८. **श्रीपालचरित्र**—नरसेनदेव। पत्र सं. ४१। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १५२३। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, श्री महावीर जी।

९९९. **श्रीपालचरित्र**—नरसेनदेव। अनु. २४०१। वे. सं. १६६६। पत्र सं. १७। ११.५ × ५। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

१०००. **श्रीपालचरित्र**—रइधू। वे. सं. १४। पत्र सं. १२५। १०.५ × ४। ले. का. सं. १६०६। दि. जैन मन्दिर आदिनाथ, बूंदी।

१००१. **श्रीपालचरित्र**—रइधू। पत्र सं. ६६। ११.७५ × ६। अन्त के पृष्ठ नहीं हैं। अपूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

१००२. **श्रीपालचरित्र**—रइधू। अनु. १२६७। ले. का. सं. १८८८। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

१००३. **श्रीपालचरित्र**—रइधू। स्ट्रासबर्ग (जर्मन) पुस्तकालय (उल्लिखित)।

१००४. **श्रीपालचरित्र**—रइधू। अनु. १८८८। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

१००५. **श्रुतपंचमीकहा**—धनपाल। पत्र सं. १४४। १०.५ × ३। ले. का. सं. १५०१, फाल्गुन शु. १। पूर्ण। दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, दौसा।

१००६. **श्रेणिकचरित्र**—जयमित्रहल। अनु. ५२९। वे. सं. २३६। पत्र सं. ६०। १०.५ × ५.५। अपूर्ण। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

१००७. **श्रेणिकचरित्र**—जयमित्रहल। अनु. ७५७। पत्र सं. ६५। ले. सं. १६३६। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

१००८. **श्रेणिकचरित्र**—रइधू। अनु. ३१३७। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

[ष]

१००९. **षोडशकारणकथा**—विशालकीर्ति। पत्र सं. २८। सरस्वती भवन, झालरापाटन।

१०१०. **षोडशकारणजयमाल**—रइधू। पत्र सं. ७। ११ × ५.५। दि. जैन मन्दिर,

भादवा (राजस्थान)।

१०११. **षोडशकारणजयमाल**—रइधू। क्र. सं. ४३७। वे. सं. ५। पत्र सं. २२। ११ × ५। ले. का. सं. १८७६, भाद्रपद शु. ५। पूर्ण। संस्कृत छाया युक्त। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

१०१२. **षोडशकारणजयमाल**—×। अ २६ क। पत्र सं. २३। १०.५ × ५। ले. का. सं. १८३५, श्रावण शु. ४, सोमवार। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

१०१३. **षोडशकारणजयमाल**—भ. मेरुचन्द। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

१०१४. **षोडशकारणजयमाल**—अनु. २७ क। पत्र सं. ३। १०.५ × ५। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

[स]

१०१५. **सम्बोधपंचासिका**—रइधू। अनु. १६८२। वे. सं. २२६। पत्र सं. ५। ११ × ६। ले. का. सं. १७१६, पौष शु. ५। दि. जैन पाटोदी मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०१६. **सम्बोधपंचासिका**—रइधू। वे. सं. १०। पत्र सं. ३। ११ × ६। पूर्ण। बधीचन्द दि.जैन मन्दिर, जयपुर।

१०१७. **सम्बोधपंचासिका**—मुनि धर्मचन्द्र। गुटका सं. ५०। चौधरी दि. जैन मन्दिर, मालपुरा (टोंक)।

१०१८. **सम्बोधपंचासिका**—अज्ञात। वे. सं. १११८। पत्र सं. ४। १०.५ × ५। ले. का. सं. १७१४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०१९. **सम्बोधपंचासिका**—अज्ञात। अनु. ७१८ ब। पत्र सं. ६। १२ × ५। ले. का. सं. १८३०, वैशाख शु. १, गुरुवार। सरस्वती भवन, नागोर।

१०२०. **सम्बोधपंचासिका**—अज्ञात। अनु. ५६४ ब। पत्र सं. ६। ६.५ × ४.२५। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

१०२१. **सम्बोधपंचासिका**—अज्ञात। अनु. ५५६ ब। पत्र सं. ५। ६.५ × ४.२५। ले. का. सं. १८८३, फाल्गुन शु. ३। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

१०२२. **सम्बोधपंचासिका**—अज्ञात। पत्र सं. २१८-२२३। गुटका सं. ४८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०२३. **सम्बोधपंचासिका**—×। पत्र सं. १३। ११.५ × ५.५। दि. जैन मन्दिर, बोरसली (कोटा)।

१०२४. **सम्बोधपंचासिका**—×। पत्र सं. १३। १२ × ७। अग्रवाल दि. जैन पंचायती मन्दिर, अलवर।

१०२५. **सम्बोधपंचासिका**—×। पत्र सं. २६। ६ × ६। अग्रवाल दि. जैन पंचायती मन्दिर, अलवर।

१०२६. **सम्बोधपंचासिका**—×। पत्र सं. ८५-८८। निजी संग्रह में।

१०२७. **सम्बोधिरसायन**—×। वे. सं. २७६। पत्र सं. १२८-१३३। गुटका सं. ३८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०२८. **सम्बोधिरसायन**—×। अनु. ३५०१। गुटका सं. ६५४। पत्र सं. ६०। ६ × ५.२५। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१०२९. **सम्भवजिणणाहचरिउ**—तेजपाल। अनु. ८३३। पत्र सं. ७६। लिपि सं. १६४८, आश्विन शु. ४। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

१०३०. **सम्भवजिणणाहचरिउ**—तेजपाल। अनु. २४२७। वे. सं. ३६५। पत्र सं. ६२। १० × ५। दि. जैन छोटे दीवान जी का मन्दिर, जयपुर।

१०३१. **सम्भवणाहचरिउ**—तेजपाल। अनु. ४००। ले. का. सं. १५८३। ऐलक पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भवन, ब्यावर।

१०३२. **सम्भवणाहचरिउ**—तेजपाल। पत्र सं. ३२-६१। ६ सन्धि। अपूर्ण। दि. जैन पंचायती बड़ा मन्दिर, डीग (भरतपुर)।

१०३३. **सम्भवणाहचरिउ**—तेजपाल। अनु. २४७४। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

१०३४. **संयममंजरी**—महेश्वरसूरि। अनु. ३०६६। गाथा ३५। पत्र सं. ११०-११। जैन ज्ञान भण्डार, लींबड़ी।

१०३५. **संयममंजरी**—महेश्वरसूरि। अनु. २६१ (६)। पत्र सं. २१५-१८। पाटन-भण्डार, पाटन।

१०३६. **संयममंजरी**—महेश्वरसूरि। अनु. १३० (१४)। पत्र सं. २०७-२१३। पाटन-भण्डार, पाटन।

१०३७. **सकलविधिविधानकाव्य**—नयनन्दी। अनु. १०७४। पत्र सं. ३०४। १०.५ × ४.५। ले. का. सं. १५९०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०३८. **सकलविधिविधानकाव्य**—नयनन्दी। अनु. १०७५। पत्र सं. ६। ११.५ × ५.५। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०३९. **सकलविधिविधानकाव्य**—नयनन्दी। अनु. १०७६। पत्र सं. १०। १०.५ × ४.५। अपूर्ण। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०४०. **सकलविधिविधानकाव्य**—नयनन्दी। अनु. ६७४। पत्र सं. ३०१। १२ × ५.२५। लिपि वि. सं. १५७७, पौष शु. १। दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१०४१. **सत्तवसणवण्णणकहा**—माणिकचन्द। पत्र सं. ६१। पूर्ण व त्रुटित। १०.५ × ४.५। र. का. सं. १६३४। ले. का. सं. १८वीं शती। निजी संग्रह में।

१०४२. **सत्तवसणवण्णणकहा**—माणिकचन्द। अनु. ५२०। पत्र सं. १००। पूर्ण। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

१०४३. **सत्यपुरमण्डन महावीरोत्साह**—अभयदेव। र. का. ११वीं शताब्दी।

१०४४. **सन्तोषतिलकजयमाल**—बूचराज (बल्ह)। र. का. सं. १५६१। हिसार में रचित। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०४५. **सन्मतिजिनचरित्र**—रइधू। अनु. अ २२। पत्र सं. १-६०। अन्तिम १२ पत्र कम हैं। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

१०४६. **सन्मतिजिनचरित्र**—रइधू। अनु. १२६६। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

१०४७. **सन्मतिजिनचरित्र**—रइधू। अनु. ८३२। पत्र सं. १४५। ११.२५ × ४.७५। लिपि सं. १६४८, माघ शु. ६, सोमवार। भ. भ. नागोर।

१०४८. **सन्मतिजिनचरित्र**—रइधू। अनु. १०६६। पत्र सं. १२६। ११ × ५.५। ले. का. सं. १६२४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०४९. **सप्तऋषिपूजा**—×। गुटका सं. ६३। ६.२५ × ५.५। श्री दि. जैन सरस्वती भवन, नया मन्दिर, दिल्ली।

१०५०. **समाधिरास**—चारितसेनमुनि। गुटका सं. ६१। पत्र सं. १३६-१३८। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

१०५१. **समाधिरास**—चारितसेनमुनि। गुटका सं. ६४। पत्र ६७वाँ मात्र। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

१०५२. **सम्यक्त्वकौमुदी**—सहणपाल। अनु. ५४५४। गुटका सं. ७३। पत्र सं. ६१-६४। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

१०५३. **सम्यक्त्वकौमुदी**—रइधू। अनु. ८११। पत्र सं. ७१। ६.२५ × ४.५। लिपि वि. सं. १६०६, भाद्रपद शु. २, रविवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१०५४. **सम्यक्त्वगुणनिधान**—रइधू। अनु. ३२७१। पत्र सं. ४५। सरस्वती भवन, ब्यावर।

१०५५. **सम्यक्त्वगुणारोहण**—रइधू। अनु. ४६५८। अनु. १८८६। पत्र सं. ७६। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

१०५६. **सरस्वतीकण्ठाभरणवृत्ति**—आजड। अनु. ५०। पत्र सं. २-३०५। अपूर्ण। मध्य के कुछ पत्र नहीं हैं। संस्कृत-अपभ्रंश। पाटन-भण्डार, पाटन।

१०५७. **सरस्वतीजयमाला**—भट्टारक महीचन्द्र। पत्र सं. १। ७.२५ × ५.५। भ. सुरेन्द्रकीर्ति शास्त्र-भण्डार, श्री दि. जैन मन्दिर, सोजित्रा (गुजरात)।

१०५८. **सांतिणाहचरिउ**—महिन्दु। अ १ (क)। पत्र सं. १५३। ११ × ४.७५। र. का. सं. १५८७। ले. का. सं. १५८८, फाल्गुन कृ. ५। पूर्ण। श्री दि. जैन मन्दिर, सरस्वती भण्डार, धर्मपुरा, दिल्ली।

१०५९. **सांतिणाहचरिउ**—महिन्दु। अनु. ४२३०। दि. जैन ऐ. प. सरस्वती भवन,

ब्यावर।

१०६०. **साटक**—×। पत्र सं. ६-११। गुटका सं. ५२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०६१. **सालिभद्दकक्क**—पउम। अनु. ३११ (१५)। पत्र सं. ११४-११६। पाटन-भण्डार, पाटन।

१०६२. **सालिभद्रचरित**—जिनसिंहसूरि। अनु. ३३५ ब। पत्र सं. २१। १० × ४.५। ले. का. सं. १७१८, फाल्गुन शु. ११। सरस्वती भवन, नागोर।

१०६३. **सालिभद्रमाइ**—×। पत्र सं. ११६-१२४। पाटन-भण्डार, पाटन।

१०६४. **सावयचरिउ (सम्यक्त्वकौमुदी)**—रइधू। पत्र सं. ५८। र. का. सं. १५१०-१५३६। ले. का. सं. १६१४। स्व. पूरणचन्द्र नाहर संग्रह, कलकत्ता।

१०६५. **सावयचरिउ (सम्यक्त्वकौमुदी)**—रइधू। पत्र सं. ७१। सरस्वती भवन, नागोर।

१०६६. **सावयधम्मदोहा**—मुनि रामसिंह। अनु. १२२५। पत्र सं. ८। १०.५ × ४.५। वे. सं. १४१। पूर्ण। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

१०६७. **सावयधम्मदोहा**—मुनि रामसिंह। पत्र सं. १४। ले. का. सं. १७५८। दि. जैन मन्दिर, शाहगढ़।

१०६८. **सावयधम्मदोहा**—पं. लक्ष्मीचन्द्र। अनु. ७३८। पत्र सं. १६। २२३ दोहे। पूर्ण। श्री दिगम्बर जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

१०६९. **सिद्धचक्ककहा**—पं. रइधू। सन्धि १०। पत्र सं. ६६। ११.५ × ५.७५। पूर्ण। श्री अग्रवाल दि. जैन बड़ा मन्दिर, मोती कटरा, आगरा।

१०७०. **सिद्धचक्ककहा**—पं. रइधू। क्र. सं. १७३३। पत्र सं. ४६। ले. का. सं. १४२८। दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

१०७१. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। पत्र सं. ४१। ले. का. सं. १५२३। पूर्ण। एक अन्य ३६ पत्रों की अपूर्ण प्रति भी है। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, श्री महावीर जी (राजस्थान)।

१०७२. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। अ ७। पत्र सं. १०५। १०.५ × ५। ले. का. सं. १६७३। पंचायती, दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

१०७३. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। अ ८। पत्र सं. ५५। १०.५ × ५। पंचायती, दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

१०७४. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। पत्र सं. ४३। ले. का. सं. १६११। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

१०७५. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। अ ८। पत्र सं. ५५। ले. का. सं. १६१८। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

१०७६. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। पत्र सं. ४३। १२०० श्लोकप्रमाण। ले. का. सं. १६११। दि. जैन मन्दिर, डीग (भरतपुर)।

१०७७. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। अनु. ५३३। वे. सं. २७८। पत्र सं. ३८। १० × ४.५। ले. का. सं. १५१५। पूर्ण। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

१०७८. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। अनु. ५०७ ब। पत्र सं. ४२। १०.७५ × ४.५। ले. का. सं. १६०६, पौष शु. ५, सोमवार। सरस्वती भवन, नागोर।

१०७९. **सिद्धचक्रकथा**—नरसेन। अनु. १६६ क। पत्र सं. ४२। ले. का. सं. १५६४। सरस्वती भवन, झालरापाटन।

१०८०. **सिद्धपूजाजयमाल**—विश्वसेन। गुटका सं. ६३। ६.२५ × ५.५। ११ कडवक। श्री दि. जैन सरस्वती भण्डार, नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

१०८१. **सिद्धान्तार्थसार**—पं. रइधू। अनु. ५७२। वे. सं. ७६६। पत्र सं. ६६। १३ × ८। ले. का. सं. १६५६। पूर्ण। बाबा दुलीचन्द जी का शास्त्र-भण्डार, दि. जैन तेरापंथी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

१०८२. **सिद्धान्तार्थसार**—पं. रइधू। अनु. ५७३। वे. सं. ८००। पत्र सं. ६६। ले. का. सं. १८६४। दि. जैन मन्दिर, छोटे दीवान जी का, जयपुर।

१०८३. **सिरिपालचरिउ**—पं. नरसेन। अनु. २४३६। वे. सं. ४१०। पत्र सं. ४७। ६.५ × ४.५। ले. का. सं. १६१२, कार्तिक शु. ६। पूर्ण। पार्श्वनाथ दि. जैन शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०८४. **सिरिपालचरिउ**—नरदेव। अनु. ८०१। पूर्ण। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

१०८५. **सीयलणाहकहा**—×। पत्र सं. २। १०.७५ × ४.२५। दि. जैन मन्दिर, धियामण्डी, मथुरा।

१०८६. **सुकुमालचरित्र**—पं. श्रीधर। अनु. १२३०। वे. सं. १२४७। पत्र सं. ४५। ले. का. सं. १५४६, ज्येष्ठ शु. ६। १०.५ × ४.५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०८७. **सुकुमालचरित्र**—पं. श्रीधर। अनु. २४४३। वे. सं. २८८। पत्र सं. ६५। १० × ४.७५। अपूर्ण। जोबनेर दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

१०८८. **सुकुमालचरित्र**—पं. श्रीधर। पत्र सं. १-२१। ११ × ५। अपूर्ण। प्रति प्राचीन है। दि. जैन तेरापंथी मन्दिर, दौसा।

१०८९. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. १२०२। पत्र सं. ३६। ११.२५ × ५। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

१०९०. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. १२०३। पत्र सं. ४८। ११.२५ × ५.५। लिपि सं. १६८७, मार्गशीर्ष कृ. १ रविवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

१०६१. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. १२०५। पत्र सं. २६। ११.२५ × ४.२५। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१०६२. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। गुणभद्र के शिष्य। पत्र सं. ३७। ६ × ५। ले. का. सं. १६२२। पूर्ण। बड़े धड़े का दि. जैन मन्दिर, अजमेर।

१०६३. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. १२३१। पत्र सं. ४५। २-३० पत्र नहीं हैं। अपूर्ण। वे. सं. १२४८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१०६४. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. १२०४। पत्र सं. ४०। १०.७५ × ४.७५। ले. का. सं. १६४३, माघ शु. ५, मंगलवार। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१०६५. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. ४७० ब। पत्र सं. ४१। १०.२५ × ४.२५। ले. का. सं. १६७८, चैत्र शु. ३, शुक्रवार। सरस्वती भवन, नागोर।

१०६६. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. ४६४ ब। पत्र सं. ३३। ६.५ × ४.५। ले. का. सं. १५४१, माघ शु. १२, गुरुवार। सरस्वती भवन, नागोर।

१०६७. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अनु. ५०६ ब। पत्र सं. ४०। १०.५ × ४। ले. का. सं. १५८१, माघ कृ. ७, सोमवार। सरस्वती भवन, नागौर।

१०६८. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। पत्र सं. ३६। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, दबलाना।

१०६९. **सुकुमालचरित्र**—मुनि पूर्णभद्र। अ. ५। ६ परिच्छेद। पत्र सं. ४३। १० × ४। ले. का. सं. १६३२, श्रावण कृष्ण, १५। दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

१०००. **सुकौशलचरित**—पं. रइधू। अनु. ४२१२, ४६२१। दोनों पूर्ण प्रतियाँ हैं। पत्र सं. २३। ले. का. सं. १६५३। अपूर्ण। सरस्वती भवन, ब्यावर।

११०१. **सुकौशलचरित**—पं. रइधू। अ ४। पत्र सं. ३५। १० × ५। र. का. सं. १४६६। ले. का. सं. १६३३, ज्येष्ठ कृ. १, शनिवार। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

११०२. **सुखसम्पत्तिविधानकथा**—मुनि विमलकीर्ति। अनु. २६९८। वे. सं. ११०। १२ × ४.५। ले. का. सं. १५१६। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

११०३. **सुखसम्पत्तिविधानकथा**—पत्र सं. २। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

११०४. **सुगन्धदशमीव्रतकथा**—नयनन्दी। अनु. ५७२। वे. सं. ५८१। पत्र सं. ८। १० × ४.२५। ले. का. सं. १५२४, भाद्रपद कृ. ६, रविवार। पूर्ण।

बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

११०५. **सुगन्धदशमीव्रतकथा**—गुणभद्र मुनि। पत्र सं. ५। १०.७५ × ४.२५। जीर्ण। दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

११०६. **सुगन्धदशमीकथा**—सुशीलदेव। अनु. ४६०। पत्र सं. १३। ११.५ × ५। लिपि सं. १५२२, भाद्रपद शु. २। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

११०७. **सुदर्शनचरित्र**—नयनन्दी। अनु. १२३७। पत्र सं. ११२। वे. सं. १२५६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११०८. **सुदर्शनचरित्र**—नयनन्दी। अनु. १२३८। पत्र सं. ११५। ले. का. सं. १६७७, माघ शु. १२। वे. सं. १२५६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११०९. **सुदर्शनचरित्र**—नयनन्दी। अनु. ७४७। अपूर्ण। श्री दि. जैन मन्दिर, चन्देरी।

१११०. **सुदर्शनचरित्र**—अनु. ८२६। पत्र सं. ६१। ४ × १०। ले. सं. १५२१, चैत्र शु. ५, बुधवार। दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

११११. **सुदर्शनचरित्र**—नयनन्दी। अनु. १२३९-४०। वे. सं. १२५७-५८। पत्र सं. ८९, १००। दोनों पूर्ण प्रतियाँ हैं। ले. का. सं. १५१७। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१११२. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। पत्र सं. ८६। अपूर्ण। पत्र सं. १०८। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

१११३. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। पत्र सं. १-८९ तथा १०६। १०.५ × ४.५। दि. जैन मन्दिर दीवान जी, कामा (भरतपुर)।

१११४. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। पत्र सं. ८८। र. का. सं. ११००। ले. का. सं. १६१३। सरस्वती भवन, व्यावर।

१११५. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। अनु. १२१६। पत्र सं. ८२। १०.५ × ४.५। ले. का. १५वीं शती। पूर्ण। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१११६. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। अनु. १२१८। पत्र सं. ७१। १२ × ५। र. का. सं. ११००। ले. का. सं. १५६६, माघ शु. ५, बुधवार। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१११७. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। अनु. १२३४। पत्र सं. ६५। ले. का. सं. १५६७, माघ कृ. २। वे. सं. १२५२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१११८. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। अनु. १२३५। वे. सं. १२५३। पत्र सं. ६६। ले. का. सं. १६३१, कार्तिक शु. ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१११९. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। अनु.१२१६। पत्र सं. ८६। ११ × ४.७५। लिपि सं. १५२२, माघ शु. ११, सोमवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

११२०. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। अनु. १२१७। पत्र सं. ८७। ११ × ५। लिपि सं. १६५२, वैशाख कृ. १३, शुक्रवार। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

११२१. **सुदंसणचरिउ**—नयनन्दी। अनु. १२३६। बे. सं. १२५४। पत्र सं. १०६। ले. का. सं. १६३२, चैत्र शु. १४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११२२. **सुदर्शनचरित्र**—माणिक्यनन्दि। अनु. १३० ब। पत्र सं. ७१। ११ × ४.५। ले. का. सं. १५७४, पौष कृ. १३, गुरुवार। सरस्वती भवन, नागोर।

११२३. **सुदर्शनचरित्र**—माणिक्यनन्दि। अनु. २२५ ब। पत्र सं. ८२। १०.२५ × ४.७५। ले. का. सं. १५६८, पौष शु. ५, गुरुवार। सरस्वती भवन, नागोर।

११२४. **सुदर्शनपंजिका**—अज्ञात। अनु. ५७० ब। पत्र सं. १०। १०.७५ × ४.७५। ले. का. सं. १५७०, ज्येष्ठ शु. ३, बुधवार। जीर्ण व पूर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

११२५. **सुदर्शनचउपई**—वस्तिग। अनु. २८४१।३४। ले. का. सं. १४७३। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

११२६. **सुदर्शन पाघडी**—×। वे. सं. २५०। पत्र सं. ७-९। कडवक ६। गुटका सं. १२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११२७. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। गुटका सं. २२। पत्र सं. १४४-१५०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११२८. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। गुटका सं. ४८। पत्र सं. २१४-२१८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११२९. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। पत्र सं. १७७-८२। दि. जैन अग्रवाल, मन्दिर, नैणवाँ (बूँदी)।

११३०. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। पत्र सं. ५३-५८। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

११३१. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। पत्र सं. १०२-१०६। निजी संग्रह में।

११३२. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। पत्र सं. १७। ७८ दोहे। ८ × ३.७५। ले. का. सं. १७५१। पूर्ण। निजी संग्रह में।

११३३. **सुप्पयदोह**—सुप्रभाचार्य। अनु. २४१। बे. सं. २४४। गुटका सं. ६। पत्र सं. २४-२८। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११३४. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। अ १५१। पत्र सं. २३। १०.५ × ५। ले. का. सं. १८३५, श्रावण शु. ४, सोमवार। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

११३५. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। पत्र सं. १६। १०.५ × ४.५। ले. का. सं.

१७६५, चैत्र कृ. १४, मंगलवार। दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

११३६. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। पत्र सं. २३। १०.५ × ४.२५। ले. का. सं. १७६५, आषाढ़ कृ. ११, शुक्रवार। दि. जैन बड़ा मन्दिर, आगरा।

११३७. **सुप्पयदोहा**—सुप्रभाचार्य। पत्र सं. ५३-५८। गुटका सं. १०३। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

११३८. **सुभद्राचरित**—अभयगणि। अनु. २४८ (५)। पत्र सं. १०१-१०६। पाटन-भण्डार, पाटन।

११३९. **सुलसाचरित्र**—देवचन्द्रसूरि। अनु. ३०७ (२)। पत्र सं. ४३ (२)। गाथा १७। पाटन-भण्डार, पाटन।

११४०. **सुलोयणाचरिउ**—देवसेनगणि। अनु. ११४। पत्र सं. २-१६८। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

११४१. **सुलोयणाचरिउ**—देवसेनगणि। अनु. ३०८ ब। पत्र सं. २०१। ११ × ४.५। ले. का. सं. १५७६, मार्गशीर्ष शु. २, सोमवार। पूर्ण व जीर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

११४२. **सुलोयणाचरिउ**—देवसेनगणि। अनु. १२४३। बे. सं. १२६८। पत्र सं. ३७८। ले. का. सं. १५८७, आषाढ़ शु. २। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११४३. **सुलोयणाचरिउ**—देवसेनगणि। ले. का. सं. १५६०। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११४४. **सुलोयणाचरिउ**—देवसेनगणि। अनु. ४२। पत्र सं. २२३। १२.२५ × ६। ले. का. सं. १५६८, मार्गशीर्ष कृ. २। अपूर्ण। पत्र सं. २, ६, ८, ६० से १३४ तक नहीं है। दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

११४५. **सुलोयणाचरिउ**—देवसेनगणि। अनु. १२२३। पत्र सं. २३८। १२.५ × ५। लिपि सं. १५७६, चैत्र कृ. २, सोमवार। भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

११४६. **सोलहकारणपूजा**—×। अनु. २४४। पत्र सं. १-१६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११४७. **सूक्तिश्रेणी (सूक्तावली)**—अज्ञात। अनु. ५६६। संस्कृत-अपभ्रंश। पत्र सं. ११४। आकार २५.४ × ११.१। ले. का. सं. १६४६। राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान, चित्तोड़गढ़।

११४८. **सेणियचरिय**—जयमित्रहल। ११ परिच्छेद। ले. का. सं. १७६६, श्रावण कृ. ५, भृगुवार। पूर्ण। भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना।

११४९. **सोलहकारणजयमाल सटिप्पण**—रइधू। गुटका सं. ७। दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

११५०. **सोऽहं**—×। अनु. ६१४०। पत्र सं. ९। श्री पार्श्वनाथ दि. जैन मन्दिर, ईडर (गुजरात)।

११५१. **सोलहकारणजयमाल**—रइधू। पत्र सं. ७। आकार १३ × ६। सटिप्पण। पूर्ण। दि. जैन बीसपन्थी मन्दिर, दौसा।

११५२. **सोलहकारणजयमाल**—रइधू। अनु. २३७। वे. सं. ७०। पत्र सं. १४। ११.२५ × ५। ले. का. सं. १८३५, सावन सुदी ५। पूर्ण। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

११५३. **सोलहकारण पूजा**—अनु. २४४। पत्र सं. १-१६। पूर्ण। गुटका सं. ६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जैन साहित्य शोध-संस्थान, जयपुर।

११५४. **सोलहकारणजयमाल**—रइधू। अनु. ५४८। पत्र सं. ६। लिपिकाल वि. सं. १७८४। श्री सिद्धकूट चैत्यालय, सरस्वती भण्डार, अजमेर।

११५५. **सोलहकारणजयमाल**—×। पत्र सं. १२६-१२८। पूर्ण। श्री दि. जैन तेरापन्थी मन्दिर, सरस्वती भण्डार, मन्दसौर।

११५६. **सोलहकारणपूजा**—अनुक्रमांक ५७२५। गुटका सं. २। पत्र सं. ११५-१२२। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

११५७. **सोऽहं**—रइधू। पत्र सं. १६७। गुटका सं. १६६। ६.२५ × ६। श्री दि. जैन शास्त्र भण्डार, ईडर।

११५८. **स्थूलभद्रफागु**—देपाल कवि। अनु. २८४१।३३। ले. का. सं. १४७३। ला. द. शोध-संस्थान, अहमदाबाद।

[ह]

११५९. **हणुवंताणुवेक्खा**—×। पत्र सं. १०६-११८। निजी संग्रह में।

११६०. **हनुमतुचरित्र**—×। अनु. १२३२। पत्र सं. १८-२६। १०.२५ × ५। अपूर्ण। श्री दि. जैन भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागौर।

११६१. **हरिवंशपुराण**—महाकवि धवल (सुपुत्र सूर)। अनु. ४१। पत्र सं. ४६६। १२.२५ × ६.२५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

११६२. **हरिवंशपुराण**—महाकवि धवल। अनुक्रमांक १०४५। वे. सं. २२३०। पत्र सं. ४७५। १२ × ५.५। ले. का. सं. १५७६, कार्तिक शु. ५। पूर्ण। तेरापन्थी दि. जैन बड़ा मन्दिर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११६३. **हरिवंशपुराण**—महाकवि धवल। अनुक्रमांक ८६०। पत्र सं. २१६-३३६। १२ × ४.५। अपूर्ण एवं जीर्ण। वे. सं. १२५०। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

११६४. **हरिवंशपुराण**—महाकवि धवल। अनुक्रमांक १६८३। वे. सं. १६६६। पत्र सं. ५०३-५२३। १० × ४.५। अपूर्ण। दि. जैन मन्दिर पाटोदी

शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११६५. **हरिवंशपुराण**—पुष्पदन्त। ले. का. सं. १४४१। अनु. बी (v) ११३५, भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना।

११६६. **हरिवंशपुराण**—पुष्पदन्त। अनु. ६४०। टीका श्रुतकीर्ति। श्री दि.जैन उदासीन आश्रम, इन्दौर।

११६७. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनु. अ २ क। पत्र सं. १६७। ११ × ५। र. का. सं. १५००। ले. का. सं. १६४४, भादो सुदी ७, बुधवार। ४००० श्लोकप्रमाण। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

११६८. **हरिवंशपुराण**—(२) दूसरी प्रति। पत्र सं. १३० अ २ ख। १२ × ७.५। ले. का. सं. १६७८, बैशाख कृ. १३, बुधवार। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।

११६९. **हरिवंशपुराण**—मुनि यशःकीर्ति। अनुक्रमांक १०४६। वे. सं. २२३१। पत्र सं. १७४। ११ × ४.५। पूर्ण। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

११७०. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। दूसरी प्रति। अनुक्रमांक १०४७। वे. सं. २२३२। पत्र सं. १११। ११.५ × ५.५। ले. का. सं. १६१८, बैशाख शु. ११। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

११७१. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। तीसरी प्रति। अनुक्रमांक १०४८। वे. सं. २२२३। पत्र सं. १४३। १२ × ५। ले. का. सं. १५४०, बैशाख कृ. १५। दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

११७२. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनु. ३१०। वे. सं. १६६। पत्र सं. १५१। ११.५ × ५.५। ले. का. सं. १६१५, श्रावण शु. १३। पूर्ण। ठोलियों का दि. जैन मन्दिर-शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११७३. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनुक्रमांक १६८४। वे. सं. ६८। पत्र सं. १६६। १०.७५ × ४.५। ले. का. सं. १५७३, फाल्गुन शु. ६। पूर्ण। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

११७४. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनु. ४३५ ब। पत्र सं. १४२। ११.५ × ५। ले. का. सं. १६२७, चैत्र शु. ३। दि. जैन सरस्वती भवन, नागोर।

११७५. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनु. १८६१। पत्र सं. २६३। ११.२५ × ५.२५। लिपि सं. १६५२, आषाढ़ शु. ७, गुरुवार। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

११७६. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनु. ३५१६। सरस्वती भवन, ब्यावर।

११७७. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। वे. सं. २१। पत्र सं. १२६। ११ × ५। ले. का. सं. १६६१। पूर्ण। दि. जैन मन्दिर, सम्भवनाथ, उदयपुर।

११७८. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनु. ७४८। दि. जैन मारवाड़ी मन्दिर, शक्कर

बाजार, इन्दौर।

११७९. **हरिवंशपुराण**—यशःकीर्ति। अनु. ३०८६। पत्र सं. ८०। ले. का. सं. १९६२। सरस्वती भवन, ब्यावर।

११८०. **हरिवंशपुराण**—भ. यशःकीर्ति। र. का. सं. १५००। ले. का. सं. १६४४। पंचायती जैन मन्दिर, दिल्ली।

११८१. **हरिवंशपुराण**—भ. यशःकीर्ति। अनु. १५६। पत्र सं. ९८। अपूर्ण। वि. सं. १३६७। श्री दि. जैन बड़ा मन्दिर, चन्देरी।

११८२. **हरिवंशपुराण**—भ. यशःकीर्ति। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११८३. **हरिवंशपुराण**—पं. रइधू। अनु. १२६८। पत्र सं. १२९। र. का. वि. सं. १५९५। सरस्वती भवन, ब्यावर।

११८४. **हरिवंशपुराण**—पं. रइधू। अनु. ४०९। सरस्वती भवन, ब्यावर।

११८५. **हरिवंशपुराण**—पं. रइधू। जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

११८६. **हरिवंशपुराण**—पं. रइधू। अनु. २५२। पत्र सं. १३२। पूर्ण। श्री दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

११८७. **हरिवंशपुराण**—महाकवि स्वयम्भू। अनु. ३२२०। पत्र सं. ३०१। सरस्वती भवन, ब्यावर।

११८८. **हरिवंशपुराण**—महाकवि स्वयम्भू। अनु. ३४०७, ४६४०। दोनों पूर्ण प्रतियाँ हैं। सरस्वती भवन, ब्यावर।

११८९. **हरिवंशपुराण**—स्वयम्भू। अनु. ७९५। पत्र सं. २७८। लेखन वि. सं. १९९१। ऐ. प. सरस्वती भवन, ब्यावर।

११९०. **हरिवंशपुराण**—स्वयम्भू। अनु. २००। .पत्र सं. ४५०। श्री सिद्धकूट चैत्यालय सरस्वती भण्डार, अजमेर।

११९१. **हरिवंशपुराण**—महाकवि स्वयम्भू। अनुक्रमांक ५३६। पत्र सं. ४०६। १३ × ५। ले. का. सं. १५८२, फाल्गुन कृ. १३। पूर्ण। वे. सं. १२३। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

११९२. **हरिवंशपुराण**—स्वयम्भू। अनु. ११७७। ले. का. सं. १५८२। भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पूना।

११९३. **हरिवंशपुराण**—महाकवि स्वयम्भू। अनुक्रमांक १६८५। वे. सं. ४५०। पत्र सं. २०। ९ × ४.५। अपूर्ण। दि. जैन छोटे दीवान जी का मन्दिर, जयपुर।

११९४. **हरिवंशपुराण**—स्वयम्भू। पत्र सं. ७२-३८६। अपूर्ण। १२.५ × ४.७५। श्री दि. जैन मन्दिर, घियामण्डी, मथुरा।

११९५. **हरिवंशपुराण**—श्रुतकीर्ति। अनु. १३९३। पत्र सं. ४१७। ९.५ × ५। ले. का. सं. १६०७। वे. सं. १४३२। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

११६६. **हरिवंशपुराण**—श्रुतकीर्ति। र. का. सं. १५५२। जैन सिद्धान्त भवन, आरा।

११९७. **हरिवंशपुराण**—श्रुतकीर्ति। अपूर्ण ३१ सन्धियाँ। श्री मुनिसुव्रत दि. जैन मन्दिर, केकड़ी, राजस्थान।

११९८. **हरिवंशपुराण**—श्रुतकीर्ति। अनु. १२६३। दि. जैन ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन, ब्यावर।

११६६. **हरिवंशपुराण**—श्रुतकीर्ति। अनु. ११८। पत्र सं. १४६। पूर्ण। दि. जैन सरस्वती भवन, उज्जैन।

१२००. **हरिषेणचरित्र**—अज्ञात। अनु. १४०८। बे. सं. १४४७। पत्र सं. २४। १० × ४.५। ले. का. सं. १५६३। आमेर शास्त्र भण्डार, जयपुर।

१२०१. **हरिषेणचरिउ**—अज्ञात। अनुक्रमांक १२३५। वे. सं. २२४६। पत्र सं. २-२४। ६ × ४.५। अपूर्ण। तेरापन्थी दि. जैन बड़ा मन्दिर, जयपुर।

१२०२. **हरिषेणचरिउ**—अज्ञात। दूसरी प्रति। अनुक्रमांक १२३६। बे. सं. २२५०। पत्र सं. १७। ११ × ४.५। ले. का. सं. १५५१, मंगसिर कृ. ८, गुरुवार। पूर्ण। तेरापन्थी दि. जैन बड़ा मन्दिर, जयपुर।

१२०३. **हरिषेणचरिउ**—अज्ञात। अनुक्रमांक ५१० ब। पत्र सं. २२। १०.५ × ४.५। जीर्ण एवं पूर्ण। सरस्वती भवन, नागोर।

१२०४. **हिन्दोला**—ब्रह्मदीप। वे. सं. २४३। पत्र सं. ४-७। गुटका सं. ५। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

चतुर्थ अध्याय

उपलब्ध अपभ्रंश साहित्य

यद्यपि पुस्तक के तृतीय अध्याय में संकलित हस्तलिखित प्रतियों का विवरण प्रस्तुत किया गया है, किन्तु उनके अतिरिक्त अनेक ऐसी रचनाएँ मिलती हैं, जिनके सम्बन्ध में सामान्य जानकारी ही प्राप्त हो सकी है। अभी तक अपभ्रंश की छोटी-बड़ी कुल रचनाओं को मिलाकर लगभग एक सहस्र की संख्या में उपलब्ध हैं। उनमें से लगभग दो सौ रचनाएँ अज्ञात-कर्तृक हैं जो निम्नलिखित हैं—

अज्ञातकर्तृक रचानाएँ

१. अंजनासुन्दरी कथा
२. अकृत्रिमचैत्यालय जयमाल
३. अणंतवयकहा
४. अनन्त की जयमाल
५. अनुप्रेक्षा
६. अभयाविन्तरी की जयमाल
७. अर्हंकार अक्षर की पूजा
८. अष्टाह्निकपूजा
९. आदिजिनकलश
१०. आदिनाथ की आरती
११. कमलजयमाला
१२. कसायपाथडी
१३. कालावली की जयमाला
१४. कुमारपालप्रबन्ध
१५. कुसुमावली जयमाला
१६. केसीगोयमसन्धि
१७. क्षमावणी अर्घ
१८. क्षेमावली जयमाला
१९. गणधरवलयपूजा

२०. गुरुस्तुतिचाचरी
२१. गौतम चरित्रकुलक
२२. गौतमरासा
२३. चच्चरि
२४. जम्बूचरित्त
२५. जम्बूसामिसत्तयवत्थु
२६. जन्माभिषेक
२७. जिनस्तोत्र
२८. जिनरात्रिविधान कथा
२६. जिनचन्द्रसूरिफागु
३०. जिनगणधरनमस्कार
३१. जिनवल्लभसूरिगीत
३२. जोगट रास
३३. णवकार पाथडी
३४. णाणपिण्ड की पाथडी
३५. णाणपिण्डसार
३६. त्रिंशत्जिनचौबीसी
३७. थूलिभद्दरासु
३८. दंगड
३६. दशलाक्षणिक जयमाल
४०. दिघमसवरीभास
४१. दीतवारकथा
४२. दूहामाई
४३. द्वादशभावनाविचार
४४. धर्मचच्चरी
४५. धर्मोपदेश
४६. धर्मसूरिस्तुति
४७. नन्दीश्वररास
४८. नन्दीश्वर जयमाल
४६. नन्दीश्वरपूजा
५०. नन्दीश्वरभक्ति
५१. नन्दीश्वरचतुर्दिगाश्रितपूजा
५२. नवकारफलकुलक
५३. नवकाररास

५४. नवफणश्रीपार्श्वनाथनमस्कार
५५. निर्वाणपूजा आरती
५६. नीलंजसा पाथडी
५७. नेमिनाथ बोली
५८. नेमिनाथरास
५९. नेमीश्वरजयमाल
६०. नेमीश्वरनियंछण
६१. पडिवा जयमाला
६२. पश्चात्तापकुलक
६३. पात्रपरीक्षा
६४. पुष्पांजलि जयमाला
६५. पोसहरास
६६. बाहुबली पाथडी
६७. बुद्धिरसायण दोहा
६८. भरतचक्रवर्ती पाथडी
६९. भरतजयमाला
७०. भरतबाहुबली
७१. भरतबाहुबली सम्बन्ध
७२. भरतेश्वर जयमाल
७३. भरतेश्वर वैराग्य
७४. भववैराग्यशतक
७५. भावनासार
७६. भिल्लाष्टमीकथा
७७. भूमिज्ञान
७८. मनमोरा गीत
७९. महावीरचरित्र
८०. माई चउपई
८१. मालारोहण
८२. मुनिचंदस्तुति
८३. मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा
८४. यशोधर की जयमाल
८५. योगी-वाणी
८६. रत्नत्रयजयमाल
८७. राजा दशरथ-जयमाल

८८. रिसहजिणथुदि
८९. रिसहजिणजम्माहिसेय
९०. रोहिणीकहा
९१. रोहिणीरासु
९२. लक्ष्मीवल्लह
९३. लोहजयमाला
९४. वज्रस्वामीचरित्र
९५. विचारगाथा
९६. विज्जुच्चरजयमाल
९७. विज्जुच्चराणुपेहा
९८. वीरजन्माभिषेक
९९. वीरजिनपारणक
१००. वीरविज्ञप्तिका
१०१. संबोधिरसायण
१०२. संवेगमाई
१०३. सप्तऋषिपूजा
१०४. सप्ततत्त्व
१०५. समाधि
१०६. साटक
१०७. सालिभद्रमाई
१०८. सिंहसंबोधनजयमाल
१०९. सिद्धपूजाजयमाल
११०. सीतासत
१११. सीयलणाहकहा
११२. सुकोसलचरिउ
११३. सुदंसण पाथडी
११४. सुदर्शनपंजिका
११५. सूक्त श्रेणी
११६. सौभाग्यसुन्दरी कथा
११७. स्तुतिद्वात्रिंशिका
११८. स्थूलभद्र
११९. शकुनविचार
१२०. शान्तिजिनस्तुति
१२१. शान्तिनाथबोली

१२२. शान्तिनाथरास
१२३. शिवकुमारजयमाल
१२४. श्रावकविधिप्रकरण
१२५. हरिसेणचरिउ

इन रचनाओं के अतिरिक्त भी कुछ अन्य अज्ञातकर्तृक रचनाएँ उपलब्ध हैं। ज्ञातकर्तृक रचनाएँ इस प्रकार उपलब्ध हैं—

१. अनन्तकीर्ति—पुप्फंजलिकहा।
२. अब्दुलरहमान—सन्देशरासक (मुद्रित)।
३. अभयगणि—सुभद्राचरित (रचनाकाल वि. सं. ११६१)।
४. अभयदेवसूरि—महावीरचरित्र। १२७ (२), पाटन भण्डार, पाटन।
५. अभयतिलकगणि—महावीर रास (र. का. १२६० ई.), पद सं. २१।
६. अम्बदेवसूरि—समरारास (र. का. सं. १३०१), (मुद्रित)।
७. अमरकीर्ति—णेमिणाहचरिउ, सोनागिरीय भट्टारक-भण्डार (र. का. सं. १२४४), छक्कमोवएस, १४ सन्धि (र. का. सं. १२४७), पुरन्दरविहाणकहा (र. का. सं. १२७५), (महावीरचरिउ, जसहरचरिउ, झाणपईव—अनुपलब्ध) इष्टोपदेश (नागौर भण्डार)।
८. अमर मुनि—छन्दोरत्नावली, पत्र सं. १८, हेमचन्द्र जैन ज्ञान मन्दिर, पाटन, क्र. सं. ६७४६।
९. अर्जुन—आदित्यबारकथा (पंचायती मन्दिर, दिल्ली)।
१०. अल्हू कवि—अणुवेक्खा।
११. असवाल—पासणाहचरिउ (र. का. सं. १४७६)।
१२. आजड—सरस्वतीकण्ठाभरणवृत्ति।
१३. आसिग—जीवदयारास (र. क. सं. १२५७), पद सं. ५३, चन्दनबालारास (र. का. तेरहवीं शताब्दी), पद सं. ३५।
१४. ईसर—अनुप्रेक्षा।
१५. ईश्वरगणि—शीलसन्धि।
१६. उदयचन्द्र—सुयंधदहमीकहा (मुद्रित भारतीय ज्ञानपीठ)।
१७. उदयकीर्ति मुनि—कमलजयमाला, भानपुरा दि. जैन मन्दिर-शास्त्र भण्डार।
१८. ऋषभदास—रत्नत्रयपूजा।
१९. कनककीर्ति—नन्दीश्वरजयमाला, जिनालयमनन जयमाल, नन्दीश्वरद्वीपपूजा, चउवीसी जयमाल, ग्यारह प्रतिमा वर्णन (१२ पत्र), (निजी संग्रह में)।
२०. कनकामर—करकण्डचरिउ (११वीं शताब्दी), भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित।
२१. कुमुदचन्द्र मुनि—नेमिनाथरास।

२२. गंगादास—मेरु अष्टक जयमाला, अंजनगाँव (अमरावती)।

२३. गुणभद्र भट्टारक—अणंतवयकहा, सवणवारसिविहाणकहा, पक्खवयकहा, णह (आयास) पंचमीकहा, चंदायणवयकहा, चंदणछट्ठीकहा, णरयउतारीदुद्धारसकहा, णिद्दुहसत्तमीकहा, मउडसत्तमीकहा, पुप्फंजलिवयकहा, रोहिणीविहाणकहा, रयणत्तयवयकहा, दहलक्खणवयकहा, लद्धिविहाणकहा, सोलहकारणवयकहा, सुयंधदहमीकहा, अक्खयविहाणकहा, ३ कडवक (तेरापन्थी दि. जैन मन्दिर, जयपुर)।

२४. चन्द्रसेन कवि—सिद्धचक्र जयमाल १० पद्य (जैनधर्म का प्राचीन इतिहास, भा. २, पृ. ५०२)।

२५. चारितसेन मुनि—समाधिरास, आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२६. छत्रसेन—रुक्मिणीविधानकथा।

२७. पं. जगसी—अनुप्रेक्षा, आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

२८. जयकीर्ति—पार्श्वनाथभवान्तर।

२९. जयदेवमुनि—भावनासन्धि (र. का. १४वीं शताब्दी)।

३०. जयमित्रहल (हरिचन्द)—श्रीपालचरित्र, वर्द्धमानचरित्र, मल्लिनाथकाव्य, श्रेणिकचरित्र ११ सन्धि, आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर

३१. जयशेखरसूरिशिष्य—शीलसन्धि, उपधानसन्धि (र. का. पन्द्रहवीं शताब्दी)।

३२. जयसागर—वज्रस्वामीरास।

३३. जल्हिग—अनुप्रेक्षारास, दि. जैन मन्दिर, बड़ोत, (मेरठ)।

३४. जिनदत्तसूरि—उपदेशरसायनरास (वि. सं. ११३२-१२१०), चर्चरी, कालस्वरूपकुलक।

३५. जिनधर्मसूरि—बारह नावउं (१३वीं शताब्दी)।

३६. जिनपद्मसूरि—सिरिथूलभद्रफागु (वि. सं. १३६० के लगभग)।

३७. जिनप्रभसूरि—नर्मदासुन्दरीसन्धि (१२७२ ई.), अनाथिसन्धि (१२५५ ई.), चउरंगसन्धि (५ कडवक) (१३०० ई.), मयणरेहासन्धि (१२४१ ई.), जीवानुशास्तिसन्धि (१२५५ ई.)।

३८. जिनेश्वरसूरि—भावनाकुलक, विवाहलउ (पाटन-भण्डार), महावीर जन्माभिषेक।

३९. पं. जोगदेव—द्वादशानुप्रेक्षा २० कडवक, मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा, लश्करी दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

४०. ज्ञानभूषण गुरु—पोसहरास, ११५ पद, षट्कर्मरास ५२ गाथा।

४१. ठाकुरसी—संतिणाहचरिउ (र. का. सं. १६५२), ५ सन्धि, (र. का. सं. १६५०), मेघमालावयकहा (र. का. सं. १५८०), चिन्तामणिजयमाल ११ पद्य (प्रकाशित, अनेकान्त वर्ष १६, किरण ४, पृ. १७०-१७१)।

४२. तिल्हण—कुट्टणिरासय।
४३. तेजपाल—सम्भवजिणणाहचरिउ, ६ सन्धि, वरांगचरिउ, ४ सन्धि (र. का. सं. १५०७), पासणाहपुराणु र. का. सं. १५१५)।
४४. पं. दर्शनविजय—विजयतिलकसूरिरास (वि. सं. १६७६), (मुद्रित)।
४५. दामोदर कवि—सिरिपालचरिउ, ४ सन्धि, णेमिणाहचरिउ (र. का. सं. १२८७), चन्दप्पहचरिउ (कोटड़ियों का दि. जैन मन्दिर, डूँगरपुर)।
४६. पं. दामोदर—उक्तिव्यक्तिप्रकरण, सिंघी जैन ग्रन्थमाला से मुद्रित।
४७. देपाल कवि—आर्द्रकुमारविवाहलु, थूलभद्रफागु।
४८. देवचन्द—पासणाहचरिउ।
४९. देवचन्द्रसूरि—सुलसाचरित्र (र. का. सं. ११६१), सुभद्राचरित (सं. ११६१), संतिणाहचरिउ (सं. ११६०), स्थूलभद्रसन्धि।
५०. देवदत्त—जम्बूसामिचरिउ, सरस्वती भवन, नागौर। वरांगचरित, शान्तिनाथपुराण, अम्बादेवीरास (अनुपलब्ध)।
५१. देवनन्दी—रोहिणीविहाणकहा।
५२. देवसूरि—उपदेशकुलक।
५३. देवसेन—आराहणासार, सरस्वती भवन, नागौर।
५४. देवसेनगणि—सुलोयणाचरिउ, २८ सन्धि (पन्द्रहवीं शताब्दी)।
५५. देल्ह कवि—चउवीसी (र. का. सं. १३७१), पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
५६. देल्हण—गयसुकुमालरास (र. का. १२५० ई.), पद सं. १८।
५७. धनपाल (श्वेताम्बर)—सत्यपुरीयमण्डनमहावीरोत्साह (ग्यारहवीं शताब्दी), पद्य सं. १५।
५८. धनपाल—भविसयत्तकहा (मुद्रित)।
५९. धनपाल (पालनपुर, गुर्जरदेशीय)—बाहुबलिचरिउ, १८ सन्धि, (र. का. सं. १४५४)।
६०. धर्मसूरि—जम्बूसामिरास (र. का. सं. १२६६), प्राचीन गुर्जरकाव्यसंग्रह में प्रकाशित।
६१. धवल कवि—हरिवंसपुराणु, १२२ सन्धि।
६२. धाहिल—पउमसिरिचरिउ (ग्यारहवीं शताब्दी के लगभग) (मुद्रित)।
६३. नयनन्दी—सुदंसणचरिउ (मुद्रित) सयलविहिविहाणकाव्य।
६४. नरसेन—सिद्धचक्ककहा (सिरिपालचरिउ), जिणरत्तिविहाणकहा, वड्ढमाणकहा।
६५. नल्लु-पण्डित—गुण (प्रकाशित, अनेकान्त, वर्ष १०,किरण ११, पृ. ३६२)।
६६. नेमचन्द—रविवउकहा, अणंतवयकहा।

६७. नेमिदत्त—जिनमाला, भानपुरा शास्त्र-भण्डार।
६८. पउम—सालिभद्दकक्क, पाटन-भण्डार।
६६. पद्मकीर्ति—पासणाहचरिउ, १८ सन्धि (र. का. सं. ६६६)।
७०. परमेसर कवि—छहकालचक्कसमासु (जैन सन्देश शोधांक १४२ में प्रकाशित, अगस्त, १६६२)।
७१. पाल्हण—आबूरास (र. का. १२३३ ई.), पद सं. ५१।
७२. पाहिल—मणुयसन्धि, मनकरहारास (आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर)।
७३. पुष्पदन्त महाकवि—महापुराण, णायकुमारचरिउ, जसहरचरिउ (दसवीं शताब्दी), उत्तरपुराण (३८-१०२ सन्धि) अप्रकाशित, ऋषभनाथ चरित्र अप्रकाशित।
७४. पूर्णभद्र मुनि—सुकुमालसामिचरिउ, ६ सन्धि।
७५. पोमा कवि—शालिभद्रफागु।
७६. प्रज्ञातिलकसूरि—कच्छूलीरास (र. का. सं. १३६३)।
७७. बालचन्द्र मुनि—णिरदुहसत्तमीकहा, रविवउकहा, णरयउतारीदुद्धारसकहा।
७८. बूचिराज (वल्ह)—मयणजुज्झ (र. का. सं. १५८६), सन्तोषतिलकजयमाल, नेमीश्वर का बारहमासा।
७६. ब्र. उंदू—वेतिरासा।
८०. ब्र. जिनदास—होलिकाचरित, पत्र सं. ४, झालरापाटन-भण्डार।
८१. ब्रह्मदामोदर—सिरिपालचरिउ।
८२. ब्रह्मनेमिदत्त—मालारोहिणी।
८३. ब्रह्ममुनि—दशधर्म।
८४. भगवतीदास—मिगांकलेहाचरिउ, ४ सन्धि, (र. का. सं. १७००), मउडसत्तमीकहा, सुयंधदहमीकहा।
८५. कवि भाऊ—दशलक्षण जयमाल (नागोर भण्डार)।
८६. भाव शर्मा—दशलक्षण जयमाल।
८७. कवि मधु—रविवासरकथा (कामा दि. जैन मन्दिर)।
८८. महणसिंह—त्रिंशत्जिनचउवीसी।
८६. महयंद (महीचन्द्र)—दोहापाहुड (बारक्खरी ३३५ दोहे), आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
६०. भ. महीचन्द्र—गुरुपादुका जयमाला, सरस्वती जयमाला।
६१. महाणंद—आणंदा (४३ दोहे), आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
६२. महिन्दु (महेन्द्र)—शान्तिनाथपुराण (र. का. सं. १५८७)।
६३. माघनन्दि—मालारोहण, श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
६४. महीराज—बुद्धिरसायण, पत्र सं. ३०, सरस्वती भवन, नागोर।

९५. महेन्द्रसूरिशिष्य—जम्बूस्वामीचरिय।
९६. महेश्वरसूरि—संजममंजरी (तेरहवीं शताब्दी के लगभग)।
९७. माणिक्कचन्द—सत्तवसणवज्जणकहा (र. का. सं. १६३४)।
९८. माणिक्यनन्दि—सुदर्शनचरित्र, पत्र सं. ९२, सरस्वती भवन, नागोर।
९९. माणिक्यराज कवि—अमरेसनचरिउ, ७ सन्धि, (र. का. सं. १५७६), णायकुमारचरिउ (र. का. सं. १५७९)।
१००. माणिक्यसुन्दर—नेमिनाथकुमारराजीमतीचरित्रफागु।
१०१. मुंज (परमार राजा)—मुक्तक छन्द।
१०२. मुनि कुमुदचन्द—नेमिनाथरास, (१४वीं शताब्दी के लगभग)।
१०३. मुनि चन्द्र—जिनपंचकल्याणकस्तोत्र।
१०४. मुनि चारित्तसेन—समाधिरास।
१०५. मेरुचन्द्र—सोलहकारण जयमाला।
१०६. मेरुनन्दन—श्रावकविधिरास।
१०७. यशःकीर्ति—चंदप्पचरिउ, ११ सन्धि (तेरहवीं शताब्दी के लगभग)।
१०८. भ. यशःकीर्ति—पाण्डवपुराण (र. का. सं. १४९७), ३४ सन्धि, हरिवंशपुराण, १३ सन्धि, (र. का. सं. १५००), जिनरात्रिविधानकथा, रविव्रतकथा, दशलक्षणधर्मकथा, सरस्वती भवन, बम्बई।
१०९. योगदेव—मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा (२० पद्य)।
११०. योगीन्द्रदेव—परमप्पयासु (अध्यात्मप्रकाश), जोयसार (योगसार)।
१११. पं रइधू—पउमचरिउ, ११ सन्धि, हरिवंशपुराण १४ सन्धि, आदिपुराण (अनु.), पासणाहपुराण, ७ सन्धि, बलहद्दपुराण, ११ सन्धि, सम्मत्तगुणनिधान (र. का. सं. १४९२), ४ सन्धि, मेहेसरचरिउ, १३ सन्धि, जीवंधरचरिउ, १३ सन्धि, जसहरचरिउ, ४ सन्धि, पुण्णासवकहाकोसु, १३ सन्धि, धण्णकुमारचरिउ, ४ सन्धि, सुकोसलचरिउ, ४ सन्धि, सम्मइजिनचरिउ, १० सन्धि, सिद्धचक्कवयविहि (सिरिपालकहा) १० सन्धि, वित्तसार, सिद्धान्तार्थसार, अप्पसंबोहकव्व ३ सन्धि, अणथमीकहा १६ पद्य, सम्मत्तकउमुदी, दशलक्षणजयमाला, षोडशकारणजयमाला ७ पत्र, सम्यक्त्वभावना, सोहंथुदि, श्रावकव्रतसार, अनुप्रेक्षा (आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर), उपदेशरत्नमाला (अनुपलब्ध) सांतिणाहचरिउ, णेमिणाहचरिउ, १४ सन्धि, सावयचरिउ, ६ सन्धि, करकंडुचरिउ, सुदंसणचरिउ, पज्जुण्णचरिउ, भविसयत्तचरिउ।
११२. रत्नकीर्ति—पुष्पांजलिव्रत कथा।
११३. रत्नप्रभगणि—अंतरंग सन्धि (१३०० ई.)।
११४. रत्नशेखरसूरि—शीलसन्धि, केसीगीतमसन्धि।

११५. रत्नप्रभसूरि—उपदेशमाला (र. का. ११८२ ई.) के अन्तर्गत—
(१) ऋषभपारणकसन्धि, (२) वीरजिणपारणय, (३) गजसुकुमालसन्धि, (४) शालिभद्रसन्धि, गाथा ६४, (५) अवन्तिसुकुमालसन्धि।

११६. रत्नसिंहसूरिशिष्य—उवएसमालकहाणछप्पय।

११७. रल्ह कवि—जिनदत्तचउपई (र. का. सं. १३५३)।

११८. राजतिलक—सालिभद्ररासु (ले. का. सं. १३८१), पद सं. ४२।

११६. राजशेखरसूरि—नेमिनाथफागु (र. का. सं. १४०५ के लगभग)।

१२०. रामसिंह मुनि—दोहापाहुड (दसवीं शताब्दी के लगभग), (मुद्रित)।

१२१. भ. ललितकीर्ति—जिनरात्रिकथा, ज्येष्ठजिनवरकथा।

१२२. लक्ष्मणदेव (गोनन्दवासी)—णेमिणाहचरिउ, ४ सन्धि (१४वीं शताब्दी के लगभग)।

१२३. भ. लक्ष्मीचन्द—द्वादशानुप्रेक्षा, सावयधम्मदोहा (नवकारश्रावकाचार) (१६वीं शताब्दी के लगभग) (मुद्रित)।

१२४. लक्ष्मीतिलक गणि—शान्तिनाथदेवरास (र. का. तेरहवीं शताब्दी), पद सं. ६०।

१२५. लाखू (लक्ष्मण)—जिणदत्तकहा, ११ सन्धि (र. का. सं. १२७५), अणुवयरयणपईव ८ सन्धि, (वि. सं. १३१३), चन्दणछट्ठीकहा।

१२६. लावण्यसमय—नेमिजिनवरप्रबन्ध (र. का. सं. १५४६), आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१२७. वज्रसेनसूरि—भरतेश्वर बाहुबलिघोररास (र. का. सं. ११६६ के लगभग), कडवक सं. ५।

१२८. वरदत्त—वज्रस्वामीचरित्र, २ सन्धि, (र. का. सं. १३१६)।

१२६. बर्द्धमानसूरि—वीरजिनिन्दपारणक।

१३०. बल्हव—नेमीश्वरगीत, दि. जैन शास्त्र-भण्डार, श्री महावीर जी।

१३१. वस्तिग—सुदर्शनचउपई, चतुर्गतिचतुष्पदिका।

१३२. विजयसिंह—अजितनाथपुराण, १० सन्धि (र. का. सं. १५०५)।

१३३. विजयसेनसूरि—रेवंतगिरिरास (र. का. सं. १२८७), (मुद्रित)।

१३४. विद्यापति—कीर्तिलता (पन्द्रहवीं शताब्दी), (मुद्रित)।

१३५. विनयचन्द मुनि—चूनडीरास, निज्झरपंचमीविहाणकहा, पंच कल्याणकरास, दुद्धारसकहा।

१३६. विनयचन्द्र—आनन्दश्रावकसन्धि।

१३७. विनयचन्द्रसूरि—नेमिनाथचउपई (र. का. सं. १२५७), मल्लिनाथकाव्य, पार्श्वनाथचरित, आनन्दश्रावक सन्धि (१३०० ई.)।

१३८. विनयप्रभ उपाध्याय—गौतमस्वामीरास (र. का. सं. १४१२), पद सं. ६३।

१३९. विबुध श्रीधर—भविसयत्तकहा (र. का. सं. १२३०)।
१४०. विमलकीर्ति—सोखवइविधान कथा, सुगन्धदशमी कथा।
१४१. विश्वसेन—सिद्धचक्रपूजा-जयमाला।
१४२. वीर कवि—जम्बूस्वामी चरित्र (वि. सं. १०७६)।
१४३. वीर गणि—लघु अजितशान्ति (पाटन-भण्डार)।
१४४. शान्तिभद्र—चतुर्विंशतिजिननमस्कार।
१४५. शान्तिसमुद्र—नवफणपार्श्वनमस्कार।
१४६. शालिभद्रसूरि—भरतेश्वरबाहुबलिरास (र. का. सं. १२४१), (मुद्रित), बुद्धिरास (मुद्रित)।
१४७. शालिभद्रसूरि—पंचपंडवचरितरास (र. का. सं. १४१०), (मुद्रित)।
१४८. शुभकीर्ति—संतिणाहचरिउ, १९ सन्धि, सरस्वती भवन, नागौर।
१४९. श्रीचन्द—कहाकोसु ५३ सन्धि, रयणकरंडसावयायार, २१ सन्धि (र. का. सं. ११२३)।
१५०. श्रीचन्द (श्रुतसागर के शिष्य)—णिव्वेयणाममाला, ६० छन्द।
१५१. श्रीचन्द—चन्दप्पहचरिउ (र. का. सं. १७६३)।
१५२. श्रीधर—पासपुराण १२ सन्धि (र. का. सं. ११८९), वड्ढमाणचरिउ (र. का. सं. ११९०), सुकुमालचरिउ, ६ सन्धि (र. का. सं. १२०८), चन्दप्पहचरिउ (अनुपलब्ध)।
१५३. श्रुतकीर्ति—हरिवंशपुराण (र. का. सं. १५५२), परमेष्ठीप्रकाशसार, ७ सन्धि (र. का. सं. १५५३), धर्मपरीक्षा (सं. १५५३), योगसार (सं. १५५२)।
१५४. श्रुतकीर्ति (आ. त्रिभुनकीर्ति शिष्य)—अनन्तविधान कथा, दशलक्षण कथा।
१५५. श्रुतमुनि—भावसंग्रह, पत्र सं. ६, आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
१५६. मुनि सकलकीर्ति—पंचमेरु जयमाला।
१५७. सहजज्ञान—जिनचन्द्रसूरिविवाहलु।
१५८. सहणपाल—त्रिंशत्चतुर्विंशतितीर्थंकरपूजाजयमाल (प्रकाशित)।
१५९. सागरदत्तसूरि—पार्श्वपुराण, जम्बूसामिचरिउ, ११, सन्धि (र. का. सं. १०७६)।
१६०. पं. साधारण— कोकिलापंचमीकथा, मुकुटसत्तमीकथा, दुधारसीकथा, रविवासरकथा, तिकालचउवीसी, पुष्पांजलिकथा, निर्दुःखसत्तमीकथा, निर्झरपंचमीकथा, अनुप्रेक्षा।
१६१. साधारण सिद्धसेन—विलासवईकहा, ११ सन्धि (र. का. सं. ११२३)।
१६२. साधुसुन्दरगणि—उक्तिरत्नकार (मुद्रित)।
१६३. पं. साहण—मुनीश्वर पाथड़ी, जय जय स्वामी पाथड़ी, चन्द्रेश्वर वैराग्य पाथड़ी, सुदर्शन पाथड़ी। अनु. ३१५६। गुटका सं. ३०६। पत्र सं. ६८।

६ × ४.४। पूर्ण। भट्टारकीय भण्डार, नागोर।

१६४. साहल—अणुव्रतरत्नप्रदीप, भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१६५. सिद्ध या सिंह कवि—पजुण्णचरिउ, १५ सन्धि, प्रबोधसार, पत्र सं. १२४, सरस्वती भवन, ब्यावर।

१६६. पं. सुरजण—आदित्यवारकथा, आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

१६७. सुप्रभाचार्य—सुप्पयदोहा (वैराग्यसार के नाम से भण्डारकर एनल्स में प्रकाशित)।

१६८. सुमतिगणि—नेमिनाथरास (तेरहवीं शताब्दी के लगभग) (मुद्रित)।

१६९. सुमतिसागर—षोडशकारणव्रतोद्यापनपूजा, प्रवचनभक्ति, बहुश्रुतभावना आचार्यभक्ति, पंचकल्याणकपूजा।

१७०. सुरेन्द्रकीर्ति—नन्दीश्वरपूजा, अंजनगाँव (अमरावती)।

१७१. सुशीलदेव—सुगन्धदशमीकथा, भट्टारकीय ग्रन्थ भण्डार, नागोर।

१७२. सोहल—आगम के अष्ट पद।

१७३. मुनि सोमकीर्ति—रयणकहाणी।

१७४. सोमतिलक—कुमारपालदेवरास।

१७५. सोमप्रभसूरि—कुमारपालप्रतिबोध (मुद्रित)।

१७६. सोमसेन—चिन्तामणिपार्श्वनाथपूजा, दिगम्बर जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

१७७. भ. सोमसेन—मेरु पूजा, अंजनगाँव (अमरावती)।

१७८. सोलण—चच्चरि (पाटन-भण्डार)।

१७९. स्वयम्भू—पउमचरिउ (मुद्रित), रिट्ठणेमिचरिउ (हरिवंशपुराण), स्वयम्भूछन्द (मुद्रित), (पंचमीकहा, स्वयम्भू व्याकरण, अनुपलब्ध)।

१८०. हरिचन्द—अणत्थमियकहा, दशलक्षणकथा, नारिकेरकथा, पुष्पांजलिकथा, पंचकल्याणक (हिन्दी जैन भक्तिकाव्य, पृ. ६१)।

१८१. हरिदेव—मयणपराजयचरिउ (भारतीय ज्ञानपीठ से मुद्रित)।

१८२. हरिश्चन्द—वड्ढमाणकव्व, ११ सन्धि, जैन सिद्धान्त भवन, आरा, मल्लिणाह कव्व।

१८३. हरिभद्रसूरि—सनत्कुमारचरित (र. का. सं. १२१६) (मुद्रित)। णेमिणाह चरिउ (मुद्रित)।

१८४. हरिषेण—धम्मपरिक्खा, ११ सन्धि (र. का. सं. १०४४) (मुद्रित)।

१८५. हरिसिंह साधु—सम्यक्त्वकौमुदी (प्रकाशित अनेकान्त, ११, २)।

१८६. हेमचन्द्रसूरि—सिद्धहेमशब्दानुशासन, देशीनाममाला (मुद्रित)।

१८७. हेमसारकवि—उपदेशसन्धि, (पन्द्रहवीं शताब्दी)।

पंचम अध्याय

अपभ्रंश के अज्ञात एवं अप्रकाशित ग्रन्थों के अंश

अभी तक अपभ्रंश-साहित्य के दो प्रशस्ति-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। उन दोनों संग्रहों के अतिरिक्त कुछ काव्य-रचनाएँ भी प्रकाशित हो चुकी हैं। उन सबको छोड़कर जो अज्ञात एवं अप्रकाशित रचनाएँ हैं उनके कतिपय अंश यहाँ पर प्रकाशित किये जा रहे हैं। इन रचनाओं में दो-चार ऐसी भी कृतियाँ हैं जिनका विवरण पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुका है, किन्तु स्वतन्त्र रूप से जिनका प्रकाशन नहीं हो सका है। ऐसी रचनाओं की संख्या लगभग सवा दो सौ है। इनके अतिरिक्त कतिपय पुरानी हिन्दी की रचनाओं के अंश भी निदर्शन रूप में प्रस्तुत हैं।

१. ३११ (२०) विचारगाथा (?) पत्र सं. १४३, १५३ (१) (२४ पद) खेतरवसी भण्डार, पाटन।

तं दुल्लहु लहिउ सुमाणुसजम्मु कहवि कहवि सिरिजिणवरधम्मु।
तत्थ वि बोहिवीउ पुण रम्मु जं निहणइ दुक्कइ वि कम्मु।।३।।

२. ३११ (२१) माईचउपई पत्र सं. १-१० (६३ पद), खेतरवसी भण्डार, पाटन।

त्रिभुवनसरणु सुमरि जगनाहु, जिम फिट्टइ भवदवदुहदाहु।
जिणि अरि आठ करम निद्दलिय, नमो जिन जिम भवि नावउ वलि।
(आंचली)
भले भणेविणु भणीयइं भलउं, तिहुयण माहि सारु एतलउं।
जिन जिनवचनु जगह आधारु, इतीउ मूकिउ अवरु अस्सारु।।

३. ३११ (२२) जिनगणधरनमस्कार, गाथा ६। पत्र सं. ११-१२। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

सुलसीय गणहर पढमजिणिंदह पंचनउई सिरिअजियजिण।
दुरुतरु सिउरि सम्भवदेवह सोलसउ जिण अभिनंदहो।।

४. ११ (१६) श्रावकविधि—जिनप्रभ। पत्र सं. १८०-१८४ (३२ दोहे)। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

वीरजिणिंदह पयकमलो पणमिउ परमपवित्तउ।
संखेवि सावगकिरिय विहिणा भणउं निरुत्तउ।।१।।

५. १२ (५) धर्माधर्मविचारकुलक—जिनप्रभसूरि। पत्र सं. ६४-६६ (१८ पद)। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

अह जग ! निसुणिज्जउ कन्नि धरिज्जउ धम्माधम्मविचार फुडु।
जिम जाणिउ जिणपहु मिल्हिउ कुप्पहु पावहु सिवसुहु अभय
फुडु।।१।।
एवं जाणेविणु मंतु लहेविणु कायव्वं लोअप्पहिउ।
आगम अणुसारिहिं जिणपहसूरिहिं धम्माधम्मविचारु किउ।।१८।।

६. १२ (६) आत्मसम्बोधनकुलक—जिनप्रभ। पत्र सं. ६६-६६ (गाथा ३३) खेतरवसी भण्डार, पाटन।

मोक्खमुक्खे मयामोहं स्वमोहं जाण सासणं।
तेसिं कयपणामोहं संबोहं अप्पणो करे।।१।।
एवं वियाणिऊणं मुंच पमायं सया वि रे जीव !
पाविहिसि जेण सम्मं जिणपहु-सेवाफलं रम्मं।।३३।।

७. १२ (८) पश्चात्तापकुलक। पत्र सं. १०१-१०२। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

सुगुरु न सेविउ जंगमतित्थु सुणिउ न आगमवयणु समत्थु।
कोवि न पाविउ परमपयत्थु हा हा ! जम्मु गयु अकयत्थु।।१।।
चउविह दाणु न दिन्नु ससत्तिहिं सीलु न पालिउ परमपयत्तिहिं।
तवु न तविउ नहु भावण भाविय पुहवि-भार करेवा आविय।।३।।

८. १२ (६) सुभाषितकुलक—जिनप्रभ। पत्र सं. १०२-१०६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

नाणु निम्मलु नाणु सम्मत्तु सिंगारु जीवहं अभउ।
सच्चवयणु तं रोलु इट्ठउ।
परदव्ववज्जणु पियलि सुद्ध सील-आभरणु लद्धउ।
आरूढउ संतोसरहिदप्पणु गुरु उवएसु।
जिणपहु सारहि जो करइ सु लहइ सिद्धिपवेसु।।

६. १६ भव्यचरित—जिनप्रभ। पत्र सं. १३७-१४२। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

भविय ! सुणउ भवजीवहं चरिउ संखेविहिं मणु नीचलु धरिउ।
तीणिहि मोहिउ एउ जियलोउ विनडिज्जंतु वि धरइ पमोउ।
कह वि न जाणइ धम्माधम्मु भक्खाभक्खु न गम्मागम्मु।।२।।
मोहइ राखिय जीव अणंत जे केइ आविय सरणु भणंत।
जिणपहु मेल्हिउ सरणु न कोइ सुगुरु भणइ सयलवि जियलोइ।।४४।।

इति श्रीजिनप्रभाचार्यविरचितं भव्यचरितं समाप्तं।

१० २३ गौतमचरित्रकुलक। पत्र सं. १५८-१५६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
मगहा गोवरगामि वरि माहणि वरु वसुभूई।
पुहइनंदणु जग-रयणु गणहर सिरिइंदभूई।।
हो गोयमगोत्तपहाणू पढमसीसु वीरजिण गुणगणरयणनिहाणू।।१।।
मज्झिम पावापुरि तउ जग्गताडि सुइ सारु।
अहमाणि समसरणि गउ पंचसय सपरिवारु।। हो गोयम २।।
तिहिं भुवणिहिं थुव्वंतु जिणु दिक्खिउ चमक्किउ चित्ति।
अहह ! अहो ! वपु अच्छरिउ भूसिउ रिद्धि विचित्ति।। हो गोयम ३।।

११. २४ ऋषभजिनजन्माभिषेक। पत्र सं. १५६-१६२। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

जह न्हवियउ तियसासुरिहिं सामिउ रिसहजिणिंदु।
तह न्हावउ विहिणा भविय ! सिव-सुह-विल्लिहि कंदु।।१४३।।

१२. २५ चाचरिस्तुति—जिनप्रभ। पत्र सं. १६२-१६५ (३६ दोहे)। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

जयउ जयउ सिरिरिसहपहु तिहुयणि पढमजिणिंदु।
सेत्तुंजमंडणु तमतिमिरनासण नवउ दिणिंदु।।
कडिहिं कछोटा नाथइ चोटा अवरहं कापडिय होइ।
देवंग वेस सिरि लम्बा केस जिणवर कापडिय जोइ।।३५।।

१३. ३११ (११) जिनागमवचन—जिनप्रभ। पत्र सं. १०६-१०८। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

वपु रि ! कंदप्प-सप्पिहिं जगु डसियउ
हा हा ! विसय-पिसायहिं गसियउ।
जइ जिण-आगममंत नहु हुंतु [न मंतु]
ता जिउ गयजिउ भवि भमडंतु।। जइ जिण.।।१।।
अरि रि ! मिच्छत्त-महाविसि धारिउ
हा हा ! मोह-रक्खसि तिजगु संहारिउ।। जइ जिण.।।२।।
मंत तहिं बाहिरु गहु विसु नासइ
अंतरु पुण जिण विणु कोइ न विणासइ।। जइ जिण.।।३।।
आगमिकसूरि जिणिपह-वयणु
जो सुणइ एहु सो लहई सुहरयणु।।४।। वयणानि समाप्तानि।

१४. ३११ (१२) जिनमहिमा—जिनप्रभ। पत्र सं. ६६-१०६ (पद १२)। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

वपु रि ! अतिसउ अरि रि ! झाणु
कटरि ! रिद्धि वपु निरुवमु नाणु।

जिणप्रभु जग-गुरु देवहि देवू
चउविह संघह मंगल देउ।।१२।।

१५. ३११ (१४) दूहामाई। पत्र सं. १११-११४ (५८ दोहे)। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

भले भणेविणु पणमियइ जग-गुरु जगह पहाणु।
जासु पसाइं मुद्ध जिय पावइं निम्मलु नाणु।।१।।

१६. ३११ (१५) सालिभद्दकक्क—पउम। पत्र सं. ११४-११६ (६६ दोहे)। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

भवि भंजण कम्मारिकुल वीरनाहु पणमेवि।
पउमु कहइ कक्कक्खरह सालिभद्द-गुण के वि।।१।।

१७. ३११ (१६) संवेगमाई। पत्र सं. ११६-१२४ (६१ पद)। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

भले भणउ जाणउ परमत्थु, दुलहउ चउविहसंघह सत्थु।
एउ जाणेविणु लाहउ लिअउ, निय विढत्तु धणु धम्मि दिउ।।१।।

१८. ३११ (१७) वयरसामिचरिअ—जिनप्रभ। पत्र सं. १२४-१२६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

चउविह संघ वि सुरमहिउ मुत्ति-निअंविणि-हारु
वयरसामिसुचरिउ भणिसु भवियण-मंगलकारु।
झाअउ अणुदिणु सोहग्गमहानिहिणो गुरुणो सिरिवयरसामिणो चरियं।
तेरह सोलुत्तरए रइयं सुहकारणं जयउ।।५६।।

१९. १६ कुमारपालप्रबन्ध। पत्र सं. ८६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

अम्हे थोडा रिउ घणा इय कायर चिंतंति।
मुद्ध निहालउ गयणयलु के उज्जोउ करंति।।

२०. २२ (२५) भावनाकुलक—जिनेश्वरसूरि। पत्र सं. ११६-११७ (३१ पद)।

धणु जुव्वणु जीविउ सयलु चंचलु जिम करिकन्नु।
खणि खणि करयलि नीरु जिम गलइ स्वलाइन्नु।।१।।
दुल्लहु भणिउ रि जीवडा! लद्धी बोहि म हारि।
इण विणु दिक्खिसि दुक्ख सइं भमडंतउ संसारि।।३०।।
जयउ जिणेसरसूरि किउ भावणकुलं पढंति।
निरवग्गहवेरग्गरसि ते नर रंगिज्जंति।।३१।।

२१. २२ (२६) दंगड। पत्र सं. ११७-११८।

जहिं जिणधम्मु न जाणियइ नवि देवह गुरुभत्ति।
तहिं तउं जीवा! दंगडइ वससि म इक्कइ रत्ति।।१।।
जहिं सम्मत्तु न आलवणु संजमु नवि चारित्तु।

तहिं तउं जीव ! म रइ करिसि सिज्झइ जेण परत्तु।।२।।

२२. २२ (२६) सालिभद्रमाइ। पत्र सं. ११६-१२४ (५५ दोहे)।

संजमरज्ञविधायकरु पत्तु पमायह भेउ।
माइ मोहु मच्छरु मयणु कूड कुडंवउं एहु।।५४।।
हरिचन्दण सीयल वयण मलयचन्द जस वाय।
विहरसु संजमरज्ञधर धर सायरमज्झाय।।५५।।

२३. २२ (३१) स्तुतिद्वात्रिंशिका। पत्र सं. १२७-१२८ (३२ दोहे)।

चलुसीयपुब्वाउ इहु लक्ख तिजयआणंदु।
सव्वट्ठह इक्खागकुलि पणमउ रिसहजिणंदु।।१।।
सामिउ विमलजिणेसरह विमलगिरि पडिहारु।
कवडिजक्खु रक्खउ दुरिय जसु जगि निम्मलु हारु।।३२।।

२४. २२ (४४) नेमिनाथवोली। पत्र सं. १४१-१४२ (२४ पद)।

गुहिरु तूरु वायंति केवि केवि जय जय रवु भासहिं
अक्खवत्तु आणंति केवि केवि दहि दोहु पयासइं।
इय अमंद आणंदभरि केवि केवि नच्चंति जणि।
नेमिकुमारि सो मयणभडु लीलइ जित्तइ जेणि खणि।।२४।।

२५. २५ (३) भावनासार। पत्र सं. ८७-१११ (८६ दोहे)।

सव्वु असारउ मणि मुणेउ जिणसासणि लग्गेहु।
माया मोहु विमूढचित्तु दुहसंगु म मग्गेहु।।१।।
जिणसासणि लीणा चउगइरीणा भावणसारु जि संभरहिं।
गुरुसंतिपहाणा मुनिवरराणा ताह गुणथुइ फुड करहिं।।८६।।

२६. ५० सरस्वतीकण्ठाभरणवृत्ति (पदप्रकाश)—आजड। पत्र सं. २-३०५। त्रुटित। अपभ्रंशपद्य पत्र ४२-७३।

अंगिहिं अंगु न मिलिउ हलि अहरिं अहरु न पत्तु।
पिउ जोयंतिहि मुहकमलु एम्वइ सुरउ समत्तु।।
जे महु दिण्णा दिअहडा दइए पवसंतेण।
ताण गणंतिए अंगलिउ जज्जरिआउ नहेण।।
सायरु उप्परि तणु धरइ तलि घल्लइ रयणाइं।
सामि सुभिच्चु परिहरइ सम्माणेइ खलाइं।
गुणेहिं न संपइ कित्ति पर फल लिहिया भुंजंति।
केसरि न लहइ बोड्डिअ वि गलअ लक्खेहिं घेप्पंति।।
विच्छहे गिण्हइ फलइं जणु कडु पल्लव वज्जेइ।
तो वि महद्दुमु सुयणु जिम ते उच्छंगि धरेइ।।

२७. ५६ (७) चचरि—सोलण। पत्र सं. १००-१०३ (गाथा ३८)।

जिण चउवीस नमेविणु सरसइ-पय पणमेवि।
आराहउं गुरु अप्पणउ अविचलु भाव धरेवि।।१।।
कर जोडिउ सोलणु भणइ जीविउ सफ्लु करेसु।
तुम्हिं अवधारह धम्मियउ चच्चरि हउं गाएसु।।२।।

२८. ५६ (११) वीरजिनपारणक। पत्र सं. ३०-३५ (गाथा ४७)।
कन्नु धरेविणु एक्कमणि समभावे निसुणह रंगेण।
वीरजिणिंदह पारणउं को संविहि चिंतउ सहजेण।।

२९. ५६ (१२) ऋषभजिनस्तुति। पत्र सं. ३५-३७।
पणमवि परमेसरु रिसहजिणेसरु वेयसिप्पाउप्पयगरु।
चलणे निवडेविणु कर जोडेविणु मग्गं सासयसिद्धिवरु।।१।।
जहिं तुहु अच्छइ रिसहजिण अप्पणु सुद्धरिएहिं।
उम्माहडा न फिट्टहिं जाव न तित्थु गएहि।।
नंदउ जिणवर-धम्म जगि नंदउ चउविह संघु।
जाहं पसायइ सिद्धिवहु भवियण देयइ आघु।।३६।।

३०. २६ गुरु स्तुतिचाचरि। पत्र सं. १६५-१६७। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
नंदउ पुंडरीउ गोयमपमुह गणहर-वंसु।
नामगहेण विह जाहं फुडु जायइ सिवसुहुफंसु।।१।।

३१. २७ मयणरेहासंधि—जिनप्रभसूरि। वि. सं. १२९७। कडवक ५। पत्र सं. १६७-१७३। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
सुमरिवि जिणसासणु सुहनिहिसासणु सिरिनमिमहरिसि मणि धरउ।
पभणिसु संखेविहिं मयणरेह महासइ चरिउ।।२।।
बारह सत्ताउणए वरिसे आसोअ सुद्ध छट्ठिए।
सिरिसंघपत्थणाए एयं लिहियं सुआभिहियं।।

३२. २८ अनाथिसंधि—जिनप्रभसूरि। पत्र सं. १७३-१७६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
विसएहिं विनडिउ कसाय-जगडिउ हा! अणाहु तिहयण भमइ।
जो अप्पं जाणइ सम सुहु माणइ अप्पारमि सु अभिरमइ।।२।।
रायगिहि नयरि सेणीउ राउ गुरु भत्ति निवेसिय वीयराउ।
सो अन्नदिवसि उज्जाणि पत्तु मुणि पिक्खिवि पणमइ नमिय गत्तु।।३।।

३३. ३० ऋषभचरितस्तवन—जिनप्रभसूरि। पत्र सं. १७६-१८२। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
इय भव-भाव-विभावणग्गि कम्मिंधणु जालिउ
केवलनाणी जाइ मोक्खि संजमु परिपालिउ।
रिसह-चरिउ-संथवणु रासि घोरेहिं जो देइ

सो सिरिजणपह-लग्गु सग्गु-अपवग्गु वि लेइ।।२७।।

३४. ३१ नेमिरास—जिनप्रभ। पत्र सं. १८२-१८७। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

नंदउ नेमिजिणिंदो रेवयगिरि-मंडणु।

हरिकुल-नहय-चंदो-दुग्गइ दुहखंडणु।।१।।

जिणपहि लग्गिउ भव-फलु लीजइ जिणवर आणहं सो वंदीजइ।

जं जिण-आणा निरुवमु तित्थु एउ गणहरिहिं कहिउ परमत्थु।।

३५. ३२ भावनाकुलक—जिनप्रभ। पत्र सं. १८७-१९०। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

नमवि चलण सिरिरिसहजिणिंदह मंडण सिरिसित्तुञ्जगिरिंदह।

चउविहधम्मह भावण सारु भणउ रासु भवियण गल-हारु।।

दुल्लह पाविऊ माणुसजम्मू भो भो भविय! कुणउ जिणधम्मू।

दाण सील तव भावण रम्मू तुट्टइ तुम्हहं जिव गुरुकम्मू।।

एवं चउविहधम्मपभावू बुज्झिउ जिणवरसमयसहावू।

उज्जमु कुणउ जिणप्पहि लग्गिउ मोक्खकए सुविवेगिहिं जग्गिउ।।११।।

चुतर्विधभावनाकुलकं समाप्तं।

३६. ३३ अन्तरंगरास—जिनप्रभ। पत्र सं. १९०-१९४। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

पढमिउ पढमजिणिंदु सेत्तुञ्जह मंडणु

भणउं जीवसंबोहू भव-दुक्खह खंडणु।

कोवग्गिहिं पज्जलिउ निरंतरु माण-पवणि पूरिउ आभिंतरु।

उड्डिय माया-जालि विसाला पसरिय जा लाभिंधणमाला।।

ताहे जिय जिणसूरिहिं भासिउ करि जिणधम्मू भाउ विणासिउ।।११।।

अंतरंगरासः समाप्तः। मंगलं महाश्रीः।

३७. ३४ मल्लिनाथचरित्र—जिनप्रभ। पत्र सं. १९४-२०२। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

मल्लिसामि जिणराय-पाय निरवाय मुणेसू

तासु चरिउ अच्छरिउ भुवणि संखेवि भणेसू।।१।।

एगूणवीसममल्लिजिणह चरियं इह जय हिउ

चंदकंति सुपवित्तिणीए विन्नतिं विरइउ।

चउविहसंघह देउ लच्छि सग्गह निरुवसग्गह

अणुवग्ग वग्ग सिरिजिणपह लग्गह।।५०।।

मत्ताछंदविणिम्मियह गंथमाणु पन्नास।

चरिउ गुणंत सुणंतह वि भवियण पुज्जइं आस।।

मल्लिचरित्रं समाप्तम्।

३८. ३५ महावीरचरित्र। पत्र सं. २०२-२०६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
सुमरिवि सिरिजिणवद्धमाणु गुण-मणि-रयणायरु
तासु चरिउ जंपेमि किं पि वेरग्गह आयरु।
अवरविदेह गाम-सामि नयसारु मिहाणू
अडवि समण पह-गमण सम्मु सोहम्मविमाणू।।१।।
पणमवि सिरिअरिहंत सिद्धगण उवज्झायहं
समणह-सुमणहं सव्वलोअ समभाव समायहं।
इय पंचहं नवकारु सारु संसार-तरंडहं
पढमं मंगलु होइ लोइ गुण-रयणकरंडहं।।२४।।
श्रीमहावीरचरितं रासेनापि गीयते।

३९. मयणजुज्झ—बूचराज। रूपककाव्य।
रिसह जिणवर पढम तित्थयर,
जिण धम्मउ धरण, जुगल धम्म सव्वइ निवारण।
नाभिराय कुलकंवल, सव्वाणि संसारतारण।
जो सुरइंदह वंदीयउ, सदाचलण सिरधारि।
कहि किउ रतिपति जितियउ, ते गुण कहउं विचारि।।

४०. सन्तोषतिलकजयमाल—बूचराज (वल्ह)। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
गीतिका छन्द—आइयो सीलु सुधम्मु सावमतु अन्नु चरित संवरो।
वैराय तप करुणा महाव्वय खिमा चिति संजमु थिरु।
अजउ सुमहउ मुत्ति उपसमु धम्मु सो आकिंचणो।
इम मेलि दंभु संतोष राजा लोभ सिउ मंडइ रणो।।७६।।
जिव तेल बुंद जलमांहि पडइ, सा पसरहे भाजनइ छाइ।
तिव लोभु भरइ राईस वास, प्रगटावे जग में रहविथारु।।२।।

४१. नेमीश्वर का बारहमासा—बूचराज। १२ पद। दि. जैन मन्दिर, बूंदी।
उरि लाइ कर निसि गणउं तारे निंद नहु आवइ खिणो।
घरि आउ नेमि जिणंद सामि चडिउ फागुणु णिग्गुणो।।
लाइमनु ये वयरग्गि रजमति लियउ संजमु तं खिणे।
अट्ठउ भवंतरि नेहु निझरि सहइ नव तेरह वणे।।

४२. आनन्द स्तोत्र—महाणंदि। ४३ पद्य।
जिण वइसागर कट्ठ मंहि, कुसुमइ परिमलु होइ।
तिहं देह मंह बसइ जिव आणंदा, विरला बूझइ कोइ।।१३।।

४३. ऋषभपारणक-सन्धि—रत्नप्रभसूरि। गाथा ७९।
जं किर पावपंकु पक्खालइ, भवियह मोक्खसुक्खु दिक्खालइ।
संधिबंध संबंध रयन्नउं, चरिउ त रिसिह जिणिंदह वन्नउं।।३।।

४४. महावीरचन्दनवाला पारणा-सन्धि—रत्नप्रभसूरि। गाथा १०१।

तिसलादेवि कुक्खिकलहंसह, खत्तियनायवंस अवयंसह।

छिन्नसुवन्न सुवन्नसरीरह, पारणसंधि भणउं जिणवीरह।।१।।

४५. गजसुकुमालसन्धि। गाथा ८५।

इय गयसुकुमालिहि चरिउ अवालहि, अइसाहस निव्वाहवरु।

जो पढइ भत्तिभरि गुणइ महुरसरि, जाइ दुरियसुदुरियभरु।।८५।।

४६. शालिभद्र महाऋषि-सन्धि। गाथा ६४।

सालिगामु नामेण पसिद्धओ, आसि गामु धणधन्नसमिद्धओ।

धन्ना नामि कावि विहवंगण, तहिं कम्मयरी आसि अकिंचण।।१।।

४७. अवन्तिसुकुमाल-सन्धि। गाथा ५७।

इह अत्थि नयर नामिण अवंति, जहिं तुंगचंगचेइय सहंति।

तह ताणपुरउ सुपयड्ड नइ, चच्चर चउक्क चउहट्ट हट्ट।।१।।

४८. पुरणर्षि-सन्धि। ३२ पद्य।

अवसरि वीरजिणेसरु वि काउसग्गु पारेइ।

जिव जंगमु वरकप्पतरु महि मंडलि विहरेइ।।६२।।

४९. १२७ (२) महावीरचरित्र—अभयदेवसूरि। पत्र सं. ३६-४७। वृद्धिंगत १०८।

वीरजिणेसरु वरचरिउ अइसयसमहिं महंतु।

आयन्निज्जउ कन्नसुहु सुयणहु वन्निजंतु।।१।।

णासियदोसासंगह अगणियगुणगणह, असुरसुरेसरविंदह कह जिणह।

उम्मूलेइ अमंगलु मंगलु कुणइ लहु, सुहसंपय परिपोसइ झोसइ दुहनिवहु।।२।।

इय कल्लाणपकित्तणु किउ वीरह जिणह, पवर जिणेसरसूरिहिं सीसिं सुविहियह।

अभदेवसिरिसूरिं जिणगुणभावियह, होइ पढंत सुणंतह कारण सिवसुहहं।।१०८।।

५०. संबोधपंचासिका—पं. रइधू। ४६ गाथा। पत्र सं. ३। बधीचन्द दि. जैन मन्दिर, जयपुर।

सावणमासम्मिकया, गाहा बंधेण विरइयं सुणह।

कहियं समुच्चयं तं, पइडिज्जंतं च सुहबोहं।।४६।।

५१. रेवंतगिरिरास—विजयसेनसूरि। ४ कडवक। प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह में प्रकाशित।

परमेसरतित्थेसरह पयपंकय पणमेवि।

भणिसु रासु रेवंतगिरे अंबिकदिवि सुमरेवि।।१।।

गामागरपुरवणगहणसरिसरवरि सुपएसु।

देवभूमि दिसि पच्छिमह मणहरु सोरठदेसु।।२।।

रंगिहि ए रमइ जो रासु सिरिविजिसेणसूरि निम्मविउए।

नेमिजिणु तूसइ तासु अंबिक पूरइ मणि रलीए।।२०।।

५२. शील-सन्धि—जयशेखरसूरिशिष्य। ३४ गाथा। श्री नाहटा जी के संग्रह में।

इय सीलह संधी अइय सुबंधी जयसेहरसूरि सीस कय।

भवियह निसुणेविणु हियइ धरेविणु सील सील धम्मि उज्जम करहो।

५३. उपधान-सन्धि—जयशेखरसूरिशिष्य। २५ गाथा। श्री नाहटा जी के संग्रह में।

फलवद्धीय मंडण दुहसयखडण, पासजिणि नमेवि करि।

जिणधम्मपहाणहं तउच उवहाणहं, संधि भुणउ जणु कन्हु धरि।।१।।

इय तव उवहाणहं, संधि जयसेहरसूरि सीस किय।

जे पढइ पढावहिं अनुमनि भावहिं ते पावहिं सुह परमपय।।२५।।

५४. केशीगौतम-सन्धि। गाथा ७०। श्री नाहटा जी के संग्रह में।

अत्थि पयिध सुध सिद्धन्ते, कहिजु उत्तरज्झयण वहंते।

केसीगोयम धम्म विचारु, संधी बंधि सु कही जै सारु।।१।।

इम करवि विचारु संजमि सारु, पालेविणु जिम मोक्ख गया।

ते गोयमकेरि चित्ति निवेसि, झायहु भवियाणंद मया।।७०।।

५५. हेमतिलकसूरि-सन्धि। ४० गाथा। श्री नाहटा जी के संग्रह में।

पाय पणवि श्रीवीरजिणंदह अनु श्रीगोयमसामि मुणिंदो।

हेमतिलय सूरिहि गुण लेसो संधिबंधि हउं किमपि भणेसो।।१।।

जसु महिम करंतइ जणि गुणवंतइ जिणसासण उनोइ थओ।

सो गुरु णिय गच्छहं अणु मुणि सच्छहं संघसमण वच्छीय दियउ।।४०।।

५६. नेमिनाथ चतुष्पदिका—विनयचन्द्रसूरि। र. का. सं. १३५३। ४० पद्य। प्राचीन गुर्जरकाव्य-संग्रह में प्रकाशित।

सोहगसुंदरु घणलायन्नु सुमरवि सामिउ सामलवन्नु।

सखि पति राजल चडि उत्तरिय बारमास सुणि जिम वज्जरिय।।१।।

निम्मल केवलनाणु लहेवि सिद्धी सामिणी राजलदेवि।

रयणसिंहसूरि पणमवि पाय बारह मास भणिया मइं भाय।।४०।।

नेमिकुमरु सुमरवि गिरनारि सिद्धी राजल कन्नकुनारि।

इति श्रीविनयचन्द्रसूरिकृतनेमिनाथचतुष्पदिका।

५७. उवएसमालकहाणयछप्पय—रत्नसिंहसूरिशिष्य। ८१ छन्द, प्राचीन गुर्जरकाव्य-संग्रह में प्रकाशित।

विजयनरिंद जिणंदवीरहत्थिहिं वय लेविणु।

धम्मदासगणि नाम गामि नयरिहिं विहरइ पुणु।

नियपुत्तह रणसीहराय पडिबोहणसारिहिं।

करइ एस उवएसमालजिणवयणवियारिहिं।

खत्तियकुंडि जमालि वीरजामाइ खत्तिउ।
सुदंसणभत्तार सार वयभारपवित्तउ।
नवि मन्नइ किज्जंत किद्ध इय आगमवाणी।
निन्हवि तेण कुदिट्ठि दुट्ठि किय बहु गुणहाणी।
इणि परि सिरिउवएसमालकहाणय।
तवसंजमसंतोसविणयविज्जाइ पहाणय।
सावयसंभरणत्थ अत्थपय छप्पयछंदिहिं।
रयणसीहसूरिससीस पभणइ आणंदिहिं।

५८. समरारासु—अंबदेवसूरि। ११ भास। र. का. वि. सं. १३७१। प्राचीन गुर्जरकाव्य-संग्रह में प्रकाशित।

पहिलउ पणमिउ देव आदीसरु सेत्तुजसिहरे।
अनु अरिहंत सव्वे वि आराहउं बहुभत्तिभरे।।१।।
बाजिय संखअसंख नादि काहल दुडुदुडिया।
घोडे चडइ सल्लारसार राउत सींगडिया।
तउ देवालउ जोत्ति वेगि घाघरिरवु झमकइ।
सम विसम नवि गणइ कोइ नवि वारिउ थक्कइ।।१।। ६, १
तासु सीसिहिं अंबदेवसूरिहिं रचियउए रचियउए रचियउ समरारासो।

५९. सिरिथूलिभद्दफागु—जिनपद्मसूरि। २७ छन्द। प्रा. गु. का. सं. में प्रकाशित।

काजलि अंजिवि नयणजुय सिरि संथउ फाडेई।
बोरीयावडिकांचुलिय पुण उरमंडलि ताडेइ।।१३।।
कन्नजुयलु जसु लहलहंत किर मयणहिंडोला।
चंचल चपल तरंगचंग जसु नयणकचोला।
सोहइ जासु कपोलपालि जणु गालिमसूरा।
कोमल विमलु सुकंदु जासु वाजु संखतूरा।।१४।।
नंदउ सो सिरिथूलिभद्द जो जुगह पहाणो।
मलियउ जिणि जगि मल्लसल्लरइवल्लहमाणो।
खरतरगच्छि जिणपदमसूरि किय फागु रमेवउ।
खेला नाचइं चैत्रमासि रंगिहि गावेवउ।।२७।।
सिरिथूलिभद्दफागु समत्तु।

६०. जम्बूसामिचरिय—महेन्द्रसूरिशिष्य। ४१ पद्य। प्राचीन गु. का. सं. में प्रकाशित।

जिण चउवीसइ पय नमेवि गुरुचलण नमेवि।
जंबूसामिहिं तणउं चरिय भविउ निसुणेवि।
करि सानिध सरसत्तिदेवि जिम रयं कहाणउं।

जंबूसामिहिं गुणगहण संखेवि बखाणउं।।१।।
महिंदसूरिगुरुसीस धम्म भणइ हो धामीऊह।
चिंतउ रातिदिवसि जे सिद्धिहि ऊमाहीयाह।
बारहवरससएहिं कवितु नीपनूं छासठए।
सोलह विज्ञाएवि दुरिय पणासउ सयलसंघ।।४१।।
इति श्रीजम्बूस्वामिरास।

६१. सप्तक्षेत्रिरासु—अज्ञात। ११६ पद्य। प्राचीन गु. का. सं. में प्रकाशित।
सवि अरिहंत नमेवी सिद्ध सूरि उवझाय।
पनरकर्मभूमिसाहू तीह पणमिय पाय।।१।।
जां ससि रवि गयणंगणिहि ऊगइ महिमंडलि।
ता वरतउ एउ रासु भविय जिणसासणि।
निम्मल ज ग्रह नक्षत्र तारिका व्यापइं।
गयवंतु श्रीसंघ अनइ जिणसासणु।।११६।।
इति सप्तक्षेत्ररासः समाप्तः।

६२. कछूलीरास—प्रज्ञातिलकसूरि। प्राचीन गु. का. सं. में प्रकाशित।
गणवइ जो जिम दुरीउविहंडणु रोलनिवारणु
तिहुयणमंडणु पणमवि सामीउ पासजिणु।
तासु सीसु चिरकालु प्रतपउ प्रज्ञातिलकसूरे।
जिणसासणिनहचंदु सुहगुरु भवीयहं कलपतरो।
ता जगि जयवंत उम्हाउ जां जगि ऊगइ सहसकरो।
तेरत्रिसठइ रासु कोरिंटावडि निम्मिउ।
जिणहरि दिंतसुणंतं मणवंछिय सवि पूरवउ।

६३. पद्मावती चौपई—जिनप्रभसूरि। ३७ पद। दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
जिणसासण अवधारि करेवि, गावहु सिरि पउमावइदेवि।
भवियलोय आणंद परेवि, दुलहउ सावय जम्म लहेवि।।१।।
पउमावइ चउपई पढंत, होंहि पुरिस तिहुयण सिरिकंत।
इम पभणइ नियजस कप्पूर, सुरहिय भवण जिणप्पहसूरि।।३७।।
इति श्रीपद्मावती चौपई समाप्तः। संवत् १७०० वर्षे आगरा नगरे लिखिता।

६४ समाधिरास—चरितसेनमुनि। पत्र सं. ५२-५४। गुटका सं. ३७। दिल्ली।
चारित्तसेणु मुणि समाधि पढंतउ,
भवियहु करमु कलंकु डहंतउ।। संमाधी.।।४७।।
अइसी समाधि जो अणुदिणु झावइ,
सो अजरामरु सिवसुहु पावइ।। संमाधी.।।५०।।

६५. द्वादशानुप्रेक्षा—लक्ष्मीचन्द्र। ४७ दोहे। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

पणविवि सिद्ध महारिसिहिं जो परभावहं मुक्क।
परमाणंद परिट्ठियउ चउगइ गमणहं चुक्क।।१।।
आसउ संसारहं मुणहिं, कारणु अण्णु ण कोइ।
इम जाणेप्पिणु जीव तुहुं, अप्पा अप्पउ जोइ।।१६।।
जो परियाणइ अप्पयरु, जो परभाव चएवि।
सो संवरु जाण वि तुहुं, जिणवरु एम भणेइ।।१७।।
अणुवेहा जिण भणिया, णाणिवालहि साहु।
ते भावि जुहि जीव तुहुं, जइ इंछहि सिवलाहु।।१८।।
इति श्री लक्ष्मीचन्द्र कृत द्वादशानुप्रेक्षा समाप्तः।

६६. ३६ जम्बूचरित्र। पत्र सं. २०७-२०६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
पढमभवे भवदेवी गहियवओ पढमकप्पि सुरपवरो।
रायसुय सिवकुमारो कय-बारसवास-तब-सारो।।१।।
बारस नवाणुए भद्दबसिय पडिय गुरि समुद्धरियं।
धन्नासीभासाए भणियव्वं संघभद्दकए।।२०।।
जम्बूचरित्रं समाप्तं।

६७. ३७ सुकोशलचरित्र। पत्र सं. २०६-२१२। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
नंदउ सिरिवीसमु जिणिंदु मुणिसुव्वयसामिय
जासु तित्थ-माहप्प होइ थामिउ सिवगामिउ।
जयउ सुकोसलु मुणिगरिट्ठु संतुट्ठ चरित्तिहिं
तासु चरिउ संखेवि भणिसु जिणआगमजुत्तिहिं।।२१।।
तेर दुरुत्तरवरिसे सिरिवीरजिणिंदमोक्खकल्लाणे।
कल्लाणं कुणउ सया पढंत---गुणंताण भव्वाणं।।

६८. ३८ चैत्यपरिपाटी---जिनप्रभ। पत्र सं. २१२-२१४। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
जयइ जयइ जिणधम्मो विवेयरम्मो पणासियकुहम्मो।
उवसमपुर-पायारो पयडियनाणाइआयारो।।१।।
त दुल्लहु लहिउ सुमाणुसजम्मु तह वि कह वि सिरिजिणवरधम्मु।
तत्थ वि बोहि-बीउ पुण रम्मु जं निहणइ दुट्ठइ वि कम्मु।।३।।

६९. ३९ मोहराजविजय---जिनप्रभ। पत्र सं. २१५-२१६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
त भवियजण ! एकमणु कन्नु धरेउ
त जिणवरराय मोहरायजुज्झु सुणेउ।
त जइ सवाहिरि इणि संसारि वट्टइ लोइ
त तइ सभिंतरि गुण-दोसंतरि जीवहं जोइ।।२।।

त सम्यग बोधे पुरवर जिण अधिरोहु
त तिजग-वइरि मिच्छापुरि मोहराउ मोहु।
त जिणवरसामि मणुयनामि ठविय लिखितु
त पनरसकम्मभूमि-पमाणु पवित्तु।।३।।

७०. ५३ (१२) वइरसामिचरिउ—जिनप्रभसूरि। वि. सं. १३१६। पत्र सं. १५७-१७८। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
अहु जण निसुणिज्जउ कन्नु धरिज्जउ वइरसामिमुणिवरचरिउ।
मुणिवरबरदत्ति जिणवरभत्ति वयरसामिगणहरचरिउ।
साहिज्जउ भावि मुंचउ पावि जि तिहुयणु गुणगणभरिउ।
वइरसामिचरित्रं समाप्तम्। श्लोक ३००।।

७१. ५६ (२०) धर्मसूरिस्तुति (बारह नावउं द्वादशमास अपभ्रंश) पत्र सं. २१६-२२१। संघ भण्डार, पाटन।
कुवलयदलसामल घणु गज्जइ नं मद्दलु मंडलझुणि छज्जइ।
विज्जुलडी झबकिहिं लवइ मणहरु विल्थारेवि कलासु।।
अन्नु करेविणु कलि केकारवु फिरि फिरि नाचहिं मोरला।
पीपलि करिवि स पिंड पहिरि कन्हिहि चल कुंडल।
झलझलंत कंकण सनाह हत्थीहिं पुण हत्थल।।४१।।
नवसरु मोत्तियहारु कंठि कलकंठि ठवेविणु।
पाल विसाल चलंत चंचलु पायहि पहि पहिरेविणु।।४२।।
माणिणि ! माण महंतु मयगल मउ मोडिवि।
सहि ! मंडलि बणि पत्तो आसाढ सु केसरि।।४४।।
मेहुडलइ नवि गयणि घुडुक्कइ तहिं खणि कविरहिणि हियउं खुडुक्कइ।
पसरिउ इंदधणुह फुडु फारु किउ विज्जुलिय तरल झलकारु।।४५।।

७२. १५ (२) अन्तरंगसंधि—रत्नप्रभ (वि. सं. १३९२)। पत्र सं. १-१२। तपागच्छ भण्डार, पाटन।
पणमवि दुहखंडण दुरियविहंडण जगमंडण जिण सिद्धिठिय।
मुणिकन्नरसायणु गुणगणभायणु अंतरंग मुणि संधि जिय।।१।।
इह अत्थि गामु भवबासनामु बहुजीवठामु विसयाभिरामु।
दीसंति जत्थ अणदिट्ठिछेह बहुरोग सोग दुहु जोग गेह।।२।।
संवत् १३९२ वर्षे आषाढशुदि २ गुरौ ग्रंथाग्रश्लोक २०६
श्रीधर्मप्रभसूरिरत्नप्रभकृतिरियं।

७३ ५ (१४) स्थूलभद्र कडवक २। गाथा १३, ८।
मढ विहार पायारह सोहिउ वर मन्दिर
पवर पुर अमरनाहु पिक्खिवि मोहिउ।

इय एरिसु पाडलियपुरु जंबुदीब विक्खाउ
करउ रज्जु जियसत्तु तहि नंदु महावलु राउ।।१।।

७४. २३२ नेमिनाथचरित्र—हरिभद्रसूरि। ३०४ ताड़पत्र। आकार ३०-२। बड़ा भण्डार, जेसलमेर

मह सुहु वियरउ विमलगुणरसिजलहिरयणिंदु।
पणयसुरासुरनरनियरकयथुइ रिसहजिणिंदु।।१।।
मणतणुवयणिहिं अणुदिणु विजणियपुलयपब्भारु।
अणुसरिउण सुयदेवयह नाममंतु जयसारु।।३।।
सोलुत्तर वारसइ कत्तियंमि तेरसिसमागमि
अस्सिणक्खित सोमदिणि सुप्पवित्तिलग्गंमि।
एहु समत्थिउ कहवि परियणसाहज्जंमि।।
पच्चक्खरगणणाए सिलोगमाणेण इह पबंधंमि।
अट्ठेवयस्सहस्सा बत्तीससिलोगया होंति।।
इति श्रीचन्द्रसूरिक्रमकमलभसलश्रीहरिभद्रसूरिविरचितं नवभवनिबद्धं श्रीनेमिनाथचरित्रं समाप्तम्।

७५. १३१ विलासवइकहा—साधारण सिद्धसेन। २०६ ताड़पत्र। आकार १३.५ × २.५। बड़ा भण्डार, जेसलमेर।

एह कह निसुणेविणु सारु मुणेविणु सयलपमायइं परिहरहु।
असुहहं मणु खंचहु जिणवरु अंचहु साहारणु वि रमणु वरहु।।
इय विसावइकहाए एगारसमा संधि संमत्ता। समत्ता विलासवइकहा।

७६. १०५ (२२) जिनपंचकल्याणकस्तोत्र—मुनिचन्द्र। पद्य ३६। पत्र सं. २१४-२१६। संघवीपाडा भण्डार, पाटन।

तित्थंकरकल्लाणइं सुक्खनिहाणइं भत्तिमंतु जो नरु वहइ।
मुणिचंदु थलगुणसिद्धिठाणु सा सुहु लहइ।।३६।।

७७. ५५ (१७) चतुर्विंशतिजिननमस्कार-शान्तिभद्र। गाथा २५। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

जे सुसावय साहुवर चित्तसुपसिद्धउ
सुपभचतूर (१) नमण निसिहि विरमि थिरु करहि अणुदिणु।
चउवीस वि जिणवरहं सुप्पभायथुइ भणइ अणुदिणु
ते संसार-महोयहिहि उत्तारइ अप्पाणु।
पावह दुक्खक्खउ करवि संतिभद्दु कल्लाणु।।२५।।

७८. ४६ मुनिसुव्रतस्वामिस्तोत्र—जिनप्रभ। पत्र सं. २३२-२३४। खेतरवसी भण्डार, पाटन।

इय मुव्वयणाहह नागसणाहह जिणपहुसूरिहिं संथविय।
पंच वि कल्लाणइं सुक्खनिहाणइं कल्लाणगु देयउ भविय।।१३।।
इति मुनिसुव्रतस्वामिस्तोत्रं जन्माभिषेकं च भासरागेण।।

७९. ४७ जिनजन्माभिषेक—जिनप्रभ। पत्र सं. २३४-२३६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
एवं सिरिजिणपहु पहणियकुप्पहु तिहुयणगुरु जे संथुणइं।
भत्तिहिं रोमंचिय बहुभवसंचियकम्मक्खउ ते लहु कुणइं।।१५।।
छप्पन्नदिसाकुमारीजन्माभिषेक।

८०. ४८ जिनजन्ममहोत्सवस्तवन—जिनप्रभ। पत्र सं. २३६-२३६। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
तउ विवहपयरिहिं मेरु सिहारि विहिणा विहिउ।
जिणजम्मणमज्जणु तोसियसज्जणु कुणउ भविय भवभयरहिउ।।५।।

८१. २० भव्यकुटुम्बचरित—जिनप्रभसूरि। पत्र सं. १४२-१४७। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
चउपइबंधेण इमं भवियकुडंबस्स संतियं चरियं।
सेत्तुंजतित्थगएणं सिरिजिणपहसूरिणा रइयं।।३७।।

८२. ७: (२४) पार्श्वजिनजन्मकलश। पत्र सं. ३५०-३५१। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
अरि रि ! भवियहु ! भावु नियचित्ति य
परदेविणु वयणु महु सुणहु।
नियचित्तु निच्चलु परमेसरु
पासजिण-जंमकलसु हउं भणिसु निम्मलु।।
पणयनरिंदा वंदियइंदा धम्मसूरिपय पणमेवि।
त गणधसारु नाणाधारु आणंदसूरि सुयदेवि।।

८३. ७२ (१०) वज्रस्वामीचरित्र। पत्र सं. २०७-२३४। खेतरवसी भण्डार, पाटन।
मुणिवरवरदत्ति.गणहरभत्ति वइरसामिगणहरचरिउ।
साहिज्जहु भावि एत्थहु पावि जिं तुहयणु नियगुणभरिउ।।६६।।
चरिउ सुसारउं भाग्यपियारउं वइरसामिगणहरचरिउ।
जो पढइ कियायरु पुणरयणायरु सो लहु पावइ परमपउ।।
वइरसामिसंधि समाप्तः।

८४ श्री वीर जन्माभिषेक—×। पत्र सं. ७। २६.५ × ११.२। लिपि सं. १४७३। मुनि पुण्यविजयजी का संग्रह। ला. द. भा. सं. विद्यामन्दिर, अहमदाबाद।

८५. १७८ जिनवल्लभसूरिगीतानि। आकार २६.५ × ११.५। पत्र सं. ४। राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, चित्तौड़गढ़।

पणमवि सामिउ वीरजिणगणहरगोयमसामि।
सुधरमसामि अनुलगि सरणु जुगप्रधानु सिवगामि।।१।।
नंदउ विहि जिणमंदिरइं नंदउ विहि समुदाउ।
नंदउ जिणयत्तिसूरिगुरु विहि जिणधम्मपसाउ।।३५।।

इति श्री गुरु जिनवल्लभसूरिगीतानि। श्री देवकपत्त नेश्रा. सहसादे पठनार्थ लिखितानि।

८६. कुट्टणिरासय—तिल्हण। प्रकाशित परिषद्-पत्रिका, वर्ष ४, अंक ४।

छंदु लक्खणु णहु अलंकारु, णहु देसभासा मुणहु।
सुकइ गुंथु णहु किंपि दिट्ठउ जडउ।
जिम्ब णवमुद्धअलुद्धरस, पियसंगे गच्छंति।
तिन महुमइ पयबंध कहु, कुणइ डरंति डरंति।।५।।
छप्पय—खण मुहु मेलवइ खणह भूभंग पयासइ।
खण आलिंगणु करइ चंपि उरसिहु उल्हासइ।।
खण सिक्कार हरसइ खण मं मं म पयासइ।
खण खण गुट्टि करंत वयणअ मियह परिभासइ।।
पयडय रसु से सह णेह भरु खइ रंग सिहु रयणि दिणु।
भोलयउ छयलु सुजल्हु तिणि णहु जाणइ उब अंधवणु।।१।।
तं खण कुट्टणि लग्गु पय, वुल्लिउ वहु सणेहु।
अच्छ विठइ फुणि आइबउ, पहु तुम्हारउ गेहु।।
आसासण मज्झण सगुण हउं किंव जंपउ जाह।
तुव विणु नयणु विडंबियइ किम जीविव्वउ णाह।।८।।

८७. उपदेशसन्धि—हेमसार कवि। प्रकाशित परिषद्-पत्रिका, वर्ष ४, अंक ३।

ससिहर सम वयणीय दीहर नयणीय, हंसगमणि सरसइ सुमरेवि
जिणधन पसिद्धिय बुद्धि समिद्धिय, भणि सुसंधि उवेसवर।।१।।
रे जीव तणी गति विसम जाणि, हिंडइ चउरासी लक्ख खाणि।
जिन अंजुलि धारि उगलइ नीरु, तिम परिघणक्षण अथिरु सरीरु।।
झाइज्जहु इक्क जि वीयराय, जिण आण धरी परि चित्त भाउ।
जिम बुद्धि धरंतह रयणि दीस, जिम पूजहिं सवि आसा जगीस।।१८।।
उवएसह संधी निरमल बंधीय, हेमसारु इम रसि करए।
जो पढइ पढावइ अरु मन भावइ, वसुह रिद्धि विद्धि सो लहइ।।१९।।

८८. आनंदश्रावकसन्धि—विनयचन्द्र (श्रीरत्नसिंहसूरिशिष्य)। नाहटा जी के संग्रह में।

सिरि वीरजिणिंदह पणय सुरंदह, पणमवि गोयम गुणनिहिंहि।
आणंद सुसावय धम्म पभावइ, भणि ससंधि आगमविहिंहि।।१।।
सिरि रयणसिंह सुगुरु वएसी, सिरि विनयचंद तसु सीसि लेसी।
अज्झयणं पढम इय सत्तभंगी, उद्धरिय संधिबंधेण रंगी।।७।।
इति आनन्दश्रावकसन्धि समाप्त।

८६. ११५ (१०) ज्ञानप्रकाशकुलक। गाथा ११४। पत्र सं. २३४-२४५।
देवहं देवु सु जगी जयउ तिहुयणगुरु जिणराउ।
अज्ज वि नाणपसाउ जसु पसरइ पयडपहावु।।१।।

६०. २०२ (२४) मुनिचन्द्रस्तुति। पत्र सं. ६१-६४। २५ दोहे।
दूसमरयणिहिं सूर जिम्व तुह उग्गिउ मुणिनाहु।
सिरिमुणिचंद मुणिंद पर महु फेडइ कुग्गाहु।।२५।।

६१. २०२ (२८) शान्तिजिनस्तुति। पत्र सं. ११०-११४।
संतिजिणेसर ! एत्तिलउं पइ पत्थेमि अणाहु।
तिहुयणगुरु महु तुहि जि पर भवि भवि होज्जसु नाहु।।

६२. २१० वासुपूज्यचरित्र—चन्द्रप्रभोपाध्याय। पत्र सं. ३१२। अपूर्ण। आकार १६ × २। प्राकृत-अपभ्रंश।
केंव वहेसउ अज्जु लगि नियभुयाबलगव्वु।
मिलियए मज्झि विगुत्ताह अहह ! निप्फलु सव्वु।

६३. २१८ (३) नवफणश्रीपार्श्वनाथनमस्कार। गाथा ५।
जय चिंतामणि जयनाहु जय नवफणमंडिय
जय वाणारसिजाय कायजियनीलसिखंडिय
जय वामाएवि आससेणकुलनहयलभूसण
जय देवासुर श्रमणसंघसंथुय धुयदूसण।
ता देवदेव ! धरणिंदथुय कमठदप्प चूरंतु।
पउमावइपणमियचलण मणवंछिय पूरंतु।।

६४. २१८ (१३) जिनस्तोत्र। गाथा ६।
तह वि हु जिणवर ! कर किज्जउ एक्कउ पसाउ।
अप्पण पायहं हिट्ठि पहु दिज्जउ मज्झ वि ठाउ।।६।।

६५. ३३ सौभाग्यसुन्दरीकथा। संघवी पाडा भण्डार, पाटन।

६६. ५६६ सूक्तश्रेणि। राजस्थान प्राच्यविद्याप्रतिष्ठान, चित्तौड़गढ़।
जीवदया जिणधम्मो सावयजम्मो गुरुणपयभत्ती।
एअं रयणचउक्कं पुन्नेहिं विणा न पावंति।।२३।।
जं अप्पह न सुहाइ तं पुण परह न छिआइ।
धम्मह पहहु मूलु काहुं वलि वलि पुच्छिअइ।।२४।।

धणु चिंततउ धम्मु करि धम्मे णय धणु होइ।
धणु चिंततउ जइ मरइ दुन्हवि इक्क न होइ। ।२५। ।
हाथ घसइ भुइं आहणइ जीभं तालुं दिन्तु।
मरणह वेलां संभरइ मइं नहु कीधउ धम्मु। ।७०। ।

९७. नीलंजसा पाथडी। निजी संग्रह में।
अहिणवरसभाव धरंति तहिं, खयकालसमय महियलि घुलिया।
गय कहिंमि ण दीसइ सुरजुवइ, घण समइ चुक्क णं विज्जुलिया।
णीलंजस जंपाणेहिं विमुक्क, तं जिणहो जाय मणे गरुय संक।
चिंतइ संसारि अणिच्चु सव्वु, सो मूढउ जो उव्वहइ गव्वु।
किमिउलसंकुले दुगंध देहिं,सो मूढउ जोरइ करइ देहिं।
णिरु मेल्लिवि जोव्वणु सयणु मग्गु, सो मूढउ जो णवि धम्मि लग्गु।
णिय पुत्तकलत्तइं णियधराइं, सो मूढउ जो मण्णइं थिराइं।
हयगय-रहवर-किंकर सयाइं, भणु केण मरंतइं सिहु गयाइं।
धणधण्णहि रक्खइं भूसणाइं, णिवसणइं मणोज्जइ आसणाइं।
भणु मंड धरंतहं किहि वसेण, नइइ ण काइ असमंजसेण।
पंचेंदिय सोक्खह कारणेण, आयरइ पाउ परमायरेण।
पावेण तेण पावइ ण सुक्खु, केवलु अणुमग्गिउ लहइ दुक्खु।
जाणतु गलंतु अणवरउ माउ, जाणइ होसइ सयणहं विओउ।
जाणइ छंडेसमि एहु काउ, णहु होउ तोवि वइराउ भाउ।
मोहिज्जइ मोहिं अइघणेण, घर घरिणि सुयाइं णिबंधणेण।
चिंतंतु एम पंजलिय रेहिं, संबोहिउ लोयंतिय—सुरेहिं।
इत्थंतरि आइय सयलदेव, जिणवरणकमलकय परमसेव।
घत्ता—आयहि ण्हावेप्पिणु जिण धवलु वत्थाहरणहिं भूसियउ।
पुणु थोत्तु सहासिहिं मणहरहिं भत्तिए सुहिउ णमंसियउ। ।
इति नीलंजसा पाथडी समाप्ता।

९८. ५६ (१४) नवकारफलकुलक। पत्र सं. ३९-४२। गाथा ३०।
पणमेवि पाय परमेसराण उसभाइसयलतित्थेसराण।
पणमउ पक्खालियपावमलु जण निसुणहु जिणनवकारफलु। ।

९९. ५६ (१६) ऋषभजिनस्तुति। पत्र सं. ४४-४७। गाथा २६।
तं निपाइउ धम्मविहि मेल्हाविउ संसारु।
इंदु जोएवा आइयउ रिसहेसर धरवारि। ।२६। ।

१००. ५६ (१७) सीतासत। पत्र सं. ४७-४९। गाथा २०।
पूरवि दसरथु जाणिय एकेणइ वरु मागेइ।
रज्जु भरह दियाविवए रामलक्खण संजुत्त।

१०१. १०३ (१४) संजममंजरी—महेश्वरसूरि। पत्र सं. २०७-२१३। गाथा ३५।
संजमु सुरसत्थिहिं थुयउ संजमु मुक्खदुवारु।
जहि न संजमु मणि धरिउ तहुं दुत्तरु संसारु।।२।।
समणहं भूसण गयवसण संजममंजरि एह।
कहइ महेसरसूरिगुरु कन्नि कुणंत सुणेह।।३५।।

१०२. ११६ (५) शकुनविचार। पत्र सं. ४५-४७।
वाम सियाली होइ सुह दाहिण दुक्ख करेइ।
पिट्ठट्ठिय बीहामणी अग्गट्ठिय मारेइ।।१।।
जंबूरासह सणोइं जइ निग्गमि वामाइं।
पइसंतह जह दाहिणइं फुडु साहइं कज्जाइं।।२।।
वामी होविणु दाहिणी जइ सूयरि गच्छेइ।
तो आभरणविभूसिया ककवितिय दावेइ।।३।।

१०३. ११६ (१६) भूमिज्ञान।
खत्तु खणेविणु पूरियइ जइ मट्टी वहेइ।
निद्धा भूमि सलक्खणी फलु निवसंतह देह।।१।
दर-उहेही-कोलिय किमि-कीडा-अलि-सप्प।
रक्खसभूमि भयावणी धरि न वसिज्जइ बप्प।।

१०४. १३३ (१०) वीरविंशतिका। पत्र सं. १२८ मात्र (१)। गाथा १३।
जा चंद दिवायरु नंदउ जिणहरु पावउ सिवसुहु सयलजणु।
जगडिजंतउ भवि मोहमहानिवि रक्खि रक्खि जिण ! तुह सरणु।।१३।।

१०५. भावनासन्धिप्रकरण—जयदेव मुनि। ६ कडवक। प्रकाशित।
णिम्मलगुण भूरिहिं सिव दिव सूरिहिं, पढमसीसु जयदेव मुणि।
किय भावणसंधी भावु सुबंधी, णिसुणवि अन्न वि धरउ मणि।।

१०६. आत्मसंबोधकाव्य—३ सन्धि। निजी संग्रह में।
जय मंगलगारउ वीरु भडारउ, भुवणु सरणु केवलणयणु।
लोगोत्तमगोत्तमु संजयसोत्तमु, आराहमि तह जिणवयणु।।
चउवीसमु जिणु हयपंचवाणु तिहुयण सिरिसेहणु वड्ढमाणु।
चउगइ भवगमणागमण चुक्क, कम्मट्ठणिविडबंधणविमुक्क।।
दिढु करि समत्तु लहेवि णाणु, चउ किज्जइ कय णिव्वुइ णिहाणु।
णियसत्तिहि अणुसारेण लोइ, पालिज्जइ दिढु वउ गुरु णिओइ।।
घत्ता—समत्तबलेण णाणु लहेवि चरेवि जणु।
साहिज्जइ मोक्खु भव्वेहि भवदुह अवहरणु।।११।।

इय अप्पसंबोहकव्वे सयलजणमणसवणसुहयरे अबलाबालसुहबुज्झ पयडत्थे तइओ संधी परिच्छेओ समत्तो।।३।। लिपि संवत् १६३५, भाद्रपदसुदि तीज, मंगलवार।

१०७. सुप्पयदोहा—सुप्रभाचार्य। ७५ दोहे। निजी संग्रह में।

सुप्पउ भणइ म परिहरहु, पर उवयारि चरित्तु।
ससि सूरहं हुइ अत्थवणु, अण्णहं कवणु थिरत्तु।।३।।
जइ दिंतहं सुप्पउ भणइ, संपइ जाइत जाउ।
छुडु निम्मलु धम्मेण सहु, घर मंडिवि जसु ठाउ।।७४।।
इहु घरु घरणी एहु सुहु, इहु बंधउ गिहरंगि।
मोहु ण डावइ माणसुहं, णच्चावइ बहु भंगि।।
मोहु गह गहियउ णच्चइ, हियवइ ठियउ जि किंपि।
तेण अप्पाणउं वेवइ, णच्चावइ बहु भंगि भंगि कलग्गी थिय।
तहिं जिणि हिंडइ संसारु, मोक्खु णहु लहइ खणु वि इथ।।७५।।
इति सुप्पयदोहा समाप्तः।

१०८. थंतिरासा—ब्र. उंदू। पत्र सं. ३५-३७। गुटका सं. ३७। दिल्ली।

थण पिउ पूजिवि एक ठाइं कुसुमंजलि दिण्णी।
पूसहं पोसिउ सयलु लोउ सा सीलि सउण्णी।।१०।।
धनि जननी धनि बापु जेण, सुह लक्खण जाइ।
धनि कणि पुत्तहं आगली, धनि जिनि करि लाइ।।१२।।
तोल्हउ दे गुण आगली, फागुण पूनी आसा।
बंभयारि कवि उंडु, गाए बारहमासा। इति।।

१०९. २४३ (५) धर्मोपदेश। गाथा ७।

जेण न चिंतिउ गुरु वयणु अब्भसिउ न जिणधम्मु।
काइं किज्जइ तिणि पुण्णहि बंध बहुविहु कम्मु।।७।।

११०. २४८ (५) सुभद्राचरित—अभयगणि। पत्र सं. १०१-१०८।

अन्नु वि सीलु विसिट्ठउ पालउ जो किर इच्छइ सिवपुरि आलउ।
जोउं सुभद्दह चरिउं पढउ नणभाविहिं सो सीलं पालंतउ सलहउ।।५।।
सीलं पालिवि सिद्धह गच्छइ अभयगणी वि ठाउं तं इच्छइ।
संवच्छर इगसट्ठे आसोये मासे कि ।।

१११. ३०७ (२) सुलसाचरित्र—देवचन्द्रसूरि। र. का. वि. सं. ११६१।
गाथा १७। पत्र संओ। ४३ (२)।

पणमवि तित्थेसरु वीरजिणेसरु भणमि सुलसाविचरिउ।
समत्तसमन्निउ विबुहहि वन्निउ दंसणनाणगुणावरिउ।।

११२. ३०७ (५) अंजनासुन्दरीकथा। पत्र सं. ५४-५५। अपूर्ण।

कुल भय विह वंसं पुंनिमहि अन्नु हि अम्मिउयत्ताइं।
जण ! निसुणहु अंजणसुंदरिहि जणे सुहदुक्खाइं पत्ताइं।।

पणमवि मुणिसुव्वयसामियहु णेव्वाणसिद्धिसुहगामियहो।
जिणसासणभत्तिय एक्कमण कह पुन्नपवित्त सुणेहु जण।।

११३. ३०६ (६) जन्माभिषेक। पत्र सं. १-८।
कंपिउ रयणासणु तवनिन्नासणु मिलियछप्पन्नदिसाकुमारीए।
तिसलाए सुइकम्मं विहियं जम्मंमि जस्स सो जयउ।।१।।
सो जयउ जस्स समकालचलियसिंहासणेहिं सक्केहिं।
विहिओ जम्मणमहो सुमेरुसिहरम्मि मिलिएहिं।।२।।

११४. ३११ (१०) नर्मदासुन्दरीसन्धि—जिनप्रभ। वि. सं. १३२८। पत्र सं. ९९-१०६। ७१ पद।
पणमवि पण इंदह वीरजिणंदह चरणकमलु सिवलच्छिकुलु।
सिरिनमयासुंदरिगुणजलसुरसरि किं पि थुणिवि लिउं जम्मफलु।।२।।
तेरस सय अडवीसे वरिसे सिरिजिणपहुप्पसाएण।
एसा संधी विहिया जिणिंदवयणाणुसारेणं।।७१।।
श्रीनर्मदासुंदरीमहासतीसंधि समाप्ता।

११५. जिनेश्वरसूरि विवाहला—
अंच पभणइ माइ सुणि, परिणिसु संजम लच्छि।
इक्कु जुए पुहविहि सलहियइ, जायउ लखमिणि कुच्छि।।१५।।
कुसलिहि खेमहि जानउत्त पहुतिय खेड मझारि।
उच्छवु हुयउ अइ पवरो, नाचइ फरफर नारि।।२०।।
संतिजिणेसर वर भुयणि, मांडिउ नंदि सुवेहि।
वरिसहि भविय दाणजलि, जिम गयणंगणि मेह।।२२।।

११६. श्रावकाचारधर्मदोहा—देवसेनसूरि। पत्र सं. ११०-१३२। २२५ दोहे। सम्भवनाथ जी का मन्दिर, उदयपुर।
नवकारेप्पिणु पंचगुरु, दूरदलियदुहकम्मु।
संखेविं पयडक्खरहिं, अक्खमि सावयधम्मु।।१।।
दंसणणाणु चरित्ततउ, रिसिगुरुजिणवरदेउ।
वोहि समाहिए सिहु मरणु, भवि भविदुल्लउ एउ।।२२५।।

११७. कलिकुंडपूजाजयमाल—भ. यशःकीर्ति। गुटका में लिखित। सरस्वती-भण्डार, ऋषभदेव जी।
वर सम्मत्त विहूसणहो, भवियण जिणवर समरणे।
णासियपाउ असेसलहु, तिमु जिम देवायर वि अरणे।।१।।
सुदुद्धर अंजण पुव्वयकाउ, दिसा करि तासण मेह णिणाउ।
सुदुपुवि विम्बु ण देउ करेंदु, मणामि अणंतो देउ जिणंदु।।१।।
पस तसनि विय देउ समूहु, महावल लोह लोलाविह जिहु।

सरोसमु देउ कमणमयंदु। मणागि।।२।।

११८. सेणियचरिय—जयमित्रहल्ल। ११ परिच्छेद। भण्डारकर ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना।

पणवेवि अणिंदहो चरमजिणिंदहो वीरहो दंसणणाणवहा।
सेणियहो णरिंदहु कुवलयचंदहो णिसुणहो भवियहो पवरकहा।।
अह सेणियरायहो लच्छि सहायहो सयलु सउणउ सुहयरु।
कुवलय आसासणु तमणिण्णासणु उयउ अरियणहं हिमयरु।।
घत्ता—परमेट्ठि पयासणु गिरुवमु सासणु, इंदे वणिय जासु गुण।
जिण णवेवि पयत्तें कहसि हिययत्तें, थुइ अणमिय सुणेहु जणहु।।

११९. भरतजयमाला—१ कडवक। गुटका सं. ५४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

णउणिधि हरहुं तइं रयण समत्थइं चाउरंगु परियणु घणउ।
जिणि माया छंडिय दुग्गिय विहंडिय भरहेसरु तपसरणि गयउ।।१।।

१२०. चर्यागीत-कोश। प्रकाशित, शान्तिनिकेतन, १९५६।

जिम जले पणिअ टलिआ भेउ न जाअ।
तिम मण रअण समरसे गअण समाअ।।

१२१. नेमिनाहचरिउ—हरिभद्रसूरि। प्रकाशित प्रथम भाग, अहमदाबाद।

इय सुणेविणु वीर जिणइंद
अक्खाणउं संखमुणि अप्पपंचमु विगरुय हरिसेण।।१९२७।।

१२२. नेमिनाथफागु—राजशेखरसूरि। २७ पद्य। प्रकाशित।

प्रारम्भ—सिद्धि जेहिं सइ वरवरिय ते तित्थयर नमेवि।
फागुबंधि पहु नेमिजिणुगुण गाएसउं केवि।।१।।
अन्तिम—राजलदेवि सउं सिद्धि गयउ सो देउ थुणीजइ।
मलहारिहिं रायसिहरसूरि किउ फागु रमीजइ।।२७।।

१२३. आगम के अष्टपद—सोहल। ८ कडवक।

तमतमणरयहं मग्गु कहव पह मासहं थक्कइ।
पुणु तम णरयहु चारि विणि धूमप्पह चुक्कइ।
णरय चउत्थइ इक्कु मासु पुणु अद्धु णिरुत्तउ।
सक्करपह दिण सत्त रहइ मग्गु वि जिणउत्तउ।
चउवीस मुहुत्त पढम णरइ सुकइ सुइड्डु मग्गु वि रहइ।
पुणु वहहिं णिरंतरु रयणि दिणु केवलक्खु जिणवरु कहइ।।४।।

१२४. पार्श्वनाथभवान्तर—जयकीर्ति।

मरुभूइ मरिवि उप्पण्णु गयवरु कमठु कुक्कडु अहि थिउ।
वनि भमइ मइगलि दिट्ठु मुणिवरु सुद्धु सावउ वउ दिउ।

तहिं सप्पि भक्खिउ पालि अणसणु सहसरारि उप्पण्णउ।
कुक्कुडु पापी वइरभावहि णरयदुक्खु णिसण्णउ।।

१२५. गौतमरासा—
जंबुदीवि सिरि भरहखित्ति खोणीतलमंडणु।
मगहदेस सेणियनरेस रिउदलबलखंडणु।
धणवरगुव्वर नाम गामु जहिं गुणगणसज्जा,
वप्पु वसे वसुभूइ तत्थ जसु पुहवी भज्जा।

१२६. भरतबाहुबलि सम्बन्ध—५ कडवक। दि. जैन तेरापन्थी, बड़ा मन्दिर, जयपुर।
वणु जंतु मुयंतु नरिंदसिरि, महि महंतु अहिमाणिउ।
साकेयहे राउ विसणमणु, भंतिहिं मंडए आणिउ।।

१२७. योगसार—श्रुतकीर्ति। २ सन्धि। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
पणविवि जिणवीरहु णाणगहीरहु, तह गिर गणि गोयमह समु।
जह जोउ पउत्तउ तिजय पवित्तउ, अक्खमि भवियहु तं जि कमु।।६।।
सव्वह धम्मजोउ जगि सारउ, जो भव्वयण भवोवहि तारउ।
सो लइ सिद्धिय सिद्ध अणंतइं, जम्म ण मरण भवोवहि चत्तइं।।

१२८. सुदंसणपाधडी—५ कडवक। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
लहेप्पिणु माणसु दुल्लहु जम्मु, सुही वहु जीउ ण चिंतइ धम्मु।
छणम्मि छणम्मि पहिट्ठु चलेइ, ण किंपि वि आउ गलंति कलेइ।
तुमं चिरु जाउ पहिट्ठु हवेइ, मरेहि सुणेप्पिणु रोसु करेइ।
ण जाणइं मज्झु पडेसइ कालु, अचिंतउ णावइ मच्छहु जालु।

१२९. अणथमिय संधि—हरिचन्द अग्रवाल। १६ कडवक। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
अयरवालवंसें उप्पण्णइं हरियंदेण भत्तिए।
जिणु पणवेवि पयडिउ पद्धडिया बंधेण।।

१३०. मणुयसंधि—पाहल कवि। ८ कडवक। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
करि करिण परसंगि अइपयंडु, मुग्गरघाएण किउ खंडु खंडु।
महुयहु घाणिंदिय गंधलुद्धु, सो मुवउ सरोरुह मज्झे बुद्धु।
णयणिंदिय देस वसंगएण, अप्पाणउ दद्धु पयंगएण।
परिभमइं कुरंगउ ता मरण्णु, गेय झुणि जाम ण देइ कण्णु।

१३१. शिवकुमार की जयमाल—९ कडवक। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
वयनिम्गलु अज्जिय तवफलु, वरिससहस चउसट्ठि थिउ।
जिणदिट्ठिउ आगमि सिट्ठउ, आउसंति सन्नासु किउ।।६।।

एरिसु तवफलेण बंभोत्तरि तणु कयसुरहि बाउसो।
इहु सो विज्जुमालि हुउ सुरवरु दससायर थिराउसो।।

१३२. णवकारपाधडी—७ कडवक। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
जय जयहि जिणेसर पढ्ढम जिणेसर, रिसहणाहपय संथुणिवि।
सरसइ पणवेप्पिणु कर जोडेप्पिणु, अक्खमि हउं णवयारफलु।
जिणधम्मु वियाणिवि गिच्छउ जाणिवि, एउ परमत्थु चित्त धरइ।
णवयारहो फलु अक्खमि गुज्झु ण रक्खमि, हउं पभणमि हउं तुच्छ मइ।

१३३. मुनिसुव्रतानुप्रेक्षा—२२ पद्य। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
णविवि चलणमुणिसुव्वयहो, सुरनरखयरमहोरगमहियहो।
सयल विमल केवलगुणसहियहो, बारह अणुवेक्खउ भणमि।
भव्वयणह णयण विणए सहियहो, णविवि चलणमुणिसुव्वयहो।।१।।

१३४. द्वादशानुप्रेक्षा—लक्ष्मीचन्द। ४५ दोहे। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
पणविवि सिद्ध महारिसिहि, जे परभावह मुक्क।
परमानंद परिट्ठिया, चउगइगमणहं चुक्क।।१।।
ए अणुपेहा जिणु भणइं णाणी वोल्लइ साहु।
ते भाविज्जहिं जीव तुहु, जइ चाहहि सिवलाहु।।४५।।

१३५. आणंदा—महानन्द। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
गुरु जिणवरु गुरु सिद्ध सिउ, गुरु रयणत्तय सारु।
सो दरिसावइ अप्पपरु आणंदा, भवजल पावइ पारु।।३६।।
कुगुरुह पूजि म सिर धुणहु, तीरथ काइं भमेहु।
देउ सचेयणु संघ गुरु, आणंदा जो दरिसावहि भेव।।३७।।

१३६. पुष्पांजलिकथा—भ. गुणभद्र। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
सिरि मलयकित्ति पयभत्तियइ रइय कहा णियसत्तिए।
गुणभद्द गणीसें अप्पहिय भव्वह भोयहं अइमाहिए।।८।।

१३७. रत्नत्रयकथा—भ. गुणभद्र। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
सिरि मलयकित्ति पयभत्तिए एम जिणवर गुण अणुरत्तएण।
गुणभद्देहिं रइय एह कह, णंदउ णासिय जम्मदुहा।।७।।

१३८. दशलक्षणकथा—७ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
जिणणाह करहि दय महु कज्जय मय, एत्तिउ लहु संपज्जउ।
रयणत्तउ सारउ भवदुहहारउ, जिणवर सामिय दिज्जउ।।७।।

१३९. अणंतवयकहा—८ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
एत्तिउ महादिज्जउ लहु संपज्जउ, केवलणाणु सरणु विमलु।
णउ अण्णु जि मग्गमि जिणपइ लग्गमि भवि भवि बोहि होउ सयलु।।८।।

१४०. चन्दणछट्ठिकहा—गुणभद्र। ६ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर,

जयपुर।

सिरिमलयकित्ति मुणिवरहुपय, णियमणि झाइवि विगयरय।

गुणभद्दगणीसें रइय इह, चंदणछट्टिहिं सरस कह।।६।।

१४१. निर्दुःखसप्तमीकथा—भ. गुणभद्र। ५ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

गोवग्गिरिणयरि णिवसंत एण, मलयकित्तिपयभत्तएण।

गुणभद्दसूरि णामेण इय, निद्दुक्खिसत्तमि रइय तेण।।५।।

१४२. सुगन्धदसमीकथा—भ. गुणभद्र। ८ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

सिरिमलयकित्तिगुरुपय णविवि, सिरि गुणभद्दें रइय सुह।

संखेवें कह जिह गणहरिण, णिय मइ अणुसारेण तिह।।८।।

१४३. मउडसत्तमीकहा—४ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

पणविवि सिरि रिसह जु पयजुयलु, जम्मजरा मरणत्तिहरु।

आहासमि जिम जिणि लद्ध हलु, मउडाइहि सत्तमिहिं वरु।।१।।

१४४. नरगउतारीकथा—भ. गुणभद्र। ४ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

सिरि मलयकित्तिपयपंकयहं, भसलें गुणभद्दमुणीसरेण।

विरइय कह इह भवियणगणहं,णियमइ अणुसारें दयधरेण।।४।।

१४५. त्रिकालचतुर्विंशतिकथा—४ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

जिणवरु किज्जउ दय महु मणि धरि मय एत्तिउ मग्गिउ देहि लहु।

जहिं जम्मु ण कम्मु पाउ ण धम्मु, तित्थु पराणहिं मज्झु तुहुं।।४।।

१४६. अक्षयनिधानकथा—गुणभद्र। ३ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

गुरुभत्तें धम्मासत्तें मलयकित्तिमुणि सीसें।

गुणभद्दें कोमलसद्दें कह कहा विमल मणीसें।।३।।

१४७. षोडशकारणकथा—७ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

जीवंधरसामि सिवउरगामि एत्तिउ लहु महु दिज्जउ।

जहि गउ तुहु ठाणि मइं वि पराणि अण्णु ण मग्गमि किज्जउ।।७।।

१४८. लब्धिविधानकथा—६ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

सिरि गोयमसामि एत्तिउ लहु महु देहि तुहुं।

जहि जम्मु ण गामि मइं वि पराणहिं तित्थु लहु।।६।।

१४९. श्रवणद्वादशी—भ. गुणभद्र। ७ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।

सिरि गुणभद्दें गणीसरेण यह कय पण्णणुसारेण।
जिण एत्तिउ मग्गिउ देहि महु जरजम्मण मरणु हरेहि लहु।।

१५०. मुक्तावलीकथा—कडवक ११। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
जो विहिधिवि वसइ एह विहि, सो कमेण जिह पउ मरहु।
सिवसोक्खु लहेवि सइं उत्तरेवि, भवसमुद्दु दुग्गहु लहु।।११।।

१५१. निर्झरपंचमीविधानकथा—श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
माणु म करहु म रूसहु मणु खंचहु अचलु।
जे ण भणंति खडारा पंचम्मि पंच पहु,
अम्हहं ते दरिसावहु अवचिल सिद्धिपहु।

१५२. सुखसम्पत्तिविधानकथा—७ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
जो पढइ सुणइं मणि भावइं जिणु आराहइ, सुहसंपइ सो णरु लहइ।
णाणु वि उप्पज्जइ भवदुहु खिज्जइ, सिद्धि विलासिणि सो रमइ।।७।।

१५३. चन्दायनव्रतकथा—भ. गुणभद्र। २ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
इय चंदायणवउ अक्खिउ कय सिउ मलयभत्तिए।
गुणभद्दगणीसें विमलमुणीसें, भव्वयणहं णिय सत्तिए।।२।।

१५४. आकाशपंचमीकथा—भ. गुणभद्र। ६ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
कह अक्खिय जिह मइं लक्खिय, मलयकित्ति पयभत्तें।
गुणभद्दें कोमलसद्दें मुत्ति सुहायय सत्तें।।६।।

१५५. भिल्लाष्टमीकथा—१० कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर,जयपुर।
सिरि वीर जिणेसर भासियउ गोयम कहिउ विचारि।
अट्ठमि वय उववास कह जिणसासणे परिवारि।।१०।।

१५६. रोहिणीकथा—६ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
णंदउ सिरि जिणसंघं णंदउ तह भूमिवालु णिविग्घं।
णंदउ लक्खणु लक्खं दिवु सया कप्पतरु व जइ तिक्खं।।६।।

१५७. जिणरतिकहा—८ कडवक। श्री दि. जैन तेरापन्थी बड़ा मन्दिर, जयपुर।
लक्खणु छंदु ण जाणउ सरसइं देवि सुरेसरि।
ता कइयणु जंपइ हिय आसंकइ देहि बोहि परमेसरि।।८।।

१५८. सिंहसंबोधनजयमाल—३ कडवक। श्री पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
भो भो पंचाणण भवदुहमाणण, किं न वियानहि पुव्वभओ।
मारीच वि हुंतउ निउ भरहह सुउ एवहि, जायउ तुह जि मयो।।१।।

१५९. अर्हंकार अक्षर की पूजा—उ ६१ क और ख। ६.५ × ५। श्री दि. जैन

पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

ण च डायणि सायणि परहवेइ जोयणि मुंचवि सायइ।

दालिद्दु दुक्खयणउ हक्कइ जहि इह मंसयत्ता चइ।।

१६०. गणधरवलयपूजा—उ ६२ क। ६.५ × ५। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

वरगणिंद समरंतहं फिट्टइ वाहिअसे पलउ।

वहु पावपणासइ हो पलगि महापुण सवि सुहजणाण।।१०।।

१६१. क्षेत्रपालपूजा—उ ६५ क। ७ × ५.५। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

जिण अगवाणी वरेप्पिणु भावधरेप्पिणु धर धर थापें भाव धरे।

दुहयणदुहणासण पापपणासण विघ्नपयं पयसिद्ध परे।।८।।

१६२. अनुप्रेक्षा—पं. जगसी। १६ पद्य। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

चउगइ संसार दुक्खु चउरासी, जोणि लक्खु गिल्हइ मेल्हइ जीउ सरीरयहो।

सत्तु वि मित्तु उपज्जइ राउवइ रंकु, छाजइ संसारि समुदि वन्हदुहु सहइ।

एकिलउ सहाइ हीणु नरयह जाइ दीणु, मोक्खह कारण जाणि भासिय जिणिंद णाणि।।५।।

१६३. दशलाक्षणिक जयमाल—१० कडवक। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

उत्तम खम मद्दउ अज्जउ सच्चउ, पुणु सउच्चु संजमु सुतउ।

चाउ कि आकिंचणु छ बंभचेरु धम्मु जि अक्खउ।

जिणणाह महिज्जइ मुणि पणविज्जइ, दहलक्खणु पालियइ णिरु।

भो खेमसीह सुय भव्व विणयजुय, होलि वम्ह इहु करहि थिरु।।१०।।

१६४. क्षमावाणी अर्घ—गुटका सं. ६३। ६.५ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

कुसुमावलि दिण्णउ फल संपुण्णउ सोहइ थाल सुवण्णमउ।

१६५. सिद्धपूजाजयमाल—गुटका सं. ६३। ६.२५ × ५.५। ११ कडवक। श्री दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

विसेसेण वि कहिय बुहा,

जो पढे पढावइ णियमण भावइ सो णर पावइ सिद्ध सुहं।।११।।

१६६. सप्तऋषिपूजा—गुटका सं. ६३। ६.२५ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, धर्मपुरा, दिल्ली।

परिसिवरा तवलच्छीधरा मणवयकायतिसुद्धिहिं।

जो झायइ सो वइ मंडिज्जइ वसुमहिहिं।।

१६७. सम्बोधिरसायन—वे. सं. २७६। ३५ दोहे। गुटका सं. ३८। पत्र सं.

१२८-१३३। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

प्रारम्भिक—सावकुल कहमि वि लहइ जम्मु,

जइ जीवह पालिसि जिनह धम्मु।

जिम जिम भव भव वनि लहेसि दुख।

तिम तिम पछितावइ पडिसु मुख।।१।।

अन्तिम—

बाहिर अब्भंतर तव वेह, णो करि पुत्रह संबोउ कम्महाणि।

अह पालि न सक्कइ जइ चारु, तउ दिढ करि सावयधम्म चित्त।।३५।।

१६८. दशलाक्षणिक जयमाला—आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

इय काऊण णिज्झरं जे हणंति भवपंजरं, णिरोय जरामरं ते लहंति सुखंवरं।

जे ण मोक्खफलु तं पाविज्जे, सो धम्माधिउ पहउ णिज्जइ।

खम खमायलु तुंगइ देहउ, मद्दव पालउ अज्जव साहउ।।

१६९. हरिवंशमध्ये नेमिनिर्वाणकाव्य—स्वयम्भू। पत्र सं. ६३। ६.५ × ५। श्री दि. जैन पंचायती मन्दिर, दिल्ली।

अन्तिम—

अइसय संपत्तउ बढ्ढियउ नव केवललद्धिय लद्धियउ।

तइलोकपहुत्तण धारएण सयमेव सयंभु भडारएण।।४०।। सन्धि २

इति हरिवंशमध्ये स्वयंभू कृत नेमिनाथ निर्वाणगमणं समाप्तः।

१७०. विज्जुच्चरजयमाल—१५ पद्य। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

इय चिंतिव्वउ रयणदिणु दिढ सम्मत्त चित्ति दय संजमु।

भवि भवि सामिउ परमजिणु, होउ होउ सम्माहिय महु मरणु।।१३।।

१७१. आदित्यवारकथा—पं. सुरजण। गुटाक सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार,जयपुर।

पासजिणिंदपसायहं दिवसिह इउ कहइ।

पंडिय सुरिजणु पासहं भत्तउवउ लहइ।।

जो यहु पढइ पढावइ णिसुणइ कन्नु दइ।

सो जसुकित्ति पसंसिय पावइ परम गइ।।

१७२. कालावली की जयमाल—गुटका सं. २६६। ६ कडवक। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

इगवीस सहासइ वरिसइ, तासु पमाणु पयासिउ।

छह कालहु एहु समासें, माणु जिणिंदें भासियउ।।६।।

१७३. बुद्धिरसायण दोहडा—६७ दोहे। गुटका सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

णेमीसुर हउं पयसरणु, सरसइ केरउ दासु।

ओणमचरित्तु पयासियउ, बुधजण करहु म हासि।६६।।
पढतहं सुणतहं जेवि णर, लिहिवि लिहावइ देहिं।
ते सुहु भुंजहिं विविह परि, जिणवरु एम भणेइ।।६७।।
इति बुद्धिरसायणओ णमचरित्तदोहडा समाप्तः।

१७४. नेमीश्वरजयमाल—गुटका सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
घायपहंजण भवदुहभंजण, भवियणकमलदिणेसर।
सिव ए विहिणंदण णवणाणंदण।। जय जत्थ णेमि जिणेसर।
जिणपुंगव णेमिकुमार णमो, सुरवइ सय वंदिय पाय णमो।
मरगयमणि सावल गत्त णमो, सहसट्ठसुलक्खण जुत्त णमो।

१७५. सत्यपुरीयउत्साह—
बहुएहि तारायणेहि रवि पसरु किं भिज्जइ।
बहुएहि वि विसहरेहि मिलिवि किम गरुडु गिलिज्जइ।।

१७६. बारहनावउं—जिनधर्मसूरि (१३वीं शताब्दी)।
तिहुयणमणि चूडामणिहिं बारहनावउं धम्मसुरनाहह।
निसुणहु सुयणहु नाणसणाहह पहिलउ सावण सिरिपुरिय।।
कुवलयदलसामण घणु गज्जइ नं मद्दल-मंडल झुणि छज्जइ।

१७७. द्वादशभावनाविचार—केटलाग ऑव संस्कृत एण्ड प्राकृत मैन्युस्क्रिप्ट्स इन द राजस्थान, भाग ३ अ, जोधपुर, १९६७, पृ. ७५।

अन्तिम—
इअ बारह भावण सुणवि राउ, मण मज्झविअं भिउं भवबि राउ।
रज्जवि कुणंतु चिंतयइ गाउ, परहरवि कुणइ कारण पमाउ।।१४।।

१७८. मालारोहिणी—ब्रह्म नेमिदत्त। गुटका सं. १७। दि. जैन पाटोदी मन्दिर, शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
पणवेप्पिणु णिम्मलु णासिय कलिमलु, वीयराय जयतारउ।
पुणु अक्खउं छन्दुवि मुत्तियदामुवि, भवियहो मणह पियारउ।
× × ×
धणु जोव्वणु कंचणु रयणु परियणु भवणु वि सव्वु।
जलवुब्बुय करि कण्ण जिय चंचलु म करहु गव्व।।

१७९. शान्तिनाथदेवरास—उपाध्याय लक्ष्मीतिलक। प्रकाशित सम्मेलन-पत्रिका, ४७, ४, पृ. ३७-४५।
एहु रासु बहु भासु लच्छितिलयगणि निम्मयउ।
ते लहंति सिववासु जे नियमणि ऊलटि दियहि।।
महि कामिणि रवि इंदु कुंडलु जुयलि ण जास हइ।
ताम संति जिणचंदु अनुइउ रासु वि चिरु जयउ।।६०।।

१८०. श्रावकाचार—देवसेनसूरि। २५० दोहे। कारंजा भण्डार में।

णमकारेप्पिणु पंचगुरु, दूरि दलिय दुहकम्मु।
संखेवे पयडक्खरहिं, अक्खनि सावयधम्मु।।

१८१. भावनासन्धि—जयदेवगणि। ६ कडवक। जैन गूर्जर कविओ से उद्धृत।

पणमवि पुणसायर भुवणदिवायर, जिणचउवीसइ इक्कमणि।
अप्पं पडिवोहइ मोह निरोहइ, कोइ भव्व भावण वि सुणु।।१।।
निम्मलगुणभूरिहिं ।सिवदिवसूरिहिं पढमसीसु जयदेवमुणि।
किय भावणसंधी सिवभावु सुगंधी निसुणउ अन्नुवि धरउ मणि।।६२।।

१८२. श्रावकविधिप्रकरण—३२ गाथा। जैन गूर्जर कविओ से उद्धृत।

इय आगमविहि सावगई, पद दिणु किरिया सारु।
जाणिउ जिणपहि रइ करह, जिम छिन्नउ संसारु।।३२।।

१८३. आदिजिनकलश—जैन गूर्जर कविओ से उद्धृत।

वद्धमाणजिणु पणविवि भावें, कलिमलकलुए विवज्जिउ पावें।
संचालेवि अइरावउ गइंदु, जसु जम्मण्हवणि आयउ सुरिंदु।
घत्ता—परमेट्ठि पयासणु णिरुवमु सासणु, इंदे वणिय जासु गुण।
जिण णवेवि पयत्तें कहसि हियत्तें, थुइ अणमिय सुणेहु जणहु।।

१८४. कसायपाथडी—गुटका सं. ४६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

इय मूल कसाइहिं जणिय पसाइहिं, हउं चउगइ संतत्तउ।
एवहिं ध्रुव मेलमि भवसुह मेलमि, जिणतवयरणह सत्तउ।

१८५. अनुप्रेक्षा—ईसर। गुटका सं. ५४। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

पुत्तकलतु सरीरसंपइ जीव कोर न तेरउ,
अण्णु पुग्गलु जडु अचेतनु कहाइ सु तुज्झ मेलउ।
तू ज्ञानवंतु महंतु चेतनु सुद्धु अप्पा जोइ,
अण्णत्तणु प्रेक्षा कहइ जियडा अण्णु पुग्गलु जोइ।।५।।

१८६. अनुप्रेक्षा—रइधू। ७ कडवक। गुटका सं. ५४। श्री दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

जाणिए हउं इहु देहु, मोहु चएप्पिणु तहु उवरि।
तहिं ठिउ विगय वियप्पु, झाइज्जइ चेयण णवरि।।७।।

१८७. ज्ञानपिंडसार—२० कडवक। गुटका सं. ५४। श्री दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

अहु अहु सत्थवाह कुलभूसणु, णिसुणि धम्म हउं कहमि अहिंसणु।
विणु कज्जेण जीउ जे मारहिं, कुंतलउडि अरिघाय पहारहिं।।

१८८. चतुर्गति की पद्धडी—कडवक ४। गुटका सं. ५४। श्री दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

चउगइ संसारभमंतहं दुक्खइं कहमि तुहारइ,

जइ सक्कइ बिहि मेलाइवि तो मेरु हें गरुयारइ।

१८९. णेमीश्वर नियंछण—कडवक ४०। गुटका सं. ५४। श्री दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

अइसय संपत्तिउ वड्ढियउ, णवकेवल लद्धिउ लद्धियओ।

तइलोयपहुत्तण धारयण, सयमेव सयंभु भगारयओ।।४०।।

१९०. णाणपिंड की पाधडी—२० कडवक। गुटका सं. ५४। श्री दि. जैन पाटोदी मन्दिर, जयपुर।

जे कह हिअ दिट्ठु वि दिट्ठउ, असुवउ सुवउ कहंति।

ते अंध बहिर णर पाविय, दुक्किय महिहि भमंति।।

१९१. अष्टान्हिकापूजा—गुटका सं. २६। १८ पद्य। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

आरतिय जोवई कम्मइ धोवइ सग्गापवग्गह लहुहु लहइ।

जं जं मण भावइ तं सुह पावइ दीपु विकासु ण भासइ।।१८।।

१९२. चिन्तामणिपार्श्वनाथ पूजा—सोमसेन। उ ४६ ख। ६.५ × ६। ले. का. सं. १६०१, माघ कृ. ७, बुधवार। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

तेसु पासजिण ता तणउ भिच्चु, इम भणइ सोनसेणव्व सच्चु।

पुत्रणाणुवंतु पणवउ तिकाल, भवणउ तह रखु हियहु दयाल।

१९३. आदिनाथ की आरती—गुटका सं. २५। ६.२५ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

इह जो भवियण भावण भावहि सो वरियं।

१९४. बीसविहरमाणपूजा—गुटका सं. २५। ६.२५ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

ए बीस जिणेसुर परमपयं।

१९५. पंचमेरुपूजा—गुटका सं. २५। ६.२५ × ५.५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

इय थुणवि जिनेसुर सिव सुहाई सो पावइ।

१९६. षोडशकारणपूजा—गुटका सं. २६। ७.५ × ६.२५। श्री दि. जैन नया मन्दिर, दिल्ली।

ए सोलहकारण कम्मवियारण सिद्धवरंगन हिययवरा।।१।।

१९७. पोसहरास—श्री ज्ञानभूषण गुरु। गुटका सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।

भव मझारि पुनरपि न आवइ, जेह वउफलु जस गमइ ते

नर पोसउ काइं न भावइ।

एणि परि पोसउ धरहु, जे नर नारि सुजाण—
श्रीज्ञानभूषण गुरु इम भणइ ते नर करहु वखाणु।।१०१।।

१९८. सप्ततत्त्व—गुटका सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
जो नरु इसु कहुं पढइ पढावइ
तिसु कहु दुरिउ न आवइ एकु खिणु,
जो नर सत्त तच्च मनु लावइ
सो नरु ही सिवपुरि पावइ छोडि तणु।।२०।। इति सप्ततत्त्व समाप्तः।

१९९. अनुप्रेक्षा—१२ कडवक। गुटका सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
विसयविरत्तु महंतु निम्मलु धम्मु जिय दयसारहो,
मरणु होइ संन्यास सेती सव्व भवखयकारहो।
बारह परिस्सहा राति दिवसहिं नित्त हियडा भावहिं,
बोधनुपरेक्खा कहइ जियडा मुकतिरमणी पावहो।।१२।।

२००. दशधर्म—ब्रह्ममुनि। गुटका सं. २६६। १० पद्य। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
इहु नवपयारि जु करइ दिढु करि, धम्मु दहविह भासए।
ब्रह्म परम मुणिंद भासहि, सो जिणागमि कीजए।।१०।।

२०१. समाधि—५० पद्य। गुटका सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
जो अणुदिणु झावइ, सो अजरामरु सिवसुहु पावइ।
सम्माधी जिणदेवहं दिट्ठी, जो करई सो सम्माइट्ठी।।५०।।

२०२. पंचकल्याणकरास—मुनि विनयचन्द। २४ पद्य। गुटका सं. २६६। आमेर शास्त्र-भण्डार, जयपुर।
तिहु आयंविलु जिणु भणइ, चउहिमि होइ उववासु गिहत्थहं।
अहवा सयलह खवणविहि, विणयचंद मुणि कहिउ समत्थहं।।

२०३. लक्ष्मीवल्लभ—×। पंचायती दि. जैन मन्दिर, दिल्ली।
इम वीरजिणवर णाणदिणयर सयललोयसुहंकरो।

२०४. जिनमाला (फुल्लमाल)—नेमिदत्त। भानपुरा के भण्डार के हस्तलिखित गुटके में। २५ छन्द।
सयल जिणेसर पयकमल पणविवि जगि जयकार।
फुल्लमालजिणवर तणी पभणउं भवियणतार।।१।।
सिरि रिसह अजिय संभव अभिणंदण सुमित जिणेसरु पापणिकंदण।
पदमप्पह जिण णामें गज्जउं, सिरि सुपासु चंदप्पहु पुज्जउ।।२।।
पुप्फयंतु सीयलु पुज्जिज्जइ, जिणि सेयंसु मणिहिं भाविज्जइ।
वासुपुज्जु जिणपुज्जु करेप्पिणु, विमलु अणंतु धम्मु झाएप्पिणु।।३।।
संतिकुंथुअरमल्लिजिणेसरु, मुणिसुव्वय परमेसरु।

णमि णेमीसरपाय पुज्जेसिउ, भवसायरहुं पाणिय देसिउं।।४।।
पासणाह भवपासणिवारणु, वड्ढमाणजिणु तिहुवणतारणु।
ए चउवीस जिणेसर वंदिवि, सिवि गामिणि सारद अहिणंदिवि।।५।।
सिरिमूलसंघ महिमारयणायर, गुरु णिग्गंथ णमउं सुयसायर।
सिरिजिणफुल्लमाल वक्खाणउं, नरभव तणउं सार फल माणउं।।६।।

आर्या—

भो भवियण भव भवहरण तारण चरण समत्थ।
जाती कुसुम करंज लिहि पुज्जहु जिण बोहत्थ।।७।।

त्रिभंगी छन्द—

जाती सेवत्ती वरमालती चंपय जुत्ती विकसंती।
बवर श्रीमाला गंधविसाला कुज्जय धवला सोभंती।।
रत्तुप्पल फुल्लहि कमनवल्लहि जूहीजुल्लहि जयवंती।
मचकुंदकयंवहि दमणयकुंदहि नाना फुल्लहि महकंती।।८।।
सग्गमोक्खसुहकारिणी मालजिणिंदह सार।
विणउ करेप्पिणु मंगियइ जिम लागइ भवपार।।९।।

मौक्तिकदाम छन्द—

सुमोग्गर फुल्ल महकइ माल, मधुकर दुक्कहि गंधरसाल।
गुपाडल पारियजाइ विचित्त, जिणेसर पुज्जहु लोयपवित्त।।१०।।
सयल सुराधिप पुज्जिउ, पुज्जहु सिरि जिणदेउ।
धणकणजणसंपय लहहु, दुक्ख तणउ होइ छेउ।।११।।
सुरासुरकिंण्णर खेयर भूरि, जिणिंदु पयच्चहिं णहिं नारि।
सुअच्छर गावहिं सोक्खधाम, जिणिंदहं सोहइ मोत्तियदाम।।१२।।

२०५. श्री कमलजयमाला—

पणवेप्पिणु भावि विमलसहावि भत्तिए संतिजिणेसरहो।
निसुणिज्जउ भवियउ भवदुहखवियउ पुणु अक्खमि नवकारफलु।।
नवकारविहूणउ जीव तुहुं भवि भवि संपत्तु अणंत दुहुं।
एकिंदिय जोणिहिं परिभमीउ वियलेंदिय बहुदुक्खइं गमीउ।
अलहंतउ पुण नवकार तुहुं वेंदिय जोणियहिं पत्तु दुहुं।

२०६. पात्रपरीक्षा—७ सन्धि। दि. जैन शास्त्र-भण्डार, भानपुरा के हस्तलिखित गुटके में।

पणविवि तित्थंकर तिजयसुहंकर वाहिए सरियर णाणणिहि।
गणहर आयरियइं जस्स वि फुरियइं वोच्छमि पत्तपरिक्खविहि।।
पढमजिणंद तिजयवर पत्ताइं केवलणाणपरमगुणजुत्तइं।
जहि वरणंत चतुट्ठय लद्धइं पुज्ज णिज्ज ते तिजयपसिद्धइं।

ठिय समभाइं ण अण्णहु अंचहिं अप्पउ अप्पसरूवें संचहिं।
तिजयणाह सुरणरह पहाणइं करहि जिणंद पंचकल्लाणइं।
गुरगणहर आयरिय पवित्तइं तहविहि दाणपूयफल उत्तइं।

२०७. चच्चरी—श्री अगरचन्द नाहटा के संग्रह में। ३० पद।
भगति करिवि पहु रिसहजिण बीरहचलण नमेवि।
हउं चालिउ मणि भाउ करि दुइ जिण मणि सुमरेवि।।१।।
गाँवि नयरि पुरि जिणभवणि जे चाचर पभणंति।
चउगइ गमणु निवारि नर ते सिवसुहु पावंति।।३०।।

२०८. दिघम सवरीभास—श्री अगरचन्द नाहटा के संग्रह में। १६ पद।
गयगमणि बाली मयणची आली,
दिधमि निय-नयणु लेवनि निहाली।

२०९. जिनचन्द्रसूरिफागु—श्री अगरचन्द नाहटा के संग्रह में। ५० पद।
प्रारम्भिक—
अरे पणमवि सामिउ संति जु सिववाउलि उरि हारु।
अरे अणहिलवाडामंडणउ सयवह तिहुयणसारु।।१।।
अन्तिम—
सिरि जिणचंदसूरि फागिहिं गायहिं जे अति भावि।
ते बाउल अरु पुरुसता विलसहि सिवसुह सावि।।५०।।

२१०. छहकालचक्कसनासु—कइपरमेसर। एक हस्तलिखित गुटके से। ६ कडवक।
उप्पण्णु तित्थु तित्थयरदेव, चक्केसरहलहरमहिस-सेव।
तिक्खंड णाह पडिवासुदेव, चउवीस महातहि कामदेव।।
आगमु पुराणु चउसट्ठि भेय, केवलि परमेसर रिसि अणेय।
णवणारायणु एयारह वि रुद्दु, उप्पण्णु पयड जिह जगि समुद्दु।।
घत्ता—हलहरकेसव कित्तिय धम्म पयत्त ण लित्थइ।
अइसइ केवलणाण हवइ इह कालि चउत्थइ।।४।।
पंचमउ कालु दुसमहु रउद्दु, होइय सय दुहसमुद्दु।
तहेव खयर होसिय लोय ताम, गय वरिस सहसइ कइस जाम।
उच्चत्थु तित्थु आहुठ्ठ हत्थु, जीवेसहि बीसासयणि रद्ध।
कंदलिय णरवइ अत्थलुद्ध, होएसहिं अवरोपरु सकुद्ध।
लुट्टेसहि पट्टणगामदेसु, दंडीसहिय पामरजण असेसु।
कंदरगिरिवण चरणण पवेसि, णिव सेसहि णर मिलयाहि देसि।
उच्च असोयह सट्ठिवि विम्ह गाम, आसातरवरहो सहिय गाम।
सझेसहि मठदेवलविहार, पूरेसहि सरवरजलअपार।
घत्ता—जणु होसइ दुट्ठ हे भत्तउ, जीवु म होसइ पावमइ।

उवहासु करेसहि जिणवरहो, परधणमहिला सत्त अहो।।५।।
अइदूसहु दुसमु भीमकालु, होएसइ छट्टउ दुहविसालु।
सोलह संवच्छर आउतिम्बु, उच्चु वि तिहि होसइ एकु हत्थु।
तहि कालि णाहि वउणियमु धम्मु, जणु सयलु करेसहि असुहकम्मु।
णिवसेसइ गिरिगुहकंदरेहिं, जलथलदुग्गम्मि वणंतरेहि।
धणधण्णरहिय दुव्वलसरीर, आहारकंदउंवरकरीर।
कयविक्कयवरववहारचुक्क, रसतेलहीणपंगुरणमुक्क।
कम्मह अणिट्ठ पाविट्ठ दुट्ठ, मलगंडवाहि संगहिय धिट्ठ।
खरफरस परोप्पर अप्पचित्त, होसहि अवरोव्वरु कुहियगत्त।
धम्मत्थविवज्जिय दुक्खजालु, छट्टउ अइ दूसहु कहिउ कालु।
घत्ता—इगवीससहासइं वरिसइं, तासु पमाणु पयासिउ।
छहकालहु एहु समासु, णाणु जिणदेवभासियउ।।
इय छक्कालुचक्क संमत्तो।

२११. त्रिंशत्चतुर्विंशतितीर्थंकरपूजाजयमाल—कवि सहणपाल। प्रकाशित 'जैन सन्देश', शोधांक २१, २० मई, १९६५, पृ. २३।
सुणि सवणि सुधीणिम विणयवाणि, महु दासहु कलुमहापवाणि।
लोयसिरि चडावहि णाणलेय, महु विग्गहु वरगुण अहुमेय।।
सहसत्ति सम्पहु करि पसाउ, पहु सव्व भव्व सावय सहाउ।
विज्जहु णियवारइ बुहविपास, करजोडमु थिर करताल णास।
मिच्छत्त महण सुरव्वणाम, सयसत्तवीस अत्तरकधाम।
सासव सिरिसुहभोग वण्ण मालु, घरघरणि पयंपइ 'सहणपालु'।
घत्ता—पुच्छियहु लिहिय जारसी, मुणिय णामकुसुम पढडिय मुणे।
गुंफिय बारासरि भण्णकमले, संठिय चलणद्दय अद्धतणे।।३०।।
इति तीस चतुर्विंशति तीर्थंकर पूजा।

२१२. सीमंधरस्वामीस्तोत्र। प्रकाशित 'जैनयुग', पुस्तक ५, अंक १-३, वि. सं. १९८५-८६, पृ. ५६-५७। २० पद।
नमि नमि सुर असुर नरवंइ वंदी पयं
रयणियर करनियर किसिकरपूरियं
पंचसई धणुधणुह परिमाण परिमंडियं
थुणह भत्तीई सीमंधरसामीयं।

२१३. कवि चन्द्रसेन—सिद्धचक्र जयमाला १० पद्य।
घत्ता—इय वरजयमाला परमरसाला विधुसेणेण वि कहिय थुदिं।
जो पढइ पढावइ णियमणि भावइ सो णर पावइ सिद्धगुरं।। (अन्त्य)

२१४. श्रुतकीर्ति—अनन्तविधानकथा, दशलक्षण कथा।

तिहवणकित्ति मुणिंदह सिस्सइ, आयरिउ जो मालवदेसइ।
सुदकित्ति पयत्तइ जिणपयभत्तइ, विरइयणंतविहाणविहि।।

२१५. कवि मधु—रविवासरकथा।

प्रारम्भ—केवलसिरिसारहु गुणगणधारहु, कम्मकलंकवियारहु।
उवसग्गणिवारहु पयसुरसारहु, पणविवि पासभडारहु।।
घत्ता—जे रविवासरवउ करहिं गलिय मउ दिसणव्व वयधारणं।
ते णरिंदकित्तरणु लहर सुरत्तणु परमबंध साहारणं।। (अन्त्य)

२१६. अर्जुन—आदित्यवारकथा।

प्रारम्भ—पासजिणहपय पणविवि सरसइ चित्त धरि।
सुहु वयहु फलु अक्खमि णिसणहु भाव करि।।
अन्त—पोमनंदि उवएसें अक्खण इम कहिय।
जो इह पढइ पढावइ सिवपुरि सो लहिय।। (अन्त्य)

२१७. मालारोहण—×।

इय पंचउ पणवेवि गुरु भवियहं भत्ति करेवि।
मालारोहणु पायडमि णिसुणहुं भाउ धरेवि।।

पुरानी हिन्दी की रचनाओं के कतिपय अंश

१. हरिषेणचरिउ—कवि शंकर। प्रकाशित, जैन-सन्देश, शोधांक ६, ४ फरवरी, १९६०, पृ. २१७-२०। र. का. वि. सं. १५२६।

जं चिरकाल वयण मइ वुत्तु, हास कोडि इह कोह संजुत्तु।
तं महु अज्जु खमहु णिरु सव्वु, चढि विमाण जाहि घर बप्पु।।६३४।।
इह संबोह मंति पाठयउ, आपुणु दिक्ख लइवि संठियउ।
हारडोर अंबर सुविशेष, उत्तारिय आभरण विशेष।।६३५।।
अंसु-पवाह-णयण परिचवइ, गह भरि आयउ किंपि ण लवइ।
ताम णरेसरु दिट्ठु कर चित्तु, पुच्छइ मंति कहहिं जं चित्तु।।६४२।।
ता मंती सयलु वि अक्खियउ, एकु वि गुज्झु ण तह रक्खियउ।
जिम कइलास सिहरि संपत्तु, तिम संसारह भयउ विरत्तु।।६४३।।
इयर अंतेवर पहुंती आइ, जयचंदा कहु लेहु वचाइ।
करुणपलाउ करंती तहां, चक्कवट्टि हइ मुच्छिउ जहां।।६४६।।
हा ! पिय, पिय किं कियउ अजुत्तु, गइ वि तवोहण संठिउ पुत्तु।
काहे राजभंगु तुम कियउ, पुत्तवियोग जीउ किं दियउ।।६५०।।

२. सदयवत्सवीरप्रबन्ध—भीम। प्रकाशित।

अडयल्ल : जिम जिम केसरिपइ ऊहटइ, जिम जिम विसहर नूलीयटही।
दीनवयण जिम जंपइ सूरु, देसि देसि कीधइ बहु पूरु।।

३. सदेवच्छ सावलिंगा चउपई---मुनि केशव। सम्पादक---डॉ. मंजुललाल मजूमदार। प्रकाशित, सा. रा. रिसर्च इन्स्टीट्यूट, बीकानेर।

कर जोडी मुहतो कहइ, मुणि ओझा सुविचार।
एक भणावो अम्ह तणी, पुत्री रति अणुहार।।
दृढ़ कच्छा कर वरसणा, बोलता मूंट मिट्ठ।
रणं सूरा जगि वल्लहा, ते मइं विरला दिट्ठ।

४. वसन्तविलास---×। सं. प्रा. कान्तिलाल बलदेवराम व्यास, बम्बई, द्वि. सं., १९५७।

नयर निरोपीय ती वनु जीवनु तणउं युवान।
वासभुवनि तिहां विलसइं जलसइं अलीअल आण।।१४।।
कानुकजनमन जीवनु ती वनु नगर सुरंगु।
राजु करइ अविभंगिहिं रंगिहिं राउ अनंगु।।१६।।

५. प्रद्युम्नचरित---सधारु। प्रकाशित।

सो सधार पणमइ सुरसुति।
रहटमाल जिउ यह जीउ फिरइ, तिसकउ अंत न कोउ लहइ।

६. राउल वेल---रोडा। प्रकाशित।

पारडी आंतरें धणहरु कनसउ, सरय जलय बिच चाँदा जइसउ।
सुतेर हारु रोमावलि कलिअउ, जणि गंगहि जलु जउणाहि मिलिअउ।

७. पृथ्वीराजरासो---चन्दबरदाई। प्रकाशित।

हहकंत कूदन्त नंचे कमंधं
कडक्कंत वज्रंत कुट्टन्त संधं
लहक्कंत लूटंत तूटंत भूमं
झुकं ते धुकंते दोऊ वथ्थ झूमं
दडक्कंत दीसंत पीसंत दंसं।

८. माधवानल कामकन्दला---गणपति। सम्पादक एन. आर. मजूमदार। प्रकाशित, ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीट्यूट, बड़ोदा।

अपनी तलि अवला इसी, नारि न बीजी कोइ।
विह बावी जग मोहवी, मोहणवल्ली सोइ।।२,६७।।
निर्मल मोती नासिका, नयणे कज्जल-रेह।
भमहि धनुष शर पूरियां, सुहड सहइ नहीं तेह।।२,८४।।

९. ढोलामारू रा दोहा---×। प्रकाशित।

जिणि देखें सज्जण वसइ, तिणि दिसि वज्जउ वाउ।
उआं लगे मो लग्गसी, ऊही लाख पसाउ।।
हइ रे जीव निलज्ज तूं, निकस्यू जात न तोहि।

प्रिय विछुड़त निकस्यउ नहीं, रह्यउ लजावण मोहि।।३७३।।
विरह विआपी रयणि भरि, प्रीतम विणु तन खीण।
वीण अलापी देखि ससि, किस गुण मेल्ही वीण।।५६६।।

१०. कुतुबशतक—×। प्रकाशित, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन।
साहिब सीं सूरत्तियां, हूं मालन इहि कम्म।
जिउं किउं दक्खावल्लिया, जउ रवि लग्गइ अंब।।६।।
केसा के कसि बंधियां, के छुट्टियां रुलंति।
जाणे सप्पणि अप्पणा, चर चिंदुआ भखंति।।११।।
जउ जोरां तउ तुज्झ ही, जउ गोरां तउ तुज्झ।
एह करंदा मुज्झ हइ, अउरु करंदा बुज्झ।।३०।।
साहिजादे साहिबियां, साहि करंदा लल्लि।
लज्जा लोयन नच्चणां, लोइ हसंदे कल्हि।।३४।।
मइ सउणा सुणि दिक्खिया, आज अणंदी बेलि।
साहिबियां सर मज्झरां, हंस करंदा केलि।।६३।।

११. श्री शान्तिनाथदेवरास—उपाध्याय लक्ष्मीतिलक। प्रकाशित, सम्मेलन-पत्रिका, भा. ४७, अंक ४।
संतिजिणेसर चरण कमलु, कमलह आवासू।
उत्तंरिय निय उत्तमंग, सुर हिय दस आसू।।
सवणमुहूसवु चरिउ तासु, विरइसु संखेवी।
नाचहु भवियहु भाव सारु, सिंगारु करेवी।।१।।
अत्थि एत्थु हथिणागपुरु, कुरु मंडल-मंडणु।।
अच्चब्भुय जसु रिद्धि पिक्खि, संकिउ संकंदिणु।।
धाइउ नियपुरि सरइ तत्थ, संमंतु संभालइ।
घरदेउल आराम देव, देवी अट्टालय।।२।।
एहु रासु बहु भासु 'लच्छितिलय' गणि निम्मयिउ।
ते लहंति सिवबासु जे नियमणि ऊलटि दियहि।।५६।।
महि कामिणि रवि इंदु, कुंडलजुयलिण जास हइ।
ताम संतिजिणचंदु, अनुइउ रासु वि चिरु जयउ।।६०।।

परिशिष्ट (१)

संस्कृत साहित्य में उपलब्ध कतिपय अपभ्रंश पद्य

भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्र, सम्पादित—मनमोहन घोष, रॉयल एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता, १६५६।

मोरल्लउ णच्चन्तओ मेहागमे संभन्तओ।३२, ६४
एए गज्जन्ता तोयं मुंचन्ता।
लोयं छादन्ता मेहा संपत्ता।।३२, ६५
मेहणिरुद्धं पेक्खिअ वोम्मं।
पत्थिअदारा अंसुकिलिण्णा।।३२, ६७
पवणहओ सलिलधरो।
भमइ णहे अहियसमो।।३२, ६६
मोहराअदो णइजोण्हओ।
णिच्चणिप्पहो एस चन्दओ।।
एसो मेहादो णहन्तो अचलणिहो
लीला उक्कोलं दाणन्तो सहि रुचिरो।
वाआलं खे पिच्छाणो पवणजवो
संसारन्तो विज्जुज्जोदो भमदि दुदं।।३२, १६६

आ. भरतमुनि द्वारा रचित ये ध्रुवगीतियाँ हैं। नाटकों में ऐसी गीतियों की रचना प्रायः बोलियों में हुई है। संस्कृत के प्रसिद्ध कवि एवं नाटककार अश्वघोष तथा कालिदास ने भी प्राकृतप्रभावापन्न अपभ्रंश के कुछ अंश रचे थे, जिनके निदर्शन आज भी उनकी रचनाओं में विकीर्ण हैं। विक्रमोर्वशीय के अन्तर्गत चर्चरी रचना भी अपभ्रंश की है। इसी प्रकार तन्त्र-मन्त्र के ग्रन्थों में भी अपभ्रंश के पद्य मिलते हैं।

महाकवि कालिदासकृत विक्रमोर्वशीय नाटक, सं. एम. आर. काले, बम्बई, ए. आर. सेठ एण्ड कं., बम्बई २।

मइं जाणिअ मिअलोअणि णिसिअरु कोइ हरेइ।

जाव ण णव-तडिसामल धाराहरु वरिसेइ।।१।।
गन्धुम्माइअमहुअरगीएहिं,
वज्जन्तेहिं परहुअतूरेहिं।
पसरिअपवणुव्वेल्लिरपल्लवणिअरु।
सुललिअविविहपआरहिंणच्चइ कप्पअरु।।२।।
वहिणं पइं इअ अब्भत्थिमि आअक्खहि मंता।
एत्थु रण्णे भमन्ते जइ तुअं दिट्ठी सा महु कंता।।
णिसम्महि मिअंकसरिसे वअणे हंसगइं।
ए चिण्हे जाणिहसि आअक्खिउ तुज्झु मइं।।३।।
परहुअ महुर-पलाविणि कन्ति,
णन्दण-वण सच्छन्द भमन्ति।
जइं पइं पिअअम सा महु दिट्ठि,
ता आअक्खहि महु परपुट्ठि।।४।।
रे रे हंसा किं गोविज्जइ।
गइ अणुसारें मइं लक्खिज्जइ।।
कइं पइं सिक्खिउ ए गइलालस।
सा पइं दिट्ठी जहणभरालस।।५।।
हउं पइं पुच्छिमि अक्खहि गअ-वरु।
ललिअ-पहारे णासिअ-तरु-वरु।।
दूर-विणिज्जिअ ससहर-कंती।
दिट्ठी पिअ पइं संमुह जंती।।६।।
सुरसुन्दरि जहण-भरालस पीणुत्तुंगघणत्थणि।
थिरजोव्वण तणुसरीरि हंस-गइं।।
गअणुज्जल-काणणे मिअ-लोअणि भमन्ते
दिट्ठी पइं तह विरह-समुद्दन्तरें उत्तारहि मइं।।७।।
लए पेक्खिविणु हिअएं भावमि।
जइ विहिजोए पुणु तहिं पावमि।।
ता रण्णे विणु करिमि णिब्भन्ती।
पुणु णइ मेल्लइं ताह कअन्ती।।८।।
मोरा परहुअ हंस विहंगम।
अलि गअ पव्वअ सरिअ कुरंगम।।
तुज्झह कारणें रण्ण भमन्ते।
को णहु पुच्छिउ मइं रोअन्ते।।९।।

गाथासप्तशती—हाल कवि। निर्णयसागर प्रेस, १९३३।

अग्घाइ छिवइ चुम्बइ ठेवइ हिअअम्हि जणिअरोमंचो।
जाआकवोलसरिसं पेच्छइ पहिओ महुअपुप्फं।।७,३६
ण अ दिट्ठिं णेइ मुहं ण अ छिविउं देइ णालवइ किं पि।
तह वि हु किं पि रहस्सं णववहुसंगो पिओ होइ।।७,४५

बालचरित—भास। प्रकाशक—मुन्शीराम मनोहरलाल, दिल्ली, १९५९।
एसोम्हि जुद्धसज्जो मत्तो हत्थी व दप्पसम्पुण्णो।
भञ्जेमि अज्ज बालं दामोदलं लंगमज्झम्मि।।५,४
लोमहयमुट्ठिहत्थो णामेण य मुट्ठिओ लुट्ठि।
पाडेमि अज्ज लामं गिलिवलकूडं जहा वज्जो।।५,५
(वस्तुतः यह प्राकृत भाषा है)

तन्त्रसार—अभिनवगुप्त। सं. पं. मुकुन्दराम शास्त्री। काश्मीर संस्कृतग्रन्थावलि, श्रीनगर, १९१८
जह जह जस्सु जहिं चिव पप्फुरइ अज्झवसाउ।
तह तह तस्सु तहिं चिव तारिसु होइ पहाउ।। आ. ४,१
सुण्णउ रविससि-दहण-सउ उस्सउ एहु सवीरु।
उहि अच्छन्तउ परमपउ पावइ अचिरे धीरु।। आह्निक ५,१

मृच्छकटिक—शूद्रक। प्रकाशक—खेलाड़ीलाल एण्ड सन्स, बनारस, १९५३।
चन्दनक—अरे रे, पेक्ख पेक्ख।
ओव्वारिओ पवहणो वच्चइ मज्झेण राअमग्गस्स।
एदं दाव विआरह कस्स कहिं पावसिओ पवहणो त्ति।।६,१२
माथुर—अले, विप्पदीवु पादु। पडिमाशुण्णु देउलु। धुत्तु जूदकरु विप्पदीवेहिं पादेहिं देउलं पविट्ठो।—द्वितीय अंक।
शकार—णिक्कम ले। अले चाण्डाला, किं विलम्बेध। भालेध एदम्।
(अपभ्रंशपाठकेषु शकारीभाषापाठको राष्ट्रियः। चाण्डालीभाषापाठकौ चाण्डालौ। ढक्कभाषापाठकौ माथुरद्यूतकरौ।—पृथ्वीधर)

चतुर्भाणी—सं. श्री मोतीचन्द्र, हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय प्रा. लि., बम्बई, १९५९।
उहि माणुसोक्ति मट्ठाउहेण णवि लिच्छइ आउहेण य।
सोण्णर तस्स कम्मसिद्धिं विघसु खलु भुंजति सुकरासिद्धिं।।
(यह भी प्राकृत है।)—पादताडितकम्, ६२

ध्वन्यालोक—आनन्दवर्द्धन।
खणपाहुणिआ देअर एसा जाआए किंपि ते भणिदा।
रुअइ पडोहरवलही घरम्मि अणुणिज्जउ वराई।।३,४४
सिहिपिछ कण्णपूरा जाआ बाहस्स गव्विरी भमइ।

मुत्ताफलरइअपसाहणाणं मज्झं सवत्तीणम्।।२,२४
महु महु त्ति भणंतियहो वज्जइ कालु जणस्सु।
तो वि ण देउ जणद्दणउ गोअरि होइ मणस्सु।।५।।

दशरूपक—धनंजय। प्रकाशक—चौखम्भा विद्याभवन, बनारस, वि. सं. २०११।

दुल्लह जणाणुराओ लज्जा गरुई परव्वसो अप्पा।
पिअसहि विसमं पेम्मं मरणं सरणं णवर एक्कम।।
जं किं पि पेच्छमाणं भणमाणं रे जहा तहच्चेअ।
णिज्झाअ णेहमुद्धं वअस्स मुद्धं णिअच्छेहि।।

शृंगारप्रकाश—महाराजा भोज। सं. जी. आर. जोसयर, मैसूर, १९५५।

तह कमलक्कमलचंदो चंदमुहि तुज्झमुहअंदो।
कमलं उण कमलच्छिअ चंदोचंदोच्चिअवराओ।। सप्तम प्रकाश,
चुंविज्जइ सहहुत्तं अपवाहिज्जइ सहस्सासअहुंतं।
रमिअ पुणो विरमिज्जइ पिएजणे णत्थि पुणरुत्तं।। वही,
गअणं च मत्तमेहं धारालुलिअज्जणाइ णवणाइ।
णिरहंकारमिअंका हरंति नीलाओ विअ णिसाओ।।

मानसोल्लास (अभिलषितार्थ चिन्तामणि)—सोमेश्वर सं. जी. के. श्रीगोन्देकर, जिल्द ३, गायकवाड़ ओरियण्टल सीरीज, सं. १३८, १९६१।

जो दाणव कुल-निद्दलणु, दुहियण किय आणंदु।
तुट्ठउ दुक्किउ अवहरउ, सु लच्छिवइ गोविंदु।।
मधु-रितु मन्मथनायकु पहुतउ, सहार-किसलय लक्खिउ निरुत्तउ।
विचकिल-परिमल लग्गउ घुम्मइ, अलिकुलु झंकारइ बहु-कुसुमइं।

परिशिष्ट (२)

प्राकृत साहित्य में उपलब्ध कतिपय अपभ्रंश पद्य

कोद्धायओ को समचित्त
काहो वणाहिं काहो दिज्जउ वित्त।
को उग्घाडउ परिहियउ परिणिउ को व कुमारु
पडियउ जीव खडप्फडेहिं बंधइ पावह भारु।।६।।

—सूत्रकृतांग (शीलांकाचार्य)

पासि कप्पि चउरंसिय रेवा-पय पुण्णियं
सेडियं च गेण्हेप्पि ससि-प्पभ वण्णियं।
मई सुयं पि एक्कलियं सयणि निवण्णियं
सव्व-रत्ति घोसेइ समाण-सवण्णियं।।१।।

—वसुदेवहिंडी (संघदास गणि)

णंदो राया णवि जाणइ जं सगडालो करेहिइ
नंदो रायां मारेविणु सिरियं रज्जे ठवेहिइ।।२।।

—आवश्यकचूर्णि (जिनदासमहत्तर गणि)

जो जसु माणुसु वल्लहउ तं जइ अण्णु रमेइ
जइ सो जाणइ जीवइ वि तो तहु पाण लएइ।।३।।

—कुवलयमालकहा (उद्योतन सूरि)

जहिं विल्ल-पलासह तरुवराहं, पायउ जइ मंकिगउ होइ ताहं।
अह खंजरीडसंजोउ होइ, ता तत्थ निरुत्तु निहाणु जोइ।
जो पायउ रत्तइं रसिण जुत्तु, सो रयणह निहि अक्खइ निरुत्तु।
पीइं रसेण कंचणु विसिट्ठु, धवलइ कलहोउ मुणिंदि सिट्ठु।
हुं होसइ रयणनिहाणु एत्थु, दिसि जोइवि तो तिं खणिउ तेत्थु।
उवलद्धु समुग्गउ रयणजुत्तु, तं पेच्छिउ हरिसिउ तासु चित्तु।।
तो गिण्हिहि हत्थिं छाड़वि वत्थिं, चलिउ जाव सो नियनयरह।

ता पत्तउ चोरिहिं पहरणघोरिहिं, हुयउ धरह न बारह।।६।।
—आख्यानकमणिकोश, १३, ६ (सोमप्रभाख्यानक)

वरकुंडलहाराभरणु लेवि, उज्झाणि नट्ठु मइयणु छलेवि।
तत्थेव देविमंदिर पविट्ठु, तसु पासि दच्छु मिल्लिवि वइट्ठु।
तो तेण पयंपिउ संभमेण, हउं चोरु न बंभणु कारणेण।
देसंतरि पत्थिउ पयइसच्छु, इह सुत्तह केणइ मुक्क दच्छु।।
तो तक्करु बंधिवि बंभणु रुंधिवि, दो वि नीय रायह भवणु।
तेहिं अक्खिउ रायह निवनयपायहं, देव ! चोरु आयहं कवणु।।१५।। वही,

श्रेष्ठिपुत्रजन्मोत्सववर्णन—

वज्जंतचारुतूरयं नच्चंतनारिपूरयं, गायंततारगायणं दुक्कंतसाहुवायणं।
तुप्पिज्जमाणचट्टयं, पढंतभूरिभट्टयं, आवंतअक्खवत्तयं हीरंतपुत्रवत्तयं।
किज्जंतथालरक्खयं पूइज्जमाणपक्खयं, गुप्पंतविद्धिसट्टयं गंतुट्ठपीठमट्टयं।
ओलग्गमाणसेवयं संथुव्वमाणदेवयं, आवंतभूरिपाउलं तोसिज्जमाणराउलं।
सिज्झंतभत्तपाणयं दिज्जंतदीणदाणयं, मुच्चंतगोत्तिबंधणं किज्जंतरुद्धसंधणं।
वग्गंतचारुचारणं संजायलोयसारणं, तुप्पंतसाहुपत्तयं लब्भंतभूरिपत्तयं।
इयबहुविहविच्छिड्डिण रंजियसयलजणु,
विलसिरकित्तिकुलंगणनिम्मलकुलभवणु।
नर-नारियण-नरेसरमणह सुहावणउं,
विहवमहाभरिभिब्भिं किउ वद्धावणउं।।
—पत्र २६६, पद्य ३२; वही,

परिशिष्ट (३)

अपभ्रंश के शिलालेख

अपभ्रंश भाषा में लिखे हुए चार शिलालेख मिलते हैं। प्रथम मध्य प्रदेश के दमोह जिले में हटा तहसील से आठ मील दूर जटाशंकर नामक निर्जन स्थान से प्राप्त हुआ है और एक उज्जैन से तथा अन्य दो मध्य प्रदेश की धारा नगरी (धार) से। इन दिनों प्रथम शिलालेख नागपुर के संग्रहालय में सुरक्षित है और तृतीय प्रिन्स ऑफ वेल्स म्यूजियम, बम्बई में है। प्रथम शिलालेख का सर्वप्रथम परिचय स्वर्गीय रायबहादुर डॉ. हीरालालजी ने 'लिस्ट ऑव इन्स्क्रिप्सन्स इन सी. पी. एण्ड बरार' में दिया था। इसका विस्तृत परिचय काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका के छठे भाग में वि. सं. १६८२ में प्रकाशित हुआ था। शिलालेख के कुछ अंश भी ना. प्र. पत्रिका में प्रकाशित हो चुके थे, किन्तु इस लेख को सम्पूर्ण रूप से प्रकाशित करने का श्रेय श्री बालचन्द्र जैन, सहायक संचालक, म. प्र., भोपाल को है। लेखक को उनसे ही यह लेख प्राप्त हुआ, जिसे अविकल रूप से दिया जा रहा है।

शिलालेख की लिपि और भाषा

यह शिलालेख साढ़े ग्यारह इंच चौड़े और पौने चार फुट ऊँचे पत्थर पर खुदा हुआ है। इसमें ४० पंक्तियाँ हैं, किन्तु नीचे का भाग दोनों ओर से थोड़ा-थोड़ा टूट गया है।

अक्षरों की बनावट के आधार पर शिलालेख को १२वीं शताब्दी का माना जा सकता है। इसकी भाषा अपभ्रंश और संस्कृत है। पहले अपभ्रंश में लिखा गया है और फिर उसी का संस्कृत में अनुवाद है। संस्कृत भाग में गलतियाँ बहुत हैं।

विवरण

प्रशस्ति का प्रारम्भ शिवजी की स्तुति से होता है। चौथी पंक्ति में कवि रल्ह का नाम आता है, जो इस प्रशस्ति के रचयिता कवि हैं। पाँचवीं पंक्ति में विजयसिंह नामक नृप का उल्लेख है, जो भुम्भुकदेव का भक्त था।

प्रशस्ति से जो इतिहास सम्बन्धी सूचनाएँ मिलती हैं, वे इस प्रकार हैं—विश्वामित्र गोत्र में गण्ड और (उनके बेटे) बच्चड हुए। बच्चड का बेटा बिजयपाल था। विजयपाल के बेटे भुवनपाल ने काई नामक प्रतापी राजा को संग्राम में जीत लिया था। भुवनपाल के बेटे हर्षराज ने कलचुरि, गूजर, शशधर और दक्षिणपति—इन चार राजाओं को पराजित किया था। हर्षराज का बेटा विजयसिंह था। वह भुम्भुकदेव का भक्त था और बड़ा धार्मिक पुरुष था। विजयसिंह ने दक्षिण की फौज को महागढ़ दुर्ग के निकट हराया था। उसने चित्तोड़ में भी लड़ाई लड़ी थी। दिल्ली की सेना को भी उसने पराजित किया था और गूजरों को गोदह (गोधरा) तक खदेड़ दिया था।

संस्कृत में लिखे गये विवरण में उपर्युक्त बातें दोहरायी गयी हैं। इस भाग में हर्षराज द्वारा जीते गये चार राजाओं के नाम इस प्रकार कहे गये हैं—कलिंजरेश, डाहलिक, गुर्जर और दक्षिणपति।

प्रशस्ति के वर्णन के अनुसार यह राजवंश कोई प्रतापी और प्रभावशाली वंश जान पड़ता है, किन्तु अन्यत्र कहीं इस वंश का वर्णन नहीं मिलता और न ही इसके दूसरे कोई शिलालेख आदि ही प्राप्त हो सके हैं। स्वर्गीय रायबहादुर हीरालाल का मत था कि ये लोग राजा नहीं थे, क्योंकि प्रशस्ति में उनके नामों के साथ राजकीय उपाधि आदि नहीं मिलती। किन्तु रायबहादुर का उपर्युक्त कथन उचित प्रतीत नहीं होता है। शिलालेखों में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जहाँ बड़े-बड़े इतिहास प्रसिद्ध राजवंशों के राजाओं के नाम के साथ राजकीय पदवियों का प्रयोग नहीं हुआ है।

प्रशस्ति में चित्तोड़, दिल्ली तथा दक्षिण की विजय का उल्लेख मिलता है जो निश्चय ही यह बताता है कि प्रस्तुत राजवंश का प्रभाव दूर-दूर क्षेत्रों तक विस्तृत था। इसके अलावा पड़ोसी कलचुरि और चन्देल राजा भी उनसे दबते थे। गूजर राजा का गोधरा तक खदेड़ा जाना भी प्रस्तुत राजवंश की शक्ति की महत्ता का सूचक है। इससे भी अधिक महत्त्व की बात यह है कि विजयसिंह इतना प्रतापी होने पर भी अत्यन्त धार्मिक वृत्ति का था। कवि ने उसके बारे में लिखा है कि वह त्यागी, शूर, सुलक्षण और सर्वगुणसम्पन्न था, शक्ति और पौरुष में उसके समान दूसरा कोई न था। वह धर्मात्मा ऐसा था कि लोग उसके सामने राम और युधिष्ठिर को भूल गये थे।

शिलालेख का मूल पाठ

१. ऽ।। ॐ नमः सि (शि) वाय।। अग ? य वीजक विलासवास गौरीस ई-
२. स हर अगर सजुरजरमरण-थल सरवर सुमेस।। गी
३. रिकंत अंधअ भिणल कलिकुद्वविणासण सुहकरण रोरध
४. डगडुंअ विद्धंस।। सुहकरण चरण तिभुवणहरण सुकवि रल्ह
५. परिसुक्खइ भुंभुकदेव सुपसाउ करि विजयसीहु तुअ पअ नव

६. इ।। विसामित्त गोत उत्तिम चरित विमल पवित्तो गंण [।] अरअ घ-
७. उघडणो संसिजप वघ्घडो भुवाण।। वघड पटि परिट्ठिअउ ख-
८. त्तिउ विजयपालु [।] जेणें काइउ रणि निजिणिउ तह सुत
९. भुवणपालु।। कलचुरि गुजर ससहरह दक्षिणवइ सुपअण्ड
१०. चहुराअह रणि विजिणण हरिसराअ भुवदंड।। संगुरि भंगरि
११. रण रहसु गतहरिस हअ कियथु (त्थु) [।] हय इम पट्टि पर सुहड स-
१२. मुहुन कोवि समथु (त्थु)।। बघ्घडु विजयपालो हुवणवालु भुवण
१३. मअणि हरिसराअ भरधवलो विजयसीहु धुरधणो चा
१४. ई सूरो सुहवो सेलखणक अकुशलो गुहिलौतो सब्वगु-
१५. णो [।।] सुअ संगरि हसिराअ [स्त] ग भुंभुकदेव सोणीर पोर मुं-
१६. ग सगु उद्धरिओ विजयसीहुं वरहम्म धोरिउ धम्म भंदणो
१७. धीरो। [।] जेणे रंजिउ जगपउ रणि दुग्गा (ग्ग) महागढ हेड्डि [।] वि
१८. जयसीहु तुरअ ठिअह अरिअण तिअहिं नयड्डि। [।] विजयसी
१९. ह रहि अरि सिर कप्परि [।] मारिअ दक्षिणदल खल चप्परि [।।] दुर्ग-
२०. महागढ तलिअ भिडअउ [।] महइ ते कोइ हअपड्डिहि चड्डिअ
२१. उ।। जो चित्तोडहं जुझिअउ जिणे ढिलीदलु जितु [।] सो सुपसं-
२२. सहि रल्ल कई हरिसराअ निअ सुतु।। भुंभुकदेवह पअणुसरअउ [।]
२३. सत्तिण पोरिस तिभुवणु हरअउ [।।] धम्मिण राम जुहिट्ठिल भुले-
२४. उ विजयसीहु बलिया अतबलउ [।।] खेदिअ गूजर गोधहड
२५. कीय अथियं मारि विजयसीह कित संभहुल पोरिस कह संसा-
२६. रि।। भुंभुकदेव पअ पणवि पअडि आकित्ति समत्थ विजयसीह
२७. दिढ चित्तु करि आरंभिअ सुपसत्थ।। मंगलं महाश्रीः।। सु (शु) भं भवत (तु)
२८. ॐ नत्ता (त्वा) गणाधिपं वाणीं विरिंचिं कृष्णमुमापतिं प्रारंभितमहाश्ला (श्लो)
२९. कां निर्व्विघ्नां वो प्रस (सा) दतः।। विस्वामित्रे (विश्वामित्रे) सुभे (शुभे) गोत्र (गोत्रे) महाश्रं (महार्थी) ह्वव्वड़ पु।
३०. री ? (रा) पुत्ते (पुत्री) च राज्ञ [:] गण्डाय (गण्डस्य) गजघटा निर्गदीकृता।। तन्मूर्त्ते (मूर्तिः) समुत्पतो (समुत्पन्नः)
३१. विजयपालो महाबलः स्वभुजदंडचंडाभ्यां क्षत्रियः (या) समरे जिताः।
३२. काई नामा महावीर्य [:] समरे येन निर्जितं (तः) संश्रितं (तो) डे (भो) जदेवेन भुवन
३३. पालेन धीमत (ता)।। श्रीहर्षराज (राज) तव विक्रमतीक्ष्णत (ता) पः सोढुं न शक्य
३४. : समरे रिपवः प्रचण्डा [:] आकुलितपौरुष [वीर्य] हीन; (नाः) स्पृ-

३५. शंति ते चरणपंकज (जे) जीवनाय।। जित्ता (त्वा) कलिङ्गेसं (शं) सवलबलिन
३६. मजितं च डाहलिकं दर्प्पिष्टं (दर्प्पिणं तं) साहरीत्यं तमगि कुशमारातिन (मराति)
३७. [श्री] गुर्जरं जित्वा श्रीदक्षिणो (णे) श निजभुजबलैः सद्बोधसंसिद्धये
३८. ज्ञात्वा श्रीकाल (ला) ग्रिरुद्रसमुख्यो ? प्राणमोक्षं चक्रे। तस्यात्मजो
३९. विजयसिंह क्षिती प्रसिद्धः सत्येन धर्म्म (धर्म्मेण) यससा (यशसा) दृढविक्रमेण [भुं]
४०. भुकदेवचरणांबुजध्यानभक्ता (भक्त्या) प्रासादकीर्तितकलिकुल-
४१. लेन।। श्रीविजयसिंहगुणकीर्त्तिलता निबद्ध [श्रीरल्ह]
४२. रुमिताग्र लंकारबद्धा।। स (श) ते बद्धा
४३. गुणदानजनानुरागै।। रद्भुजदण्डचण्डि
४४. कीर्त्तितरोः फलै मुप्रवु
४५. गिरिर्निजित्व

एक अन्य शिलालेख धार से प्राप्त हुआ है। यह शिलालेख नागरी प्रचारिणी पत्रिका में वर्ष ५५, अंक १-२ में प्रकाशित हो चुका है। लेख स्लेट-पत्थर पर उत्कीर्ण है। लेख की भाषा अपभ्रंश के निकट है। अनुमानतः यह दसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध या ग्यारहवीं के प्रारम्भ का लिखा हुआ जान पड़ता है। मूल लेख की लम्बाई १५ इंच तथा चौड़ाई १२ इंच के लगभग है। लेख त्रुटित तथा अपूर्ण कोई काव्य है।

शिलालेख का मूल पाठ

१. ल्लवि उंदेइने अवसाण। मेल्लवई अम्मणातंन
२. णरायण। ।।१२।। हिअएवसि उणमए एल्वले थंने अ
३. इमुद्दे अम्हे कज्जस्स जसवादित्ता ते नु हसिद्देइ
४. उण अद्दयं दंझडिज्जं तो न सोहेई।।२३।। माणो
५. णो विदुमाणेणं अज्ञं गहि उदुजंपए ए अं उ
६. णेहिं कमुद्दा मोण सुहाणं कज्ञ परि डिए दुव
७. दईऊ। महिलाणं होई हेपें (?) माणो पडिहा
८. माणो तपिई मुद्धे गंपिदुग खसे तहय पुण दई
९. तीए विदु पडिगहि उतहा पूणो काय रोविहिउ।
१०. ।।३१।। झडिज्जंतो वि इहमाणो नय जाई लड़ह
११. मार्णातणे इमुद्दे अवहिर सुमंदु एत्थ पडिग
१२. जेताण ।।८३।। लक्षय तुल्लं मुद्दतं मंइई उणत
१३. हसिउ। तुहहिं अयं मई नायं हि अयल्लंतु हनसि

१४. ···रई आई। सव्वारं आवत्ती जेगं ए आ···
१५. इहं सुणान्वि।।४।। पिह तुहा···
१६. ···ए अंगुहा दुअब्भेसई
१७. ···???···

रोडाकृत राउल वेल

ग्यारहवीं शताब्दी का लिखा हुआ यह शिलालेख प्रिंस ऑव वेल्स म्यूजियम, बम्बई में विद्यमान है, जो वहाँ धार (मालवा) से लाया गया था। यह एक शृंगारिक काव्य है। इसका आकार ४५" × ३३" है। लेख भग्न अवस्था में है। त्रुटित अंश बहुत हैं। डॉ. ह. चू. भायाणी का मत है कि यह शिलाखण्ड बीच का भाग है। इसके आगे-पीछे दो अन्य शिलाखण्ड रहे होंगे। किन्तु डॉ. माताप्रसाद गुप्त इसे पूर्ण शिलालेख मानते हैं। इस शिलालेख की भाषा स्पष्ट रूप से परवर्ती अपभ्रंश है, जिसमें विभिन्न प्रान्तों की सात नायिकाओं का वर्णन है। रचना सुन्दर और साहित्यिक है। इसका विस्तृत परिचय 'भारतीय विद्या', 'हिन्दी अनुशीलन' और 'भारतीय-साहित्य', आदि पत्रिकाओं में तथा 'राउल वेल और उसकी भाषा' (सं. डॉ। माताप्रसाद गुप्त) में प्रकाशित हो चुका है। यह शिलालेख मूल रूप में वहीं से दिया जा रहा है।

शिलालेख का मूलपाठ

(१) (ॐ) नमः सिध (द्धे) (भ्यः।।)
रोडे (डें) राउल वेल वखाणा (णी)।
जइ——इ आपणु ज (आणी)।।
जा (जी) जेमुव जाणइ सो तेम्व वखाणइ।
हासे (सें) रोसे (सें) राजइ राणइ।।
————————(।)—(२) भा (ल) उ भावइ।।
आँखिहि काजल तरलउ दीजइ। (आ) छउ तुछउ फुलु—जइ।।
अहरु तंबोलें मणु मणु रातउ। सोह देइ कवि आन ।——।।
————(।)—(३) तुम—स तम्वहीं मोहंथि।।
जाला कांठी गलइ सुहावइ। आनु कि—ई ताकरि (पां) वइ।।
एहइ तरुणिहं माण्डणु भालइ। जं जसु रूचइ सो——(।।)
————————(।)——(४) ली ता—मांडीजइ।।
रातऊ कंचआ अति सुठु चांगउ। गाढउ बाधउ—इ आंगउ।।

—दुहां पहिरणु भालउ भावइ। तासु सोह कि कछडा पाव (इ।।)
————————(।)————(न) (५) णु मणु—।।
विणु आहरणें जी पावेन्हु सोह। आन वनां तहं मोहिं अति कोह।।
अइ (सी) वेटिया जा घरु आवइ। ताहि कि तूलिम्ब कोऊ पावइ।।
[।।०।।०।।०।।]
——————।)—(६) हुं वेस न (ण ?)—देखसि।।
वलिअहि बाध लिअहि जे चांगिम्ब। ते वानतु को—वी (?) वागिम्ब।।
—अहि आंतु जें विअइव फूल्लें। अछउ ताउं कि तेंह चें बोल्लें।
———————————।)————आ (७) छहिं गोह।।
का (नि) हि धडियनहं जि जे रेख। ते ची (चि) न्तवंतहं आनिक ओख।
—कचि कांठी कांठिहि सोहइ। लोकहं ची दिठि मांड चि खोहइ।।
आंगिहिं ला इ————(।)——————डा।।
पडिह (८) कांचू वोडा लाठा (आ) निकु चानू जो स्थु घेटा।।
आविलु काछडा दढ गाढा। आनिकु जोवण ऊ (ज ?) रु धाढा।।
हाथिहिं रीठे ऊजल लान्ह। जी पुडि तागे आविल सान्ह।।
——————धाटी गाढी। जणु काम्बे (९)——ली माढी।।
पाइहिं पाहंसिया निरु चांगा। लोणचि आनि (क) मांडी आंगा।।
गोल्ले आ (नं) दिअ तुझचि देसु। आनिक तेंह चा तो वेस।
चा वल भण हुणि तो गेढी झंखइ। ते आपुली गम्वारिम्व आख (१०) इ।।
अइसी——————तरुणिम्ब मांडी। पाली को भाउअ छांडी।।
————कचि अइसी राउल सो (ही)। देखत तोही मयणुव मोही।।
।।०।।०।।०।।
एहु कानोडउं का इसउ झांखइ। वेसु अम्हाणउं ना जउ देख (११) इ।।
आउंडउ जो राउ (ल सो) हइ। थइ। नउ सो स्थु कोकु न मोहइ।।
डहरउ आंखिहिं काज (ल) दीनउ। जो जाणइ सो थइ नउ वानउ।।
करडिम्ब अनु कांचिडिअउ कानहिं। काई करेवउ सोहहिं आ (१२) नहि।।
गलइ पुलुकी भावइ (?) कांठी। कासु तणी साहर इन डीठी।।
लांवझ लांवउ कांचू रात (उ)। कोकु न देखतु करइ उमातउ।
थणहिं सो ऊंचउ किअउ राउल। तरुणा जोवन्त करइ सो वाउल।।
वाह (१३) डिअउ सो न्वालउदीहउ। (न्वाल) उं आथि न तहुं जणु चाहउ।।
(हा) थहिं माठिअउ सुदु सोहहिं। (ते) थु खूता जण सयलइ चाहहिं।।
पहिरण फरहरें पर सोहइ। राउल दीसतु सउ जण मोहइ।।
झुणि नेउरा (१४) णी कान सुहावइ अरो (?) रक—कासु न भावइ।।
हांसगइ जा चालति अइसी। सा वाखर पहुं राउल कइसी।।

जहिं घरे अइसी ओलंग पइसइ। त घरु राउल जइसउं दीसइ।।
।।०।।०।।०।।
(१५) केहा टेल्लिपुतु तुहुं झांखहि। अ—दु बेहु तुहुं आख (हि)।।
बेहु एक्कु सो स्थ वन्निज्जइ। (जो ?) अक्खंदहं ही आ भिज्जइ।।
अड्डा केह पाहु जो बद्धा। सो प्पर तेहा गोरीं लद्धा।।
चंद सायाणा टीहा किय्यइ (जें मईं) (१६) एक्केणवि मंडिय्यइ।।
अंधिहिं कय्यल डहरा दित्ता। जो (नि) हालि करि मयणू मत्ता।।
कंय्यडिअहि सोहहिं दुइ गन्न। म (मं) डन संडन डहि परे अन्न।
कढी कंढि जलाली सोहइ। एहा तेहा स उ जणु मोह (१७) इ।।
आधूधाडें थणहिं जो कंय्यू। सो सन्नाहु अणंग हो नं—।।
(कं) य्यू विय्ययहिं जे थण दीसहिं। ते निहालि सव वत्थु उवीसहिं।।
गोरइ अंगि वेरंगाकंय्यू। संझहि जोन्हहि न संगउं हू।।
पहिरणु धाधरेहिं जो केरा। कछ (१८) डा बछडा डहि पर इतरा।।
सूथना झि क—इला प (हि) र णु। पाखइं पाखउ धावइ तसु जणु।।
एहा वेहु सुहावा टेल्ल। आन्न तु संदा डहि परइ वोल्ल।।
एही टविकणि पइसति सोहइ। सा निहालि जणु मल म (१९) ल चाहइ।।
।।०।।०।।०।।
कीस रे बंडिरे टाक तु (बो) ल (सि) राहू आगें बानतु भूलसि।।
तंइ की कतहू बेस रे दीठें। जेहर तेहर वानसि धैठे।
गौड सुआणु ल तइं कत दीटे। ते देखि वेसकि भावंधि मीठे।।
ते (वे ?) (२०) डेन्हु वाधंन्हु केसं ज ल डहिम्प। खोंपवली एक हु रे—सम्ब।।
खोंपहि ऊपरं अम्बेअब कइसे। रबि जणि राहूं घेतले जइसे।।
दिठहुल फूल अम्हारे म्वाझथि। ते देखि तरुणे सावइ मूझथि।
तूछे फूल तारे मण (२१) हारे। रयणिमुहां जणु गणिए तारे।।
रे रे वर्व्वर देखु रे तूं चा (हि)। तारि निलाडी सरिसी काहु।।
भउहीं तु रूरीं वेखु वर्व्वर कइसी। ताहि काम्व करी धणु अडणीं जइसीं।
अरे अरे वर्व्वर देखसि न टीका। चांदहि ऊपर एह (२२) भइ टीका।।
वेटुला टीका केहर (भा) वइ। मुह ससि ओलगं च-न नावइ।।
बिणु बनवारां अछण नो वारसि। बुद्धि रे बंडिरो आपणी हारसि।।
कानन्हु पहिले ताडर पात। जणु सोहइं एवं सोह रे पात।।
गूआ रांगे द (२३) सण रे राते। आंट कुडीपुत त—माते।।
काठिह मांडणु पा (च ?) लर तागु। सो लहि मयणहि एवं मैअल लागु।।
मासें सोना जालउ कीजइ। मोत्ता सरसो हुतें हू हसीजइ।।
गंठिआ तागउ गलेहिं सो भूस (२४) णु। जो देखि वंडिओ को न (मू ?) झइ

जणु।

सु तु तरीअन्हु करउ (जो) हारु। सो देखि हारन्हु भउ अवहारु। (।)

थणहर माझें जो हारु सुतेरउ। सोहन्हु सवन्हु सोए कुज ठेरउ।।

पारडी आंतरे थणहरु कइसउ। (२५) सरय जलय बिच चांदा जइसउ।।

सुतेरु हारु रोमावलि कलिअ (उ) जणि गांगहि जलु जउणहि मिलिअउ। (।)

पहिअल वाही जे चंदहाइं। बीजेर चावहि ते चंदहाइं।।

आंगहिं मांडणु अंगेर उजालु। काठी (२६) वेंटी वंडिरो आलु।।

काछो (पे) हरण केरि ज सोह। आन सराहंत मुणि मोहि अति कोह।।

वि उडण संदूरी सोलवही कीजइ। रूउ देखि तारु सब जणु खीजइ।।

धवलन कापड ओढिअल कइसे। मुहससि (२७) जोन्ह पसरिल जइसे।।

अइसो उवेसु जो गउडिन्हु केरउ। छाडि सो वान त दिठ सबु तोरऊ। (।)

जेहर रूचइ तेहर बोलु। तारे वेसहि आथि कि मोलु।।

अइसी गउडि ज राउले पइसइ। सो जणु ला (२८) छि माडेउ दीसइ।

।।०।।०।।०।।

पोड तुहुं एकु को पनु अउरु वर क। (रि ?)

को नई सहुं भइं बोलइ।

ज पुणु मालवी उवेसु हि आवंतु काम्वदेउ जाइं आपणाह हथिआर हु भूलइ।

इहां अम्हार (२९) इ दुभगी खोंप करिउ वाझइ।

तहि सारिखउं कहा इउं आथि एउ कि सी (झ) इ।

खोंपहि ऊपरि सोलडहउ दीनउ वानु तें किसउ भावइ।

जिसउ सिंदूरिअउ रजायसु काम्वदेवह करउ नावइ।

नि (३०) लाडु रतु रूरउ सुपवाणु न सान्ह उंन ऊंचउ।

सो देखिउ आठम्विहि करउ चां (दु) इसउ भावइ।

केर एहु ओडिअउ जूनउ टेंचउ।

भउंह हुं र दुई तु रूरीहिं सान्हीहिं आडाव आंखिहिं करइं गुणइं।

ज (३१) इसउ काम्व करउ (ध) णुहु चडावियउ।

निडालि टीकें तु रूरे कीएं तें काम्वह अ-य-

संकरी हि भालिहि करउ काजु पावियउ।

सान्हाहं पुडहं नाकु तु रूरउ सुरेखु।

सोइर वानाहं सवहं ऊतरिअउ (३२) अइसउ करिउ तुहुं (?) लेखु।

आंखरि फाटा तीखा ऊजला तरला ते वानति जीभ इ (सी ?) खूझइ।

तइसइ हथिआरु पाविउ काम्वदेउ जगही काइं करिसी।

अइसउ वृउस्पति ही नउ मू (सु ?) झइ।

(३३) आंखिहिं र तु रूरउ काजलु दीनउ कइसउ।

जणु चाखुहु करइं भवइं कियउ जिसउ।
पूनिवहि करउ चांदु फाडिउ हरिणु पाखइ घालिउ।
दुई कपोल जिसा किआ।
ते देख तहं (३४) सवहं तरुणाहं।
अपांविवे करी खणुसइं धस धस पडहिं हिआ।
कनवासहीं कानहीं वा (न ?) इ करउ खूटउ वोलु।
कें कें केतउ न खपिअउ एहि जगी (गि ?) आंधि न मोलु।
तेन्वर पइडिया धडिव (३५) न किसा भावंथि।
(ज) णु पूनिव हि पूनिव हि करा चांद कोडइ तहि करउ।
गुहावउ वोलु सुणण का (ज) फेडि उआया नावंथि।
नेंहि करइ नलि लई उपइलें ओटइं सकवि सोह लाधी।
ज वींवी फलहं (?) प (३६) वालाहं असो (अ) पल्लवहं तें तूसिउ विलधी।
समुदाइ कज मुह करी सोभ सजइ।
कोइ प (यह ?) णु हरइ त उपमानु करहुं।
वृधि आपणी अछइ स कूडी वानणी।
त। (इ) ह करी करिउ सहीं अवहरहुं।
(३७) नं एकावलि—इ एक वाधी सइ र इसी भावइ।
जणु मुह चंदु ओलग गहं नखत वाल सतावीस।
हा—री आई अइसउ नावइ।
थण र पहुला ऊंचा वाटुला पीणा
सोनाह करा मंगल कलस जिसा भा (३८) वहिं।
आनु कि काम्वदेवह कराह धरह
वारि ओडु तास सोह पावहिं।
तिवलिहि मांझि रोमराइ स किसी धरइ।
ज सोहहि करइ पाखइ दुहुं आथहं मुझ तहं निवाडउ करइ।
तहं मांडणु साल (३९) उ मुणाणि हुं
मोती हुं करउ एकु जि हारु।
स सोह देख तहं अइसउ भावइ।
आणसारउ अ (णसार) उ हुअउ एहु संसारु।
त पुगु जवहीं ते हाथहीं पायहीं पइहिआ सोना केरा चूडा।
से देखि (४०) तुम्हा (रा) जे वेस ते सव भावहिं कूडा।
ते रत (त) इसी वोड वाधी पडि करी पइडी ज कांचुली।
सइ र आन सोह कवि वहइ।
अरे काम्वदेवइं सनाहु कियउ।

त एवं तुम्ह नही छोडि कउ इसउ तिहु (४१) (वन ?) ही कहइ।।
पइह्निआह काछडइं सहु ज सीह।
स कि कउणू वेसु पांवइ।
आ—चंग इ-थि दि अरे गीड गोल्ला हो।
वोलउ जो जसु भावइ।।
तें पुणु॰॰टी एक आवलि।
(४२)॰॰ई व ताहि करी सोह को पाम्वइ।
जवाध ताह काम्यदूमह आलवालु जइसी भावइ।।
पायहिं र रतूपल—जिआ।
जे लोकहिं लाछिहि करउ निवासु भणिउ (सु) णि (आ)।।
॰॰वाटुलाहं ऊजला (४३) (हं)
॰॰करी ज॰॰ी
तेई र सवहीं वैसहं करी ज लाछि स अवहरी।।
कापडहि र करउ ज गोरी तहि सिंदू (री) हि वेसु।
ज साम्वली तहि र पाटणी हि करउ।
आ—मं॰ हं।
को स सोभ धर (४४) उ छाय तेइं पर लाधी।
जहिं आवलि रति आपणइ हिअइ अति सुठु खूधी
तुम्हहिं सरिसउ वोलहिं को जूझइ।
म॰॰
आ (४५) नु॰॰इ वानइ जो वधुं काजह मांझ वूझइ।।
एह इसी सुवेस जहिं आवउ पइसइ।
—(रा ?) उलु वूचइ।
अउरु भाणउ को क॰॰हु॰॰त॰॰रुच (४६) इ।।
।।०।।०।।०।।
रोडें राउल वेल बखा (णी)।
(सा) तइं भासहं जइसी जाणी।।
एउ निसुणत॰॰त॰॰।
॰॰उ (?) हासें तोसें सोइ (।।)
—॰॰ी॰॰इ (४७)॰॰ (।)
ध॰॰ी॰॰ (।)

परमार शिलालेख

परमार शिलालेख उज्जैन के सुप्रसिद्ध धर्मस्थल महाकाल से उपलब्ध हुआ है जो परमार कालीन दसवीं शताब्दी का शिलालेख है। यह "परमार इन्स्क्रिप्शन्स इन धार स्टेट्स ८७५-१३१० ई." में मुद्रित हो चुका है। लेख इस प्रकार है

१. अ भरिअ
२. रणरंगमल्लेण ।।४।। अङ्गुदीठ
३. विणिवेसिअ वंसनिहा अंगुलं स
४. उ सभंगीए। कित्तीए एत्थु वत्तां
५. खअलि विउव वत्थेव से
६. ।।६।। गुणहुत्तं पिहु चावं सज्जि (अ)
७. लल्ह।।१६।। खज्जरी विइलु
८. तं सो चडिअ ण गंडले ल
९. सु माण कज्जेण।।
१०. राहु

•

परिशिष्ट (४)

अपभ्रंश गद्य

अपभ्रंश का गद्य बहुत कम मिलता है। इसके कतिपय निदर्शन उद्योतनसूरि कृत 'कुवलयमालाकथा', संस्कृत के रूपक तथा तन्त्र-ग्रन्थों में विकीर्ण मिलते हैं। अपभ्रंश गद्य की अभी तक कोई स्वतन्त्र रचना नहीं मिल सकी है। इसका प्रयोग अधिकतर टीका के रूप में किया जाता रहा है। अपभ्रंश गद्य का एक श्रेष्ठ निदर्शन है—

''मायंगु संपत्तु। अच्चंमत्तु। मेहुव्व गज्जंतु। सेलुव्व पज्झरंतु। गिरिसेल पाडंतु। मंदिरइं साडंतु। सखरइं फोडंतु। ''यर मोडंतु। गिरि ओगेहंतु। जणु सयलु खोहंतु। पडिकरडि जोडंतु। नारियणु मोहंतु। बहुजीव नासंतु। हयथट्ट वग्गंतु। (१) आइवेगि धावंतु। धर थरथरावंतु। चल्लहु खल्लंतु। घुम्मतु। तम्मंतु। दारंतु। मारंतु। थूरंतु। चूरंतु। विंधंतु। रुंधंतु। पाडंतु। चडंतु। तोडंतु। रोडंतु। छोडंतु। विहडंतु। सियदंतु। अदंतु। अच्चंतु। बलवंतु। नागेण ससिकंतु। पुरि भमइ विक्कंतु। तेण गइंदेण। कयकडमद्देण। विहिउ पुरिहिं हल्लोहल्लउ। नं सुरेण। अइआरुड्डेण। आढत्तउ नयरिहिं पलउ (१)''

(संघवी पाडा भंडार, पाटण, पु. सं. ३०७ से उद्धृत)

''धर्मु आथि, धर्मु कीज। धर्मे बाढत पापु ओहट जीभें चाखत आछ। पीठिं चडाब। बोलें बोल। बोलत आछ। हाथें ले। पढि पांडे भा। देखि देखि तूस। लै लै पला। मारि मारि खा। सोंअरि सोंअरि रोवा। पढवे किंह आछ। जेंवण दे। ओंझा पास बीदा ले। सुकुलि गाइ लउडें हाकु। केई ए ईहां ब्राह्मण थापे।''

(दामोदर विरचित उक्तिव्यक्तिप्रकरण से)

इसी प्रकार बालवबोध टीका और बालशिक्षा आदि रचनाओं में अपभ्रंश गद्य स्फुट रूप से मिलता है। अभी तक इस दिशा में अपभ्रंश गद्य के संकलन का कोई कार्य नहीं किया गया है। लेखक प्रयत्नशील है। अतः शीघ्र ही अपभ्रंश गद्य विषयक रचना प्रकाश में आने की सम्भावना है।